श्रीरामकृष्णवचनामृत

प्रथम भाग

श्री महेन्द्रनाथ गुप्त
(श्री 'म')

अनुवादक— पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी, 'निराला'
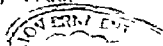
(पंचम संस्करण)

श्रीरामकृष्ण आश्रम,
धन्तोली, नागपुर-१

वक्तव्य

श्रीरामकृष्णवचनामृत के प्रथम भाग का यह पचम सस्करण है। भगवान् श्रीरामकृष्ण का अपने शिष्यो के साथ वार्तालाप तथा उनकी अमूल्य शिक्षाएँ उनके एक प्रख्यात गृहस्थ भक्त श्री महेन्द्रनाथ गुप्त ('म') द्वारा लिपिबद्ध कर ली गयी थी और वे बगला भाषा मे 'श्रीरामकृष्णकथामृत' नामक ग्रन्थ के रूप में पाँच भागो में प्रकाशित हुई हैं। वे पाँचो भाग हिन्दी में तीन भागो में प्रकाशित हुए हैं। उन्ही में से यह प्रथम भाग आपके हाथ में है।

श्रीरामकृष्णदेव का जीवन नितान्त आध्यात्मिक था। ईश्वरीय भाव उनके लिए ऐसा ही स्वाभाविक था जैसा किसी प्राणी के लिए श्वास लेना। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण मनुष्य-मात्र के लिए आदेशप्रद कहा जा सकता है। उनके उपदेश विशेष रूप से अध्यात्म-गर्भित हैं तथा सार्वलौकिक होते हुए मानव-जीवन पर अपना प्रभाव डालने में अद्वितीय हैं।

'श्रीरामकृष्णकथामृत' के हिन्दी अनुवाद का श्रेय हिन्दी ससार के लब्धप्रतिष्ठ लेखक तथा विख्यात छायावादी कवि प० सूर्यकान्तजी त्रिपाठी 'निराला' को है। इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए हम श्री निरालाजी के विशेष आभारी हैं। बगला भाषा का पूर्ण ज्ञान रखने के कारण श्री निरालाजी ने अनुवाद मे केन्द्रीय भाव तथा शैली को ज्यो का त्यो रखा है और साथ ही साथ साहित्यिक दृष्टि से भी उसे बहुत ऊँचा बनाया है।

हमे विश्वास है, यह पुस्तक पाठको का हित करने में सफल होगी।

नागपुर,
२२-२-१९६६

—प्रकाशक

भगवान श्रीरामकृष्णदेव

की

संक्षिप्त जीवनी

हम यह देखते हैं कि श्रीरामचन्द्र तथा भगवान बुद्ध को छोड़कर बहुधा अन्य सभी अवतारी महापुरुषों का जन्म संकट-ग्रस्त परिस्थितियों में ही हुआ है, और यह कहा जा सकता है कि भगवान श्रीरामकृष्ण भी किसी विशेष प्रकार के सुखद वातावरण में इस संसार में अवतरित नहीं हुए।

श्रीरामकृष्ण का जन्म हुगली प्रान्त के कामारपुकुर गाँव में एक श्रेष्ठ ब्राह्मण परिवार में शकाब्द १७५७ फाल्गुन मास की शुक्लपक्ष द्वितीया तदनुसार बुधवार ता० १७ फरवरी १८३६ ई० को हुआ। कामारपुकुर गाँव वर्दवान से लगभग २४-२५ मील दक्षिण तथा जहानाबाद (आरामबाग) से लगभग आठ मील पश्चिम में है।

श्रीरामकृष्ण के पिता श्री क्षुदिराम चट्टोपाध्याय परम तपस्वी, सत्यनिष्ठ एवं त्यागी पुरुष थे, और उनकी माता श्री चन्द्रामणि देवी सरलता तथा दयालुता की मूर्ति थी। यह आदर्श दम्पति पहले देरे नामक गाँव में रहते थे, परन्तु वहाँ के अन्यायी जमींदार की कुछ जबरदस्तियों के कारण इन्हें वह गाँव छोड़कर करीब तीन मील की दूरी पर इसी कामारपुकुर गाँव में आ बसना पड़ा।

बचपन में श्रीरामकृष्ण का नाम गदाधर था। अन्य बालकों की भाँति वे भी पाठशाला भेजे गये, परन्तु एक ईश्वरी अवतार

एव ससार के पथ-प्रदर्शक को उस अ, आ, इ, ई की पाठशाला में चैन कहाँ ? बस, जी उचटने लगा, और मन लगा घर में स्थापित आनन्दकन्द सच्चिदानन्द भगवान् श्री रामजी की मूर्ति में—स्वय वे फूल तोड लाते और इच्छानुसार मनमानी उनकी पूजा करते ।

कहते हैं कि अवतारी पुरुषो में कितने ही ऐसे गुण छिपे रहते हैं कि उनका अनुमान करना कठिन होता है । श्री गदाधर की स्मरण-शक्ति विशेष तीव्र थी । साथ ही उन्हे गाने की भी रुचि थी और विशेषत भक्तिपूर्ण गानो के प्रति ।

साधु-सन्यासियो के जत्थो के दर्शन तो मानो इनकी जीवनी में सजीवनी का कार्य करते थे । अपने घर के पास लाहा की अतिथिशाला मे जहाँ बहुधा सन्यासी उतरा करते थे, इनका काफी समय जाता था । मोहल्ले के बालक, वृद्ध, सभी ने न जाने इनमें कौनसा दैवी गुण परखा था कि वे सब इनसे बडे प्रसन्न रहते थे । रामायण, महाभारत, गीता आदि के श्लोक ये केवल बडी भक्ति से सुनते ही नही थे, वरन् उनमें से बहुत से उन्हे सहजरूप कठस्थ भी हो जाया करते थे ।

यह दैवी बालक अपनी करतूतें शुरू से ही दिखाते रहा और कह नही सकते कि उसके बचपन से ही कितनो ने उसे ताडा होगा ।

छिपे हुए दैवी गुणो का विकास पहले-पहल उस बार हुआ जब यह बालक अपने गाँव के समीपवर्ती अनुड़ गाँव को जा रहा था । एकाएक इस बालक को एक विचित्र प्रकार की ज्योति का दर्शन हुआ और वह बाह्यज्ञानशून्य हो गया । कहना न होगा कि मायाग्रस्त सासारिको ने जाना कि गर्मी के कारण वह मूर्च्छा

थी, परन्तु वास्तव में वह थी भाव-समाधि। अपने पिता की मृत्यु के बाद श्रीरामकृष्ण अपने ज्येष्ठ भ्राता के साथ, जो एक बडे विद्वान् पुरुष थे, कलकत्ता आये। उस समय वे लगभग १७-१८ वर्ष के थे। कलकत्ते में उन्होने एक-दो स्थानो पर पूजन का कार्य किया। इसी अवसर पर रानी रासमणि ने कलकत्ते से लगभग पांच मील पर दक्षिणेश्वर मे एक मन्दिर बनवाया और श्रीकाली देवी की स्थापना की। ता० ३१ मई १८५५ को इसी मन्दिर में श्रीरामकृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता श्रीरामकुमारजी काली-मन्दिर के पुजारी-पद पर नियुक्त हुए, परन्तु यह कार्य-भार शीघ्र ही श्रीरामकृष्ण पर आ पडा। श्रीरामकृष्ण उक्त मन्दिर मे पूजा करते थे, परन्तु अन्य साधारण पुजारियो की भाँति वे कोरी पूजा नही करते थे, परन्तु पूजा करते समय ऐसे मग्न हो जाते थे कि उस प्रकार की अलौकिक मग्नता 'देखा सुना कबहु नहीं कोई'—और यह अक्षरश सत्य भी क्यो न हो? ईश्वर ही ईश्वर की पूजा कर रहे थे! उस भाव का वर्णन कौन कर सकता है जिससे श्रीरामकृष्ण प्रेरित हो, ध्यानावस्थित हो श्री काली देवी पर फूल चढाते थे। आँखो मे अश्रुधारा बह रही है, तन-मन की सुध नहीं, हाथ कांप रहे है, हृदय उल्हास से भरा है, मुख से शब्द नही निकलते है, पैर भूमि पर स्थिर नही रहते हैं और घटी आरती आदि तो सब किनारे ही पडी रही—श्री कालीजी पर पुष्प चढा रहे हैं और थोडी ही देर मे उन्हे ही उन्हे देखते हैं—स्वय में भी उन्ही को देख रहे हैं और कम्पित कर से अपने ही ऊपर फूल चढाने लगते हैं, कहते हैं—माँ-माँ-मैं-मैं, तुम और ध्यानमग्न हो समाधिस्थ हो जाते हैं। देखनेवाले समझते है कुछ का कुछ, परन्तु ईश्वर मुस्कराते हैं, बडे ध्यान से सब देखते हैं

और विचारते होंगे कि यह रामकृष्ण हूँ तो मैं हो !

उनके हृदय की व्याकुलता की पराकाष्ठा उस दिन हो गयी जब व्यथित होकर माँ के दर्शन के लिए एक दिन मन्दिर में लटकती हुई तलवार उन्होंने उठा ली और ज्योंही उससे वे अपना शरीरान्त करना चाहते थे कि उन्हें जगन्माता का अपूर्व अद्भुत दर्शन हुआ और देहभाव भूलकर वे बेसुध हो जमीन पर गिर पड़े। तदुपरान्त बाहर क्या हुआ और वह दिन तथा उनके बाद का दिन कैसे व्यतीत हुआ, यह उन्हें कुछ भी नहीं मालूम पड़ा। अन्तःकरण में केवल एक प्रकार के अननुभूत आनन्द का प्रवाह बहने लगा।

बेचारा मायाग्रस्त पुरुष यह सब कैसे समझ सकता है ? उसके लिए तो दिव्य चक्षु की आवश्यकता होती है। बस श्रीरामकृष्ण के घर के लोग समझ गये कि इनके मस्तिष्क में कुछ फेरफार हो गया है और विचार करने लगे उसके उपचार का। किसी ने सलाह दी कि इनका विवाह कर दिया जाय तो शायद मानसिक विकार (?) दूर हो जाय। विवाह का प्रबन्ध होने लगा और कामारपुकुर से दो कोस पर जयरामवाटी ग्राम में रहने वाले श्रीरामचन्द्र मुखोपाध्याय की कन्या श्रीशारदामणि से इनका विवाह करा दिया गया।

परन्तु इस बालिका के दक्षिणेश्वर में आने पर भी श्रीराम-कृष्ण के जीवन में कोई अन्तर नहीं हुआ और श्रीरामकृष्ण ने उस बालिका में प्रत्यक्ष देखा उन्हीं श्रीकाली देवी को। एक सांसारिक बन्धन सम्मुख आया और वह था पति का कर्तव्य। बालिका को बुलाकर शान्ति से पूछा कि यदि वह उन्हें सांसारिक जीवन की ओर खींचना चाहती है तो वे तैयार हैं। परन्तु उन

बालिका ने तुरन्त उत्तर दिया, "मेरी यह बिलकुल इच्छा नही कि आप सांसारिक जीवन व्यतीत करे, पर हाँ आपसे मेरी यह प्रार्थना अवश्य है कि आप मुझे अपने ही पास रहने दें, अपनी सेवा करने दें तथा योग्य मार्ग बतलावे।"

कहा जा सकता है कि उस बालिका ने एक आदर्श अर्धांगिनी का धर्म पूर्ण रूप से निवाहा। अपने सर्वस्व पति को ईश्वर मानकर उनके सुख में अपना सुख देखा और उनके आदर्श जीवन की साथिन बनकर उनकी सहायता करने लगी। श्रीरामकृष्ण को तो श्रीसारदा देवी और श्री काली देवी एक ही प्रतीत होने लगी और इस भाव की चरम सीमा उस दिन हुई जब उन्होंने श्रीसारदा देवी का साक्षात् श्री जगदम्बाज्ञान से षोडशोपचार पूजन किया। पूजाविधि पूर्ण होते ही श्रीसारदा देवी को समाधि लग गयी। अर्ध-बाह्य दशा में मन्त्रोच्चार करते-करते श्रीरामकृष्ण भी समाधिमग्न हो गये। देवी और उसके पुजारी दोनों ही एकरूप हो गये। कैसा उच्च भाव है--अनेकता में एकता झलकने लगी!

हीरे का परखनेवाला जौहरी निकल ही आता है। रानी रासमणि के जामाता श्री मथुरबाबू ने यह भाव कुछ ताड़ लिया और श्रीरामकृष्ण को परखकर शीघ्र ही उन्होंने उनकी सेवा-सुश्रुषा का उचित प्रबन्ध कर दिया। इतना ही नही, बल्कि पुजारीपद पर एक दूसरे ब्राह्मण को नियुक्त कर उन्हें अपने भाव में मग्न रहने का पूरा-पूरा अवकाश दे दिया। साथ ही श्रीरामकृष्ण के भानजे श्री हृदयराम को उनकी सेवा आदि का कार्य सौंप दिया।

फिर श्रीरामकृष्ण ने विशेष पूजा नही की। दिन-रात

'माँ काली' 'माँ काली' ही पुकारा करते थे; कभी जड़वत् हो मूर्ति की ओर देखते, कभी हँसते, कभी बालकों की तरह फूट-फूट कर रोते और कभी-कभी तो इतने व्याकुल हो जाते कि भूमि पर लोटते-पोटते अपना मुँह तक रगड़ डालते थे।

इसके बाद श्रीरामकृष्ण ने भिन्न-भिन्न साधनाएँ कीं और कई प्रकार के दर्शन प्राप्त कर लिये। काली-मन्दिर में एक बड़े वेदान्ती श्री तोतापुरीजी पधारे थे। वे वहाँ लगभग ग्यारह महीने रहे और उन्होंने श्रीरामकृष्ण से वेदान्त-साधना करायी। श्री तोतापुरीजी को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जिस निर्विकल्प समाधि को प्राप्त करने के लिए उन्हें चालीस वर्ष तक सतत प्रयत्न करना पड़ा था, उसे श्रीरामकृष्ण ने तीन ही दिन में सिद्ध कर डाला। इसके कुछ समय पूर्व ही वहाँ एक भैरवी ब्राह्मणी पधारी थी। उन्होंने भी श्रीरामकृष्ण से अनेक प्रकार की तन्त्रोक्त साधनायें कराई थी।

श्री वैष्णवचरण जो एक वैष्णव पण्डित थे, श्रीरामकृष्ण के पास बहुधा आया करते थे। वे उन्हें एक बार चैतन्य सभा में ले गये। श्रीरामकृष्ण वहाँ समाधिस्थ हो गये और श्री चैतन्यदेव के ही आसन पर जा विराजे। वैष्णवचरण ने मथुरबाबू से कहा, यह उन्माद साधारण नहीं, वरन् दैवी है। श्रीचैतन्य की भाँति श्रीरामकृष्ण की भी कभी 'अन्तर्दशा', कभी 'अर्धबाह्य' और कभी 'बाह्य दशा' हो जाया करती थी। वे कहते थे कि अखण्ड सच्चिदानन्द परब्रह्म और माँ सब एक ही हैं।

उन्होंने कामिनी कांचन का पूर्ण रूप से त्याग किया था। अपने भक्तगणों को, जो सैकड़ों की संख्या में उनके पास आते थे, वे कहा करते थे कि ये दोनों चीजें ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग में

विशेष रूप से बाधक हैं। बुरे आचरण वाली नारी में भी वे जगन्माता का साक्षात् स्वरूप देखते थे और उसी भाव से आदर करते थे। उनका काचन-त्याग इतना पूर्ण था कि यदि वे पैसे या रुपये को छू लेते तो उनकी उँगलियाँ ही टेढ़ी-मेढ़ी होने लगती थी। कभी-कभी वे गिन्नियो और मिट्टी को एक साथ अजुली मे लेकर गगाजी के किनारे बैठ जाते थे और 'मिट्टी पैसा, पैसा मिट्टी' कहते हुए दोनो चीजो को मलते-मलते श्री गगाजी की धार में बहा देते थे।

माता चन्द्रामणि को श्रीरामकृष्ण जगज्जननी का स्वरूप मानते थे। अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री रामकुमार के स्वर्ग-लाभ के बाद श्रीरामकृष्ण उन्हे अपने ही पास रखते थे और उनकी पूजा करते थे।

मथरबाबू तथा उनकी पत्नी जगदम्बा दासी के साथ वे एक बार वाराणसी, प्रयाग तथा वृन्दावन भी गये थे। उस समय हृदयराम भी साथ मे थे। वाराणसी मे उन्होने मणिकर्णिका मे समाधिस्थ होकर भगवान शकर के दर्शन किये और मौनव्रत-धारी त्रैलग स्वामी से भेंट की। मथुरा मे तो उन्होने साक्षात् भगवान आनन्दकन्द, सच्चिदानन्द, अन्तर्यामी श्रीकृष्ण के दर्शन किये। कैसी उच्च भावदशा रही होगी !

'सेस महेस, गनेस,
सुरेस जाहि निरन्तर गावे,
जाहि अनादि अनन्त अखण्ड
अछेद अभेद सुवेद बतावे।'

—श्रीरसखानि

उन्हीं भगवान् श्रीकृष्ण को उन्होंने यमुना पार करते हुए गौओं को गोधूलि समय वापस आते देखा और ध्रुव घाट पर से वसुदेव की गोद में भगवान श्रीकृष्ण के दर्शन किये।

श्रीरामकृष्ण तो कभी-कभी समाविस्थ हो कहते थे, 'जो राम थे और जो कृष्ण थे वही अब रामकृष्ण होकर आया है।'

सन् १८७९–८० में श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त उनके पास आने लगे थे। उस समय उनकी उन्माद अवस्था प्रायः चली सी गयी थी और अब शान्त, सदानन्द और समाधि की अवस्था थी। बहुधा वे समाधिस्थ रहते थे और समाधि भंग होने पर भाव-राज्य में विचरण किया करते थे।

शिष्यों में उनके मुख्य शिष्य नरेन्द्र (बाद में स्वामी विवेकानन्द) थे। जब से श्री नरेन्द्र उनके पास आने लगे थे तभी से उन्हें नरेन्द्र के प्रति एक विशेष प्रेम हो गया था और वे कहते थे कि नरेन्द्र साधारण जीव नहीं हैं। कभी-कभी तो नरेन्द्र के न आने से उन्हें व्याकुलता होती थी, क्योंकि वे यह अवश्य जानते रहे होंगे कि उनका कार्य भविष्य में मुख्यतः नरेन्द्र द्वारा ही सचालित होगा। अन्य भक्तगण राखाल, भवनाथ, बलराम, मास्टर महाशय आदि थे। ये भक्तगण १८८२ के लगभग आये और इसके उपरान्त दो-तीन वर्ष तक अनेक अन्य भक्त भी आये। इन सब भक्तों ने श्रीरामकृष्ण तथा उनके कार्य के लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, डॉ. महेन्द्रलाल सरकार, बंकिम-चन्द्र चट्टोपाध्याय, अमेरिका के कुक साहब, पं पद्मलोचन तथा आर्य समाज के प्रवर्तक श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने भी उनके दर्शन किये थे।

ब्राह्म समाज के अनेक लोग उनके पास आया जाया करते थे। श्रीरामकृष्ण केशवचन्द्र सेन के ब्राह्म मन्दिर मे भी गये थे।

श्रीरामकृष्ण ने अन्य धर्मों की भी साधनाये की। उन्होने कुछ दिनो तक इस्लाम धर्म का पालन किया और 'अल्लाह' मन्त्र का जप करते-करते उन्होने उस धर्म का अन्तिम ध्येय प्राप्त कर लिया। इसी प्रकार उसके उपरान्त उन्होने ईसाई धर्म की साधना की और ईसामसीह के दर्शन किये। जिन दिनो वे जिस धर्म की साधना मे लगे रहते थे, उन दिनो उसी धर्म के अनुसार रहते, खाते, पीते, बैठते-उठते तथा बातचीत करते थे। इन सब साधनाओ से उन्होने यह दिखा दिया कि सब धर्म अन्त मे एक ही ध्येय मे पहुँचते हैं। और उनमें आपस म विरोध-भाव रखना मूर्खता है। ऐसा महान् कार्य करने वाले ईश्वरी अवतार श्रीरामकृष्ण ही थे।

इस प्रकार ईश्वरप्राप्ति के लिए कामिनी-काचन का सर्वथा त्याग तथा भिन्न-भिन्न धर्मों मे एकता की दृष्टि रखना इन्होने अपने सभी भक्तो को सिखाया और उनसे उनका अभ्यास कराया। वे सारे भक्तगण आगे चलकर भारतवर्ष के अतिरिक्त अमेरिका आदि अन्य देशो मे भी गये और वहाँ उन्होने श्रीरामकृष्ण के उपदेशो का प्रचार किया।

१६ अगस्त सन् १८८६ के प्रात काल पाँच बजे गले के रोग से पीडित हो श्रीरामकृष्ण ने महासमाधि ले ली, परन्तु महासमाधि में गया केवल उनका पाचभौतिक शरीर। उनके उपदेश आज ससार भर में श्रीरामकृष्ण मिशन के द्वारा कोने-कोने में गूंज रहे हैं और उनसे असख्य जनो का कल्याण हो रहा है।

—विद्याभास्कर शुक्ल

अनुक्रमणिका

श्रीरामकृष्णवचनामृत

परिच्छेद १

प्रथम दर्शन

(१८८२ ई. मार्च)

(१)

तव कथामृतं तप्तजीवनं, कविभिरीडित कल्मषापहम् ।
श्रवणमंगलं श्रीमदाततं, भुवि गृणन्ति ये भूरिदा जनाः ।।

श्रीमद्भागवत, गोपीगीता, रासपञ्चाध्याय ।

श्रीगंगाजी के पूर्वतट पर कलकत्ते से कोई छ मील दूर दक्षिणेश्वर में श्रीकालीजी का मन्दिर है। यहीं भगवान् श्रीरामकृष्ण देव रहते हैं। मास्टर संध्या समय पहले पहल उनके दर्शन करने गये। उन्होंने देखा, श्रीरामकृष्णदेव के कमरे में लोग चुपचाप बैठे उनका वचनामृत पान कर रहे हैं।

कर्मत्याग कब होता है ?

श्रीरामकृष्ण कहते हैं—'जब श्रीभगवान् का नाम एक ही बार जपने से रोमांच होता है—आँसुओं की धारा बहती है तब निश्चय समझो कि सन्ध्यादि कर्मों की समाप्ति हो जाती है—तब कर्मत्याग का अधिकार पैदा हो जाता है—कर्म आप ही आप छूट जाते हैं।" आपने फिर कहा—"सन्ध्यावन्दन का लय गायत्री में होता है और गायत्री का ओंकार में।"

श्रीरामकृष्णदेव के कमरे में धूप की सुगन्ध भर रही थी। मास्टर अँग्रेजी पढ़े लिखे आदमी हैं। सहसा घर में घुस न सके थे। द्वार पर वृन्दा (कहारिन) खड़ी थी। मास्टर ने पूछा—"साधु महाराज क्या इस समय घर के भीतर हैं।"

उसने कहा, "हाँ, वे भीतर हैं।"

मास्टर—ये यहाँ कब से हैं?

वृन्दा—ये? बहुत दिनों से हैं।

मास्टर—अच्छा, तो पुस्तकें खूब पढ़ते होंगे?

वृन्दा—पुस्तकें? इनके मुँह में सब कुछ है।

श्रीरामकृष्ण पुस्तकें नहीं पढ़ते, यह सुनकर मास्टर को और भी आश्चर्य हुआ।

मास्टर—अब तो ये शायद सन्ध्या करेंगे?—क्या हम भीतर जा सकते हैं? एक बार खबर दे दो न।

वृन्दा—तुम लोग जाते क्यों नहीं?—जाओ, भीतर बैठो।

मास्टर अपने मित्र के साथ भीतर गये। देखा, श्रीरामकृष्ण अकेले तखत पर बैठे हैं। चारों ओर के द्वार बन्द हैं। मास्टर ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और आज्ञा पाकर बैठ गये। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, कहाँ रहते हो, क्या करते हो, बराहनगर क्यों आये इत्यादि। मास्टर ने कुछ परिचय दिया। श्रीरामकृष्ण का मन बीच-बीच में दूसरी ओर खिंच रहा था। मास्टर को बाद में मालूम हुआ कि इसी को 'भाव' कहते हैं।

मास्टर—आप तो अब सन्ध्या करेंगे, हम अब चले।

श्रीरामकृष्ण (भावस्थ)—नहीं,—सन्ध्या—ऐसा कुछ नहीं।

मास्टर ने प्रणाम किया और चलना चाहा।

श्रीरामकृष्ण—फिर आना।

(२)

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

गृहस्थ तथा पिता का कर्तव्य

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—क्यों जी, तुम्हारा घर कहाँ है ?

मास्टर—जी कलकत्ते में ।

श्रीरामकृष्ण—यहाँ कहाँ आये हो ?

मास्टर—यहाँ वराहनगर में बड़ी दीदी के घर आया हूँ,—ईशान कविराज के यहाँ ।

श्रीरामकृष्ण—ओ—ईशान के यहाँ ?

केशवचन्द्र सेन

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी, केशव अब कैसा है—बहुत बीमार था।

मास्टर—जी हाँ, मैंने भी सुना था कि बीमार है, पर अब शायद अच्छे हैं ।

श्रीरामकृष्ण—मैंने तो केशव के लिए माँ के निकट नारियल और चीनी की पूजा मानी थी । रात को जब नींद उचट जाती थी, तब माँ के पास रोता था और कहता था,–'माँ केशव की बीमारी अच्छी कर दे । केशव अगर न रहा तो मैं कलकत्ते जाकर बातचीत किससे करूँगा ?' इसी से तो नारियल-चीनी मानी थी ।

क्यों जी, क्या कोई कुक साहब आया है ? सुना वह लेक्चर (व्याख्यान) देता है । मुझे केशव जहाज पर चढ़ाकर ले गया था । कुक साहब भी साथ था ।

मास्टर—जी हाँ, ऐसा ही कुछ मैंने भी सुना था । परन्तु मैंने उनका लेक्चर नहीं सुना । उनके विषय में ज्यादा कुछ मैं नहीं जानता ।

श्रीरामकृष्ण—प्रताप का भाई आया था। कई दिन यहाँ रहा। काम-काज कुछ है नहीं। कहता है, मैं यहाँ रहूँगा। सुनते हैं, जोरू-जाता सबको ससुराल भेज दिया है। बच्चे-बच्चे कई हैं, मैंने खूब डाँटा। भला देखो तो, लड़के-बच्चे हुए हैं, उनकी देख-रेख, उनका पालपोष तुम न करोगे तो क्या कोई गाँववाला करेगा? बहुत डाँटा और काम-काज खोज लेने को कहा, तब यहाँ से गया।

(३)

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

मास्टर का तिरस्कार तथा उनका अहंकार चूर्ण करना

श्रीरामकृष्ण—क्या तुम्हारा विवाह हो गया है?

मास्टर—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण (चौंककर)—अरे रामलाल, अरे अपना विवाह तो इसने कर डाला।

रामलाल श्रीरामकृष्ण के भतीजे और कालीजी के पुजारी हैं।

मास्टर घोर अपराधी जैसे सिर नीचा किये चुपचाप बैठे रहे। सोचने लगे, विवाह करना क्या इतना बड़ा अपराध है?

श्रीरामकृष्ण ने फिर पूछा—क्या तुम्हारे लड़के-बच्चे भी हैं?

मास्टर का कलेजा काँप उठा। डरते हुए बोले—जी हाँ, लड़के-बच्चे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा—अरे लड़के भी हो गये!

मास्टर का अहंकार चूर्ण होने लगा। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण सस्नेह कहने लगे—देखो, तुम्हारे लक्षण अच्छे हैं, यह सब मैं किसी को देखते ही जान लेता हूँ। अच्छा, तुम्हारी स्त्री कैसी है? विद्या-शक्ति है या अविद्या-शक्ति?

मास्टर—जी अच्छी है, पर अज्ञान है।

श्रीरामकृष्ण—और तुम ज्ञानी हो ?

मास्टर नही जानते, ज्ञान किसे कहते हैं और अज्ञान किसे। अभी तो उनकी धारणा यही है कि कोई लिख-पढ ले तो मानो ज्ञानी हो गया। उनका यह भ्रम दूर तब हुआ जब उन्होने सुना कि ईश्वर को जान लेना ज्ञान है और न जानना अज्ञान।

श्रीरामकृष्ण की इस बात से कि 'तुम ज्ञानी हो' मास्टर के अहकार पर फिर धक्का लगा।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम्हारा विश्वास 'साकार' पर है या 'निराकार' पर ?

मास्टर मन ही मन सोचने लगे, 'यदि साकार पर विश्वास हो तो क्या निराकार पर भी विश्वास हो सकता है ? ईश्वर निराकार है—यदि ऐसा विश्वास हो तो ईश्वर साकार है ऐसा भी विश्वास कभी हो सकता है ? ये दोनो विरोधी भाव किस प्रकार सत्य हो सकते हैं ? सफेद दूध क्या कभी काला हो सकता है ?'

मास्टर—निराकार मुझे अधिक पसन्द है।

श्रीरामकृष्ण—अच्छी बात है। किसी एक पर विश्वास रखने से काम हो जायगा। निराकार पर विश्वास करते हो, अच्छा है। पर यह न कहना कि यही सत्य है, और सब झूठ। यह समझना कि निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है। जिस पर तुम्हारा विश्वास हो उसी को पकडे रहो।

दोनो सत्य है, यह सुनकर मास्टर चकित हो गये। यह बात उनके किताबी ज्ञान मे तो थी ही नही ! उनका अहकार फिर चूर्ण हुआ, पर अभी कुछ रह गया था, इसलिए फिर वे तर्क करने को आगे बढे।

मास्टर—अच्छा, वे साकार हैं, यह विश्वास मानो हुआ, पर मिट्टी की या पत्थर की मूर्ति तो वे हैं नही ।

श्रीरामकृष्ण—पत्थर की मूर्ति वे क्यो होने लगे ? पत्थर या मिट्टी नही, **चिन्मयी मूर्ति** ।

चिन्मयी मूर्ति, यह बात मास्टर न समझ सके । उन्होने कहा—अच्छा जो मिट्टी की मूर्ति पूजते हैं, उन्हे समझाना भी तो चाहिए कि मिट्टी की मूर्ति ईश्वर नही है और मूर्ति के सामने ईश्वर की ही पूजा करना ठीक है, किन्तु मूर्ति की नही !

श्रीरामकृष्ण (विरक्त होकर)—तुम्हारे कलकत्ते के आदमियों में यही तो एक धुन है,—सिर्फ लेक्चर देना और दूसरों को समझाना ! अपने को कौन समझाये, इसका ठिकाना नही । अजी समझानेवाले तुम हो कौन ? जिनका ससार है वे समझाएँगे । जिन्होने सृष्टि रची है, सूर्य-चन्द्र-मनुष्य-जीव-जन्तु बनाये है, जीव जन्तुओं के भोजन के उपाय सोचे है, उनका पालन करने के लिए माता-पिता बनाये है, माता-पिता में स्नेह का सचार किया है—वे समझाएँगे । इतने उपाय तो उन्होने किये और यह उपाय वे न करेंगे ? अगर समझाने की जरूरत होगी तो वे समझाएँगे, क्योंकि वे अन्तर्यामी है । यदि मिट्टी की मूर्ति पूजने मे कोई भूल होगी तो क्या वे नही जानते कि पूजा उन्ही की हो रही है ? वे उसी पूजा से सन्तुष्ट होते हैं । इसके लिए तुम्हारा सिर क्यों धमक रहा है ? तुम वह चेष्टा करो जिससे तुम्हें ज्ञान हो—भक्ति हो ।

अब शायद मास्टर का अहकार बिलकुल चूर्ण हो गया ।

श्रीरामकृष्ण—तुम मिट्टी की मूर्ति की पूजा की बात कहते थे । यदि मूर्ति मिट्टी ही की हो तो भी उस पूजा की जरूरत है । देखो, सब प्रकार की पूजाओं की योजना ईश्वर ने ही की है ।

जिनका यह संसार है, उन्होंने यह सब किया है। जो जैसा अधिकारी है उसके लिए वैसा ही अनुष्ठान ईश्वर ने किया है। लड़के को जो भोजन रुचता है और जो उसे सह्य है, वही भोजन उसके लिए माँ पकाती है, समझे?

मास्टर—जी हाँ।

(४)

संसारार्णवघोरे यः कर्णधारस्वरूपकः।
नमोऽस्तु रामकृष्णाय तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

भक्ति का उपाय

मास्टर (विनीत भाव से)—ईश्वर में मन किस तरह लगे?

श्रीरामकृष्ण—सर्वदा ईश्वर का नाम-गुण-गान करना चाहिए, सत्संग करना चाहिए—बीच-बीच में भक्तों और साधुओं से मिलना चाहिए। संसार में दिन-रात विषय के भीतर पड़े रहने से मन ईश्वर में नहीं लगता। कभी-कभी निर्जन स्थान में ईश्वर की चिन्ता करना बहुत जरूरी है। प्रथम अवस्था में बिना निर्जन के ईश्वर में मन लगाना कठिन है।

"पौधे को चारों ओर से रूँधना पड़ता है, नहीं तो बकरी चर लेगी।

"ध्यान करना चाहिए मन में, कोने में और वन में। और सर्वदा सत्-असत् विचार करना चाहिए। ईश्वर ही सत् अथवा नित्य हैं, और सब असत् अनित्य। इस प्रकार विचार करने से मन से अनित्य वस्तुओं का त्याग हो जाता है।

मास्टर (विनीत भाव से)—संसार में किस तरह रहना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण—सब काम करना चाहिए परन्तु मन ईश्वर में रखना चाहिए।

"माता-पिता, स्त्री-पुत्र आदि सबकी सेवा करते हुए इस ज्ञान को दृढ़ रखना चाहिए कि ये हमारे कोई नहीं हैं।

"किसी धनी के घर की दासी उसके घर का कुल काम करती है, उसके लड़के को खिलाती है—जब देखो तब भैया रे भैया रे, करती रहती है, पर मन ही मन खूब जानती है कि मेरा यहाँ कुछ नहीं है।

"कछुआ रहता तो पानी में है, पर उसका मन रहता है किनारे पर जहाँ उसके अण्डे रखे हैं। संसार का काम करो, पर मन रखो ईश्वर में।

"बिना भगवद्-भक्ति पाये यदि संसार में रहोगे तो दिनोंदिन उलझनों में फँसते जाओगे और यहाँ तक फँस जाओगे कि फिर पिण्ड छुड़ाना कठिन होगा। रोग, शोक, पाप और तापादि से अधीर हो जाओगे। विषय-चिन्तन जितना ही करोगे, बँधोगे भी उतना ही अधिक मजबूत।

"हाथों में तेल लगाकर कटहल काटना चाहिए। नहीं तो, हाथों में उसका दूध चिपक जाता है। भगवद्-भक्ति रूपी तेल हाथों में लगाकर संसार रूपी कटहल के लिए हाथ बटाओ।

"यदि भक्ति पाने की इच्छा हो तो निर्जन में रहो। मक्खन खाने की इच्छा होती है, तो दही निर्जन में ही जमाया जाता है। हिलाने-डुलाने से दही नहीं जमता। इसके बाद निर्जन में ही सब काम छोड़कर दही मथा जाता है, तभी मक्खन निकलता है।

"देखो, निर्जन में ही ईश्वर का चिन्तन करने से यह मन भक्ति, ज्ञान और वैराग्य का अधिकारी होता है। इस मन को यदि संसार में डाल रखोगे तो यह नीच हो जायगा। संसार में कामिनी-कांचन के सिवा और है ही क्या ?

"ससार जल है और मन मानो दूध। यदि पानी में डाल दोग तो दूध पानी में मिल जायगा, पर उसी दूध का निर्जन में मक्खन बनाकर यदि पानी में छोडोगे तो मक्खन पानी में उतराता रहेगा। इस प्रकार निर्जन मे साधना द्वारा ज्ञान-भक्ति प्राप्त करके यदि समार में रहोगे भी तो समार से निर्लिप्त रहोगे।

"साथ ही माथ विचार भी खूब करना चाहिए। कामिनी और काचन अनित्य हैं, ईश्वर ही नित्य हैं। रुपये से क्या मिलता है? रोटी, दाल, कपडे, रहने की जगह—बस यही तक। रुपये से ईश्वर नही मिलते। तो रुपया जीवन का लक्ष्य नही हो सकता। इसी को विचार कहते हैं—समझे?"

मास्टर—जी हाँ, अभी-अभी मैंने 'प्रबोध चन्द्रोदय' नाटक पढा है। उसमें 'वस्तु-विचार' है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वस्तु-विचार। देखो, रुपये मे ही क्या है और सुन्दरी के देह में भी क्या है।

"विचार करो, सुन्दरी की देह में केवल हाड, मास, चरबी, मल, मूत्र—यही सब है। ईश्वर को छोड इन्ही वस्तुओं मे मनुष्य मन क्यो लगाता है? क्यो वह ईश्वर को भूल जाता है?"

ईश्वर-दर्शन के उपाय

मास्टर—क्या ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, हो सकते हैं। बीच-बीच में एकान्तवास, उनका नाम-गुण-गान और वस्तु-विचार करने से ईश्वर के दर्शन होते है।

मास्टर—कैसी अवस्था हो तो ईश्वर के दर्शन हों?

श्रीरामकृष्ण—**खूब व्याकुल होकर रोने से उनके दर्शन होते हैं।** स्त्री या लडके के लिए लोग आँसुओ की धारा बहाते हैं, रुपये के लिए रोते हुए आँखें लाल कर लेते हैं, पर ईश्वर के लिए कोई

कब रोना है ?

"व्याकुलता हुई कि मानो आसमान पर सुबह की ललाई छा गयी। शीघ्र ही सूर्य भगवान् निकलते हैं, व्याकुलता के बाद ही भगवद्दर्शन होते हैं।

"विषय पर विषयी की, पुत्र पर माता की और पति पर सती की—यह तीन प्रकार की चाह एकत्रित होकर जब ईश्वर की ओर मुड़ती है तभी ईश्वर मिलते हैं।

"बात यह है कि ईश्वर को प्यार करना चाहिए। विषय पर विषयी की, पुत्र पर माता की और पति पर सती की जो प्रीति है, उसे एकत्रित करने से जितनी प्रीति होती है, उतनी ही प्रीति से ईश्वर को बुलाने से उस प्रेम का महा आकर्षण ईश्वर को खींच लेता है।

"व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए। बिल्ली का बच्चा 'मिऊँ-मिऊँ' करके माँ को पुकारता भर है। उसकी माँ जहाँ उसे रखती, वहीं वह रहता है। यदि उसे कष्ट होता है तो बस वह 'मिऊँ-मिऊँ' करता है और कुछ नहीं जानता। माँ चाहे जहाँ रहे 'मिऊँ-मिऊँ' सुनकर आ जाती है।'

(५)

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः॥ गीता, ६-२९

नरेन्द्र, भवनाथ तथा मास्टर

रविवार का दिन है। समय तीन-चार बजे के लगभग होगा। श्रीरामकृष्ण का कमरा भक्तों से ठसाठस भरा हुआ है। उन्नीस साल के एक लड़के से बड़े आनन्द के साथ श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं, लड़के का नाम है नरेन्द्र*। अभी ये कालेज में पढ़ते

* बाद में ये ही स्वामी विवेकानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए।

हैं और साधारण ब्राह्म-समाज मे भी कभी-कभी जाते है। इनकी आँखें पानीदार और बाते जोशीली है।

कुछ देर में मास्टर भी पहुँचे और एक ओर बैठ गये। उन्हे अनुमान से मालूम हुआ कि पहले से ससारियो की बाते चल रही है।

श्रीरामकृष्ण—क्यो नरेन्द्र, भला तू क्या कहेगा? ससारी मनुष्य तो न जाने क्या-क्या कहते हैं। पर याद रहे कि हाथी जब जाता है, तब उसके पीछे-पीछे कितने ही जानवर बेतरह चिल्लाते है। पर हाथी लौटकर देखता तक नही। तेरी कोई निन्दा करे तो तू क्या समझेगा?

नरेन्द्र—मैं तो यह समझूँगा कि कुत्ते भौंकते है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—अरे नही, यहा तक नही। (सबका हास्य) सर्वभूतो में परमात्मा का ही वास है। पर मेल-मिलाप करना हो तो भले आदमियो से ही करना चाहिए, बुरे आदमियो से अलग ही रहना चाहिए। बाघ में भी परमात्मा का वास है, इसलिए क्या बाघ को भी गले लगाना चाहिए? (लोग हँस पडे) यदि कहो कि बाघ भी तो नारायण है इसलिए क्यो भागें? इसका उत्तर यह है कि जो लोग कहते है कि भाग चलो, वे भी तो नारायण हैं, उनकी बात क्यो न मानो?

"एक कहानी सुनो। किसी जगल में एक महात्मा थे। उनके कई शिष्य थे। एक दिन उन्होंने अपने शिष्यो को उपदेश दिया कि सर्वभूतो में नारायण का वास है, यह जानकर सभी को नमस्कार करो। एक दिन एक शिष्य हवन के लिए जगल मे लकडी लेने गया। उस समय जगल में यह शोरगुल मचा था कि कोई कही हो तो भागो, पागल हाथी जा रहा है। सभी भाग गये,

पर शिष्य न भागा। उसे तो यह विश्वास था कि हाथी भी नारायण हैं, इसलिए भागने का क्या काम ? वह खड़ा ही रहा। हाथी को नमस्कार किया और उसकी स्तुति करने लगा। इधर महावत के ऊँची आवाज लगाने पर भी कि भागो-भागो, उसने पैर न उठाये। पास पहुँचकर हाथी ने उसे सूंड से लपेटकर एक ओर फेंक दिया और अपना रास्ता लिया। शिष्य घायल हो गया, और बेहोश पड़ा रहा।

"यह खबर गुरु के कान तक पहुँची। वे अन्य शिष्यों को साथ लेकर वहाँ गये और उसे आश्रम में उठा लाये। वहाँ उसकी दवा-दारू की, तब वह होश में आया। कुछ देर बाद किसी ने उससे पूछा, हाथी को आते सुनकर तुम वहाँ से हट क्यों न गये ? उसने कहा कि गुरुजी ने कह तो दिया था कि जीव-जन्तु आदि सब में परमात्मा का ही वास है, नारायण ही सब कुछ हुए हैं, इसी से हाथी नारायण को आते देख मैं नहीं भागा। गुरुजी पास ही थे। उन्होंने कहा—बेटा, हाथी नारायण आ रहे थे, ठीक है, पर महावत नारायण ने तो तुम्हें मना किया था। यदि सभी नारायण हैं तो उस महावत की बात पर विश्वास क्यों न किया ? महावत नारायण की भी बात मान लेनी चाहिये थी। (सब हँस पड़े)

"शास्त्रों में है 'आपो नारायण'—जल नारायण है। परन्तु किसी जल से देवता की सेवा होती है और किसी से लोग मुँह-हाथ धोते हैं, कपड़े धोते हैं और बर्तन मांजते हैं; किन्तु वह जल न पीते हैं, न ठाकुरजी की सेवा में ही लगाते हैं। इसी प्रकार साधु-असाधु, भक्त-अभक्त सभी के हृदय में नारायण का वास है, किन्तु असाधुओं, अभक्तों से व्यवहार या अधिक हेल-मेल

नही चल सकता। किसी से सिर्फ बातचीत भर कर लेनी चाहिए और किसी से वह भी नही। ऐसे आदमियो से अलग ही रहना चाहिए।

दुष्ट लोग तथा तमोगुण

एक भक्त—महाराज, यदि दुष्ट जन अनिष्ट करने पर उतारू हो या कर डाले तो क्या चुपचाप बैठे रहना चाहिए ?

श्रीरामकृष्ण—दुष्ट जनो के बीच रहने से उनसे अपना जी बचाने के लिए कुछ तमोगुण दिखाना चाहिए, परन्तु कोई अनर्थ कर सकता है, यह सोचकर उलटा उसी का अनर्थ न करना चाहिए।

"किसी जगल मे कुछ चरवाहे गौएँ चराते थे। वहाँ एक बडा विषधर सर्प रहता था। उसके डर से लोग बडी सावधानी से आया-जाया करते थे। किसी दिन एक ब्रह्मचारीजी उसी रास्ते से आ रहे थे। चरवाहे दौडते हुए उनके पास आये और उनसे कहा—'महाराज, इस रास्ते से न जाइये, यहाँ एक साँप रहता है, बडा विषधर है।' ब्रह्मचारीजी ने कहा—'तो क्या हुआ, बेटा, मुझे कोई डर नहीं, मै मन्त्र जानता हूँ।' यह कहकर ब्रह्मचारीजी उसी ओर चले गये। डर के मारे चरवाहे उनके साथ न गये। इधर साँप फन उठाये झपटता चला आ रहा था, परन्तु पास पहुँचने के पहले ही ब्रह्मचारीजी ने मन्त्र पढा। साँप आकर उनके पैरो पर लोटने लगा। ब्रह्मचारीजी ने कहा—'तू भला हिंसा क्यो करता है ? ले, मै तुझे मन्त्र देता हूँ। इस मन्त्र को जपेगा तो ईश्वर पर भक्ति होगी, तुझे ईश्वर के दर्शन होगे, फिर यह हिंसावृत्ति न रह जायगी।' यह कहकर ब्रह्मचारीजी ने साँप को मन्त्र दिया। मन्त्र पाकर साँप ने गुरु को प्रणाम किया,

और पूछा—भगवन्, मैं क्या साधना करूँ ? गुरु ने कहा—इस मन्त्र को जप और हिंसा छोड दे । चलते समय ब्रह्मचारीजी फिर आने का वचन दे गये ।

"इस प्रकार कुछ दिन बीत गये । चरवाहों ने देखा कि साँप अब काटता नही, ढेला मारने पर भी गुस्सा नही होता, केंचुए की तरह हो गया है । एक दिन चरवाहों ने उसके पास जाकर पूँछ पकडकर उसे घुमाया और वही पटक दिया । साँप के मुँह से खून बह चला, वह बेहोश पडा रहा; हिल-डुल तक न सकता था । चरवाहों ने सोचा कि साँप मर गया और यह सोचकर वहाँ से वे चले गये ।

"जब बहुत रात बीती तब साँप होश मे आया और धीरे-धीरे अपने बिल के भीतर गया । देह चूर चूर हो गयी थी, हिलने तक की शक्ति नही रह गयी थी । बहुत दिनो के बाद जब चोट कुछ अच्छी हुई तब भोजन की खोज मे बाहर निकला । जब से मारा गया तब से सिर्फ रात को ही बाहर निकलता था । हिंसा करता ही न था । सिर्फ घास-फूस, फल-फूल खाकर रह जाता था ।

"साल भर बाद ब्रह्मचारीजी फिर आये । आते ही साँप की खोज करने लगे । चरवाहो ने कहा, वह तो मर गया है, पर ब्रह्मचारीजी को इस बात पर विश्वास न आया । वे जानते थे कि जो मन्त्र वे दे गये है, वह जब तक सिद्ध न होगा तब तक उसकी देह छूट नही सकती । ढूँढते हुए उसी ओर वे अपने दिये हुए नाम से साँप को पुकारने लगे । बिल से गुरुदेव की आवाज सुनकर साँप निकल आया और बडे भक्तिभाव से प्रणाम किया । ब्रह्मचारीजी ने पूछा, 'क्यो, कैसा है?' उसने कहा, 'जी अच्छा हूँ ।' ब्रह्मचारीजी—'तो तू इतना दुबला क्यों हो गया ?' साँप

ने कहा—'महाराज, जब से आप आज्ञा दे गये, तब से मैं हिंसा नही करता, फल-फूल, घास-पात खाकर पेट भर लेता हूँ, इसीलिए शायद दुबला हो गया हूँ।' सतोगुण बढ जाने के कारण किसी पर वह क्रोध न कर सकता था। इसी से मार की बात भी वह भूल गया था। ब्रह्मचारीजी ने कहा, 'सिर्फ न खाने ही से किसी की यह दशा नही होती, कोई दूसरा कारण अवश्य होगा, तू अच्छी तरह सोच तो।' साँप को चरवाहो की मार याद आ गयी। उसने कहा—'हाँ महाराज, अब याद आयी, चरवाहो ने एक दिन मुझे पटक-पटक कर मारा था, उन अज्ञानियो को तो मेरे मन की अवस्था मालूम थी नही। वे क्या जाने कि मैंने हिंसा करना छोड दिया है ?' ब्रह्मचारीजी बोले—'राम राम, तू ऐसा मूर्ख है ? अपनी रक्षा करना भी तू नही जानता ? मैंने तो तुझे काटने ही को मना किया था, पर फुफकारने से तुझे कब रोका था ? फुफकार मारकर उन्हे भय क्यो नही दिखाया ?'

"इस तरह दुष्टो के पास फुफकार मारना चाहिए, भय दिखाना चाहिए, जिससे कि वे कोई अनिष्ट न कर बैठें, पर उनमे विष न डालना चाहिए, उनका अनिष्ट न करना चाहिए।"

क्या सब आदमी बराबर हैं ?

श्रीरामकृष्ण—परमात्मा की सृष्टि में नाना प्रकार के जीव-जन्तु और पेड-पौधे हैं। पशुओ में अच्छे हैं और बुरे भी। उनमें बाघ जैसा हिंस्र प्राणी भी है। पेडो मे अमृत जैसे फल लगें ऐसे भी पेड हैं और विष जैसे फल हो ऐसे भी हैं। इसी प्रकार मनुष्यो मे भी भले-बुरे और साधु-असाधु हैं। उनमें ससारी जीव भी हैं और भक्त भी।

"जीव चार प्रकार के होते हैं : बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य।

"नारदादि नित्य जीव हैं। ऐसे जीव औरों के हित के लिए, उन्हें शिक्षा देने के लिए संसार में रहते हैं।

"बद्ध जीव विषय में फँसा रहता है। वह ईश्वर को भूल जाता है, भगवच्चिन्ता वह कभी नहीं करता। मुमुक्षु जीव वह है जो मुक्ति की इच्छा रखता है। मुमुक्षुओं में से कोई-कोई मुक्त हो जाते हैं, कोई-कोई नहीं हो सकते।

"मुक्त जीव संसार के कामिनी-कांचन में नहीं फँसते, जैसे साधु-महात्मा। इनके मन में विषय-बुद्धि नहीं रहती। ये सदा ईश्वर के ही पादपद्मों की चिन्ता करते हैं।

"जब जाल तालाब में फेंका जाता है, तब जो दो-चार होशियार मछलियाँ होती हैं, वे जाल में नहीं आतीं। यह नित्य जीवों की उपमा है, किन्तु अनेक मछलियाँ जाल में फँस जाती हैं। इनमें से कुछ निकल भागने की भी चेष्टा करती हैं। यह मुमुक्षुओं की उपमा है, परन्तु सब मछलियाँ नहीं भाग सकतीं। केवल दो-चार उछल-उछलकर जाल से बाहर हो जाती हैं। तब मछुआ कहता है, अरे एक बड़ी मछली बह गयी। किन्तु जो जाल में पड़ी हैं, उनमें से अधिकांश मछलियाँ निकल नहीं सकतीं। वे भागने की चेष्टा भी नहीं करतीं, जाल को मुँह में फाँसकर मिट्टी के नीचे सिर घुसेड़कर चुपचाप पड़ी रहती हैं और सोचती हैं, अब कोई भय की बात नहीं, बड़े आनन्द में हैं। पर वे नहीं जानतीं कि मछुआ घसीटकर उन्हें ले जायगा। यह बद्ध जीवों की उपमा है।

"बद्ध जीव संसार के कामिनी-कांचन में फँसे हैं। उनके हाथ-पैर बँधे हैं, किन्तु फिर भी वे सोचते हैं कि संसार में कामिनी-कांचन में ही सुख है और यहाँ हम निर्भय हैं। वे नहीं जानते, इन्हीं में उनकी मृत्यु होगी। बद्ध जीव जब मरता है, तब उसकी स्त्री

कहती है, 'तुम तो चले, पर मेरे लिए क्या कर गये?' माया भी ऐसी होती है कि बद्ध जीव पडा तो है मृत्युशय्या पर, पर चिराग मे ज्यादा बत्ती जलती हुई देखकर कहता है, तेल बहुत जल रहा है, बत्ती कम करो!

"बद्ध जीव ईश्वर का स्मरण नही करता। यदि अवकाश मिला तो या तो गप करता है या फालतू काम करता है। पूछने पर कहता है, क्या करूँ, चुपचाप बैठ नही सकता, इसी से घेरा बाँध रहा हूँ। कभी ताश ही खेलकर समय काटता है।"

(६)

यो मामजमनादिञ्च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असमूढ. स मर्त्येषु सर्वपापै. प्रमुच्यते।।—गीता, १०।३

उपाय—विश्वास

एक भक्त—महाराज, इस प्रकार के ससारी जीवो के लिए क्या कोई उपाय नही है?

श्रीरामकृष्ण—उपाय अवश्य है। कभी-कभी साधुओ का सग करना चाहिए और कभी-कभी निर्जन स्थान मे ईश्वर का स्मरण और विचार। परमात्मा से भक्ति और विश्वास की प्रार्थना करनी चाहिए।

"**विश्वास** हुआ कि सफलता मिली। विश्वास से बढकर और कुछ नही है।

"विश्वास मे कितना बल है, यह तो तुमने सुना है न? पुराणो में लिखा है कि रामचन्द्र को, जो साक्षात् पूर्णब्रह्म नारायण हैं, लका जाने के लिए सेतु बाँधना पडा था, परन्तु हनुमान राम-नाम के विश्वास ही से कूदकर समुद्र के पार चले गये, उन्होने सेतु की परवाह नही की।

"किसी को समुद्र के पार जाना था। विभीषण ने एक पत्ते पर रामनाम लिखकर उसके कपडे के खूँट में बाँधकर कहा कि तुम्हे अब कोई भय नही, विश्वास करके पानी के ऊपर से चले जाओ, किन्तु यदि तुम्हे अविश्वास हुआ तो तुम डूब जाओगे। वह मनुष्य वडे मजे से समुद्र के ऊपर से चला जा रहा था। उसी समय उसकी यह इच्छा हुई कि गाँठ को खोलकर देखूँ तो इसमें क्या बाँधा है। गाँठ खोलकर उसने देखा तो एक पत्ते पर रामनाम लिखा था। ज्योही उसने सोचा कि अरे इसमें तो सिर्फ रामनाम लिखा है—अविश्वास हुआ कि वह डूब गया।

"जिसका ईश्वर पर विश्वास है, वह यदि महापातक करे—गो-ब्राह्मण-स्त्री-हत्या भी करे—तो भी इस विश्वास के बल से वह बडे-बडे पापो से मुक्त हो सकता है। वह यदि कहे कि ऐसा काम कभी न करूँगा तो उसे फिर किसी बात का भय नही।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने इस मर्म का बगला गीत गाया—

दुर्गा दुर्गा अगर जपूं मैं जब मेरे निकलेंगे प्राण।
देखूं कैसे नहीं तारती हो तुम करुणा की खान॥
गो ब्राह्मण की हत्या करके, करके भी मदिरा का पान।
जरा नहीं परवाह पापों की, लूगा निश्चय पद निर्वाण॥

नरेन्द्र की बात चली। श्रीरामकृष्ण भक्तों से कहने लगे—'इस लडके को यहाँ एक प्रकार देखते हो। चुलबुला लडका जब बाप के पास बैठता है, तब चुपचाप बैठा रहता है और जब चाँदनी पर खेलता है, तब उसकी और ही मूर्ति हो जाती है। ये लडके नित्यसिद्ध हैं। ये कभी ससार में नही बँधते। थोडी ही उम्र में इन्हे चैतन्य होता है,और ये ईश्वर की ओर चले जाते हैं। ये ससार में जीवो को शिक्षा देने के लिए आते हैं। ससार की

कोई वस्तु इन्हे अच्छी नही लगती, कामिनी-काचन मे ये कभी नही पडते ।

"वेदो मे 'होमा' पक्षी की कथा है । यह चिडिया आकाश में बहुत ऊँचे पर रहती है । वहीं यह अण्डे देती है । अण्डा देते ही वह गिरने लगता है, परन्तु इतने ऊँचे से वह गिरता है कि गिरते गिरते बीच ही मे फूट जाता है । तब बच्चा गिरने लगता है । गिरते ही गिरते उसकी आँख खुलती और पख निकल आते हैं । आँखे खुलने से जब वह बच्चा देखता है कि मैं गिर रहा हूँ और जमीन पर गिरकर चूर-चूर हो जाऊँगा, तब वह एकदम अपनी माँ की ओर फिर ऊँचे चढ जाता है ।'

नरेन्द्र उठ गये । सभा में केदार, प्राणकृष्ण, मास्टर आदि और भी कई सज्जन थे ।

श्रीरामकृष्ण—देखो, नरेन्द्र गाने में, बजाने में, पढने लिखने मे—सब विषयो मे अच्छा है । उस दिन केदार के साथ उसने तर्क किया था । केदार की बातों को खटाखट काटता गया । (श्रीरामकृष्ण और सब लोग हँस पडे ।) (मास्टर से) अंग्रेजी मे क्या कोई तर्क की किताब है ?

मास्टर—जी हाँ हैं, अंग्रेजी में इसको न्यायशास्त्र (Logic) कहते हैं ।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, कैसा है कुछ सुनाओ तो ?

मास्टर अब मुश्किल में पडे । आखिर कहने लगे—एक बात यह है कि साधारण सिद्धान्त से विशेष सिद्धान्त पर पहुँचना, जैसे, सब मनुष्य मरेंगे, पण्डित भी मनुष्य हैं, इसलिए वे भी मरेंगे ।

"और एक बात यह है कि विशेष दृष्टान्त या घटना को देखकर साधारण सिद्धान्त पर पहुँचना । जैसे यह कौआ काला है, वह

कौआ काला है और जितने कौए दीख पडते हैं, वे भी काले हैं, इसलिए सब कौए काले हैं।

"किन्तु उस प्रकार के सिद्धान्त से भूल भी हो सकती है, क्योंकि सम्भव है ढूंढ-तलाश करने से किसी देश में सफेद कौआ मिल जाय। एक और दृष्टान्त—जहां वृष्टि है, वहां मेघ भी हैं, अतएव यह साधारण सिद्धान्त हुआ कि मेघ से वृष्टि होती है। और भी एक दृष्टान्त—इस मनुष्य के बत्तीस दांत हैं, उस मनुष्य के बत्तीस दांत हैं, और जिस मनुष्य को देखते हैं, उसी के बत्तीस दांत हैं, अतएव सब मनुष्यो के बत्तीस दांत है।

श्रीरामकृष्ण ने इन बातो को सुन भर लिया। फिर वे अन्य-मनस्क हो गये इसलिए यह प्रसग और आगे न बढा।

(७)

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥—गीता, २।५३

समाधि में

सभा भग हुई। भक्त सब इधर-उधर घूमने लगे। मास्टर भी पचवटी आदि स्थानों में घूम रहे थे। समय पांच के लगभग होगा। कुछ देर बाद वे श्रीरामकृष्ण के कमरे में आये और देखा उसके उत्तर की ओर छोटे बरामदे में विचित्र घटना हो रही है।

श्रीरामकृष्ण स्थिर भाव से खड़े हैं और नरेन्द्र गा रहे हैं। दो-चार भक्त भी खड़े है। मास्टर आकर गाना सुनने लगे। श्रीराम-कृष्ण की देह निस्पन्द हो गयी और नेत्र निर्निमेष। पूछने पर एक भक्त ने कहा, यह 'समाधि' है। मास्टर ने ऐसा न कभी देखा था, न सुना था। वे सोचने लगे, भगवच्चिन्तन करते हुए मनुष्यो का बाह्यज्ञान क्या यहां तक चला जाता है ? न जाने कितनी भक्ति

और विश्वास हो तो मनुष्यो की यह अवस्था होती है। नरेन्द्र जो गीत गा रहे थे, उसका भाव यह है--

"ऐ मन, तू चिद्घन हरि का चिन्तन कर। उसकी मोहन-मूर्ति की कैसी अनुपम छटा है, जो भक्तो का मन हर लेती है। वह रूप नये-नये वर्णो से मनोहर है, कोटि चन्द्रमाओ को लजाने वाला है,--उसकी छटा क्या है मानो विजली चमकती है। उसे देख आनन्द से जी भर जाता है।"

गीत के इस चरण को गाते समय श्रीरामकृष्ण चौकने लगे। देह पुलकायमान हुई। आँखो से आनन्द के आँसू बहने लगे। बीच-बीच में मानो कुछ देखकर मुसकराते हैं। कोटि चन्द्रमाओ को लजानवाले उस अनुपम रूप का वे अवश्य दर्शन करते होगे। क्या यही ईश्वर-दर्शन है? कितने साधन, कितनी तपस्या, कितनी भक्ति और विश्वास से ईश्वर का ऐसा दर्शन होता है?

फिर गाना होने लगा।

"हृदय-रूपी कमलासन पर उनके चरणो का भजन कर, शान्त मन और प्रेम भरे नेत्रो से उस अपूर्व मनोहर दृश्य को देख ले।"

फिर वही जगत् को मोहनेवाली मुसकराहट! शरीर वैसा ही निश्चल हो गया। आँखे वन्द हो गयी--मानो कुछ अलौकिक रूप देख रहे हैं, और देखकर आनन्द से भरपूर हो रहे हैं।

अव गीत समाप्त हुआ। नरेन्द्र ने गाया--

"चिदानन्द-रस मे--प्रेमानन्द-रस में--परम भक्ति से चिरदिन के लिए मग्न हो जा।"

समाधि और प्रेमानन्द की इस अद्भुत छवि को हृदय में रखते हुए मास्टर घर लौटने लगे। वीच-वीच में दिल को मतवाला करनेवाला वह मधुर गीत याद आता रहा।

(८)

य लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं तत ।
यस्मिन् स्थितो न दु खेन गुरुणापि विचाल्यते ॥—गीता, ६।२२

नरेन्द्र, भवनाथ आदि के सग आनन्द

उसके दूसरे दिन भी छुट्टी थी। दिन के तीन वजे मास्टर फिर आये। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे वैठे है। फर्श पर चटाई बिछी है। नरेन्द्र, भवनाथ तथा और भी दो एक लोग वैठे है। सभी अभी लडके हैं, उम्र उन्नीस वीस के लगभग होगी। प्रफुल्लमुख श्रीरामकृष्ण तखत पर वैठे हुए लडको से सानन्द वार्तालाप कर रहे है।

मास्टर को घर मे घुसते देख श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए कहा, "यह देखो, फिर आया।" सब हँसने लगे। मास्टर ने भूमिष्ठ हो प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। पहले वे खडे-खडे हाथ जोड-कर प्रमाण करते थे—जैसा अग्रेजी पढे-लिखे लोग करते है। श्रीराम-कृष्ण नरेन्द्रादि भक्तो से कहने लगे, "देखो, एक मोर को किसी ने चार वजे अफीम खिला दी। दूसरे दिन से वह अफीमची मोर ठीक चार वजे आ जाता था। यह भी अपने समय पर आया है।" सव लोग हँसने लगे।

मास्टर सोचने लगे, ये ठीक तो कहते है। घर जाता हूँ, पर मन दिन रात यही वना रहता है। कव जाऊँ, इसी विचार में रहता हूँ। इधर श्रीरामकृष्ण लडको से हँसी-मजाक करने लगे। मालूम होता था कि वे सव मानो एक ही उम्र के हैं। हँसी की लहरे उठने लगी।

मास्टर यह अद्भुत चरित्र देखते हुए सोचते हैं कि पिछले दिन क्या इन्ही को समाधि और अपूर्व आनन्द में मग्न देखा था?

क्या ये वे ही मनुष्य है, जो आज प्राकृत मनुष्य जैसा व्यवहार कर रहे है ? क्या इन्ही ने मुझे उपदेश देने के लिए धिक्कारा था ? इन्ही ने मुझे 'तुम ज्ञानी हो' कहा था ? इन्ही ने साकार और निराकार दोनो सत्य है, कहा था, इन्ही ने मुझे कहा था कि ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य ? इन्ही ने मुझे ससार में दासी की भाँति रहने का उपदेश दिया था ?

श्रीरामकृष्ण आनन्द कर रहे है और बीच-बीच मे मास्टर को देख रहे हैं । मास्टर को सविस्मय बैठे हुए देखकर उन्होंने रामलाल से कहा—इसकी उम्र कुछ ज्यादा हो गयी है न, इसी से कुछ गम्भीर है । ये सब हँस रहे है, पर यह चुपचाप बैठा है ।

बात ही बात मे परम भक्त हनुमान की बात चली । हनुमान का एक चित्र श्रीरामकृष्ण के कमरे के दीवाल पर टगा था । श्रीरामकृष्ण ने कहा, "देखो तो, हनुमान का भाव कैसा है ! धन, मान, शरीरसुख कुछ भी नही चाहते, केवल भगवान् को चाहते है । जब स्फटिक-स्तम्भ के भीतर से ब्रह्मास्त्र निकालकर भागे, तब मन्दोदरी नाना प्रकार के फल लेकर लोभ दिखाने लगी। उसने सोचा कि फल के लोभ से उतरकर शायद ये ब्रह्मास्त्र फेंक दे, पर हनुमान इस भुलावे मे कब पडने लगे ? उन्होंने कहा—मुझे फलो का अभाव नही है । मुझे जो फल मिला है, उससे मेरा जन्म सफल हो गया है । मेरे हृदय में मोक्षफल के वृक्ष श्रीरामचन्द्र जी है । श्रीराम कल्पतरु के नीचे बैठा रहता हूँ, जब जिस फल की इच्छा होती है, वही फल खाता हूँ । फल के बारे मे कहता हूँ कि तेरा फल मे नही चाहता हूँ । तू मुझे फल न दिखा, मे इसका प्रतिफल दे जाऊँगा ।" इसी भाव का एक गीत श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं । फिर वही समाधि, देह निश्चल, नेत्र स्थिर । बैठे हैं जैसी

मूर्ति फोटोग्राफ में देखने को मिलती है।

बड़ी देर बाद अवस्था का परिवर्तन हो रहा है। देह शिथिल हो गयी, मुख सहास्य हो गया, इन्द्रियाँ फिर अपना-अपना काम करने लगी। नेत्रों से आनन्दाश्रु बहाते हुए 'राम राम' उच्चारण कर रहे हैं।

मास्टर सोचने लगे, क्या ये ही महापुरुष लड़कों के साथ दिल्लगी कर रहे थे? तब तो यह जान पड़ता था कि मानो पाँच वर्ष के बालक हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ होकर फिर प्राकृत मनुष्यों जैसा व्यवहार कर रहे हैं। मास्टर और नरेन्द्र से कहने लगे कि तुम दोनों अंग्रेजी में बातचीत करो, मैं सुनूंगा।

यह सुनकर मास्टर और नरेन्द्र हँस रहे हैं, दोनों में परस्पर कुछ देर तक बंगला में बातचीत हुई। श्रीरामकृष्ण के सामने मास्टर का तर्क करना सम्भव न था, क्योंकि तर्क का तो घर उन्होंने बन्द कर दिया है। अतएव मास्टर अब तर्क कैसे कर सकते हैं। श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा, पर मास्टर के मुँह से अंग्रेजी तर्क न निकला।

(९)

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं, त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता, सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे॥

—गीता, ११।१८

अन्तरंग भक्तों के संग में। 'हम कौन हैं?'

पाँच बजे हैं। भक्त लोग अपने-अपने घर चले गये। सिर्फ मास्टर और नरेन्द्र रह गये। नरेन्द्र मुँह हाथ धोने के लिए गये। मास्टर भी बगीचे में इधर-उधर घूमते रहे। थोड़ी देर बाद कोठी

की बगल से 'हँस तालाव' की ओर आते हुए उन्होने देखा कि तालाव की दक्षिण तरफवाली सीढी के चबूतरे पर श्रीरामकृष्ण खडे है और नरेन्द्र भी हाथ मे गड्डुआ लिये खडे हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, "देख, और जरा ज्यादा आया जाया करना—तूने हाल ही से आना शुरू किया है न ? पहली जान-पहचान के बाद सभी लोग कुछ ज्यादा आया जाया करते है, जैसे नया पति। (नरेन्द्र और मास्टर हँसे) क्यो, आयेगा नहीं ?" नरेन्द्र ब्राह्मसमाजी लडके हैं, हँसते हुए कहा, "हाँ, कोशिश करूँगा।"

फिर सभी कोठी की राह से श्रीरामकृष्ण के कमरे की ओर आने लगे। कोठी के पास श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा, "देखो, किसान बाजार मे बैल खरीदते हैं। वे जानते हैं कि कौनसा बैल अच्छा है और कौनसा बुरा। वे पूंछ के नीचे हाथ लगाकर परखते हैं। कोई-कोई बैल पूंछ पर हाथ लगाने से लेट जाते हैं। वे ऐसे बैल नही खरीदते। पर जो बैल पूंछ पर हाथ रखते ही बडी तेजी से कूद पडता है, उसी बैल को वे चुन लेते हैं। नरेन्द्र इसी बैल की जाति का है। भीतर खूब तेज है।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण मुसकराने लगे। "फिर कोई-कोई ऐसे होते हैं कि मानो उनमें जान ही नही है—न जोर है, न दृढता।"

सन्ध्या हुई। श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन करने लगे। उन्होने मास्टर से कहा, "तुम जाकर नरेन्द्र से बातचीत करो, और फिर मुझे बताना कि वह कैसा लडका है।"

आरती हो चुकी। मास्टर ने बड़ी देर में नरेन्द्र को चाँदनी के पश्चिम की तरफ पाया। आपस में बातचीत होने लगी। नरेन्द्र ने कहा कि मैं साधारण ब्राह्मसमाजी हूँ, कालेज में पढ़ता हूँ, इत्यादि।

रात हो गयी। अब मास्टर घर जायेंगे, पर जाने को जी न चाहता, इसीलिए नरेन्द्र से विदा होकर वे फिर श्रीरामकृष्ण ढूँढने लगे। उनका गीत सुनकर मास्टर मुग्ध हो गये हैं। चाहता है कि फिर उनके श्रीमुख से गीत सुनें। ढूँढते हुए देख कि काली माता के मन्दिर के सामने जो नाट्य मण्डप है, उ में श्रीरामकृष्ण अकेले टहल रहे हैं। मन्दिर में मूर्ति के दोनों तर दीपक जल रहे थे। विस्तृत नाट्य मण्डप में एक लालटेन ज रही थी। रोशनी धीमी थी। प्रकाश-अंधेरे का मिश्रण-सा दी पड़ता था।

मास्टर श्रीरामकृष्ण का गीत सुनकर मुग्ध हो गये हैं, जैसे म मन्त्रमुग्ध हो जाता है। अब बड़े सकोच से उन्होंने श्रीरामकृष्ण से पूछा, "क्या आज फिर गाना होगा?" श्रीरामकृष्ण ने ज सोचकर कहा, "नहीं आज अब न होगा।" यह कहते ही मा उन्हें फिर याद आई और उन्होंने कहा, "हाँ एक काम करना मैं कलकत्ते में बलराम के घर जाऊँगा, तुम भी आना, वहाँ गा होगा।"

मास्टर—आपकी जैसी आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण—तुम जानते हो बलराम बसु को?

मास्टर—जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण—बलराम बसु—बोसपाड़ा में उनका घर है।

मास्टर—जी मैं पूछ लूँगा।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के साथ टहलते हुए)—अच्छा, तुम एक बात पूछता हूँ—मुझे तुम क्या समझते हो?

मास्टर चुप रहे। श्रीरामकृष्ण ने फिर से पूछा, "तुम्हें क्य मालूम होता है? मुझे कितने आने ज्ञान हुआ है?"

मास्टर--'आने' की बात तो मैं नहीं जानता पर **ऐसा ज्ञान, या प्रेमभक्ति, या विश्वास, या वैराग्य, या उदार भाव मैंने और कहीं कभी नहीं देखा।**

श्रीरामकृष्ण हँसने लगे।

इस बातचीत के बाद मास्टर प्रणाम करके विदा हुए। फाटक तक जाकर फिर कुछ याद आयी, उल्टे पाँव लौटकर फिर श्रीरामकृष्णदेव के पास नाट्य मण्डप में हाजिर हुए।

उस धीमी रोशनी में श्रीरामकृष्ण अकेले टहल रहे थे--निःसंग--जैसे सिंह वन में अकेला अपनी मौज में फिरता रहता है। **आत्माराम, और किसी की अपेक्षा नहीं!**

विस्मित होकर मास्टर उस महापुरुष को देखने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)--क्यों जी, फिर क्यों लौटे?

मास्टर--जी, वे अमीर आदमी होंगे--शायद मुझे भीतर न जाने दें--इसीलिए सोच रहा हूँ कि वहाँ न जाऊँगा, यहीं आकर आपसे मिलूँगा।

श्रीरामकृष्ण--नहीं जी, तुम मेरा नाम लेना। कहना कि मैं उनके पास जाऊँगा, बस, कोई भी तुम्हें मेरे पास ले आयेगा।

"जैसी आपकी आज्ञा"--कहकर मास्टर ने फिर प्रणाम किया और वहाँ से विदा हुए।

(१०)

श्रीरामकृष्ण का प्रेमानन्द में नृत्य।--'प्रेम की सुरा'

रात के करीब ९ बजे का समय होगा--होली के सात दिन बाद। राम, मनोमोहन, राखाल, नृत्यगोपाल आदि भक्तगण उन्हें घेरकर खड़े हैं। सभी लोग हरिनाम का संकीर्तन करते-करते तन्मय हो गये हैं। कुछ भक्तों की भावावस्था हुई है। भावावस्था में

नृत्यगोपाल का वक्ष स्थल लाल हो गया है। सबके बैठने पर मास्टर ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने देखा राखाल सो रहा है, भावमग्न बाह्यज्ञान-विहीन। वे उनकी छाती पर हाथ रखकर कह रहे हैं—'शान्त हो, शान्त हो।' राखाल की यह दूसरी बार भावावस्था थी। वे कलकत्ते में अपने पिता के साथ रहते हैं, बीच-बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आ जाते हैं। इसके पूर्व उन्होंने श्यामपुकुर में विद्यासागर महाशय के स्कूल में कुछ दिन अध्ययन किया था।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से दक्षिणेश्वर में कहा था, 'मैं कलकत्ते में बलराम के घर जाऊँगा, तुम भी आना।' इसीलिए वे उनका दर्शन करने आये हैं। चैत्र कृष्ण सप्तमी, शनिवार, ११ मार्च १८८२ ई। श्रीयुत बलराम श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण देकर लाये हैं।

अब भक्तगण बरामदे में बैठे प्रसाद पा रहे हैं। दासवत् बलराम खड़े हैं। देखने से समझा नहीं जाता कि वे इस मकान के मालिक हैं।

मास्टर इधर कुछ दिनों से आने लगे हैं। उनका अभी तक भक्तों के साथ परिचय नहीं हुआ है। केवल दक्षिणेश्वर में नरेन्द्र के साथ परिचय हुआ था।

कुछ दिनों बाद श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में शिव मन्दिर की सीढ़ी पर भावाविष्ट होकर बैठे हैं। दिन के चार पाँच बजे का समय होगा। मास्टर भी पास ही बैठे हैं।

थोड़ी देर पहले श्रीरामकृष्ण उनके कमरे के फर्श पर जो बिस्तर बिछाया गया है, उस पर विश्राम कर रहे थे। अभी उनकी सेवा के लिए सदैव उनके पास कोई नहीं रहता था। हृदय

के चले जाने के बाद से उनको कष्ट हो रहा है। कलकत्ते से मास्टर के आने पर वे उनके साथ बात करते-करते श्रीराधाकान्त के मन्दिर के सामने वाले शिव मन्दिर की सीढी पर आकर बैठे। मन्दिर देखते ही वे एकाएक भावाविष्ट हो गये हैं।

वे जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं, कह रहे हैं, "माँ, सभी कहते हैं, मेरी घडी ठीक चल रही है। ईसाई, हिन्दू, मुसलमान सभी कहते हैं मेरा धर्म ठीक है, परन्तु माँ, किसी की भी तो घडी ठीक नही चल रही है। तुम्हे ठीक ठीक कौन समझ सकेगा, परन्तु व्याकुल होकर पुकारने पर, तुम्हारी कृपा होने पर सभी पथों से तुम्हारे पास पहुँचा जा सकता है। माँ, ईसाई लोग गिर्जाघरों में तुम्हे कैसे पुकारते है, एक बार दिखा देना। परन्तु माँ, भीतर जाने पर लोग क्या कहेगें? यदि कुछ गडबड हो जाय तो? फिर लोग काली मन्दिर में यदि न जाने दे तो फिर गिर्जा-घर के दरवाजे के पास से दिखा देना।"

एक दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे छोटी खाट पर बैठे है। आनन्दमयी मूर्ति है। सहास्य वदन। श्रीयुत कालीकृष्ण के साथ मास्टर आ पहुँचे।

कालीकृष्ण जानते न थे कि उनके मित्र उन्हें कहाँ ला रहे हैं। मित्र ने कहा था, कलार की दूकान पर जाओगे तो मेरे साथ आओ। वहाँ पर एक मटकी भर शराब है। मास्टर ने अपने मित्र से जो कुछ कहा था, प्रणाम करने के बाद श्रीरामकृष्ण को सब कह सुनाया। वे भी हँसने लगे।

वे बोले, 'भजनानन्द, ब्रह्मानन्द, यह आनन्द ही सुरा है, प्रेम की सुरा। मानवजीवन का उद्देश्य है ईश्वर में प्रेम, ईश्वर से प्यार करना। भक्ति ही सार है। ज्ञान-विचार करके ईश्वर

को जानना बहुत ही कठिन है।' यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाना गाने लगे जिसका आशय इस प्रकार है —

"कौन जाने काली कैसी है? षड्दर्शन उन्हें देख नहीं सकते। इच्छामयी वे अपनी इच्छा के अनुसार घट-घट में विराजमान हैं। यह विराट ब्रह्माण्ड रूपी भाण्ड जो काली के उदर में है उसे कैसा समझते हो? शिव ने काली का मर्म जैसा समझा वैसा दूसरा कौन जानता है? योगी सदा सहस्रार, मूलाधार में मनन करते हैं। काली पद्म-वन में हँस के साथ हँसी के रूप में रमण करती हैं। 'प्रसाद' कहता है, लोग हँसते हैं। मेरा मन समझता है, पर प्राण नहीं समझता—वामन होकर चन्द्रमा पकड़ना चाहता है।"

श्रीरामकृष्ण फिर कहते हैं, 'ईश्वर से प्यार करना यही जीवन का उद्देश्य है। जिस प्रकार वृन्दावन में गोपगोपीगण, राखालगण श्रीकृष्ण से प्यार करते थे। जब श्रीकृष्ण मथुरा चले गये, राखालगण उनके विरह में रो रोकर घूमते थे'। इतना कहकर वे ऊपर की ओर ताकते हुए गाना गाने लगे —

"एक नये राखाल को देख आया जो नये पेड़ की टहनी पकड़े छोटे बछड़े को गोदी में लिये कह रहा है, 'कहाँ हो रे भाई कन्हैया!' फिर 'क' कहकर ही रह जाता है, पूरा कन्हैया मुँह से नहीं निकलता। कहता, 'कहाँ हो रे भाई' और आँखों से आँसू की धाराएँ निकल रही हैं।"

श्रीरामकृष्ण का प्रेमभरा गाना सुनकर मास्टर की आँखों में आँसू भर आये।

परिच्छेद २

श्रीरामकृष्ण और श्री केशव सेन

श्रीरामकृष्ण कप्तान के घर होकर श्रीयुत केशव सेन के 'कमल-कुटीर' नामक मकान पर आये है। साथ हैं राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, मास्टर आदि अनेक भक्त लोग। सब दुमजले के हॉल मे बैठे है। श्री प्रताप मजुमदार, श्री त्रैलोक्य आदि ब्राह्मभक्त भी उपस्थित है।

श्रीरामकृष्ण केशव को बहुत प्यार करते थे। जिन दिनो बेलघर के बगीचे मे वे शिष्यो के साथ साधन-भजन कर रहे थे अर्थात् १८७५ ई० के माघोत्सव के बाद कुछ दिनों के अन्दर ही, तब एक दिन श्रीरामकृष्ण ने बगीचे मे जाकर उनके साथ साक्षात्कार किया था। साथ था उनका भानजा हृदयराम। बेलघर के इस बगीचे मे उन्होने केशव से कहा था 'तुम्हारी दुम झड गयी है,' अर्थात् तुम सब कुछ छोडकर ससार के बाहर भी रह सकते हो और फिर ससार मे भी रह सकते हो। जिस प्रकार मेंढक के बच्चे की दुम झड जाने पर वह पानी मे भी रह सकता है और फिर जमीन पर भी। इसके बाद दक्षिणेश्वर मे, कमलकुटीर मे, ब्राह्म समाज आदि स्थानो मे अनेक बार श्रीरामकृष्ण ने वार्तालाप के बहाने उन्हे उपदेश दिया था। अनेक पन्थो से तथा अनेक धर्मो द्वारा ईश्वर प्राप्ति हो सकती है। बीच-बीच मे निर्जन मे साधन-भजन करके भक्तिलाभ करते हुए ससार में रहा जा सकता है। जनक आदि ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके ससार में रहे थे। व्याकुल होकर उन्हे पुकारना पड़ता है तब वे दर्शन देते है। तुम लोग जो कुछ करते हो, निराकार का साधन, वह बहुत अच्छा है। ब्रह्मज्ञान होने पर

ठीक अनुभव करोगे कि ईश्वर सत्य है और सब अनित्य, ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है। सनातन हिन्दू धर्म में साकार निराकार दोनो ही माने गये हैं। अनेक भावो से ईश्वर की पूजा होती है। शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर। शहनाई बजाते समय एक आदमी केवल पोऽऽ ही बजाता है, परन्तु उसके बाजे में सात छेद रहते हैं। और दूसरा व्यक्ति जिसके बाजे में सात छेद हैं, वह अनेक राग-रागिनियाँ बजाता है।

"तुम लोग साकार को नही मानते इसमें कोई हानि नही, निराकार में निष्ठा रहने से भी हो सकता है। परन्तु साकारवादिया के केवल प्रेम के आकर्षण को लेना। माँ कहकर उन्हें पुकारने से भक्तिप्रेम और भी बढ जायगा। कभी दास्य, कभी सख्य, कभी वात्सल्य, कभी मधुर भाव। 'कोई अपना नही है, उन्हे प्यार करता हूँ,' यह बहुत अच्छा भाव है। इसका नाम है निष्काम भक्ति। रुपया पैसा, मान-इज्जत कुछ भी नही चाहता हूँ, चाहता हूँ केवल तुम्हारे चरण-कमलो में भक्ति। वेद, पुराण, तन्त्र में एव ईश्वर ही की बात है और उनकी लीला की बात। ज्ञान भक्ति दोनो ही है। ससार में दासी की तरह रहो। दासी सब काम करती है, पर उसका मन रहता है अपने घर में। मालिक के बच्चो को पालती-पोसती है, कहती है 'मेरा हरि, मेरा राम। परन्तु खूब जानती है, लडका उसका नही है। तुम लोग जो निर्जन में साधना करते हो यह बहुत अच्छा है। उनकी कृपा होगी। जनक राजा ने निर्जन में कितनी साधना की थी! साधना करने पर ही तो ससार में निर्लिप्त होना सम्भव है।

"तुम लोग भाषण देते हो, सभी के उपकार के लिए, परन्तु ईश्वर को प्राप्त करने के बाद तथा उनके दर्शन प्राप्त कर चुकने

के बाद ही भाषण देने से उपकार होता है। उनका आदेश न पाकर दूसरे को शिक्षा देने से उपकार नही होता। ईश्वर को प्राप्त किये बिना उनका आदेश नही मिलता। ईश्वर के प्राप्त होने का लक्षण है—मनुष्य बालक की तरह, जड की तरह, उन्माद-वाले की तरह, पिशाच की तरह हो जाता है, जैसे शुकदेव आदि। चैतन्यदेव कभी बालक की तरह, कभी उन्मत्त की तरह नृत्य करते थे। हँसते थे, रोते थे, नाचते थे, गाते थे। पुरी धाम मे जब थे तब बहुधा जड समाधि मे रहते थे।"

श्री केशव की हिन्दू धर्म पर उत्तरोत्तर अधिकाधिक श्रद्धा

इस प्रकार अनेक स्थानो मे श्रीरामकृष्ण ने वार्तालाप के सिल-सिले मे श्री केशवचन्द्र सेन को अनेक प्रकार के उपदेश दिये थे। बेलघर के बगीचे में प्रथम दर्शन के बाद केशव ने २८ मार्च १८७५ ई० के रविवार वाले 'मिरर' समाचार पत्र मे लिखा था —

"हमने थोडे दिन हुए दक्षिणेश्वर के परमहस श्रीरामकृष्ण का बेलघर के बगीचे म दर्शन किया है। उनकी गम्भीरता, अन्तर्दृष्टि, बालस्वभाव देख हम मुग्ध हुए हैं। वे शान्तस्वभाव तथा कोमल प्रकृति के है और देखन से ऐसे लगते हैं मानो सदा योग मे रहते हैं। इस समय हमारा ऐसा अनुमान हो रहा है कि हिन्दू धर्म के गम्भीरतम स्थलो का अनुसन्धान करने पर कितनी सुन्दरता, सत्यता तथा साधुता देखने को मिल सकती है। यदि ऐसा न होता तो परमहस की तरह ईश्वरी भाव में भावित योगी पुरुष देखने मे कैसे आते?"§ १८७६ ई० के जनवरी मे फिर माघोत्सव

---

§ We met not long ago Paramhansa of Dakshineswar, and were charmed by the depth, penetration and simplicity of his spirit The never ceasing metaphors and analogies in

जाया। उन्होंने टाऊन हाल में भाषण दिया। विषय था—ब्राह्म धर्म और हमारा अनुभव (Our Faith and Experiences)। इसमें भी उन्होंने हिन्दू धर्म की सुन्दरता के सम्बन्ध में अनेक बातें कही थीं।*

श्रीरामकृष्ण उन पर जैसा स्नेह रखते थे, केशव की भी उनके प्रति वैसी ही भक्ति थी। प्राय प्रतिवर्ष ब्राह्मोत्सव के समय तथा अन्य समय भी केशव दक्षिणेश्वर में जाते थे और उन्हें कमलकुटीर में लाते थे। कभी कभी अकेले कमलकुटीर के एक-

---

which he indulged are most of them as apt as they are beautiful The characteristics of his mind are the very opposite to those of Pandit Dayananda Saraswati, the former being so gentle, tender and contemplative as the latter is sturdy, masculine and polemical

—Indian Mirror, 28th march 1875

Hinduism must have in it a deep source of beauty, truth and goodness to inspire such men as these

—Sunday Mirror, 28th March 1875

* 'If the ancient Vedic Aryan is gratefully honoured today for having taught us the deep truth of the Nirakara or the bodiless spirit, the same loyal homage is due to the later Puranic Hindu for having taught us religious feelings in all their breadth and depth

"In the days of the Vedas and the Vedanta, India was Communion (Yoga) In the days of the Puranas India was Emotion (Bhakti) The highest and the best feelings of Religion have been cultivated under the guardianship of specific Divinities"

—Lecture delivered in January 1876—
'Our Faith and Experiences'

मजले पर उपासनागृह में उन्हें, परम अन्तरंग मानते हुए भक्ति के साथ ले जाते तथा एकान्त में ईश्वर की पूजा और आनन्द करते थे।

१८७९ ई० के भाद्रोत्सव के समय केशव श्रीरामकृष्ण को फिर निमन्त्रण देकर बेलघर के तपोवन में ले गये थे—१५ सितम्बर सोमवार और फिर २१ सितम्बर को कमलकुटीर के उत्सव में सम्मिलित होने के लिए ले गये। इस समय श्रीरामकृष्ण के समाधिस्थ होने पर ब्राह्म भक्तों के साथ उनका फोटो लिया गया। श्रीरामकृष्ण खड़े खड़े समाधिस्थ थे। हृदय उन्हें पकड़कर खड़ा था। २२ अक्टूबर को महाष्टमी-नवमी के दिन केशव ने दक्षिणेश्वर में जाकर उनका दर्शन किया।

२९ अक्टूबर १८७९ बुधवार को शरत् पूर्णिमा के दिन के एक बजे के समय केशव फिर भक्तों के साथ दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने गये थे। स्टीमर के साथ सजी सजाई एक बड़ी नौका, छः अन्य नौकाएँ, दो छोटी नाव और करीब ८० भक्तगण थे, साथ में झण्डा, फूल-पत्ते, खोल-करताल, भेरी भी थे। हृदय अभ्यर्थना करके केशव को स्टीमर से उतार लाया—गाना गाते गाते। गाने का मर्म इस प्रकार है—'सुरधुनी के तट पर कौन हरि का नाम लेता है, सम्भवतः प्रेम देनेवाले निताई आये हैं।' ब्राह्मभक्तगण भी पंचवटी से कीर्तन करते करते उनके साथ आने लगे, 'सच्चिदानन्द विग्रह रूपानन्द घन।' उनके बीच में थे श्रीरामकृष्ण—बीच-बीच में समाधिमग्न हो रहे थे। इस दिन सन्ध्या के बाद गंगाजी के घाट पर पूर्णचन्द्र के प्रकाश में केशव ने उपासना की थी। उपासना के बाद श्रीरामकृष्ण कहने लगे, "तुम सब बोलो, 'ब्रह्म-आत्मा-भगवान', 'ब्रह्म-माया-जीव-जगत्,' 'भागवत्-भक्त-भगवान'।" केशव आदि ब्राह्मभक्तगण उस चन्द्र-

किरण में भागीरथी के तट पर एक स्वर से श्रीरामकृष्ण के साथ साथ उन सब मन्त्रों का भक्ति के साथ उच्चारण करने लगे। श्रीरामकृष्ण फिर जब बोले, "बोलो, 'गुरु-कृष्ण-वैष्णव,'" तो केशव ने आनन्द से हँसते हँसते कहा, 'महाराज, इस समय इतनी दूर नहीं। यदि हम 'गुरु-कृष्ण-वैष्णव' कहें तो लोग हमें कट्टरपन्थी कहेंगे!' श्रीरामकृष्ण भी हँसने लगे और बोले, 'अच्छा, तुम (ब्राह्म) लोग जहाँ तक कह सको उतना ही कहो।

कुछ दिनों बाद १३ नवम्बर १८७९ ई० को श्रीकालीजी की पूजा के बाद राम, मनोमोहन, गोपाल मित्र ने दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का प्रथम दर्शन किया।

१८८० ई० में एक दिन ग्रीष्मकाल में राम और मनोमोहन कमलकुटीर में केशव के साथ साक्षात्कार करने आये थे। उनकी यह जानने की प्रबल इच्छा हुई कि केशव बाबू की श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध में क्या राय है। उन्होंने केशव बाबू से जब यह प्रश्न किया तो उन्होंने उत्तर दिया, "दक्षिणेश्वर के परमहंस साधारण व्यक्ति नहीं है इस समय पृथ्वी भर में इतना महान् व्यक्ति दूसरा कोई नहीं है। वे इतने सुन्दर, इतने असाधारण व्यक्ति हैं कि उन्हें बड़ी सावधानी के साथ रखना चाहिए। देखभाल न करने पर उनका शरीर अधिक टिक नहीं सकेगा। इस प्रकार की सुन्दर मूल्यवान वस्तु को काँच की अलमारी में रखना चाहिए।"

इसके कुछ दिनों बाद १८८१ ई० के माघोत्सव के समय पर जनवरी के महीने में केशव श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर में गये थे। उस समय वहाँ पर राम, मनोमोहन, जयगोपाल सेन आदि अनेक व्यक्ति उपस्थित थे।

१५ जुलाई १८८१ ई० को केशव फिर श्रीरामकृष्ण को दक्षिणे-

ज्वर से स्टीमर में ले गये। १८८१ ई० के नवम्बर मास में मनोमोहन के मकान पर जिस समय श्रीरामकृष्ण का शुभागमन तथा उत्सव हुआ था उस समय भी आमन्त्रित होकर केशव उत्सव में सम्मिलित हुए थे। श्री त्रैलोक्य आदि ने भजन गाया था।

१८८१ ई० के दिसम्बर मास में श्रीरामकृष्ण आमन्त्रित होकर राजेन्द्र मित्र के मकान पर गये थे। श्री केशव भी गये थे। यह मकान ठठनिया के बेचु चटर्जी स्ट्रीट में है। राजेन्द्र थे राम तथा मनोमोहन के मौसा। राम, मनोमोहन, ब्राह्मभक्त राजमोहन तथा राजेन्द्र ने केशव को समाचार देकर निमन्त्रित किया था।

केशव को जिस समय समाचार दिया गया उस समय वे भाई अघोरनाथ के शोक में अशौच अवस्था में थे। प्रचारक भाई अघोर ने ८ दिसम्बर बृहस्पतिवार को लखनऊ शहर में देहत्याग किया था। सभी ने अनुमान किया कि केशव न आ सकेंगे। समाचार पाकर केशव बोले, "यह कैसे ? परमहंस महाशय आएँगे और मैं न जाऊँ ? अवश्य जाऊँगा। अशौच में हूँ इसलिए मैं अलग स्थान पर बैठकर खाऊँगा।"

मनोमोहन की माता परम भक्तिमती स्वर्गीया श्यामासुन्दरी देवी ने श्रीरामकृष्ण को भोजन परोसा था। राम भोजन के समय पास खड़े थे। जिस दिन राजेन्द्र के घर पर श्रीरामकृष्ण ने शुभागमन किया उस दिन तीसरे पहर सुरेन्द्र ने उन्हें चीना बाजार में ले जाकर उनका फोटो उतरवाया था। श्रीरामकृष्ण खड़े खड़े समाधिमग्न थे।

उत्सव के दिन महेन्द्र गोस्वामी ने भागवत की कथा की।

जनवरी १८८२ ई०—माघोत्सव के उपलक्ष्य में, शिमुलिया ब्राह्म समाज के उत्सव में ज्ञान चौधरी के मकान पर श्रीरामकृष्ण

और केशव आमन्त्रित होकर उपस्थित थे। आगन मे कीर्तन हुआ। इसी स्थान मे श्रीरामकृष्ण ने पहले पहल नरेन्द्र का गाना सुना और उन्हे दक्षिणेश्वर आने के लिए कहा। २३ फरवरी १८८२ ई०, बृहस्पतिवार। केशव ने दक्षिणेश्वर में भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण का फिर से दर्शन किया। उनके साथ थे अमेरिकन पादरी जोसेफ कुक तथा कुमारी पिगट। ब्राह्मभक्तों के साथ केशव ने श्रीरामकृष्ण को स्टीमर पर बैठाया। कुक साहब ने श्रीराम-कृष्ण की समाधि-स्थिति देखी थी। इस घटना के तीन दिन के अन्दर मास्टर ने दक्षिणेश्वर मे श्रीरामकृष्ण का प्रथम दर्शन किया।

दो मास बाद—अप्रैल मास मे—श्रीरामकृष्ण कमलकुटीर में केशव को देखने आये। उसी का थोडासा विवरण निम्न लिखित परिच्छेद मे दिया गया है।

श्रीरामकृष्ण का केशव के प्रति स्नेह। जगन्माता के पास नारियल-शक्कर की मन्नत

आज कमलकुटीर के उसी बैठक-घर मे श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठे हैं। २ अप्रैल १८८२ ई०, रविवार, दिन के पाँच बजे का समय। केशव भीतर के कमरे म थे। उन्हे समाचार दिया गया। कमीज पहनकर और चद्दर ओढकर उन्होने आकर प्रणाम किया। उनके भक्त मित्र कालीनाथ बसु रुग्ण हैं, वे उन्हे देखने जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण आये हैं, इसलिए केशव नही जा सके। श्रीराम-कृष्ण कह रहे हैं, "तुम्हे बहुत काम रहता है, फिर अखबार में भी लिखना पडता है, वहाँ दक्षिणेश्वर जाने का अवसर नहीं रहता। इसलिए मै ही तुम्हे देखने आ गया हूँ। तुम्हारी तबियत ठीक नही है, यह जानकर नारियल शक्कर की मन्नत मानी थी। माँ से कहा, माँ, यदि केशव को कुछ हो जाय तो फिर कलकत्ता जाकर

किसके साथ बात करूँगा ?"

श्री प्रताप आदि ब्राह्मभक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे है । पास ही मास्टर को बैठे देख वे केशव से कहते हैं, "वे वहाँ पर (दक्षिणेश्वर में) क्यों नहीं जाते हैं, पूछो तो । इतना ये कहते है कि स्त्री-बच्चों पर मन नहीं है ।" एक मास से कुछ अधिक समय हुआ, मास्टर श्रीरामकृष्ण के पास आया जाया करते हैं । बाद में जाने में कुछ दिनों का विलम्ब हुआ । इसीलिए श्रीरामकृष्ण इस प्रकार कह रहे है। उन्होंने कह दिया था, 'आने में देरी होने पर मुझे पत्र देना ।'

ब्राह्मभक्तगण श्री सामाध्यायी को दिखाकर श्रीरामकृष्ण ने कह रहे है "आप विद्वान हैं । वेद शास्त्रादि का आपने अच्छा अध्ययन किया है ।' श्रीरामकृष्ण कह रहे है—"हाँ, इनकी आँखो में से इनका भीतरी भाग दिखाई दे रहा है । ठीक जैसे खिडकी की काँच में से घर के भीतर की चीजें दिखाई देती हैं ।'

श्री त्रैलोक्य गाना गा रहे हैं । गाना हो रहा है इतने में ही सन्ध्या का दिया जलाया गया । गाना सुनते-सुनते श्रीरामकृष्ण एकाएक खडे हो गये, और 'माँ' का नाम लेते-लेते समाधिमग्न हो गय । कुछ स्वस्थ होकर स्वय ही नृत्य करते-करते गाना गाने लगे जिसका आशय इस प्रकार है —

"मैं सुरापान नहीं करता, जय काली कहता हुआ सुधा का पान करता हूँ । वह सुधा मुझे इतना मतवाला बना देती है कि लोग मुझे नशाखोर कहते हैं । गुरुजी का दिया हुआ गुड लेकर उसमें प्रवृत्ति का मसाला मिलाकर ज्ञानरूपी कलार उससे शराब बनाता है और मेरा मतवाला मन उसे मूलमन्त्र रूपी बोतल में से पीता है । पीने के पहले 'तारा' कहकर मैं उसे शुद्ध कर लेता हूँ ।

'रामप्रसाद' कहता है कि ऐसी शराब पीने पर धर्म-अर्थादि चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है।"

श्री केशव को श्रीरामकृष्ण स्नेहपूर्ण नेत्रो से देख रहे हैं, मानो अपने निजी हैं। और मानो भयभीत हो रहे हैं कि कही केशव किसी दूसरे के अर्थात् ससार के न बन जायँ। उनकी ओर ताकते हुए श्रीरामकृष्ण ने फिर गाना प्रारम्भ किया, जिसका भावार्थ इस प्रकार का है—

"बात करने मे भी डरती हूँ, न करने से भी डरती हूँ। हे राधे मन मे सन्देह होता है कि कही तुम जैसी निधि को गवाँ न बैठूँ। हम तुम्हे वह रहस्य बतलाती हैं जिससे हम विपत्ति मे पार हो गयी है और जो लोगों को भी विपत्ति से पार कर देता है। अब तुम्हारी जैसी इच्छा।" अर्थात् सब कुछ छोड भगवान् को पुकारो, वे ही सत्य हैं और सब अनित्य। उन्हे प्राप्त किये बिना कुछ भी न होगा—यही महामन्त्र है।

फिर बैठकर भक्तो के साथ वार्तालाप कर रहे हैं।

उनके लिए जलपान की तैयारी हो रही है। हाल के एक कोने में एक ब्राह्मभक्त पियानो बजा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण प्रसन्नवदन बालक की तरह पियानो के पास खडे होकर देख रहे हैं। थोडी देर बाद उन्हे अन्त पुर में ले जाया गया,—वहाँ वे जलपान करेंगे और महिलाएँ प्रणाम करेंगी।

श्रीरामकृष्ण का जलपान समाप्त हुआ। अब वे गाडी में बैठे। ब्राह्मभक्तगण सभी गाडी के पास खडे हैं। कमलकुटीर से गाडी दक्षिणेश्वर की ओर चली।

परिच्छेद २

प्राणकृष्ण के मकान पर श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण ने आज कलकत्ते में शुभागमन किया है। श्रीयुत प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय के श्यामपुकुरवाले मकान के दुमजले पर बैठकघर में भक्तों के साथ बैठे हैं। अभी-अभी भक्तों के साथ बैठकर प्रसाद पा चुके हैं। आज ९ अप्रैल, रविवार १८८२ ई०, चैत्र शुक्ला चतुर्दशी है। इस समय दिन के १-२ बजे होंगे। कप्तान उसी मुहल्ले में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण की इच्छा है कि इस मकान में विश्राम करने के बाद कप्तान के घर होकर उनसे मिलकर कमलकुटीर नामक मकान में श्री केशव सेन को देखने जायँ। प्राणकृष्ण बैठक-घर में बैठे हैं। राम, मनोमोहन, केदार, सुरेन्द्र, गिरीन्द्र (सुरेन्द्र के भाई), राखाल, बलराम, मास्टर आदि भक्तगण उपस्थित हैं।

मुहल्ले के कुछ सज्जन तथा अन्य दूसरे निमन्त्रित व्यक्ति भी आये हैं। श्रीरामकृष्ण क्या कहते हैं--यह सुनने के लिए सभी उत्सुक होकर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "ईश्वर और उनका ऐश्वर्य। यह जगत् उनका ऐश्वर्य है। परन्तु ऐश्वर्य देखकर ही सब लोग भूल जाते हैं, जिनका ऐश्वर्य है उनकी खोज नहीं करते। कामिनी-कांचन का भोग करने सभी जाते हैं। परन्तु उसमें दुःख और अशान्ति ही अधिक है। संसार मानो विशालाक्षी नदी का भँवर है। नाव भँवर में पड़ने पर फिर उसका बचना कठिन है। गुखरू काँटे की तरह एक छूटता है तो दूसरा जकड़ जाता है। गोरखधन्धे में एक बार घुसने पर निकलना कठिन है। मनुष्य मानो जल-सा जाता है।

एक भक्त--महाराज, तो उपाय ?

उपाय--साधुसग और प्रार्थना

श्रीरामकृष्ण--उपाय--साधुसग और प्रार्थना । वैद्य के पास गये बिना रोग ठीक नही होता । साधुसग एक ही दिन करने से कुछ नही होता । सदा ही आवश्यक है । रोग लगा ही है । फिर वैद्य के पास बिना रहे नाडीज्ञान नही होता । साथ-साथ घूमना पडता है, तब समझ में आता है कि कौन कफ की नाडी है और कौन पित्त की नाडी ।

भक्त--साधुसग से क्या उपकार होता है ?

श्रीरामकृष्ण--ईश्वर पर अनुराग होता है । उनसे प्रेम होता है । व्याकुलता न आने से कुछ भी नही होता । साधुसग करते-करते ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होता है--जिस प्रकार घर में कोई अस्वस्थ होने पर मन सदा ही चिन्तित रहता है और यदि किसी की नौकरी छूट जाती है तो वह जिस प्रकार आफिस-आफिस में घूमता रहता है, व्याकुल होता रहता है, उसी प्रकार यदि किसी आफिस में उसे जवाब मिलता है कि कोई काम नहीं है तो फिर दूसरे दिन आकर पूछता है, क्या आज कोई जगह खाली हुई ?

"एक और उपाय है--व्याकुल होकर प्रार्थना करना । ईश्वर अपने हैं, उनसे कहना होता है, तुम कैसे हो, दर्शन दो--दर्शन देना ही होगा--तुमने मुझे पैदा क्यो किया ? सिक्खो ने कहा था, ईश्वर दयामय हैं । मैने उनसे कहा था, दयामय क्यो कहूँ ? उन्होने हमें पैदा किया है, जिससे हमारा मगल हो, यदि वे ऐसा करें तो इसमें आश्चर्य क्या है ? माँ-बाप बच्चो का पालन करेंगे ही, इसमें फिर दया की क्या बात है ? यह तो करना ही होगा, इसीलिए उन पर जबरदस्ती करके उनसे प्रार्थना स्वीकार करानी होगी ।

वह हमारी माँ, और हमारे बाप जो है। लड़का यदि खाना पीना छोड़ दे तो माँ-बाप उसके बालिग (major) होने के तीन वर्ष पहले ही उसका हिस्सा उसे दे देते हैं। फिर जब लड़का पैसा माँगता और बार-बार कहता है, 'माँ, तेरे पैरों पड़ता हूँ, मुझे दो पैसे दे दे' तो माँ हैरान होकर उसकी व्याकुलता देख पैसा फेंक ही देती है।

"साधुसंग करने पर एक और उपकार होता है,--सत् और असत् का विचार। सत् नित्य पदार्थ अर्थात् ईश्वर, असत् अर्थात् अनित्य। असत् पथ पर मन जाते ही विचार करना पड़ता है। हाथी जब दूसरों के केले के पेड़ खाने के लिए सूँड बढ़ाता है तो उसी समय महावत उसे अंकुश मारता है।

पड़ोसी—महाराज, पापबुद्धि क्यों होती है?

श्रीरामकृष्ण—उनके जगत् में सभी प्रकार है। साधु लोग भी उन्होंने बनाये हैं, दुष्ट लोगों को भी उन्होंने ही बनाया है। सद्बुद्धि भी वे देते हैं और असद्बुद्धि भी।

पड़ोसी—तो क्या पाप करने पर हमारी कोई जिम्मेदारी नहीं है?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर का नियम है कि पाप करने पर उसका फल भोगना पड़ेगा। मिर्च खाने पर क्या तीता न लगेगा? सेजो बाबू ने अपनी जवानी में बहुत कुछ किया था, इसलिए मरते समय उन्हें अनेक प्रकार के रोग हुए। कम उम्र में इतना ज्ञान नहीं रहता। कालीबाड़ी में भोजन पकाने के लिए सूद्री नामक लकड़ी रहती है, वह गीली लकड़ी पहले-पहल अच्छी जलती है। उस समय मालूम भी नहीं होता कि इसके अन्दर जल है। लकड़ी का जलना समाप्त होते समय सारा जल पीछे की ओर आ जाता

है और फँच-फाँच करके चूल्हे की आग बुझा देता है। इसीलिए काम, क्रोध, लोभ—इन सबमें सावधान रहना चाहिए। देखो न, हनुमान ने क्रोध में लंका जला दी थी। अन्त में ख्याल आया, अशोकवन में सीता है। तब छटपटाने लगे कि कहीं सीताजी का कुछ न हो जाय।

पड़ोसी—तो ईश्वर ने दुष्ट लोगों को बनाया ही क्यों?

श्रीरामकृष्ण—उनकी इच्छा, उनकी लीला। उनकी माया में विद्या भी है, अविद्या भी। अन्धकार की भी आवश्यकता है। अन्धकार रहने पर प्रकाश की महिमा और भी अधिक प्रकट होती है। काम, क्रोध, लोभादि खराब चीज तो अवश्य हैं, परन्तु उन्होंने ये दिये क्यों? दिये महान् व्यक्तियों को तैयार करने के लिए। मनुष्य इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने से महान् होता है।

जितेन्द्रिय क्या नहीं कर सकता? उनकी कृपा से उसे ईश्वर-प्राप्ति तक हो सकती है। फिर दूसरी ओर देखो, काम से उनकी सृष्टि की लीला चल रही है। दुष्ट लोगों की भी आवश्यकता है। एक गाँव के लोग बहुत उद्दण्ड हो गये थे। उस समय वहाँ गोलक चौधरी को भेज दिया गया। उसके नाम से लोग काँपने लगे—इतना कठोर शासन था उसका। अतएव अच्छे-बुरे सभी तरह के लोग चाहिए। सीताजी बोलीं, 'राम, अयोध्या में यदि सभी सुन्दर महल होते तो कैसा अच्छा होता। मैं देख रही हूँ अनेक मकान टूट गये हैं, कुछ पुराने हो गये हैं।' श्रीराम बोले, 'सीता, यदि सभी मकान सुन्दर हो तो मिस्त्री लोग क्या करेंगे?' (सभी हँस पड़े।) ईश्वर ने सभी प्रकार के पदार्थ बनाये हैं—अच्छे पेड़, विषैले पेड़ और व्यर्थ के पौधे भी। जानवरों में भले-बुरे सभी हैं—बाघ, शेर, साँप—सभी हैं।"

संसार में भी ईश्वरप्राप्ति होती है। सभी की मुक्ति होगी।

पडोसी—महाराज, ससार में रहकर क्या भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है ?

श्रीरामकृष्ण—अवश्य किया जा सकता है। परन्तु जैसा कहा, साधुसग और सदा प्रार्थना करनी पडती है। उनके पास रोना चाहिए। मन का सभी मैल धुल जाने पर उनका दर्शन होता है। मन मानो मिट्टी से लिपटी हुई एक लोहे की सुई है—ईश्वर है चुम्बक। मिट्टी रहते चुम्बक के साथ सयोग नही होता। रोते-रोते सुई की मिट्टी धुल जाती है। सुई की मिट्टी अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, पापबुद्धि, विषयबुद्धि आदि। मिट्टी धुल जाने पर सुई को चुम्बक खीच लेगा अर्थात् ईश्वरदर्शन होगा। चित्तशुद्धि होने पर ही उनकी प्राप्ति होती है। ज्वर चढा है, शरीर मानो भुन रहा है, इसमे कुनैन से क्या काम होगा ?

"ससार म ईश्वरलाभ होगा क्यो नही ? वही साधुसग, रो रोकर प्रार्थना, वीच-वीच में निर्जनवास, चारो ओर कटघरा लगाये विना रास्ते के पौधो को गाय-वकरियाँ खा जाती है।'

पडोसी—तो फिर जो लोग ससार मे है उनकी भी मुक्ति होगी?

श्रीरामकृष्ण—सभी की मुक्ति होगी। परन्तु गुरु के उपदेश के अनुसार चलना पडता है, टेढे रास्ते से जाने पर फिर सीधे रास्ते पर आने में कष्ट होगा। मुक्ति वहुत देर में होती है। शायद इस जन्म मे न भी हो। फिर सम्भव है अनेक जन्मो के पश्चात् हो। जनक आदि ने ससार मे भी कर्म किया था। ईश्वर को सिर पर रखकर काम करते थे। नाचने वाली जिस प्रकार सिर पर वर्तन रखकर नाचती है, और पश्चिम की औरतो को नही देखा, सिर पर जल का घडा लेकर हँस-हँसकर बाते करती हुई जाती है ?

पड़ोसी—आपने गुरूपदेश के बारे में बताया, पर गुरु कैसे प्राप्त करूँ ?

श्रीरामकृष्ण—हर एक गुरु नहीं हो सकता। लकड़ी का गोला पानी में स्वयं भी बहता हुआ चला जाता है और अनेक जीव-जन्तु भी उस पर चढ़कर जा सकते हैं। पर मामूली लकड़ी पर चढ़ने से लकड़ी भी डूब जाती है और जो चढ़ता है वह भी डूब जाता है। इसलिए ईश्वर युग-युग में लोक-शिक्षा के लिए गुरु-रूप में स्वयं अवतीर्ण होते हैं। सच्चिदानन्द ही गुरु हैं।

"ज्ञान किसे कहते हैं, और मैं कौन हूँ ? 'ईश्वर ही कर्ता हैं और सब अकर्ता' इसी का नाम ज्ञान है। मैं अकर्ता, उनके हाथ का यन्त्र हूँ। इसीलिए मैं कहता हूँ, माँ, तुम यन्त्री हो, मैं यन्त्र हूँ, तुम घरवाली हो, मैं घर हूँ, मैं गाड़ी हूँ, तुम इंजीनियर हो। जैसा चलाती हो वैसा चलता हूँ, जैसा कराती हो वैसा करता हूँ, जैसा बुलवाती हो, वैसा बोलता हूँ, नाह, नाह, तू है तू है।'

परिच्छेद ४

श्रीरामकृष्ण तथा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

(१)

आज शनिवार है, श्रावण कृष्णा षष्ठी, ५ अगस्त १८८२ ई०। दिन के चार बजे होंगे।

श्रीरामकृष्ण किराये की गाडी पर कलकत्ते के रास्ते बादुड-बागान की तरफ आ रहे हैं। भवनाथ, हाजरा और मास्टर साथ में हैं। आप पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के घर जायँगे।

श्रीरामकृष्ण की जन्मभूमि जिला हुगली के अन्तर्गत कामारपुकुर गाँव है, जो पण्डित विद्यासागर की जन्मभूमि वीरसिंह गाँव के पास है। श्रीरामकृष्णदेव बाल्यकाल से ही विद्यासागर की दया की चर्चा सुनते आये हैं। दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में प्राय. उनके पाण्डित्य और दया की बातें सुना करते हैं। यह सुनकर कि मास्टर विद्यासागर के स्कूल मे पढाते हैं, आपने उनसे पूछा, "क्या मुझे विद्यासागर के पास ले चलोगे? मुझे उन्हे देखने की बडी इच्छा होती है।" मास्टर ने जब विद्यासागर से यह बात कही तो उन्होंने हर्ष के साथ किसी शनिवार को चार बजे उन्हे साथ लाने को कहा। केवल यही पूछा—कैसे परमहस हैं? क्या वे गेरुए कपडे पहनते हैं? मास्टर ने कहा—जी नहीं, वे एक अद्भुत पुरुष हैं, लाल किनारेदार धोती पहनते है, कुरता पहनते हैं, पालिश किये हुए स्लीपर पहनते हैं, रानी रासमणि के कालीमन्दिर की एक कोठरी में रहते हैं, जिसमें एक तखत है और उस पर बिस्तर और मच्छरदानी, इसी बिस्तर पर लेटते हैं। कोई बाहरी

भेष तो नही है, पर सिवाय ईश्वर के और कुछ नही जानते, अहर्निश उसी की चिन्ता किया करते हैं।

गाडी दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर म चलकर श्यामबाजार होत हुए अब अमहर्स्ट स्ट्रीट में आयी है। भक्त लोग कह रहे हैं कि अब वादुड्बागान के पास आयी है। श्रीरामकृष्ण बालक की भांति आनन्द से बातचीत करते हुए आ रहे हैं। अमहर्स्ट स्ट्रीट में आकर एकाएक उनका भावान्तर हुआ—मानो ईश्वरावेश होना चाहता है।

गाडी स्वर्गीय राममोहन राय के बाग की बगल मे आ रही है। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण का भावान्तर नहीं देखा, झट कह दिया—यह राममोहन राय का बाग है। श्रीरामकृष्ण नाराज हुए, कहा, 'अब ये बात अच्छी नही लगती।' आप भावाविष्ट हो रहे हैं।

विद्यासागर के मकान के सामने गाडी खडी हुई। मकान दोमंजिला है, साहबी ढग से सजा हुआ है। श्रीरामकृष्णदेव गाडी से उतरे। मास्टर राह बताते हुए आपको मकान के भीतर ले जा रहे हैं। आगन में फूलों के पेड हैं। उनके बीच में से जाते हुए श्रीरामकृष्ण बालक की तरह बटन को हाथ लगाकर मास्टर से पूछ रहे हैं, "कुरते के बटन खुले हुए हैं—इसमें कुछ हानि तो न होगी ?" बदन पर एक सूती कुरता है और लाल किनारे की धोती पहने हुए हैं, जिसका एक छोर कन्धे पर पडा हुआ है। पैरो में स्लीपर हैं। मास्टर ने कहा—"आप इस सबके लिए चिन्ता न कीजिये, आपकी कही कुछ त्रुटि न होगी। आपको बटन नहीं लगाना पडेगा।" समझाने पर लडका जैसे शान्त हो जाता है, आप भी वैसे शान्त हो गये। जीने से चढकर पहले कमरे में (जो उत्तर की तरफ था) श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ गये। कमरे

में विद्यासासर बैठे हैं। सामने एक चौकोर लम्बी चिकनी मेज है। इसी के पास एक बेंच है। मेज के आसपास कई कुर्सियाँ है। विद्यासागर दो एक मित्रो से बातचीत कर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण के प्रवेश करते ही विद्यासागर ने खडे होकर उनका स्वागत किया। श्रीरामकृष्ण मेज के पूर्व की ओर खडे हैं—बायाँ हाथ मेज पर है, पीछे वह बेंच है। विद्यासागर को पूर्व-परिचित की भाँति एकटक देखते हैं और भावावेश में हँसते हैं।

विद्यासागर की उम्र ६३ के लगभग होगी। श्रीरामकृष्ण से वे १६—१७ वर्ष बड़े होंगे। मोटी धोती पहने हुए है, पैरो मे स्लीपर, और बदन में एक आधी अस्तीन का फलालैन का कुरता। सिर का निचला हिस्सा चारों तरफ उड़िया लोगो की तरह मुडा हुआ है। बोलने के समय उज्ज्वल दाँत नजर आते हैं—वे सब के सब नकली है। सिर खूब बडा है, ललाट ऊँचा है और कद कुछ छोटा, ब्राह्मण हैं, इसीलिए गले में जनेऊ है।

विद्यासागर के गुणो का अन्त नही। विद्यानुराग, सब जीवों पर दया, स्वाधीनप्रियता, मातृभक्ति तथा मानसिक बल आदि बहुत से गुण उनमें कूट-कूटकर भरे हुए है।

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो रहे हैं और थोडी देर के लिए उसी दशा मे खडे हैं। भाव सभालने के लिए बीच-बीच में कहते हैं कि पानी पीऊँगा। इस बीच में घर के लडके और आत्मीय बन्धु भी आकर खडे हो गये।

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर बेंच पर बैठते है। एक १७-१८ वर्ष का लड़का उस पर बैठा है—विद्यासागर के पास सहायता माँगने आया है। श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हैं—ऋषि की अन्तर्दृष्टि लडके के मनोभाव सब ताड़ गयी। आप [illegible] बैठे और
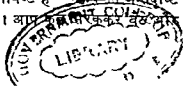
भावावेश मे कहा, "माँ इस लडके की ससार में बडी आसक्ति है, और तुम्हारे अविद्या के ससार पर ? यह अविद्या का लड़का है।"

जो ब्रह्मविद्या के लिए व्याकुल नही है, केवल अर्थकरी विद्या का उपार्जन करना उनके लिए व्यर्थ है—कदाचित् आप यही कह रहे हैं।

विद्यासागर ने व्यग्र होकर किसी से पानी लाने को कहा और मास्टर से पूछा, "कुछ मिठाई लाऊँ, क्या ये खायेंगे ?" मास्टर ने कहा—जी हाँ, ले आइये। विद्यासागर जल्दी भीतर से कुछ मिठाइयाँ लाये और कहा कि ये बर्दवान से आयी हैं। श्रीरामकृष्ण को कुछ खाने को दी गई, हाजरा और भवनाथ ने भी कुछ पायी। जब मास्टर की पारी आई तो विद्यासागर ने कहा—वह तो घर ही का लडका है, उसके लिए चिन्ता नहीं। श्रीरामकृष्ण एक भक्त लडके के बारे में विद्यासागर से कह रहे हैं, जो सामने ही बैठा था। आपने कहा, "यह लडका बडा अच्छा है, और इसके भीतर सार है, जैसे फल्गु नद, ऊपर तो रेत है, पर थोडा खोदने से ही भीतर पानी बहता दिखाई देता है।"

मिठाई पा चुकने के बाद आप हँसते हुए विद्यासागर से बात-चीत कर रहे हैं। घर दर्शकों से भर गया है, कोई बैठा है, कोई खडा है।

श्रीरामकृष्ण—आज सागर से आ मिला। इतने दिन खाई, नाला और अधिक से अधिक हुआ तो नदी देखी, पर अब सागर देख रहा हूँ। (सब हँसते हैं।)

विद्यासागर—तो थोड़ा खारा पानी लेते जाइये। (हास्य)

श्रीरामकृष्ण—नही जी, खारा पानी क्यो ? तुम तो अविद्या के सागर नही, विद्या के सागर हो ! (सब हँसे।) तुम क्षीरसमुद्र

हो ! (सब हँसे ।)

विद्यासागर—आप जो चाहे कह सकते हैं ।

सात्त्विक कर्म । दया और सिद्ध पुरुष

विद्यासागर चुप रहे । श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे—

तुम्हारा कर्म सात्त्विक कर्म है । यह सत्त्व का रजस् है । सत्त्वगुण से दया होती है । दया से जो कर्म किया जाता है, वह है तो राजसिक कर्म सही, पर यह रजोगुण सत् का रजोगुण है, इसमें दोष नहीं है । शुकदेव आदि ने लोकशिक्षा के लिए दया रख ली थी—ईश्वर के विषय में शिक्षा देने के लिए । तुम विद्यादान और अन्नदान कर रहे हो—यह भी अच्छा है । निष्काम रीति से कर सको तो इसमें ईश्वर-लाभ होगा । कोई करता है नाम के लिए, कोई पुण्य के लिए—उनका कर्म निष्काम नहीं ।

फिर सिद्ध तो तुम हो ही ।"

विद्यासागर—महाराज, यह कैसे ?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—आलू परवल सिद्ध होने से (पक जाने से) नरम हो जाते है—सो तुम भी बहुत नर्म हो । तुम्हारी ऐसी दया ! (हास्य)

विद्यासागर (सहास्य)—पीसा उरद तो सिद्ध होने पर सख्त हो जाता है । (सब हँसे ।)

श्रीरामकृष्ण—तुम वैसे क्यों होने लगे ? खाली पण्डित कैसे हैं—मानो एक पके फल का अंग जो अन्त तक कठिन ही रह जाता है । वे न इधर के है न उधर के । गीध खूब ऊँचा चढ़ता है, पर उसकी नजर हड़वार पर ही रहती है । जो खाली पण्डित हैं, वे सुनने के ही हैं, पर उनकी कामिनी-काचन पर आसक्ति होती है—गीध की तरह वे सड़ी लाशें ढूंढते हैं । आसक्ति का घर अविद्या

के संसार में है। दया, भक्ति, वैराग्य—ये विद्या के ऐश्वर्य हैं।

विद्यासागर चुपचाप सुन रहे हैं। सभी टकटकी बाँधे इन आनन्दमय पुरुष को देख रहे हैं, उनका वचनामृत पान कर रहे हैं।

(२)

श्रीरामकृष्ण, ज्ञानयोग अथवा वेदान्त-विचार

विद्यासागर बड़े विद्वान हैं। जब वे संस्कृत कालेज में पढ़ते थे तब अपनी श्रेणी के सबसे अच्छे छात्र थे। हर एक परीक्षा में प्रथम होते और स्वर्णपदक आदि अथवा छात्रवृत्तियाँ पाते थे। होते-होते वे संस्कृत कॉलेज के अध्यक्ष तक हुए थे।

विद्यासागर किसी को धर्मशिक्षा नहीं देते थे। वे दर्शनादि ग्रन्थ पढ़ चुके थे। मास्टर ने एक दिन उनसे पूछा, 'आपको हिन्दू दर्शन कैसे लगते हैं?" उन्होंने जवाब दिया, "मुझे यही मालूम होता है कि वे जो चीज समझाने गये उसे समझा न सके।' वे हिन्दुओं की भाँति श्राद्धादि सब धर्मानुष्ठान करते थे, गले में जनेऊ धारण करते थे, अपनी भाषा में जो पत्र लिखते थे, उनमें सबसे पहले "श्री श्रीहरि शरणम् लिखते थे।

मास्टर ने और एक दिन उनको ईश्वर के विषय में यह कहते सुना, "ईश्वर को कोई जान तो सकता नहीं। फिर करना क्या चाहिए? मेरी समझ में, हम लोगों को ऐसा होना चाहिए कि यदि सब कोई वैसे हों तो यह पृथ्वी स्वर्ग बन जाय। हर एक को ऐसी चेष्टा करनी चाहिए कि जिससे जगत् का भला हो।"

विद्या और अविद्या की चर्चा करते हुए श्रीरामकृष्ण ब्रह्मज्ञान की बात उठा रहे हैं। विद्यासागर बड़े पण्डित हैं—शायद षड्-दर्शन पढ़कर उन्होंने देखा है कि ईश्वर के विषय में कुछ भी जानना सम्भव नहीं।

श्रीरामकृष्ण—ब्रह्म विद्या और अविद्या दोनों के परे है, वह मायातीत है।

"इस जगत् में विद्यामाया और अविद्यामाया दोनों हैं, ज्ञान-भक्ति भी हैं, और साथ ही कामिनी-काचन भी है, सत् भी है और असत् भी, भला भी है और बुरा भी, परन्तु ब्रह्म निर्लिप्त है। भला-बुरा जीवों के लिए है, सत्-असत् जीवों के लिए है। वह ब्रह्म को स्पर्श नहीं कर सकता।

"जैसे, दीप के सामने कोई भागवत पढ़ रहा है और कोई जाल रच रहा है, पर दीप निर्लिप्त है।

"सूर्य शिष्ट पर भी प्रकाश डालता है और दुष्ट पर भी।

"यदि कहो कि दुःख, पाप, अशान्ति ये सब फिर क्या हैं,—तो उनका जवाब यह है कि वे सब जीवों के लिए है, ब्रह्म निर्लिप्त है। सांप में विष है, औरों को डसने से वे मर जाते हैं, पर सांप को उसमें कोई हानि नहीं होती।

ब्रह्म अनिर्वचनीय है, 'अव्यपदेश्यम्'

"ब्रह्म क्या है सो मुंह से नहीं कहा जा सकता। सभी चीजें जूठी हो गयी है, वेद, पुराण, तन्त्र, षड्दर्शन सब जूठे हो गये हैं। मुंह में पढ़े गये हैं, मुंह से उच्चारित हुए हैं—इसी से जूठे हो गये। **पर केवल एक वस्तु जूठी नहीं हुई है—वह वस्तु ब्रह्म है।** ब्रह्म क्या है यह आज तक कोई मुंह से नहीं कह सका।"

विद्यासागर (मित्रों से)—वाह! यह तो बड़ी सुन्दर बात हुई! आज मैंने एक नयी बात सीखी।

श्रीरामकृष्ण—एक पिता के दो लड़के थे। ब्रह्मविद्या सीखने के लिए पिता ने लड़कों को आचार्य को सौंपा। कई वर्ष बाद वे गुरुगृह से लौटे, आकर पिता को प्रणाम किया। पिता की इच्छा

हुई कि देखें इन्हें कैसा ब्रह्मज्ञान हुआ। बड़े बेटे से उन्होंने पूछा, 'बेटा, तुमने तो सब कुछ पढ़ा है, अब बताओ ब्रह्म कैसा है।' बड़ा लड़का वेदों से बहुत से श्लोकों की आवृत्ति करते हुए ब्रह्म का स्वरूप समझाने लगा। पिता चुप रहे। जब उन्होंने छोटे लड़के से पूछा तो वह सिर झुकाये चुप रहा, मुँह से बात न निकली, तब पिता ने प्रसन्न होकर छोटे लड़के से कहा, 'बेटा, तुम्हीं ने कुछ समझा है। ब्रह्म क्या है यह मुँह से नहीं कहा जा सकता।'

'मनुष्य सोचता है कि हम ईश्वर को जान गये। एक चींटी चीनी के पहाड़ के पास गयी थी। एक दाना खाकर उसका पेट भर गया, एक दूसरा दाना मुँह में लिये अपने डेरे को जाने लगी, जाते समय सोच रही है कि अब की बार आकर समूचे पहाड़ को ले जाऊँगी। क्षुद्र जीव यही सब सोचते हैं—वे नहीं जानते कि ब्रह्म वाक्य मन के अतीत है।

"कोई भी हो—वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, ईश्वर को जान थोड़े ही सकता है! शुकदेव आदि मानो बड़े चींटे हैं—चीनी के आठ-दस दाने मुँह में ले गये—और क्या?

"वेद-पुराणों में जो ब्रह्म के विषय में कहा गया है, वह किस ढंग का कथन है सो सुनो। एक आदमी के समुद्र देखकर लौटने पर यदि कोई उससे पूछे कि समुद्र कैसा देखा, तो वह जैसे मुँह बाये कहता है—आह! क्या देखा! कैसी लहरें! कैसी आवाज! बस ब्रह्म का वर्णन भी वैसा ही है। वेदों में लिखा है—वह आनन्दस्वरूप है—सच्चिदानन्द। शुकदेव आदि ने यह ब्रह्मसागर किनारे पर खड़े होकर देखा और छुआ था। किसी के मतानुसार वे इस सागर में उतरे नहीं। इस सागर में उतरने से फिर कोई लौट नहीं सकता।

"समाधिस्थ होने से ब्रह्मज्ञान होता है—ब्रह्म-दर्शन होता है—उस दशा मे विचार बिलकुल बन्द हो जाता है, आदमी चुप हो जाता है। ब्रह्म कैसी वस्तु है, यह मुँह से बताने की सामर्थ्य नही रहती।

"एक नमक का पुतला समुद्र नापने गया! (सब हँसे।) पानी कितना गहरा है, उसकी खबर देना चाहा! पर खबर देना उसे नसीब न हुआ। वह पानी मे उतरा कि गल गया! बस फिर खबर कौन दे?"

किसी ने प्रश्न किया, "क्या समाधिस्थ पुरुष जिनको ब्रह्मज्ञान हुआ है वे फिर बोलते नही?"

श्रीरामकृष्ण (विद्यासागर आदि से)—लोकशिक्षा के लिए शकराचार्य ने विद्या का 'अह' रखा था। ब्रह्म-दर्शन होने से मनुष्य चुप हो जाता है। जब तक दर्शन न हो, तभी तक विचार होता है। घी जब तक पक न जाय, तभी तक आवाज करता है। पके घी से शब्द नही निकलता, पर पके घी मे कच्ची पूरी छोडी जाती है, तो फिर एक बार वैसा ही शब्द निकलता है। जब कच्ची पूरी को पका डाला, तब वह फिर चुप हो जाता है। वैसे ही समाधिस्थ पुरुष लोकशिक्षण के लिए फिर नीचे उतरता है, फिर बोलता है।

"जब तक मधुमक्खी फूल पर नही बैठती, तब तक भनभनाती रहती है। फूल पर बैठकर मधु पीना शुरु करने के बाद वह चुप हो जाती है। हाँ, मधुपान के उपरान्त मस्त होकर फिर कभी-कभी भनभनाती है।

"तालाब में घडा भरते समय भक्-भक् आवाज होती है। घडा भर जाने के बाद फिर आवाज नही होती। (सब हँसे।) हाँ,

यदि एक घडे से पानी दूसरे में डाला जाय, तो फिर शब्द होता है।" (हास्य)

(३)

ज्ञान एवं विज्ञान, अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद तथा द्वैतवाद का समन्वय

श्रीरामकृष्ण—ऋषियों को ब्रह्मज्ञान हुआ था—विषयबुद्धि का लेश मात्र रहते यह ब्रह्मज्ञान नहीं होता। ऋषि लोग कितना परिश्रम करते थे! सबेरे आश्रम से चले जाते थे। दिन भर अकेले ध्यान-चिन्ता करते और रात को आश्रम में लौटकर कुछ फलमूल खाते थे। देखना, सुनना, छूना इन सब विषयों से मन को अलग रखते थे, तब कहीं उन्हें ब्रह्म का बोध होता था।

"कलियुग में लोगों के प्राण अन्न पर निर्भर हैं, देहात्मबुद्धि जाती नहीं। इस दशा में 'सोऽहम्'—मैं ब्रह्म हूँ—कहना अच्छा नहीं। सभी काम किये जाते हैं, फिर 'मैं ही ब्रह्म हूँ', यह कहना ठीक नहीं। जो विषय का त्याग नहीं कर सकते, जिनका अहंभाव किसी तरह जाता नहीं, उनके लिए 'मैं दास हूँ' 'मैं भक्त हूँ' यह अभिमान अच्छा है। भक्तिपथ में रहने से भी ईश्वर का लाभ होता है।

"ज्ञानी 'नेति-नेति'—ब्रह्म यह नहीं, वह नहीं, अर्थात् कोई भी ससीम वस्तु नहीं—यह विचार करके सब विषयबुद्धि छोड़े तब ब्रह्म को जान सकता है। जैसे कोई जीने की एक-एक सीढ़ी पार करते हुए छत पर पहुँच सकता है, पर विज्ञानी—जिसने विशेष रूप से ईश्वर से मेल-मिलाप किया है—और भी कुछ दर्शन करता है, वह देखता है कि जिन चीजों से छत बनी है—उन ईंटों, चूने, सुर्खी से जीना भी बना है। 'नेति नेति' करके जिस ब्रह्मवस्तु

का ज्ञान होता है, वही जीव और जगत् होती है। विज्ञानी देखता है कि जो निर्गुण है वही सगुण भी है।

"छत पर बहुत देर तक लोग ठहर नही सकते फिर उतर आते हैं। जिन्होने समाधिस्थ होकर ब्रह्मदर्शन किया है वे भी नीचे उतरकर देखते है कि वही जीव जगत् हुआ है। सा, रे, ग, म, प, ध, नि। 'नि' मे—चरमभूमि मे—बहुत देर तक रहा नही जाता। 'अह' नही मिटता, तब मनुष्य देखता है कि ब्रह्म ही 'मै', जीव, जगत्—सब कुछ हुआ है। इसी का नाम **विज्ञान** है।

"ज्ञानी की राह भी राह है, ज्ञान-भक्ति की राह भी राह है, फिर भक्ति की भी राह एक राह है। ज्ञानयोग भी सत्य है, और भक्ति-पथ भी सत्य है, सभी रास्ते से ईश्वर के समीप जाया जा सकता है। **ईश्वर जब तक जीवो में "मै" यह बोध रखता है, तब तक भक्तिपथ ही सरल है।**

"विज्ञानी देखता है कि ब्रह्म अटल, निष्क्रिय, सुमेरुवत् है। यह ससार उसके सत्त्व, रज और तम—इन तीन गुणो से बना है, पर यह निर्लिप्त है। विज्ञानी देखता है कि जो ब्रह्म है वही भगवान् है,—जो गुणातीत है वही षडैश्वर्यपूर्ण भगवान है। ये जीव और जगत्, मन और बुद्धि, भक्ति, वैराग्य और ज्ञान—सब उसके ऐश्वर्य हैं। (सहास्य) जिस बाबू के घरद्वार नही है—या तो बिक गया—वह बाबू कैसा! (सब हँसे।) ईश्वर षडैश्वर्यपूर्ण है। यदि उसके ऐश्वर्य न होता तो कौन उसकी परवाह करता? (सब हँसे।)

शक्तिविशेष

"देखो न, यह जगत् कैसा विचित्र है! कितने प्रकार की वस्तुएँ— चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र—कितने प्रकार के जीव इसमे है!

बड़ा-छोटा, अच्छा-बुरा, किसी में शक्ति अधिक है, किसी में कम।

विद्यासागर—क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम?

श्रीरामकृष्ण—वह विभु के रूप में सब प्राणियों में है—चींटियों तक में है। पर शक्ति का तारतम्य होता है; नहीं तो क्यों कोई दस आदमियों को हरा देता है, और कोई एक ही आदमी से भागता है? और ऐसा न हो तो भला तुम्हें ही सब कोई क्यों मानते हैं? क्या तुम्हारे दो सींग निकले हैं? (हास्य) औरों की अपेक्षा तुममें अधिक दया है—विद्या है, इसीलिए तुमको लोग मानते हैं और देखने आते हैं। क्या तुम यह बात नहीं मानते हो?

विद्यासागर मुसकराते हैं।

श्रीरामकृष्ण—केवल पण्डिताई में कुछ नहीं है। लोग किताबें इसलिए पढ़ते हैं कि वे ईश्वरलाभ में सहायता करेंगी—उनसे ईश्वर का पता लगेगा। 'आपकी पोथी में क्या है?'—किसी ने एक साधु से पूछा। साधु ने उसे खोलकर दिखाया। हर एक पन्ने में 'ॐ राम' लिखा था और कुछ नहीं।

"गीता का अर्थ क्या है? उसे दस बार कहने से जो होता है वही। दस बार 'गीता' 'गीता' कहने से 'त्यागी' 'त्यागी' निकल आता है। गीता यह शिक्षा दे रही है कि—हे जीव, तू सब छोड़कर ईश्वर-लाभ की चेष्टा कर। कोई साधु हो चाहे गृहस्थ, मन से सारी आसक्ति दूर करनी चाहिए।

"जब चैतन्यदेव दक्षिण में तीर्थ-भ्रमण कर रहे थे तो उन्होंने देखा कि एक आदमी गीता पढ़ रहा है। एक दूसरा आदमी थोड़ी दूर बैठ उसे सुन रहा है और सुनकर रो रहा है—आँखों से आँसू बह रहे हैं। चैतन्यदेव ने पूछा—क्या तुम यह सब समझ रहे हो?

उसने कहा—प्रभु, इन श्लोको का अर्थ तो मैं नही समझता हूँ। उन्होने पूछा—तो रोते क्यो हो? भक्त ने जवाब दिया—मैं देखता हूँ कि अर्जुन का रथ है और उसके सामने भगवान और अर्जुन बातचीत कर रहे है। बस यही देखकर मैं रो रहा हूँ।

(४)

भक्तियोग का रहस्य

श्रीरामकृष्ण—विज्ञानी क्यो भक्ति लिये रहते है? इसका उत्तर यह है कि 'मैं' नही दूर होता। समाधि-अवस्था म दूर तो होता है, परन्तु फिर आ जाता है। साधारण जीवो का 'अहम्' नही जाता। पीपल का पेड काट डालो, फिर उसके दूसरे दिन अकुर निकल आता है। (सब हँसे।)

"ज्ञानलाभ के बाद भी, न जाने कहाँ से 'मैं' फिर आ जाता है। स्वप्न म तुमने बाघ देखा, इसके बाद जागे, तो भी तुम्हारी छाती धडकती है। जीवो को जो दुख होता है, 'मैं' मे ही होता है। बैल 'हम्वा' (हम) 'हम्वा' (हम) बोलता है, इसी से तो इतनी यातना मिलती है। हल में जोता जाता है, वर्षा और धूप सहनी पडती है और फिर कसाई लोग काटते हैं, चमडे से जूते बनते है, ढोल बनता है,—तब खूब पिटता है। (हास्य)

"फिर भी निस्तार नही। अन्त में आँतो से तांत बनती है और उसे धुनियाँ अपने धनुहे मे लगाता है। तब वह 'मैं' नही कहती, तब कहती है 'तू-ऊ' 'तू-ऊ' (अर्थात् तुम, तुम)। जब 'तुम' 'तुम' कहती है तब निस्तार होता है। हे ईश्वर! मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो, मैं सन्तान हूँ, तुम माँ हो।

"राम ने पूछा, हनुमान, तुम मुझे किस भाव से देखते हो? हनुमान ने कहा, राम! जब मुझे 'मैं' का बोध रहता है, तब

देखता हूँ, तुम पूर्ण हो, मैं अंश हूँ, तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ, और राम! जब तत्त्वज्ञान होता है तब देखता हूँ, तुम्ही 'मैं' हो और मैं ही 'तुम' हूँ।

"सेव्य-सेवक भाव ही अच्छा है। 'मैं' जब कि हटने का ही नही तो बना रहने दो साले को 'दास मैं'।

"मैं और मेरा—ये दोनों अज्ञान हैं। यह भाव कि मेरा घर है, मेरे रुपये हैं, मेरी विद्या है, मेरा सब यह ऐश्वर्य है—अज्ञान से पैदा होता है और यह भाव ज्ञान से कि—हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और ये सब तुम्हारी चीज हैं—घर परिवार, लड़के-बच्चे, स्वजनवर्ग, बन्धु-बान्धव—ये सब तुम्हारी वस्तुएँ हैं।

"मृत्यु का सर्वदा स्मरण रखना चाहिए। मरने के बाद कुछ भी न रह जायगा। यहाँ कुछ कर्म करने के लिए आना हुआ है जैसे कि देहात म घर है, परन्तु काम करने के लिए कलकत्ते आया जाता है। यदि कोई दर्शक बगीचा देखने को आता है तो धनी मनुष्यों के बगीचे का कर्मचारी कहता है—यह बगीचा हमारा है, यह तालाब हमारा है, परन्तु किसी कसूर पर जब वह नौकरी से अलग कर दिया जाता है, तब आम की लकड़ी के बने हुए सन्दूक को ले जाने का भी उसे अधिकार नही रह जाता, सन्दूक दरवान के हाथ भेज दिया जाता है। (हास्य)

"भगवान दो बातों पर हँसते हैं। एक तो जब वैद्य रोगी की माँ से कहता है—'माँ, क्या भय है? मैं तुम्हारे लड़के को अच्छा कर दूँगा।' उस समय भगवान यह सोचकर हँसते हैं कि मैं मार रहा हूँ और यह कहता है, मैं बचाऊँगा! वैद्य सोचता है—मैं कर्ता हूँ। ईश्वर कर्ता है—यह वह भूल गया है। दूसरा अवसर वह होता है जब दो भाई रस्सी लेकर जमीन नापते हैं और कहते

हैं—इधर की मेरी है, उधर की तुम्हारी; तब ईश्वर और एक बार हँसते हैं, यह सोचकर हँसते हैं कि जगत् ब्रह्माण्ड मेरा है, पर ये कहते हैं, यह जगह मेरी है और वह तुम्हारी।

उपाय—विश्वास और भक्ति

श्रीरामकृष्ण—उन्हें क्या कोई विचार द्वारा जान सकता है? दास होकर—शरणागत होकर उन्हें पुकारो।

(विद्यासागर के प्रति, हँसते हुए) "अच्छा, तुम्हारा भाव क्या है?"

विद्यासागर मुसकरा रहे हैं। कहते हैं अच्छा, यह बात आपसे किसी दिन निर्जन में कहूँगा। (सब हँसे।)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—उन्हें पाण्डित्य द्वारा विचार करके कोई जान नहीं सकता।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेम से मतवाले होकर गाने लगे। संगीत का मर्म यह है—

"कौन जानता है कि काली कैसी है? षड्दर्शनों ने उसका दर्शन नहीं पाया। मूलाधार और सहस्रधार में योगी लोग सदा उसका ध्यान करते हैं। वह पद्मवन में हंस के साथ हंसी जैसे रमण करती है। वह आत्माराम की आत्मा है, प्रणव का प्रमाण है। वह इच्छामयी अपनी इच्छा के अनुसार घट-घट में विराजमान है। माता के जिस उदर में यह ब्रह्माण्ड समाया हुआ है, समझो कि वह कितना बड़ा हो सकता है। काली का माहात्म्य महाकाल ही जानते हैं। वैसा और कोई नहीं समझ सकता। उसको जानने का लोगों का प्रयास देखकर 'प्रसाद' हँसता है। अपार सागर क्या कोई तैरकर पार कर सकता है? यह मेरा मन समझ रहा है, परन्तु फिर भी जी नहीं मानता, वामन होकर चन्द्रमा की ओर

हाथ बढाता है ।"

'सुना ?—'माता के जिस उदर में ब्रह्माण्ड समाया हुआ है।' कहते है समझो कि वह कितना बडा है' और यह भी कहा है कि षड्दर्शनो ने उसका दर्शन नही पाया । पाण्डित्य द्वारा उसे प्राप्त करना असम्भव है ।

विश्वास और भक्ति चाहिए । विश्वास कितना बलवान् है, सुनो । किसी मनुष्य को लका से समुद्र के पार जाना था । विभीषण ने कहा—इस वस्तु को कपडे के छोर में बाँध लो तो बिना किसी बाधा के पार हो जाओगे, जल के ऊपर से चले जा सकोगे, परन्तु खोलकर न देखना, खोलकर देखोगे तो डूब जाओगे । वह मनुष्य आनन्दपूर्वक समुद्र के ऊपर से चला जा रहा था, विश्वास की ऐसी शक्ति है । कुछ रास्ता पार कर यह सोचने लगा कि विभीषण ने ऐसा क्या बांध दिया, जिसके बल से मैं पानी के ऊपर से चला जा रहा हूँ । यह सोचकर उसने गाठ खोली और देखा तो एक पत्ते पर केवल 'राम' नाम लिखा था ! तब वह मन ही मन कहने लगा—अरे, बस यही है, ज्योही यह सोचा कि डूब गया !

"यह कहावत प्रसिद्ध है कि रामनाम पर हनुमान का इतना विश्वास था कि विश्वास ही के बल से वे समुद्र लाँघ गये, परन्तु स्वय राम को सेतु बाँधना पडा था ।

"यदि उन पर विश्वास हो तो चाहे पाप करे और चाहे महापातक ही करे, किन्तु किसी से भय नही होता ।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण भक्त के भावो से मस्त होकर विश्वास का माहात्म्य गा रहे हैं—

"श्रीदुर्गा जपते हुए प्राण अगर निकले ये,—

"दीन को तुम तारती हो अथवा नहीं, देखेंगे ।"

(५)
जीवन का उद्देश्य—ईश्वरप्रेम

"विश्वास और भक्ति। भक्ति से वे सहज ही में मिलते हैं। वे भाव के विषय हैं।

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण ने फिर भजन आरम्भ किया। भाव यह है—

"मन तू अंधेरे घर मे पागल-जैसा उसकी खोज क्यो कर रहा है? वह तो भाव का विषय है। बिना भाव के, अभाव द्वारा क्या कोई उसे पकड सकता है? पहले अपनी शक्ति द्वारा काम-क्रोधादि को अपने वश म करो। उसका दर्शन न तो षड्-दर्शनो ने पाया, न निगमागम-तन्त्रो ने। वह भक्ति-रस का रसिक है, सदा आनन्दपूर्वक हृदय म विराजमान है। उस भक्ति-भाव को पाने के लिए बडे-बडे योगी युग-युगान्तर से योग कर रहे हैं। जब भाव का उदय होता है, तब भक्त को वह अपनी ओर खीच लेता है। जैसे लोहे को चुम्बक। प्रसाद कहता है कि मै मातृभाव से जिसकी खोज कर रहा हूँ, उसके तत्त्व का भण्डा क्या मुझे चौराहे पर फोडना होगा? मन, इशारे ही से समझ लो।"

गाते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये, हाथो की अजली बँध गयी—देह उन्नत और स्थिर,—नेत्र स्पन्दहीन हो गये। पश्चिम की ओर मुँह किये उसी बेंच पर पैर लटकाये बैठे रहे। सभी लोग गर्दन ऊँची करके यह अद्भुत अवस्था देखने लगे। पण्डित विद्यासागर भी चुपचाप एकटक देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। लम्बी साँस छोडकर फिर हँसते हुए बाते कर रहे हैं—भाव भक्ति, इसके माने उन्हे प्यार करना, जो ब्रह्म है, उन्ही को माँ कहकर पुकारते हैं।

"प्रसाद कहता है कि 'मैं मातृभाव से जिसकी खोज कर रहा हूँ उसके तत्त्व का भण्डा क्या मुझे चौराहे पर फोड़ना होगा ? मन, इशारे ही से समझ लो ।'

"रामप्रसाद मन को इशारे ही से समझने के लिए उपदेश करते हैं । यह समझने को कहा है कि वेदों ने जिन्हें ब्रह्म कहा है उन्हीं को मैं माँ कहकर पुकारता हूँ । जो निर्गुण हैं वे ही सगुण हैं, जो ब्रह्म हैं वे ही शक्ति हैं । जब यह बोध होता है कि वे निष्क्रिय है, तब उन्हें ब्रह्म कहता हूँ और जब यह सोचता हूँ कि वे सृष्टि, स्थिति और प्रलय करते हैं, तब उन्हें आद्याशक्ति काली कहता हूँ ।

'ब्रह्म और शक्ति अभेद है, जैसे कि अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति । अग्नि कहते ही दाहिका शक्ति का ज्ञान होता है और दाहिका शक्ति कहने से अग्नि का ज्ञान । एक को मानिये तो दूसरा भी साथ ही मान लिया जाता है ।

"उन्हीं को भक्तजन माँ कहकर पुकारते है । माँ बड़े प्यार की वस्तु है न । ईश्वर को प्यार करने ही से वे प्राप्त होते हैं, भाव, भक्ति, प्रीति और विश्वास चाहिए । एक गाना और सुनो --

"चिन्तन करने से भाव का उदय होता है । जैसा भाव होगा लाभ भी वैसा होगा, मूल है प्रत्यय । काली के चरण-सुधा-सागर में यदि चित्त डूब जाय तो पूजा-होम, याग-यज्ञ—कुछ भी आवश्यक नहीं ।

"चित्त को उन पर लगाना चाहिए, उन्हें प्यार करना चाहिए। वे सुधासागर हैं, अमृतसिन्धु हैं, इसमें डूबने से मनुष्य मरता नहीं, अमर हो जाता है। किसी-किसी का यह विचार है कि ईश्वर को ज्यादा पुकारने से मस्तिष्क बिगड़ जाता है, पर बात ऐसी नहीं । यह तो सुधासमुद्र है, अमृतसिन्धु है । वेदों में जिसे अमृत

कहा है उसमे डूब जाने से कोई मरता नही, अमर हो जाता है।

"पूजा, होम, याग, यज्ञ—ये कुछ नही है। यदि ईश्वर पर प्रीति पैदा हो जाय तो इन कर्मो की अधिक आवश्यकता नही। जब तक हवा नही बहती, तभी तक पखे की जरूरत होती है। यदि दक्षिणी हवा आप ही आने लगे तो पखा रख देना पडता है। फिर पखे का क्या काम?

"तुम जो काम कर रहे हो, ये सब अच्छे कर्म है। यदि 'मै कर्ता हूँ'—इस भाव को छोडकर निष्काम भाव से कर्म कर सको तो और भी अच्छा है। यह कर्म करते-करते ईश्वर पर भक्ति और प्रीति होगी। इस प्रकार निष्काम कर्म करते जाओ तो ईश्वर-लाभ भी होगा।

"उन पर जितनी ही भक्ति-प्रीति होगी, उतने ही तुम्हारे कर्म घटते जायँगे। गृहस्थ की बहू जब गर्भिणी होती है, तब उसकी सास उसका काम कम कर देती है, दस महीने पूरे होने पर बिलकुल काम छूने नही देती। उसे डर रहता है कि कही बच्चे को कोई हानि न पहुँचे, सन्तान-प्रसव मे कोई विपत्ति न हो। (हास्य) तुम जो काम कर रहे हो, उससे तुम्हारा ही उपकार है। निष्काम भाव से कर्म कर सकोगे तो चित्त की शुद्धि होगी, ईश्वर पर तुम्हारा प्रेम होते ही तुम उन्हे प्राप्त कर लोगे। ससार का उपकार मनुष्य नही करता, वे ही करते है जिन्होने चन्द्र-सूर्य की सृष्टि की, माता-पिता को स्नेह दिया, सत्पुरुषो में दया का सचार किया और साधु-भक्तो को भक्ति दी। जो मनुष्य कामनाशून्य होकर कर्म करेगा वह अपना ही हित करेगा।

"भीतर सुवर्ण है, अभी तक तुम्हे पता नही मिला। ऊपर कुछ मिट्टी पडी है। यदि एक बार पता चल जाय तो अन्य काम घट

जायँगे। गृहस्थ की वहू के लडका होने से वह लडके ही को लिये रहती है, उसी को उठाती बैठाती है। फिर उसकी सास उसे घर के काम म हाथ नही लगाने देती। (सब हँसे)

'और भी, 'आगे बढो।' लकडहारा लकडी काटने गया था, ब्रह्मचारी न कहा—आग बढ जाओ। उसने आगे बढकर देखा तो चन्दन के पेड थे। फिर कुछ दिन बाद उसने सोचा कि ब्रह्मचारी ने बढ जाने को कहा था, सिर्फ चन्दन के पेड तक तो जाने को कहा नही। आगे चलकर देखा तो चाँदी की खान थी। फिर कुछ दिन बीतने पर और आगे बढा और देखा तो सोने की खान मिली। फिर क्रमश हीरे की—मणिओ की। वह सब लेकर वह मालामाल हो गया।

'निष्काम कर्म कर सकने से ईश्वर पर प्रेम होता है। क्रमश उसकी कृपा से उसे लोग पाते भी हैं। ईश्वर के दर्शन होते हैं, उनसे बातचीत होती है जैसे कि मैं तुमसे वार्तालाप कर रहा हूँ।" (सब नि शब्द हैं)

(६)

प्रेमयुक्त वार्तालाप

सब की जबान बन्द है। लोग चुपचाप बैठे ये बाते सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की जिह्वा पर मानो साक्षात् वाग्वादिनी बैठी हुई जीवो के हित के लिए विद्यासागर से बाते कर रही हैं। रात हो रही है—९ बजने को है। श्रीरामकृष्ण अब चलनेवाले हैं।

श्रीरामकृष्ण (विद्यासागर से, सहास्य)—यह सब जो कहा, वह तो ऐसे ही कहा। आप सब जानते हैं, किन्तु अभी आपको इसकी खबर नहीं। (सब हँसे) वरुण के भण्डार में कितने ही रत्न पड़े हैं, परन्तु वरुण महाराज को कोई खबर नहीं।

विद्यासागर (हँसते हुए)—यह आप कह सकते हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—हाँ जी, अनेक बाबू नौकरों तक के नाम नहीं जानते ! (सब हँसते हैं) घर में कहाँ कौनसी कीमती चीज पड़ी है, वे नहीं जानते।

वार्तालाप सुनकर लोग आनन्दित हो रहे हैं। श्रीरामकृष्ण विद्यासागर से फिर प्रसंग उठाते हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसमुख)—एक बार बगीचा देखने जाइये, रासमणि का बगीचा। बड़ी अच्छी जगह है।

विद्यासागर—जरूर जाऊँगा। आप आये और मैं न जाऊँगा ?

श्रीरामकृष्ण—मेरे पास ? राम राम !

विद्यासागर—यह क्या ! ऐसी बात आपने क्यों कही ? मुझे समझाइये।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—हम लोग छोटी-छोटी किश्तियाँ हैं (सब हँसते हैं) जो खाई, नाले और बड़ी नदियों में भी जा सकती हैं, परन्तु आप हैं जहाज, कौन जानता है, जाते समय रेत में लग जाय !

विद्यासागर प्रफुल्लमुख किन्तु चुपचाप बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण हँसते हैं।

श्रीरामकृष्ण—पर हाँ, इस समय जहाज भी जा सकता है।

विद्यासागर (हँसते हुए)—हाँ, ठीक है, यह वर्षाकाल है। (लोग हँसे)

श्रीरामकृष्ण उठे। भक्तजन भी उठे। विद्यासागर आत्मीयों के साथ खड़े हैं, श्रीरामकृष्ण को गाड़ी पर चढ़ाने जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण अब भी खड़े हैं। करजाप कर रहे हैं। जपते हुए भाव के आवेश में आ गये, मानो विद्यासागर के आत्मिक हित के

लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हो।

भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण उतर रहे है। एक भक्त हाथ पकडे हुए हैं। विद्यासागर स्वजन बन्धुओं के साथ आगे-आगे जा रहे है, हाथ में बत्ती लिये रास्ता दिखाते हुए। सावन की कृष्णपक्ष की षष्ठी है, अभी चन्द्रोदय नही हुआ है। अंधेरे से ढकी हुई उद्यान-भूमि को बत्ती के मन्द प्रकाश के सहारे किसी तरह पार कर लोग फाटक की ओर आ रहे है।

भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण फाटक के पास ज्योंही पहुँचे कि एक सुन्दर दृश्य ने सबको चकित कर दिया। परम भक्त बलराम बाबू साफा बाँधे खडे थे। उन्होने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण—बलराम ! तुम हो ? इतनी रात को ?

बलराम (हँसकर)—मैं बडी देर से आया हूँ।

श्रीरामकृष्ण—भीतर क्यो नही गये ?

बलराम—जी, लोग आपका वार्तालाप सुन रहे थे। बीच में पहुँचकर क्यो शान्ति भग करूँ, यह सोचकर नही गया। (यह कहकर बलराम हँसने लगे)

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ गाड़ी पर बैठ गये।

विद्यासागर (मास्टर से मृदु स्वरों में)—गाडी का किराया क्या दे दें ?

मास्टर—जी नही, दे दिया गया है।

विद्यासागर और अन्यान्य लोगों ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

परिच्छेद ५

गृहस्थों के प्रति उपदेश

(१)

समाधि तत्त्व एवं सर्वधर्मसमन्वय । हिन्दू, मुसलमान और ईसाई

दक्षिणेश्वर के मन्दिर में श्रीरामकृष्ण केदार आदि भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं । आज रविवार, अमावस्या, १३ अगस्त १८८२ ई. है, समय दिन के पाँच बजे का होगा ।

श्री केदार चटर्जी का मकान हाली शहर में है । ये सरकारी अकाउन्टैन्ट का काम करते थे । बहुत दिन ढाका में रहे, उस समय श्री विजय गोस्वामी उनके साथ सदा श्रीरामकृष्ण के विषय में वार्तालाप करते थे । ईश्वर की बात सुनते ही उनकी आँखों में आँसू भर आते थे । वे पहले ब्राह्मसमाज में थे ।

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिणवाले बरामदे में भक्तों के साथ बैठे हैं । राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, राखाल, भवनाथ, मास्टर आदि अनेक भक्त उपस्थित हैं । केदार ने आज उत्सव किया है, सारा दिन आनन्द से बीत रहा है । राम ने एक गायक बुलाया है । उन्होंने गाना गाया । गाने के समय श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न होकर कमरे में छोटी खटिया पर बैठे हैं । मास्टर तथा अन्य भक्तगण उनके पैरों के पास बैठे हैं ।

श्रीरामकृष्ण वार्तालाप करते-करते समाधि-तत्त्व समझा रहे हैं । कह रहे हैं, "सच्चिदानन्द की प्राप्ति होने पर समाधि होती है, उस समय कर्म का त्याग हो जाता है । मैं गायक का नाम ले

रहा हूँ, ऐसे समय यदि वे आकर उपस्थित होते हैं तो फिर उनका नाम लेने की क्या आवश्यकता ? मधुमक्खी गुनगुन करती है कब तक ?—जब तक फूल पर नहीं बैठती । कर्म का त्याग करने से साधक का न बनेगा, पूजा, जप, तप, ध्यान, सन्ध्या, कवच, तीर्थ आदि सभी करना होगा । ईश्वरप्राप्ति के बाद यदि कोई विचार करता है तो वह वैसा ही है जैसा मधुमक्खी मधु का पान करती हुई अस्फुट स्वर से गुनगुनाती रहे ।"

गायक ने अच्छा गाना गाया था । श्रीरामकृष्ण प्रसन्न हो गये । उनसे कह रहे हैं, "जिस मनुष्य में कोई एक बड़ा गुण है, जैसे संगीत विद्या, उसमें ईश्वर की शक्ति विशेष रूप से वर्तमान है ।

गायक—महाराज, किस उपाय से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है ?

श्रीरामकृष्ण—**भक्ति ही सार है** । ईश्वर तो सर्व भूतों में विराजमान हैं । तो फिर भक्त किसे कहूँ—जिसका मन सदा ईश्वर में है । अहङ्कार, अभिमान रहने पर कुछ नहीं होता । 'मैं' रूपी टीले पर ईश्वर की कृपा रूपी जल नहीं ठहरता, लुढ़क जाता है । मैं यन्त्र हूँ ।

(केदार आदि भक्तों के प्रति) "सब मार्गों से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है । सभी धर्म सत्य हैं । छत पर चढ़ने से मतलब है, सो तुम पक्की सीढ़ी से भी चढ़ सकते हो, लकड़ी की सीढ़ी से भी चढ़ सकते हो, बाँस की सीढ़ी से भी चढ़ सकते हो और रस्सी के सहारे भी चढ़ सकते हो और फिर एक गाँठदार बाँस के जरिये भी चढ़ सकते हो ।

"यदि कहो, दूसरों के धर्म में अनेक भूल, कुसंस्कार हैं, तो मैं कहता हूँ, हैं तो रहें, भूल सभी धर्मों में है । सभी समझते हैं मेरी

घडी ठीक चल रही है । व्याकुलता होने मे ही हुआ । उनसे प्रेम' आकर्षण रहना चाहिए । वह अन्तर्यामी जो हैं । वे अन्तर की व्याकुलता, आकर्षण को देख सकते है । मानो एक मनुष्य के कुछ बच्चे हैं । उनमें से दो जो बडे हैं वे 'बाबा' या 'पापा' इन शब्दों को स्पष्ट रूप से कहकर उन्हे पुकारते हैं । और जो बहुत छोटे हैं वे बहुत हुआ तो 'बा' या 'पा' कहकर पुकारते हैं । जो लोग सिर्फ 'बा' या 'पा' कह सकते हैं, क्या पिता उनसे असन्तुष्ट होंगे ? पिता जानते है कि वे उन्हे ही बुला रहे हैं, परन्तु वे अच्छी तरह उच्चारण नहीं कर सकते । पिता की दृष्टि में सभी बच्चे बराबर है ।

"फिर भक्तगण उन्हे ही अनेक नामो से पुकार रहे हैं । एक ही व्यक्ति को बुला रहे हैं । एक तालाब के चार घाट हैं । हिन्दू लोग एक घाट मे जल पी रहे हैं और कहते हैं जल । मुसलमान लोग दूसरे घाट में पी रहे है—कहते है पानी । अंग्रेज लोग तीसरे घाट में पी रहे हैं और कह रहे हैं वॉटर (Water) और कुछ लोग चौथे घाट में पी रहे हैं और कहते हैं अकुवा (Aqua)। **एक ईश्वर, उनके अनेक नाम हैं ।"**

(२)

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तो के साथ विराजमान है। दिन वृहस्पतिवार है, सावन शुक्ल दशमी, २४ अगस्त १८८२ ई० ।

आजकल श्रीरामकृष्ण के पास हाजरा महाशय, रामलाल, राखाल आदि रहते हे । श्रीयुत रामलाल श्रीरामकृष्ण के भतीजे हैं, काली-मन्दिर में पूजा करते हैं । मास्टर ने आकर देखा, उत्तरपूर्व के लम्बे बरामदे में श्रीरामकृष्ण हाजरा के पास खडे हुए

बातें कर रहे हैं। मास्टर ने भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण की चरणवन्दना की।

श्रीरामकृष्ण का मुख सहास्य है। मास्टर से कहने लगे— विद्यासागर से और भी दो एक बार मिलना चाहिए। चित्रकार पहले नक्शा खींच लेता है, फिर उस पर रंग चढ़ाता रहता है। प्रतिमा पर पहले दो तीन बार मिट्टी चढ़ाई जाती है। फिर वह ढंग से रंगी जाती है।—विद्यासागर का सब कुछ ठीक है, सिर्फ ऊपर कुछ मिट्टी पड़ी हुई है। कुछ अच्छे काम करता है, परन्तु हृदय में क्या है उनकी खबर नहीं। हृदय में सोना दबा पड़ा है। हृदय में ईश्वर है—यह समझने पर सब कुछ छोड़कर व्याकुल हो उसे पुकारने की इच्छा होती है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से खड़े-खड़े वार्तालाप कर रहे हैं, कभी बरामदे में टहल रहे हैं।

साधना और पुरस्कार

श्रीरामकृष्ण—हृदय में क्या है इसका ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ साधना आवश्यक है।

मास्टर—साधना क्या बराबर करते ही जाना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण—नहीं, पहले कुछ कमर कसकर करनी चाहिए। फिर ज्यादा मेहनत नहीं उठानी पड़ती। जब तक तरंग, आँधी, तूफान और नदी की मोड़ से नौका जाती है तभी तक मल्लाह को मजबूती से पतवार पकड़नी पड़ती है, उतने से पार हो जाने पर फिर नहीं। जब वह मोड़ से बाहर हो गया और अनुकूल हवा चली तब वह आराम से बैठा रहता है, पतवार में हाथ भर लगाये रहता है। फिर तो पाल टाँगने का बन्दोबस्त करके आराम से चिलम भरता है। कामिनी और कांचन की आँधी-तूफान में

निकल जाने पर शान्ति मिलती है।

"किसी-किसी में योगियों के लक्षण दीखते हैं परन्तु उन लोगों को भी सावधानी से रहना चाहिए। कामिनी और कांचन ही योग में विघ्न डालते हैं। योगभ्रष्ट होकर वह फिर संसार में आता है,—भोग की कुछ इच्छा रही होगी। इच्छा पूरी होने पर वह फिर ईश्वर की ओर आयगा—फिर वही योग की अवस्था होगी। 'सटका' कल जानते हो?"

मास्टर—जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण—उस देश में है। (श्रीरामकृष्ण अपनी जन्मभूमि को बहुधा 'वह देश' कहते थे।) बाँस को झुका देते हैं। उसमें बंसी और डोर लगी रहती है। काँटे में मछलियों के खाने का चारा बेध दिया जाता है। ज्योंही मछली उसे निगल जाती है, त्योंही वह बाँस झटके के साथ ऊपर उठ जाता है। जिस प्रकार उसका सिर ऊँचा था वैसा ही हो जाता है।

"तराजू में किसी ओर कुछ रख देने से नीचे की सुई और ऊपर की सुई दोनों बराबर नहीं रहतीं। नीचे की सुई मन है और ऊपर की सुई ईश्वर। नीचे की सुई का ऊपर से एक होना ही योग है।

"मन के स्थिर हुए बिना योग नहीं होता। संसार की हवा मनरूपी दीपशिखा को सदा ही चंचल किया करती है। वह शिखा यदि जरा भी न हिले तो योग की अवस्था हो जाती है।

'कामिनी और कांचन योग के विघ्न हैं। वस्तुविचार करना चाहिए। स्त्रियों के शरीर में क्या है—रक्त, मांस, आँतें, कृमि, मूत्र, विष्ठा—यही सब। उस शरीर का प्यार ही क्या?

"त्याग के लिए मैं अपने में राजसी भाव भरता था। साध

हुई थी कि जरी की पोशाक पहनूँगा—अँगूठी पहनूँगा—लम्बी नली वाले हुक्के में तम्बाकू पिऊँगा। जरी की पोशाक पहनी। ये लोग (रानी रासमणि के दामाद मथुर बाबू आदि को लक्ष्य करके कहते हैं) ले आये थे। कुछ देर बाद मन ने कहा—यही शाल है, यही अँगूठी है, यही हुक्के में तम्बाकू पीना है। सब फेंक दिया, तब से फिर मन नहीं चला।"

शाम हो रही है। घर मे पूरब की ओर के बरामदे में घर के द्वार के पास ही, अकेले में श्रीरामकृष्ण मणि*से बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—योगियो का मन सदा ईश्वर में लगा रहता है—सदा आत्मस्थ रहता है। शून्य दृष्टि, देखते ही उनकी अवस्था सूचित हो जाती है। समझ में आ जाता है कि चिड़िया अण्डे को से रही है। सारा मन अण्डे ही की ओर है। ऊपर दृष्टि तो नाम-मात्र की है। अच्छा, ऐसा चित्र क्या मुझे दिखा सकते हो ?

मणि—जो आज्ञा, चेष्टा करूँगा यदि कहीं मिल जाय।

(३)

निष्काम कर्म तथा विद्या का संसार

शाम हो गयी। कालीमन्दिर, राधाकान्तजी के मन्दिर और अन्यान्य कमरों में बत्तियाँ जला दी गयीं। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए जगन्माता का स्मरण कर रहे हैं। तद-नन्तर वे ईश्वर का नाम जपने लगे। घर में धूनी दी गयी है। एक ओर दीवट पर दिया जल रहा है। कुछ देर बाद शंख घण्टा आदि बजने लगे। काली-मन्दिर में आरती होने लगी। तिथि शुक्ला दशमी है, चारों ओर चाँदनी छिटक रही है।

आरती हो जाने पर कुछ क्षण बाद श्रीरामकृष्ण मणि के साथ

---

* मणि और मास्टर एक ही व्यक्ति हैं।

अकेले अनेक विषयो पर बाते करने लगे । मणि फर्श पर बैठे है।

श्रीरामकृष्ण—कर्म निष्काम करना चाहिए । ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जो कर्म करता है वे अच्छे है, वह निष्काम कर्म करने की चेष्टा करता है ।

मणि—जी हाँ । अच्छा, जहाँ कर्म है वहा क्या ईश्वर मिलते है ? राम और काम क्या एक ही साथ रहते है ? हिन्दी म मैंने पढा है कि—'जहाँ काम तहँ राम नहि, जहा राम नही काम ।'

श्रीरामकृष्ण—कर्म सभी करते हैं । उनका नाम लेना कर्म है—साँस लेना और छोडना भी कर्म है । क्या मजाल है कि कोई कर्म छोड दे । इसलिए कर्म करना चाहिए, किन्तु फल ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए ।

मणि—तो क्या ऐसी चेष्टा की जा सकती है कि जिससे अधिक धन मिल ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, की जा सकती है, किन्तु यदि विद्या का परिवार हो, तो । अधिक धन कमाने का प्रयत्न करो, परन्तु सदुपाय से । उद्देश्य उपार्जन नही, ईश्वर की सेवा है । धन से यदि ईश्वर की सेवा होती है तो उस धन म दोष नही है ।

मणि—घरवालो के प्रति कर्तव्य कब तक रहता है ?

श्रीरामकृष्ण—उन्हे भोजन वस्त्र का दु ख न हो । सन्तान जब स्वय समर्थ होगी, तब भार-ग्रहण की आवश्यकता नही । चिडियो के बच्चे जब खुद चुगने लगते है तब माँ के पास यदि खाने के लिए आते है तो माँ चोच मारती है ।

मणि—कर्म कब तक करना होगा ?

श्रीरामकृष्ण—फल होने पर फूल नही रह जाता । ईश्वरलाभ हो जाने से कर्म नही करना पडता, मन भी नही लगता ।

"ज्यादा शराब पी लेने से मतवाला होश नहीं सँभाल सकता—दुअन्नी भर पीने से कामकाज कर सकता है। ईश्वर की ओर जितना ही बढ़ोगे उतना ही वे कर्म घटाते रहेंगे। डरो मत। गृहस्थ की बहू के जब लड़का होनेवाला होता है तब उसकी सास धीरे-धीरे काम घटाती जाती है। दसवें महीने में काम छूने भी नहीं देती। लड़का होने पर वह उसी को लिए रहती है।

"जो कुछ कर्म हैं, जहाँ वे समाप्त हो गये कि चिन्ता दूर हो गयी। गृहिणी घर का काम समाप्त करके जब कहीं बाहर निकलती है, तब जल्दी नहीं लौटती, बुलाने पर भी नहीं आती।"

मणि—अच्छा, ईश्वर-लाभ के क्या माने हैं? ईश्वर-दर्शन किसे कहते हैं और किस तरह होते हैं?

श्रीरामकृष्ण—वैष्णव कहते हैं कि ईश्वरमार्ग के पथिक चार प्रकार के होते हैं—**प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्धों में सिद्ध।** जो पहले ही पहल मार्ग पर आया है वह प्रवर्तक है। जो भजन-पूजन, जप-ध्यान, नाम-गुणकीर्तनादि करता है वह साधक है। जिसे ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव मात्र हुआ है वह सिद्ध है। उसकी वेदान्त में एक उपमा है,—वह यह कि अन्धेरे घर में बाबू जी सो रहे हैं। कोई टटोलकर उन्हें खोज रहा है। कोच पर हाथ जाता है, तो वह मन ही मन कह उठता है यह नहीं है; झरोखा छू जाता है तो भी कह उठता है—यह नहीं है, दरवाजे में हाथ लगता है तो यह भी नहीं है,—नेति-नेति-नेति। अन्त में जब बाबूजी की देह पर हाथ लगा तो कहा—यह—बाबूजी यह हैं,—अर्थात् अस्ति का बोध हुआ। बाबूजी को प्राप्त तो किया किन्तु भलीभाँति जान पहचान नहीं हुई।

"एक दर्जे के और लोग हैं, जो **सिद्धों में सिद्ध** कहलाते हैं।

बाबूजी के साथ यदि विशेष वार्तालाप हो तो वह एक और ही अवस्था है, यदि ईश्वर के साथ प्रेम भक्ति द्वारा विशेष परिचय हो जाय तो दूसरी ही अवस्था हो जाती है। जो सिद्ध है उसने ईश्वर को पाया तो है, किन्तु जो सिद्धों में सिद्ध है उसका ईश्वर के साथ विशेष परिचय हो गया है।

"परन्तु उनको प्राप्त करने की इच्छा हो तो एक न एक भाव का सहारा लेना पड़ता है, जैसे—शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य या मधुर।

"शान्त भाव ऋषियों का था। उनमें भोग की कोई वासना न थी, ईश्वरनिष्ठा थी जैसी पति पर स्त्री की होती है। वह यह समझती है कि मेरे पति कन्दर्प हैं।

"दास्य—जैसे हनुमान का रामकाज करते समय, सिंहतुल्य। स्त्रियों का भी दास्य भाव होता है,—पति की हृदय खोलकर सेवा करती है। माता में भी यह भाव कुछ-कुछ रहता है,—यशोदा में था।

"सख्य—मित्रभाव। आओ, पास बैठो। सुदामा आदि श्रीकृष्ण को कभी जूठे फल खिलाते थे, कभी कन्धे पर चढ़ते थे।

"वात्सल्य—जैसे यशोदा का। स्त्रियों में भी कुछ-कुछ होता है, स्वामी को खिलाते समय मानो जी काढ़कर रख देती है। लड़का जब भरपेट भोजन कर लेता है, तभी माँ को सन्तोष होता है। यशोदा कृष्ण को खिलाने के लिए मक्खन हाथ में लिये घूमती फिरती थी।

"मधुर—जैसे श्री राधिका का। स्त्रियों का भी मधुर भाव है। इस भाव में शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य सब भाव हैं।"

मणि—क्या ईश्वर के दर्शन इन्हीं नेत्रों से होते हैं?

श्रीरामकृष्ण—चर्मचक्षु से उन्हें कोई नही देख सकता। साधना करते-करते **शरीर प्रेम का हो जाता है**। आँखें प्रेम की, कान प्रेम के। उन्ही आँखों से वे दीख पड़ते है, उन्ही कानो से उनकी वाणी सुन पड़ती है। और प्रेम का लिंग और योनि भी होती है।

यह सुनकर मणि खिलखिलाकर हँस पड़े। श्रीरामकृष्ण जरा भी नाराज न होकर फिर कहने लगे।

श्रीरामकृष्ण—इस प्रेम के शरीर में आत्मा के साथ रमण होता है।

"**ईश्वर को बिना खूब प्यार किये दर्शन नहीं होते**। खूब प्यार करने से चारो ओर ईश्वर ही ईश्वर दीखते हैं। जिसे पीलिया हो जाता है उसे चारो ओर पीला ही पीला दिखाई पड़ता है।

"तब 'मैं वही हूँ' यह बोध भी हो जाता है। मतवाले का नशा जब खूब चढ़ जाता है तब वह कहता है, 'मैं ही काली हूँ'।

"गोपियाँ प्रेमोन्मत्त होकर कहने लगीं—मैं ही कृष्ण हूँ।

"दिन रात उन्ही की चिन्ता करने से चारो ओर वे ही दीख पड़ते हैं। जैसे थोड़ी देर दीपशिखा की ओर ताकते रहो, तो फिर चारो ओर सब कुछ शिखामय ही दिखाई देता है।"

मणि सोचते हैं कि वह शिखा तो सत्य शिखा है नहीं।

अन्तर्यामी श्रीरामकृष्ण कहने लगे—चैतन्य की चिन्ता करने से कोई अचेत नही हो जाता। शिवनाथ ने कहा था, ईश्वर की बारम्बार चिन्ता करने से लोग पागल हो जाते हैं। मैंने उनसे कहा, चैतन्य की चिन्ता करने से क्या कभी कोई चैतन्यहीन होता है?

मणि—जी, समझा। यह तो किसी अनित्य विषय की चिन्ता है नही, जो नित्य और चेतन हैं उनमें मन लगाने से मनुष्य

अनेनन क्यो होने लगा ?

श्रीरामकृष्ण (प्रसन्न होकर)—यह उनकी कृपा है। बिना उनकी कृपा के सन्देह भजन नही होता।

"आत्मदर्शन के बिना सन्देह दूर नही होता।

"उनकी कृपा होने पर फिर कोई भय की बात नही रह जाती। पुत्र यदि पिता का हाथ पकडकर चले तो गिर भी सकता है, परन्तु यदि पिता पुत्र का हाथ पकडे तो फिर गिरने का कोई भय नहीं। वे यदि कृपा करके सशय दूर कर दे और दर्शन दे तो फिर कोई दुख नही, परन्तु उन्हे पाने के लिए खूब व्याकुल होकर पुकारना चाहिए—साधना करनी चाहिए—तब उनकी कृपा होनी है। पुत्र को दौडते हाँफते देखकर माता को दया आ जाती है। माँ छिपी थी। सामने प्रकट हो जाती है।"

मणि सोच रहे हैं, ईश्वर दौडधूप क्यो कराते हैं ? श्रीरामकृष्ण तुरन्त कहने लगे—उनकी इच्छा कि कुछ देर दौड धूप हो तो आनन्द मिले। लीला से उन्होने इस ससार की रचना की है। इसी का नाम महामाया है। अतएव उस शक्तिरूपिणी महामाया की शरण लेनी पडती है। माया के पाशो ने बाँध लिया है, फाँस काटने पर ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं।

आद्या शक्ति महामाया तथा साधना

श्रीरामकृष्ण—कोई ईश्वर की कृपा प्राप्त करना चाहे तो उसे पहले आद्या शक्तिरूपिणी महामाया को प्रसन्न करना चाहिए। वे ससार को मुग्ध करके सृष्टि, स्थिति और प्रलय कर रही हैं। उन्होने सबको अज्ञानी बना डाला है। वे जब द्वार से हट जायँगी तभी जीव भीतर जा सकता है। बाहर पड़े रहने से केवल बाहरी वस्तुएँ देखने को मिलती हैं, नित्य सच्चिदानन्द पुरुष नही मिलते।

इसीलिए पुराणों मे है—सप्तशती में, मधुकैटभ का वध करते समय ब्रह्मादि देवता महामाया की स्तुति कर रहे हैं। *

"संसार का मूल आधार शक्ति ही है। उस आद्या शक्ति के भीतर विद्या और अविद्या दोनों हैं—अविद्या मोहमुग्ध करती है। **अविद्या** वह है जिससे कामिनी और कांचन उत्पन्न हुए हैं, वह मुग्ध करती है और **विद्या** वह है जिससे भक्ति, दया, ज्ञान और प्रेम की उत्पत्ति हुई है, वह ईश्वर-मार्ग पर ले जाती है।

"उस अविद्या को प्रसन्न करना होगा। इसीलिए शक्ति की पूजा-पद्धति हुई।

"उन्हे प्रसन्न करने के लिए नाना भावों से पूजन किया जाता है। जैसे दासी भाव, वीर भाव, सन्तान भाव। वीर भाव अर्थात् उन्हें रमण द्वारा प्रसन्न करना।

"शक्ति-साधना। सब बड़ी विकट साधनाएँ थी, दिल्लगी नहीं।

"मैं माँ के दासी भाव से और सखी भाव से दो वर्ष तक रहा। **परन्तु मेरा सन्तान भाव है।** स्त्रियों के स्तना को मातृस्तन समझता हूँ।

"लड़कियाँ शक्ति की एक-एक मूर्ति हैं। पश्चिम में विवाह के समय वर के हाथ में छुरी रहती है, बंगाल में सरौता—अर्थात् उस शक्तिरूपिणी कन्या की सहायता से वर मायापाश काट सकेगा। यह वीर भाव है। मैंने वीर भाव से पूजा नहीं की। मेरा सन्तान भाव था।

"कन्या शक्तिस्वरूपा है। विवाह के समय तुमने नहीं देखा—

---

* ब्रह्मोवाच। त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारस्वरात्मिका।
मुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधामात्रात्मिका स्थिता॥ इत्यादि।
—सप्तशती, मधुकैटभ वध।

वर अहमक की तरह पीछे बैठा रहता है, परन्तु कन्या नि.शंक रहती है।

"ईश्वर-लाभ करने पर उनके बाहरी ऐश्वर्य—ससार के ऐश्वर्य को भक्त भूल जाता है। उन्हें देखने से उनके ऐश्वर्य की बात याद नहीं आती। दर्शनानन्द में मग्न हो जाने पर भक्त का हिसाब-किताब नही रह जाता। नरेन्द्र को देखने पर 'तेरा नाम क्या है, तेरा घर कहाँ है' यह कुछ पूछने की जरूरत नही रहती। पूछने का अवसर ही कहाँ है? हनुमान से किसी ने पूछा—आज कौनसी तिथि है? हनुमान ने कहा, भाई, मैं दिन, तिथि, नक्षत्र—कुछ नहीं जानता, मैं केवल श्रीराम का स्मरण किया करता हूँ।"

कहा, 'जब मेरी यह अवस्था हुई तब आश्विन की आँधी की तरह एक भाव आकर वह सब कुछ न जाने कहाँ उड़ा ले गया, कुछ पता ही न चला! पहले की एक भी निशानी न रही। होश नहीं थे। जब कपड़ा ही खिसक जाता था, तो जनेऊ कैसे रहे?' मैंने कहा, 'एक बार तुम्हें भी उन्माद हो जाय तो तुम समझो!'

"फिर हुआ भी वैसा! उसे उन्माद हो गया। तब वह केवल 'ॐ ॐ' कहा करता और एक कोठरी में चुपचाप बैठा रहता था। यह समझकर कि वह पागल हो गया है, लोगों ने वैद्य बुलाया। नाटागढ़ का राम कविराज आया, कृष्णकिशोर ने उससे कहा, 'मेरी बीमारी तो अच्छी कर दो, पर देखो मेरे ॐकार को मत छुड़ाना!' (सब हँसे)

"एक दिन मैंने जाकर देखा कि वह बैठा सोच रहा है। पूछा 'क्या हुआ है?' उसने कहा, 'टैक्सवाले आये थे, इसीलिए सोच में पड़ा हूँ। उन्होंने कहा है रुपया न देने से घर का माल बेच लेंगे।' मैंने कहा, 'तो सोचकर क्या होगा? अगर सब उठा ले जायँ तो ले जाने दो। अगर बाँधकर ही ले जायँ तो तुम्हें थोड़े ही ले जा सकेंगे। तुम तो 'ख' (आकाश) हो?' (नरेन्द्र आदि हँसे) कृष्णकिशोर कहा करता था कि मैं आकाशवत् हूँ। वह अध्यात्म रामायण पढ़ता था न! बीच-बीच में उसे 'तुम ख हो' कहकर दिल्लगी करता था। सो हँसते हुए मैंने कहा, 'तुम ख हो; टैक्स तुम्हें तो खींचकर नहीं ले जा सकेगा।'

"उन्माद की दशा में मैं लोगों से सच-सच बातें—सब बातें कह देता था। किसी की परवाह न करता था। अमीरों को देखकर मुझे डर नहीं लगता था।

"यदु मल्लिक के बाग में यतीन्द्र आया था। मैं भी वहीं था।

मैंने उससे पूछा, 'कर्तव्य क्या है ? क्या ईश्वर का चिन्तन करना ही हमारा कर्तव्य नहीं है ?' यतीन्द्र ने कहा, 'हम संसारी आदमी हैं। हमारे लिए मुक्ति कैसी ! राजा युधिष्ठिर को भी नरकदर्शन करना पड़ा था !' तब मुझे बड़ा क्रोध आया। मैंने कहा, 'तुम भला कैसे आदमी हो, युधिष्ठिर का सिर्फ नरक-दर्शन ही तुमने याद रखा है ? युधिष्ठिर का सत्यवचन, क्षमा, धैर्य, विवेक, वैराग्य, ईश्वर की भक्ति—यह सब बिलकुल याद नहीं आता !' और भी बहुत कुछ कहने जाता था, पर हृदय ने मेरा मुंह दबा लिया। थोड़ी देर बाद यतीन्द्र यह कहकर कि जरा काम है, चला गया।

"बहुत दिनों बाद मैं कप्तान के साथ सौरीन्द्र ठाकुर के घर गया था। उसे देखकर मैंने कहा, 'तुम्हें राजा-वाजा कह नहीं सकूंगा, क्योंकि वह झूठ बात होगी।' उसने मुझसे थोड़ी बातचीत की। फिर मैंने देखा कि साहब लोग आने-जाने लगे। वह रजोगुणी आदमी है, बहुत कामों में लगा रहता है। यतीन्द्र को खबर भेजी गयी। उसने जवाब दिया, 'मेरे गले में दर्द हुआ है।'

"उस उन्माद की दशा में एक दूसरे दिन वराहनगर के घाट पर मैंने देखा कि जय मुकुर्जी जप कर रहा है, पर अनमना होकर। तब मैंने पास जाकर दो थप्पड़ लगा दिये।

"एक दिन रासमणि दक्षिणेश्वर में आयी। काली माता के मन्दिर में आयीं। वे पूजा के समय आया करतीं और मुझसे एक-दो गीत गाने को कहती थीं। मैं गीत गा रहा था, देखा कि वे अनमनी होकर फूल चुन रही हैं। बस, दो थप्पड़ जमा दिये। तब होश संभालकर हाथ बांधे रहीं।

"हलधारी से मैंने कहा, 'भैया, यह कैसे स्वभाव हो गया !

क्या उपाय करूँ ?' तब माँ को पुकारते-पुकारते वह स्वभाव दूर हुआ।

"उस अवस्था में ईश्वरीय प्रसग के सिवा और कुछ अच्छा नही लगता था। वैषयिक चर्चा होते सुनकर मै बैठा रोया करता था। जब मथुरबाबू मुझे अपने साथ तीर्थो को ले गये, तब थोड़े दिन हम वाराणसी में राजा बाबू के मकान पर रहे। मथुरबाबू के साथ बैठकखाने मे मैं बैठा था और राजा बाबू भी थे। मैंने देखा कि वे सासारिक बाते कह रहे है। इतने रुपये का नुक्सान हुआ है,—ऐसी-ऐसी बाते। मैं रोने लगा—कहा 'माँ, मुझे यह कहाँ लायी ! मै तो रासमणि के मन्दिर में कही अच्छा था। तीर्थ करने को आते हुए भी वे ही कामिनी-काचन की बाते ! पर वहाँ (दक्षिणेश्वर में) तो विषय-चर्चा सुननी नहीं पडती थी, होती ही न थी।"

श्रीरामकृष्ण ने भक्तो से, विशेषकर नरेन्द्र से, जरा आराम लेने के लिए कहा, और आप भी छोटे तखत पर थोड़ा आराम करने चले गये।

(२)

नरेन्द्र आदि के साथ कीर्तनानन्द। नरेन्द्र का प्रेमालिंगन

तीसरा पहर हुआ है। नरेन्द्र गाना गा रहे हैं। राखाल, लाटू, मास्टर, नरेन्द्र के मित्र प्रिय, हाजरा आदि सब हैं।

नरेन्द्र ने कीर्तन गाया, मृदंग बजने लगा—

'ऐ मन, तू चिद्घन हरी का चिन्तन कर। उनकी मोहनमूर्ति की कैसी छटा है !" (पृष्ठ २१ देखिये)

नरेन्द्र ने फिर गाना गाया—

(भावार्थ) "सत्य-शिव-सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर में शोभाय-

मान है, जिसे नित्य देखकर हम उस रूप के समुद्र मे डूब जायँगे। वह दिन कब आयेगा ? हे प्रभु, मुझ दीन के भाग्य मे यह कब होगा ? हे नाथ, कब अनन्त ज्ञान के रूप मे तुम हमारे हृदय मे विराजोगे और हमारा चचल मन निर्वाक् होकर तुम्हारी शरण लेगा, कब अविनाशी आनन्द के रूप मे तुम हृदयाकाश मे उदय होगे ? चन्द्रमा के उदय होने पर चकोर जैसे उल्लसित होता है, वैसे हम भी तुम्हारे प्रकट होने पर मस्त हो जायँगे। तुम शान्त, शिव, अद्वितीय और राजराज हो। हे प्राणसखा, तुम्हारे चरणो मे हम बिक जायँगे और अपने जीवन को सफल करगे। ऐसा अधिकार और ऐसा जीते जी स्वर्गभोग हमे और कहा मिलेगा ? तुम्हारा शुद्ध और अपापविद्ध रूप हम देखेगे। जिस तरह प्रकाश को देखकर अन्धेरा जल्द भाग जाता है, उसी तरह तुम्हारे प्रकट होने से पापरूपी अन्धकार भाग जायगा। तुम ध्रुवतारा हो, हे दीनबन्धो, हमारे हृदय में ज्वलन्त विश्वास का सचार कर मन की आशाएँ पूरी कर दो। तुम्हे प्राप्त कर हम अहर्निश प्रेमानन्द मे डूबे रहेगे और अपने आपको भूल जायँगे। वह दिन कब आयेगा, प्रभो ?"

"आनन्द से मधुर ब्रह्मज्ञान का उच्चारण करो। नाम से सुधा का सिन्धु उमड आयेगा।—उसे लगातार पीते रहो। आप पीते रहो और दूसरो को पिलाते रहो। विषय-रूपी मृग-जल मे पड-कर यदि कभी हृदय शुष्क हो जाय तो नाम-गान करना। प्रेम से हृदय सरस हो उठेगा। देखना वह महामन्त्र नही भूलना। सकट के समय उसे दयालु पिता कहकर पुकारना। हुकार से पाप का बन्धन तोड डालो। जय ब्रह्म कहकर आओ, सब मिल्कर ब्रह्मा-नन्द में मस्त होवे और सब कामनाओ को मिटा दे। प्रेमयोग के

योगी बनकर।"

मृदग और करताल के साथ कीर्तन हो रहा है। नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण को घेरकर कीर्तन कर रहे हैं। कभी गाते हैं—'प्रेमानन्द-रस में चिर दिन के लिए मग्न हो जा।' फिर कभी गाते हैं—'सत्य-शिव-सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर में शोभायमान है।' अन्त में नरेन्द्र ने स्वय मृदग उठा लिया है—और मतवाले होकर श्रीरामकृष्ण के साथ गा रहे हैं—'आनन्द से मधुर ब्रह्मनाम का उच्चारण करो।'

कीर्तन समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को बार-बार छाती से लगाया और कहा—अहा, आज तुमने मुझे कैसा आनन्द दिया।

आज श्रीरामकृष्ण के हृदय मे प्रेम का स्रोत उमड रहा है। रात को आठ बजे होगे, तो भी प्रेमोन्मत्त होकर बरामदे में अकेले टहल रहे हैं। उत्तर वाले लम्बे बरामदे में आये हैं और अकेले एक छोर से दूसरे छोर तक जल्दी-जल्दी टहल रहे हैं। बीच-बीच में जगन्माता के साथ कुछ बातचीत कर रहे हैं। एकाएक उन्मत्त की भाँति बोल उठे, 'तू मेरा क्या बिगाडेगी ?"

क्या आप यही कह रहे हैं कि जगन्माता जिसे सहारा दे रही हैं, माया उसका क्या बिगाड सकती है ?

नरेन्द्र, प्रिय और मास्टर रात को रहेंगे। नरेन्द्र रहेंगे—बस, श्रीरामकृष्ण फूले नहीं समाते। रात का भोजन तैयार हुआ। श्री श्री माताजी नहबतखाने में हैं—आपने अपने भक्तों के लिए रोटी, दाल आदि बनाकर भेज दिया है। भक्त लोग बीच-बीच में रहा करते हैं, सुरेन्द्र प्रतिमास कुछ खर्च देते हैं।

कमरे के दक्षिण पूर्व वाले बरामदे में भोजन के चौके लगाये

जा रहे हैं। पूर्व वाले दरवाजे के पास नरेन्द्र आदि बातचीत कर रहे हैं।

नरेन्द्र—आजकल के लडकों को कैसा देख रहे हैं ?

मास्टर—बुरे नहीं, पर धर्म के उपदेश कुछ नहीं पाते हैं।

नरेन्द्र—मैंने खुद जो देखा है उससे तो जान पड़ता है कि सब बिगड रहे हैं। चुरट पीना, ठठ्ठेबाजी, ठाटबाट, स्कूल से भागना—ये सब हरदम होते देखे जाते हैं, यहाँ तक कि खराब जगहों मे भी जाया करते हैं।

मास्टर—जब हम पढ़ते थे तब तो ऐसा न देखा, न सुना।

नरेन्द्र—शायद आप उतना मिलने-जुलते नहीं। मैंने यह भी देखा कि खराब औरते उन्हे नाम से पुकारती हैं। कब उनसे मिले हैं, कौन जाने ?

मास्टर—क्या आश्चर्य की बात !

नरेन्द्र—मैं जानता हूँ कि बहुतो का चरित्र बिगड गया है। स्कूल के सचालक और लडकों के अभिभावक इस विषय पर ध्यान दें तो अच्छा हो।

इस तरह बातें हो रही थीं कि श्रीरामकृष्ण कोठरी के भीतर से उनके पास आये और हँसते हुए कहते हैं, "भला तुम्हारी क्या बातचीत हो रही है।" नरेन्द्र ने कहा, "उनसे स्कूल की चर्चा हो रही थी। लडकों का चरित्र ठीक नहीं रहता।" श्रीरामकृष्ण थोडी देर तक उन बातों को सुनकर मास्टर से गम्भीर भाव से कहते हैं, "ऐसी बातचीत अच्छी नहीं। ईश्वर की बातों को छोड दूसरी बातें अच्छी नहीं। तुम इनसे उम्र में बडे हो, तुम सयाने हुए हो, तुम्हें ये सब बातें उठने देना उचित न था।"

उस समय नरेन्द्र की उम्र उन्नीस-बीस रही होगी और मास्टर

की सत्ताईस-अट्ठाईस ।

मास्टर लज्जित हुए, नरेन्द्र आदि भक्त चुप रहे ।

श्रीरामकृष्ण खड़े होकर हँसते हुए नरेन्द्र आदि भक्तों को भोजन कराते है । आज उनको बड़ा आनन्द हुआ है ।

भोजन के बाद नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के कमरे में फर्श पर बैठे विश्राम कर रहे हैं और श्रीरामकृष्ण से बाते कर रहे हैं । आनन्द का मेला-सा लग गया है । बातों-बातों में श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कहते हैं—'चिदाकाश में पूर्ण प्रेमचन्द्र का उदय हुआ' जरा इस गाने को तो गा ।

नरेन्द्र ने गाना शुरू किया । साथ ही साथ अन्य भक्त मृदंग और करताल बजाने लगे । गीत का आशय इस प्रकार था—

"चिदाकाश में पूर्ण प्रेमचन्द्र का उदय हुआ । क्या ही आनन्द-पूर्ण प्रेमसिन्धु उमड़ आया ! (जय दयामय, जय दयामय, जय दयामय !) चारों ओर भक्तरूपी ग्रह जगमगाते हैं । भक्तसखा भगवान् भक्तों के संग लीलारसमय हो रहे हैं । (जय दयामय !) स्वर्ग का द्वार खोल और आनन्द का तूफान उठा दे, नवविधान* रूपी वसन्त-समीर चल रहा है । उससे लीलारस और प्रेमगन्ध-वाले कितने ही फूल खिल जाते हैं जिनकी महक से योगीवृन्द योगानन्द में मतवाले हो जाते हैं । (जय दयामय !) संसार-ह्रद के जल पर नवविधान रूपी कमल में आनन्दमयी माँ विराजती है, और भावावेश से आकुल भक्त-रूपी भौरे उनमें सुधापान कर रहे हैं । वह देखो माता का प्रसन्न वदन—जिसे देखकर चित्त फूल उठता है और जगत् मुग्ध हो जाता है । और देखो—माँ के श्रीचरणों के पास साधुओं का समूह, वे मस्त

* श्री केशव सेन द्वारा स्थापित ब्राह्मसमाज का नाम ।

होकर नाच-गा रहे हैं। अहा, कैसा अनुपम रूप है—जिसे देखकर प्राण शीतल हो गये। 'प्रेमदास' सबके चरण पकडकर कहता है कि भाई, मिलकर माँ की जय गाओ।"

कीर्तन करते-करते श्रीरामकृष्ण नृत्य कर रहे हैं। भक्त भी उन्हे घेरकर नाच रहे हैं।

कीर्तन समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण उत्तर पूर्व वाले बरामदे मे टहल रहे हैं। श्रीयुत हाजरा उसी के उत्तर भाग मे बैठे हैं, श्रीरामकृष्ण जाकर वहाँ बैठे। मास्टर भी वहीं बैठे है और हाजरा से बातचीत कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने एक भक्त से पूछा, "क्या तुम कोई स्वप्न भी देखते हो ?"

भक्त—एक अद्भुत स्वप्न मैंने देखा है—यह जगत् जलमय हो गया है। अनन्त जलराशि! कई एक नावे तैर रही थी एकाएक बाढ से डूब गयीं। मै तथा और कई आदमी एक जहाज पर चढ़ है कि इतने मे उस अकूल समुद्र के ऊपर से चलते हुए एक ब्राह्मण दिखाई पडे। मैंने पूछा, 'आप कैसे जा रहे है ?' ब्राह्मण ने जरा हँसकर कहा, 'यहाँ कोई तकलीफ नहीं है, जल के नीचे बराबर पुल है।' मैंने पूछा, 'आप कहाँ जा रहे हैं ?' उन्होंने कहा 'भवानीपुर जा रहा हूँ।' मैंने कहा, 'जरा ठहर जाइये, मैं भी आपके साथ चलूँगा।'

श्रीरामकृष्ण—यह सब सुनकर मुझे रोमाच हो रहा है।

भक्त—ब्राह्मण ने कहा, 'मुझे अब फुरसत नहीं है, तुम्हे उतरने मे देर लगेगी। अब मैं चलता हूँ। यह रास्ता देख लो, तुम पीछे आना।'

श्रीरामकृष्ण—मुझे रोमाच हो रहा है! तुम जल्दी मन्त्र-दीक्षा ले लो।

रात के ग्यारह बज गये हैं। नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के कमरे में फर्श पर बिस्तर लगाकर लेट गये।

(३)

सन्तान-भाव अत्यन्त शुद्ध

नींद खुलने पर भक्तों में से कोई-कोई देखते हैं कि सवेरा हुआ है। श्रीरामकृष्ण बालक की भाँति दिगम्बर हैं, और देव-देवियों के नाम उच्चारण करते हुए कमरे में टहल रहे हैं। आप कभी गंगा-दर्शन करते हैं, कभी देव-देवियों के चित्रों के पास जाकर प्रणाम करते हैं, और कभी मधुर स्वर में नामकीर्तन करते हैं। कभी कहते हैं वेद, पुराण, तन्त्र, गीता गायत्री, भागवत भक्त, भगवान। गीता को लक्ष्य करके अनेक बार कहते हैं—

"त्यागी, त्यागी, त्यागी, त्यागी। फिर कभी—तुम्हीं ब्रह्म हो तुम्हीं शक्ति; तुम्हीं पुरुष हो तुम्हीं प्रकृति; तुम्हीं विराट हो तुम्हीं स्वराट (स्वतन्त्र अद्वितीय सत्ता), तुम्हीं नित्य लीलामयी; तुम्हीं (सांख्य के) चौबीस तत्त्व हो।"

इधर कालीमन्दिर और राधाकान्त के मन्दिर में मंगलारती हो रही है और शंख-घण्टे बज रहे हैं। भक्त उठकर देखते हैं कि मन्दिर की फुलवाड़ी में देव-देवियों की पूजा के लिए फूल तोड़े जा रहे हैं और प्रभाती रागों की लहरें फैल रही हैं तथा नौबत बज रही है।

नरेन्द्र आदि भक्त प्रातःक्रिया से छुट्टी पाकर श्रीरामकृष्ण के पास आये। श्रीरामकृष्ण महास्यमुख हो उत्तरपूर्व वाले बरामदे में पश्चिम की ओर खड़े हैं।

नरेन्द्र—मैंने देखा कि पंचवटी में कई नानकपन्थी साधु बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वे कल आये थे। (नरेन्द्र से) तुम सब एक साथ चटाई पर बैठो, मैं देखूँ।

सब भक्तो के चटाई पर बैठने के बाद श्रीरामकृष्ण आनन्द से देखने और उनसे बातचीत करने लगे । नरेन्द्र ने साधना की बात उठायी ।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र आदि से)—**भक्ति ही सार वस्तु है।** ईश्वर को प्यार करने से विवेक-वैराग्य आप ही आप आ जाते है।

नरेन्द्र—एक बात पूछूँ—क्या औरतो से मिलकर साधना करना तन्त्रो म कहा गया है ?

श्रीरामकृष्ण—वे सब अच्छे रास्ते नही, बडे कठिन है, और उनसे प्राय पतन हुआ करता है। तीन प्रकार की साधनाएँ है—वीर-भाव, दासी-भाव और मातृ-भाव। मेरी मातृ-भाव की साधना है। दासी-भाव भी अच्छा है। वीर-भाव की साधना बडी कठिन है। सन्तान-भाव बडा शुद्ध भाव है।

नानकपन्थी साधुओ न श्रीरामकृष्ण को 'नमो नारायण' कहकर अभिवादन किया। श्रीरामकृष्ण ने उनसे बैठने को कहा।

श्रीरामकृष्ण कहते है—"ईश्वर के लिए कुछ भी असम्भव नही। उनका यथार्थ स्वरूप कोई नही बता सकता। सभी सम्भव है। दो योगी थे, ईश्वर की साधना करते थे। नारद ऋषि जा रहे थे। उनका परिचय पाकर एक ने कहा 'तुम नारायण के पास से आते हो ? वे क्या कर रहे है ?' नारदजी ने कहा, 'मै देख आया कि वे एक सुई के छेद में ऊँट-हाथी घुसाते है और फिर निकालते हैं।' उस पर एक ने कहा, 'इसमें आश्चर्य ही क्या है ? उनके लिए सभी सम्भव है।' पर दूसरे ने कहा, 'भला ऐसा कभी हो सकता है ? तुम वहाँ गये ही नही।'

दिन के नौ बजे होगे। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में बैठे है। कोनगर से मनमोहन सपरिवार आये हैं। उन्होने प्रणाम करके

रहा। इन्हें कलकत्ते ले जा रहा हूँ।" कुशल प्रश्न पूछने के बाद श्रीरामकृष्ण ने कहा, आज प्रतिपदा—और तुम तो कलकत्ते जा रहे हो—क्या जाने कहीं कुछ खराबी न हो!" यह कहकर जरा हँसे और दूसरी बात कहने लगे।

नरेन्द्र और उनके मित्र स्नान करके आये। श्रीरामकृष्ण ने व्यग्र होकर नरेन्द्र से कहा, 'जाओ, बट के नीचे जाकर ध्यान करो। आसन दूँ?"

नरेन्द्र और उनके कई ब्राह्म मित्र पंचवटी के नीचे ध्यान कर रहे हैं। करीब साढ़े दस बजे होंगे। थोड़ी देर में श्रीरामकृष्ण वहाँ आये, मास्टर भी साथ हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं—

(ब्राह्म भक्तों से) 'ध्यान करते समय ईश्वर में डूब जाना चाहिए, ऊपर-ऊपर तैरने से क्या पानी के नीचेवाले लाल मिल सकते हैं?'

फिर आपने रामप्रसाद का एक गीत गाया जिसका आशय इस प्रकार है— 'ए मन, काली कहकर हृदयरूपी रत्नाकर के अथाह जल में डुबकी लगा। यदि दो ही चार डुबकियों में धन हाथ न लगा, तो भी रत्नाकर शून्य नहीं हो सकता। पूरा दम लेकर एक ऐसी डुबकी लगा कि तू कुलकुण्डलिनी के पास पहुँच जाय। ऐ मन, ज्ञान-समुद्र में शक्तिरूपी मुक्ता पैदा होती है। यदि तू शिव की युक्ति के अनुसार भक्तिपूर्वक टटोलेगा तभी उन्हें पा सकेगा। उस समुद्र में काम आदि छः घड़ियाल हैं। खाने के लोभ से सदा ही घूमते रहते हैं। तो तू विवेक की हल्दी बदन में चुपड़ ले—उसकी बू से वे तुझे छुएँगे नहीं। कितने ही लाल और माणिक इस जल में पड़े हैं। रामप्रसाद का कहना है कि यदि तू कूद पड़ेगा तो तुझे वे झुण्ड के झुण्ड मिल जायेंगे।'

नरेन्द्र और उनके मित्र पचवटी के चबूतरे से उतरे और श्रीरामकृष्ण के पास खडे हुए। श्रीरामकृष्ण दक्षिणमुख होकर उनसे बातचीत करते-करते अपने कमरे की तरफ आ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—गोता लगाने से तुम्हे घडियाल पकड सकते हैं, पर हल्दी चुपडने से वे नहीं छू सकते। हृदय रूपी रत्नाकर के अथाह जल में काम आदि छ घडियाल रहते है, पर विवेक-वैराग्यरूपी हल्दी चुपडने से वे फिर तुम्हे नहीं छुयेगे।

"केवल पण्डिताई या लेक्चर से क्या होगा यदि विवेकवैराग्य न हुआ। ईश्वर सत्य है और सब कुछ अनित्य, वे ही वस्तु हैं, शेष सब अवस्तु— इसी का नाम विवेक है।

"पहले हृदय-मन्दिर मे उनकी प्रतिष्ठा करो। वक्तृता, लेक्चर आदि, जी चाहे तो उसके बाद करना। खाली 'ब्रह्म-ब्रह्म' कहने से क्या होगा, यदि विवेक-वैराग्य न रहा? वह तो नाहक शख फूंकना हुआ!

"किसी गाँव मे पद्मलोचन नाम का एक लडका था। लोग उसे पदुआ कहकर पुकारते थे। उसी गाँव मे एक जीर्ण मन्दिर था। अन्दर देवता का कोई विग्रह न था—मन्दिर की दीवारो पर पीपल और अन्य प्रकार के पेडपौधे उग आये थे। मन्दिर के अन्दर चमगीदड अड्डा जमाये हुए थे। फर्श पर गर्द और चमगीदडो की विष्ठा पडी रहती थी। मन्दिर में लोगो का समागम नही होता था।

"एक दिन सन्ध्या के थोडी देर बाद गाँव वालो ने शख की आवाज सुनी। मन्दिर की तरफ से भो भो शख बज रहा है। गाँववालो ने सोचा कि किसी ने देवता-प्रतिष्ठा की होगी, और सन्ध्या के बाद आरती हो रही है। लडके, बूढे, औरत, मर्द, सब

दौडते हुए मन्दिर के सामने हाजिर हुए—देवता के दर्शन करेंगे और आरती देखेंगे। उनमें से एक ने मन्दिर का दरवाजा धीरे-धीरे खोला तो देखा कि पद्मलोचन एक बगल में खडा होकर भों भों शख बजा रहा है। देवता की प्रतिष्ठा नहीं हुई—मन्दिर में झाडू तक नही लगाया गया—चमगीदडो की विष्ठा पडी हुई है। तब वह चिल्लाकर कहता है—

'तेरे मन्दिर में माधव कहाँ! पद्रुआ, तूने तो नाहक शख फूंककर हुल्लड मचा दिया है। उसमें ग्यारह चमगीदड रातदिन गश्त लगा रहे हैं—'

"यदि हृदय-मन्दिर में माधव-प्रतिष्ठा की इच्छा हो, यदि ईश्वर का लाभ करना चाहो तो, सिर्फ भों भों शख फूंकने से क्या होगा। पहले चित्तशुद्धि चाहिए। मन शुद्ध हुआ तो भगवान् उस पवित्र आसन पर आ विराजेंगे। चमगीदड की विष्ठा रहने से माधव नही लाये जा सकते। ग्यारह चमगीदड का अर्थ है ग्यारह इन्द्रियाँ—पाच ज्ञान की इन्द्रियाँ, पाँच कर्म की इन्द्रियाँ और मन। पहले माधव की प्रतिष्ठा, बाद को इच्छा हो तो वक्तृता, लेक्चर आदि देना।

"पहले डुबकी लगाओ। गोता लगाकर लाल उठाओ, फिर दूसरे काम करो।

"कोई गोता लगाना नहीं चाहता! न साधन, न भजन, न विवेक-वैराग्य—दो-चार शब्द सीख लिए, बस लगे लेक्चर देने! शिक्षा देना कठिन काम है। ईश्वर-दर्शन के बाद यदि कोई उनका आदेश पाये, तो वह लोगों को शिक्षा दे सकता है।"

बातें करते हुए श्रीरामकृष्ण उत्तर वाले बरामदे के पश्चिम भाग में आ खड़े हुए। मणि पास खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण बारम्बार

कह रहे हैं, 'बिना विवेक-वैराग्य के भगवान् नही मिलेगे।' मणि विवाह कर चुके हैं इसीलिए व्याकुल होकर सोच रहे है कि क्या उपाय होगा। उनकी उम्र अट्ठाईस वर्ष की है, कॉलेज में पढ़कर उन्होंने कुछ अंग्रेजी शिक्षा पायी है। वे सोच रहे है—क्या विवेक-वैराग्य का अर्थ कामिनी-काचन का त्याग है ?

मणि (श्रीरामकृष्ण से)—यदि स्त्री कहे कि आप मेरी देखभाल नहीं करते हैं, मैं आत्महत्या करूँगी, तो कैसा होगा ?

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर स्वर से)—ऐसी स्त्री को त्यागना चाहिए, जो ईश्वर की राह में विघ्न डालती हो, चाहे वह आत्महत्या करे, चाहे और कुछ।

"जो स्त्री ईश्वर की राह में विघ्न डालती है, *वह अविद्या स्त्री है।*"

गहरी चिन्ता में डूबे हुए मणि दीवार से टेककर एक तरफ खड़े रहे। नरेन्द्र आदि भक्त भी थोडी देर निर्वाक् हो रहे।

श्रीरामकृष्ण उनमे जरा बातचीत कर रहे हैं, एकाएक मणि के पास आकर एकान्त में मृदु स्वर से कहते हैं, "परन्तु जिसकी ईश्वर पर सच्ची भक्ति है, उसके वश में सभी आ जाते हैं—राजा, बुरे आदमी, स्त्री—सब। यदि किसी की भक्ति सच्ची हो तो स्त्री भी क्रम से ईश्वर की राह पर जा सकती है। आप अच्छे हुए तो ईश्वर की इच्छा से वह भी अच्छी हो सकती है।"

मणि की चिन्ताग्नि पर पानी बरसा। वे अब तक सोच रहे थे—स्त्री आत्महत्या कर डाले तो करने दो, मैं क्या कर सकता हूँ ?

मणि (श्रीरामकृष्ण से)—संसार में बड़ा डर रहता है।

श्रीरामकृष्ण (मणि और नरेन्द्र आदि से)—इसी से तो

चैतन्यदेव ने कहा था, 'सुनो भाई नित्यानन्द, ममारी जीवो के लिए कोई उपाय नही।'

(मणि से, एकान्त में) "**यदि ईश्वर पर शुद्धा भक्ति न हुई तो कोई उपाय नहीं।** यदि कोई ईश्वर का लाभ करके ससार मे रहे तो उमे कुछ डर नही। यदि बीच-बीच मे एकान्त में साधना करके कोई शुद्धा भक्ति प्राप्त कर सके तो ममार में रहते हुए भी उसे कोई डर नही। चैतन्यदेव के ममारी भक्त भी थे। वे तो कहने भर के लिए ममारी थे। वे अनामक्त होकर रहते थे।"

देव-देवियो की भोग-आरती हो चुकी, वैमे ही नौवत वजने लगी। अब उनके विश्राम का ममय हुआ। श्रीरामकृष्ण भोजन करने वैठे। नरेन्द्र आदि भक्त आज भी आपके पास प्रमाद पायेंगे।

परिच्छेद ७

भक्तों से वार्तालाप

(१)

श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त—नरेन्द्र आदि

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में विराजमान हैं। दिन के नौ बजे होंगे। अपनी छोटी खाट पर वे विश्राम कर रहे हैं। फर्श पर मणि बैठे हैं। उनसे श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं।

आज विजया दशमी, रविवार है, २२ अक्टूबर, १८८२। आजकल राखाल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। नरेन्द्र और भवनाथ कभी-कभी आया करते हैं। श्रीरामकृष्ण के साथ उनके भतीजे रामलाल और हाजरा महाशय रहते हैं। राम, मनोमोहन, सुरेन, मास्टर और बलराम प्रायः हर हफ्ते श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर जाते हैं। बाबूराम अभी एक-दो ही बार दर्शन कर गये हैं।

श्रीरामकृष्ण—तुम्हारी पूजा की छुट्टी हो गयी ?

मणि—जी हाँ। मैं सप्तमी, अष्टमी और नवमी को प्रतिदिन केशव सेन के घर गया था।

श्रीरामकृष्ण—कहते क्या हो ?

मणि—दुर्गापूजा की अच्छी व्याख्या सुनी।

श्रीरामकृष्ण—कैसी, कहो तो।

मणि—केशव सेन के घर में रोज सुबह को उपासना होती है,—दस-ग्यारह बजे तक। उसी उपासना के समय उन्होंने दुर्गापूजा की व्याख्या की थी। उन्होंने कहा, यदि माता दुर्गा को कोई प्राप्त कर सके—यदि माता को कोई हृदय-मन्दिर में ला

सके, तो लक्ष्मी, सरस्वती, कार्तिक, गणेश स्वयं आते हैं। लक्ष्मी अर्थात् ऐश्वर्य, सरस्वती—ज्ञान, कार्तिक—विक्रम, गणेश—सिद्धि, ये सब आप ही मिल जाते हैं—यदि माँ आ जायें तो।

श्रीरामकृष्ण सारा वर्णन सुन गये। बीच-बीच में केशव की उपासना के सम्बन्ध में प्रश्न करने लगे। अन्त में कहा—"तुम यहाँ-वहाँ न जाया करो, यहीं आना।

"जो अन्तरंग हैं वे केवल यहीं आयेंगे। नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल हमारे अन्तरंग भक्त हैं, सामान्य नहीं। तुम एक दिन इन्हें भोजन कराना। नरेन्द्र को तुम कैसा समझते हो?

मणि—जी, बहुत अच्छा।

श्रीरामकृष्ण—देखो नरेन्द्र में कितने गुण हैं, गाता है, बजाता है, विद्वान् है और जितेन्द्रिय है, कहता है—विवाह न करूँगा,—बचपन से ही ईश्वर में मन है।

(मणि से) "आजकल तुम्हारे ईश्वर-स्मरण का क्या हाल है? मन साकार पर जाता है या निराकार पर?"

मणि—जी, अभी तो मन साकार पर नहीं जाता। और इधर निराकार में मन को स्थिर नहीं कर सकता।

श्रीरामकृष्ण—देखो, निराकार में तत्काल मन स्थिर नहीं होता। पहले-पहले तो साकार अच्छा है।

मणि—मिट्टी की इन सब मूर्तियों की चिन्ता करना?

श्रीरामकृष्ण—नहीं-नहीं, चिन्मयी मूर्ति की।

मणि—तो भी हाथ-पैर तो सोचने ही पड़ेंगे; परन्तु यह भी सोचता हूँ कि पहली अवस्था में किसी रूप की चिन्ता किये बिना मन स्थिर न होगा, यह आपने कह भी दिया है; अच्छा, वे तो अनेक रूप धारण कर सकते हैं; तो क्या अपनी माता के स्वरूप

का ध्यान किया जा सकता है।

श्रीरामकृष्ण—**हाँ। वे (माँ) गुरु तथा ब्रह्ममयी हैं।**

कुछ देर बाद मणि फिर श्रीरामकृष्ण से पूछने लगे।

मणि—अच्छा, निराकार मे क्या दिखता है? क्या इसका वर्णन नही किया जा सकता?

श्रीरामकृष्ण (कुछ सोचकर)—वह कैसा है?—

यह कहकर श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर साकार और निराकार दर्शन मे कैसा अनुभव होता है, इस सम्बन्ध की एक बात कह दी और फिर चुप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण—देखो, इसको ठीक-ठीक समझने के लिए साधना चाहिए। यदि घर के भीतर के रत्न देखना चाहते हो और लेना चाहते हो, तो मेहनत करके कुंजी लाकर दरवाजे का ताला खोलो और रत्न निकालो। नहीं तो घर मे ताला लगा हुआ है और द्वार पर खडे हुए सोच रहे हैं,—'लो, हमने दरवाजा खोला, सन्दूक का ताला तोडा—अब यह रत्न निकाल रहे हैं।' सिर्फ खडे-खडे सोचने से काम न चलेगा। साधना करनी चाहिए।

(२)

ज्ञानी तथा अवतारवाद। श्रीवृन्दावन-दर्शन। कुटीचक

श्रीरामकृष्ण—ज्ञानी निराकार की चिन्ता करते हैं। वे अवतार नहीं मानते। अर्जुन ने श्रीकृष्ण की स्तुति मे कहा, तुम पूर्णब्रह्म हो। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि आओ, देखो,—हम पूर्णब्रह्म हैं या नहीं। यह कहकर श्रीकृष्ण अर्जुन को एक जगह ले गये और पूछा, तुम क्या देखते हो? अर्जुन बोला, मैं एक बडा पेड़ देख रहा हूँ जिसमे जामुन के से गुच्छे के गुच्छे फल लगे हैं। श्रीकृष्ण ने आज्ञा दी कि और भी पास आकर देखो,—वे काले

फल नहीं, गुच्छे के गुच्छे अनगिनती कृष्ण फले हुए हैं—मुझ जैसे। अर्थात् उस **पूर्णब्रह्म** रूपी वृक्ष से करोड़ों अवतार होते हैं और चले जाते हैं।

"कबीरदास का रुख निराकार की ओर था। श्रीकृष्ण की चर्चा होती तो कबीरदास कहते, उसे क्या भजूँ?—गोपियाँ तालियाँ पीटती थीं और वह बन्दर की तरह नाचता था। (हँसते हुए) **मैं साकारवादियों के निकट साकार हूँ और निराकारवादियों के निकट निराकार।**"

मणि (हँसकर)—जिनकी बात हो रही है वे (ईश्वर) जैसे अनन्त हैं **आप भी वैसे ही अनन्त हैं!—आपका अन्त ही नहीं मिलता।**

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—वाह रे, तुम तो समझ गये! सुनो एक बार सब धर्म कर लेने चाहिए, सब मार्गों से आना चाहिए। खेलने की गोटी—सब घर बिना पार किये कहीं लाल होती है? गोटी जब लाल हो जाती है, तब कोई उसे नहीं छू पाता।

मणि—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—योगी दो प्रकार के हैं—बहूदक और कुटीचक। जो साधु तीर्थों में घूम रहा है, जिसके मन को अभी तक शान्ति नहीं मिली, उसे बहूदक कहते हैं, और जिसने चारों ओर घूमकर मन को स्थिर कर लिया है—जिसे शान्ति मिल गयी है—वह किसी एक जगह आसन जमा देता है, फिर नहीं हिलता। उसी एक ही जगह बैठे उसे आनन्द मिलता है। उसे तीर्थ जाने की कोई आवश्यकता नहीं। यदि वह तीर्थ जाय तो केवल उद्दीपना के लिए जाता है।

"मुझे एक बार सब धर्म करने पड़े थे,—हिन्दू, मुसलमान,

क्रिस्तान,--इधर शाक्त, वैष्णव, वेदान्त, इन सब रास्तों से भी आना पड़ा है। ईश्वर वही एक है,—उन्ही की ओर सब चल रहे हैं, भिन्न-भिन्न मार्गों से।

"तीर्थ करने गया तो कभी-कभी बड़ी तकलीफ होती थी। काशी मे मथुर बाबू (रानी रासमणि के तीसरे दामाद) आदि के साथ राजा बाबुओं की बैठक मे गया। वहाँ देखा—सभी लोग विषयों की बातों मे लगे हैं! रुपया, जमीन, यही सब बाते। उनकी बाते सुनकर मै रो पड़ा। माँ से कहा—माँ! तू मुझे कहाँ लायी? दक्षिणेश्वर मे तो मैं बहुत अच्छा था। प्रयाग मे देखा,—वही तालाब, वही दूब, वही पेड़, वही इमली के पत्ते!

"परन्तु तीर्थ मे उद्दीपन अवश्य होता है। मथुर बाबू के साथ वृन्दावन गया। मथुर बाबू के घर की स्त्रियाँ भी थीं, हृदय (श्रीरामकृष्ण का भानजा) भी था। कालीयादमन घाट देखते ही उद्दीपना होती थी,—मैं विह्वल हो जाता था—हृदय मुझे यमुना के घाट मे बालक की तरह नहलाता था।

"सन्ध्या को यमुना के तट पर घूमने जाया करता था। यमुना के कछार से उस समय गायें चरकर लौटती थीं। देखते ही मुझे कृष्ण की उद्दीपना हुई, पागल की तरह दौड़ने लगा, कहाँ कृष्ण, कृष्ण कहाँ कहते हुए।

"पालकी पर चढ़कर श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के रास्ते जा रहा था, गोवर्द्धन देखने के लिए उतरा, गोवर्द्धन देखते ही बिल्कुल विह्वल हो गया, दौड़कर गोवर्धन पर चढ़ गया, बाह्य ज्ञान जाता रहा। तब ब्रजवासी जाकर मुझे उतार लाये। श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के मार्ग का मैदान, पेड़-पौधे, हरिण और पक्षियों को देख विकल हो गया था, आँसुओं से कपड़े भीग गये थे। मन

में यह आता था कि ऐ कृष्ण, यहाँ सभी कुछ है, केवल तू ही नहीं दिखायी पड़ता। पालकी के भीतर बैठा था, परन्तु एक बात कहने की भी शक्ति नहीं थी, चुपचाप बैठा था। हृदय पालकी के पीछे आ रहा था। कहारों ने उसने कह दिया था, खूब होशियार रहना।

"गंगामाई मेरी खूब देख-भाल करती थी। उम्र बहुत थी। निधुवन के पास एक कुटी में अकेली रहती थी। मेरी अवस्था और भाव देखकर कहती थी, ये साक्षात् राधिका हैं—शरीर धारण करके आये हैं! मुझे दुलारी कहकर बुलाती थी। उसे पाते ही मैं खाना पीना, घर लौटना सब भूल जाता था। कभी-कभी हृदय वहीं भोजन ले जाकर मुझे खिला आता था। वह भी खाना पकाकर खिलाती थी।

"गंगामाई को भावावेश होता था। उसका भाव देखने के लिए लोगों की भीड़ जम जाती थी। भावावेश में एक दिन हृदय के कन्धे पर चढ़ी थी।

"गंगामाई के पास से देश लौटने की मेरी इच्छा न थी। वहाँ सब ठीक हो गया, मैं सिद्ध (भुंजिया) चावल का भात खाऊँगा, गंगामाई का बिस्तरा घर में एक ओर लगेगा, मेरा दूसरी ओर। सब ठीक हो गया। तब हृदय बोला, तुम्हें पेट की शिकायत है, कौन देखेगा? गंगामाई बोली—क्यों, मैं देखूँगी, मैं सेवा करूँगी। एक हाथ पकड़कर हृदय खींचने लगा और दूसरा हाथ पकड़कर गंगामाई। ऐसे समय माँ की याद आ गयी! माँ अकेली काली-मन्दिर के नौबतखाने में है। फिर न रहा गया, तब कहा—नहीं मुझे जाना होगा।

"वृन्दावन का भाव बड़ा सुन्दर है। नये यात्री जाते हैं तो ब्रज

के लडके कहा करते हैं, हरि बोलो—गठरी खोलो।"

दिन के ग्यारह बजे बाद श्रीरामकृष्ण ने काली का प्रसाद पाया। दोपहर को कुछ आराम करके धूप ढलने पर फिर भक्तों के साथ वार्तालाप करने लगे, बीच बीच में रह-रहकर प्रणव-नाद या 'हा चैतन्य' उच्चारण कर रहे हैं।

काली-मन्दिर में सन्ध्यारती होने लगी। आज विजया दशमी है, श्रीरामकृष्ण कालीघर में आये हैं। माता को प्रणाम करके भक्तजन श्रीरामकृष्ण की पदधूलि ग्रहण करने लगे। रामलाल ने कालीजी की आरती की है। श्रीरामकृष्ण रामलाल को बुलाने लगे—'कहाँ हो रामलाल!'

कालीजी को 'विजया' निवेदित की गयी है। श्रीरामकृष्ण उस प्रसाद को छूकर उसे देने के लिए ही रामलाल को बुला रहे हैं। अन्य भक्तों को भी कुछ-कुछ देने को कह रहे हैं।

(३)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में बलराम आदि के साथ

आज मंगलवार है, दिन का पिछला पहर, २४ अक्टूबर। तीन-चार बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण मिठाई के ताक के पास खडे हैं। बलराम और मास्टर कलकत्ते से एक ही गाडी पर चढकर आये हैं और प्रणाम कर रहे है। प्रणाम करके बैठने पर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कहने लगे, 'ताक पर से कुछ मिठाई लेने गया था, मिठाई पर हाथ रखा ही था कि एक छिपकली बोल उठी, तुरन्त हाथ हटा लिया!' (सब हँसे)

श्रीरामकृष्ण—यह सब मानना चाहिए। देखो न, राखाल बीमार पड गया, मेरे भी हाथ-पैर में दर्द हो रहा है। क्या हुआ सुनो। सुबह को मैंने उठते ही राखाल आ रहा है, यह सोचकर

अमृत का मुख देख लिया था। (सब हँसते हैं) हाँ जी, लक्षण भी देखना चाहिए। उस दिन नरेन्द्र एक काले लड़के को लाया था,—उसका मित्र है, आँखें बिल्कुल काली नहीं थीं, जो हो, मैंने सोचा,—नरेन्द्र यह आफत का पुतला कहाँ से लाया।

"और एक आदमी आता है, मैं उसके हाथ की कोई चीज नहीं खा सकता। वह आफिस में काम करता है, बीस रुपया महीना पाता है और बीस रुपया न जाने कैसा झूठा बिल लिखकर पाता है। वह झूठ बोलता है, इसलिए आने पर उससे बहुत नहीं बोलता। कभी तो दो-दो चार-चार दिन आफिस जाता ही नहीं, यहीं पड़ा रहता है। किस मतलब से, जानते हो?—मतलब यह कि किसी से कह-सुन दूँ तो दूसरी जगह नौकरी हो जाय।"

बलराम का वंश परम वैष्णवों का वंश है। बलराम के पिता वृद्ध हो गये हैं,—परम वैष्णव हैं। सिर पर शिखा है, गले में तुलसी की माला है, हाथ में सदा ही माला लिए जप करते रहते हैं। उड़ीसा में इनकी बहुत बड़ी जमींदारी है और कोठार, श्रीवृन्दावन तथा और भी कई जगह श्रीराधाकृष्ण विग्रह की सेवा होती है और धर्मशाला भी है। बलराम अभी पहले पहल आने लगे हैं। श्रीरामकृष्ण बातों-बातों में उन्हें उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—उस दिन अमुक आया था। सुना है, उस कालीकलूटी स्त्री का गुलाम है।—ईश्वर-दर्शन क्यों नहीं होते? क्योंकि बीच में कामिनी-कांचन की आड़ जो है।

"अच्छा, कहो तो मेरी क्या अवस्था है? उस देश (अपनी जन्मभूमि) को जा रहा था, बर्दवान से उतरकर,—बैलगाड़ी पर बैठा था—ऐसे समय जोर की आँधी चली और पानी बरसने लगा। इधर न जाने कहाँ से गाड़ी के पीछे आदमी आ गये।

मेरे साथी कहने लगे, ये डाकू है। तब मैं ईश्वर का नाम जपने लगा, परन्तु कभी तो राम-राम जपता और कभी काली-काली, कभी हनुमान-हनुमान,—सब तरह से जपने लगा, कहो तो यह क्या है ?

(बलराम से)—"**कामिनी-कांचन ही माया है**। इसके भीतर अधिक दिन तक रहने से होश चला जाता है,—यह जान पडता है कि खूब मजे मे है। मेहतर विष्ठा का भार ढोता है। ढोते-ढोते फिर घृणा नही होती। भगवन्नाम-गुण-कीर्तन का अभ्यास करने ही मे भक्ति होती है। (मास्टर से) इसमे लजाना नही चाहिए। लज्जा, घृणा और भय इन तीनो के रहते ईश्वर नही मिलते।

"उस देश मे बडा अच्छा कीर्तन करते है,—खोल (पखावज) लेकर कीर्तन करते है। नकुड आचार्य का गाना बड़ा अच्छा है। वृन्दावन मे तुम्हारी ओर से सेवा होती है ?

बलराम—जी हाँ, एक कुज है—श्यामसुन्दर की सेवा होती है।

श्रीरामकृष्ण—मै वृन्दावन गया था। निधुबन बडा सुन्दर स्थान है।

परिच्छेद ८

श्री केशवचन्द्र सेन के साथ श्रीरामकृष्ण

(१)

समाधि में

आज शरद् पूर्णिमा है। लक्ष्मीजी की पूजा है। शुक्रवार, २७ अक्टूबर, १८८२। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर के उसी पूर्व-परिचित कमरे में बैठे है। विजय गोस्वामी और हरलाल से बातचीत कर रहे हैं। एक आदमी ने आकर कहा, केशव सेन जहाज पर चढकर घाट पर आये हैं। केशव के शिष्यों ने प्रणाम करके कहा --'महाराज, जहाज आया है, आपको चलना होगा; चलिये, जरा घूम आइयेगा। केशव बाबू जहाज में हैं, हमें भेजा है।'

शाम के चार बज गये हैं। श्रीरामकृष्ण नाव पर होते हुए जहाज पर चढ रहे हैं। साथ विजय है। नाव पर चढते ही वाह्यज्ञानरहित समाधिमग्न हो गये। मास्टर जहाज में खड़े-खड़े यह समाधिचित्र देख रहे हैं। वे दिन के तीन बजे केशव के साथ जहाज पर चढकर कलकत्ते से आये हैं। बड़ी इच्छा है, श्रीरामकृष्ण और केशव का मिलन, उनका आनन्द और उनकी बातें सुनेंगे। केशव ने अपने साधुचरित्र और वक्तृता के बल से मास्टर जैसे अनेक बंगीय युवकों का मन हर लिया है। अनेकों ने उन्हें अपना परम आत्मीय जानकर अपने हृदय का प्रेम समर्पित कर दिया है। केशव अंग्रेजी जानते हैं, अंग्रेजी दर्शन और साहित्य जानते हैं, फिर बहुत बार देव-देवियों की पूजा को पौत्तलिकता भी कहते

हैं। इस प्रकार के मनुष्य श्रीरामकृष्ण को भक्ति और श्रद्धा की दृष्टि से देखते है, और बीच-बीच मे दर्शन करने आते है। यह बात अवश्य विस्मयजनक है। उनके मन मे मेल कहाँ और किस प्रकार हुआ, यह रहस्य-भेद करने मे मास्टर आदि अनेको को कौतूहल हुआ है। श्रीरामकृष्ण निराकारवादी तो है, किन्तु साकारवादी भी हैं। ब्रह्म का स्मरण करते हैं। और फिर देव-देवियो के सामने पुष्प चन्दन से पूजा और प्रेम से मतवाले होकर नृत्यगीत भी करते है। खाट और बिछौने पर बैठते हैं, लाल धारीदार धोती, कुर्ता, मोजा, जूता पहनते है, परन्तु ससार से स्वतन्त्र हैं। सारे भाव सन्यासियो के से है, इसीलिए लोग परमहस कहते हैं। इधर केशव निराकारवादी हैं, स्त्री-पुत्रवाले गृही हैं, अग्रेजी में व्याख्यान देते हैं, अखबार लिखते हैं। विषयकर्मो की देख-रेख भी करते हैं।

केशव आदि ब्राह्मभक्त जहाज पर से मन्दिर की शोभा देख रहे हैं। जहाज की पूर्व ओर पास ही बँधा घाट और मन्दिर का चाँदनीमण्डप है। बायी ओर—चाँदनीमण्डप के उत्तर, बारह शिव-मन्दिर में से छ मन्दिर हैं। दक्षिण की ओर भी छ मन्दिर हैं। शरद् के नील आकाश की पृष्ठभूमि पर भवतारिणी के मन्दिर के शिरोभाग दीखते हैं। एक नौबतखाना वकुलतला के पास है और काली-मन्दिर के दक्षिण प्रान्त में एक और नौबतखाना है। दोनो नौबतखानो के बीच मे बगीचे का रास्ता है जिसके दोनो ओर कतार-के-कतार फूलो के पेड लगे है। शरद्काल के आकाश की नीलिमा श्रीगगा के वक्ष पर पडकर अपूर्व शोभा दे रही है। बाहरी ससार में भी कोमल भाव हैं और ब्राह्मभक्तो के हृदय में भी कोमल भाव हैं। ऊपर सुन्दर नील अनन्त आकाश है, सामने

सुन्दर ठाकुरवाडी है, नीचे पवित्रसलिला गगा है जिनके किनारे आर्यऋषियो ने परमात्मा का स्मरण-मनन किया है। फिर ये एक महापुरुष आये हैं, जो साक्षात् सनातन धर्म हैं। इस प्रकार के दर्शन मनुष्यो को सर्वदा नहीं होते। ऐसे समाधिमग्न महापुरुष पर किसकी भक्ति नहीं होती, ऐसा कौन कठोर मनुष्य है जो द्रवीभूत न होगा ?

(२)

वासासि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि सयाति नवानि देही ॥
गीता, २-२२

समाधि में। आत्मा अविनश्वर। पहवारी बाबा

नाव आकर जहाज मे लगी। सभी श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए उन्मुख हो रहे हैं। अच्छी भीड है। श्रीरामकृष्ण को निर्विघ्न उतारने के लिए केशव आदि व्यग्र हो रहे हैं। बडी मुश्किल से उन्हे होश में लाकर कमरे के भीतर ले गये। अभी तक भावस्थ हैं, एक भक्त का सहारा लेकर चल रहे हैं। सिर्फ पैर हिल रहे हैं। कैबिन घर में आपने प्रवेश किया। केशव आदि भक्तो ने प्रणाम किया किन्तु उन्हे होश नहीं। कमरे के भीतर एक मेज और कुछ कुर्सियाँ हैं। एक कुर्सी पर श्रीरामकृष्ण बैठाये गये, एक पर केशव बैठे। विजय बैठे। दूसरे भक्त फर्श पर बैठ गये। अनेक मनुष्यो को जगह नही मिली। वे सब बाहर से झांक-झांककर देखने लगे। श्रीरामकृष्ण बैठे हुए फिर समाधिस्थ हो गये, बाह्यज्ञानशून्य हो गये। सभी एक नजर से देख रहे हैं।

केशव ने देखा कि कमरे के भीतर बहुत आदमी हैं और श्रीरामकृष्ण को तकलीफ हो रही है। विजय केशव को छोडकर

साधारण ब्राह्मसमाज मे चले गये हैं और उनकी कन्या के विवाह आदि के विरुद्ध कितनी वक्तृताएँ दी है, इसलिए विजय को देखकर केशव कुछ अनमने हो गये। वे आसन छोडकर उठे, कमरे के झरोखे खोल देने के लिए।

ब्राह्मभक्त टकटकी लगाये श्रीरामकृष्ण को देख रहे है। श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी, परन्तु अभी तक भाव पूरी मात्रा मे वर्तमान है। श्रीरामकृष्ण आप ही आप अस्फुट स्वरो मे कहते हैं—'माँ, मुझे यहाँ क्यो लायी ? मे क्या इन लोगो को घेरे के भीतर से रक्षा कर सकूँगा ?'

श्रीरामकृष्ण शायद देख रहे हैं कि ससारी जीव घेरे के भीतर वन्द है, वाहर नहीं आ सकते, बाहर का उजेला भी नहीं देख पाते, सब के हाथ-पैर सासारिक कामों से बँधे हैं। केवल घर के भीतर की वस्तु उन्हें देखने को मिलती है। वे सोचते है कि जीवन का उद्देश्य केवल शरीर-सुख और विषय-कर्म—काम और काचन—है। क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'माँ, मुझे यहाँ क्यो लायी ? मैं क्या इन लोगो की घेरे के भीतर से रक्षा कर सकूँगा?'

धीरे-धीरे श्रीरामकृष्ण को बाह्यज्ञान हुआ। गाजीपुर के नीलमाधव बाबू और एक ब्राह्मभक्त ने पवहारी बाबा की वात चलायी।

ब्राह्मभक्त—महाराज, इन लोगो ने पवहारी बाबा को देखा है। वे गाजीपुर में रहते है, आपकी तरह एक और हैं।

श्रीरामकृष्ण अभी तक बातचीत नही कर सकते हैं, सुनकर सिर्फ मुसकराये।

ब्राह्मभक्त (श्रीरामकृष्ण से)—महाराज, पवहारी बाबा ने अपने घर मे आपका फोटोग्राफ रखा है।

श्रीरामकृष्ण जरा हँसकर अपनी देह की ओर उगली दिखाकर बोले—'यह—गिलाफ !'

(३)

यत् साख्यै प्राप्यते स्थान तद्योगैरपि गम्यते ।
एक साख्यं च योगं च य पश्यति स पश्यति ।। गीता, ५।५

ज्ञानयोग भक्तियोग तथा कर्मयोग का समन्वय

'तकिया और उसका गिलाफ।' देही और देह । क्या श्रीरामकृष्ण कहते हैं कि देह नश्वर है, नहीं रहेगी ? देह के भीतर जो देही है वह अविनाशी है, अतएव देह का फोटोग्राफ लेकर क्या होगा ? देह अनित्य वस्तु है, इसके आदर से क्या होगा ? बल्कि जो भगवान् अन्तर्यामी हैं, मनुष्य के हृदय में विराजमान हैं, उन्ही की पूजा करनी चाहिए ।

श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हुए । वे कह रहे है,—"परन्तु एक बात है । भक्तो के हृदय में वे विशेष रूप से रहते हैं । जैसे कोई जमीदार अपनी जमीदारी में सभी जगह रह सकता है । परन्तु वे अमुक बैठक में प्राय रहते हैं, यही लोग कहा करते हैं। भक्तों का हृदय भगवान का बैठकघर है ।

"जिन्हे ज्ञानी *ब्रह्म* कहते हैं, योगी उन्ही को *आत्मा* कहते हैं और भक्त उन्हे *भगवान्* कहते हैं ।

"एक ही ब्राह्मण है । जब पूजा करता है, तब उसका नाम पुजारी है, जब भोजन पकाता है तब उसे रसोइया कहते हैं । जो ज्ञानी है, ज्ञानयोग जिसका अवलम्बन है, वह 'नेति-नेति' विचार करता है,—ब्रह्म न यह है न वह, न जीव है, न जगत् । विचार करते-करते जब मन स्थिर होता है, मन का नाश होता है, समाधि होती है, तब ब्रह्मज्ञान होता है । ब्रह्मज्ञानी की सत्य

धारणा है कि ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या। नामरूप स्वप्नतुल्य है, ब्रह्म क्या है यह मुँह से नहीं कहा जा सकता। वे व्यक्ति है (Personal God), यह भी नहीं कहा जा सकता।

"ज्ञानी उसी प्रकार कहते है जैसे वेदान्तवादी। परन्तु भक्तगण सभी अवस्थाओ को लेते है। वे जाग्रत अवस्था को भी सत्य कहते है, जगत् को स्वप्नवत् नही कहते। भक्त कहते है, यह ससार भगवान् का ऐश्वर्य है आकाश, नक्षत्र, चन्द्र, सूर्य, पर्वत, समुद्र, जीवजन्तु आदि सभी भगवान् की सृष्टि है। भक्त की इच्छा चीनी खाने की है, चीनी होने की नहीं। (सब हँसते है)

"भक्त का भाव कैसा है, जानते हो ? तुम प्रभु हो, मैं तुम्हारा दास हूँ, तुम माता हो मै तुम्हारी सन्तान हूँ, और यह भी कि तुम मेरे पिता या माता हो, तुम पूर्ण हो, मैं तुम्हारा अश हूँ। भक्त यह कहने की इच्छा नही करता कि मै ब्रह्म हूँ।

"योगी भी परमात्मा के दर्शन करने की चेष्टा करता है। उद्देश्य जीवात्मा और परमात्मा का योग है। योगी विषयो से मन को खीच लेता है और परमात्मा मे मन लगाने की चेष्टा करता है। इसीलिए पहले पहल निर्जन में स्थिर आसन मारकर अनन्य मन से ध्यान-चिन्तन करता है।

"परन्तु वस्तु एक ही है। केवल नाम का भेद है। जो ब्रह्म है, वही भगवान् है, वही आत्मा है। ब्रह्मज्ञानियो के लिए ब्रह्म, योगियो के लिए परमात्मा और भक्तो के लिए भगवान्।"

(४)

त्वमेव सूक्ष्मा त्वं स्थूला व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी।
निराकारापि साकारा कस्त्वां वेदितुमर्हति ॥

महानिर्वाणतन्त्र, ४।१५

वेद तथा तन्त्र का समन्वय, आद्या शक्ति का ऐश्वर्य

इधर जहाज कलकत्ते की ओर जा रहा है, उधर कमरे के भीतर जो लोग श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर रहे हैं और उनकी अमृतमयी वाणी सुन रहे हैं, उन्हें सुध नहीं कि जहाज चल रहा है या नहीं। भौंरा फूल पर बैठने पर फिर क्या भनभनाता है?

धीरे-धीरे जहाज दक्षिणेश्वर छोड़कर देवालयों के चित्ताकर्षक दृश्यों के बाहर हो गया। चलते हुए जहाज से मथा हुआ गंगाजल फेनमय तरंगों से भर गया और उससे आवाज होने लगी। परन्तु यह आवाज भक्तों के कानों तक नहीं पहुँची। वे तो मुग्ध होकर देखते हैं केवल हँसमुख आनन्दमय प्रेमरंजित नेत्रवाले एक अपूर्व योगी को, वे मुग्ध होकर देखते हैं सर्वत्यागी एक प्रेमी विरागी को, जो ईश्वर छोड़ और कुछ नहीं जानते। श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—वेदान्तवादी ब्रह्मज्ञानी कहते हैं, सृष्टि, स्थिति, प्रलय, जीव, जगत् यह सब शक्ति का खेल है। विचार करने पर यह सब स्वप्नवत् जान पड़ता है, ब्रह्म ही वस्तु है और सब अवस्तु, शक्ति भी स्वप्नवत् अवस्तु है।

"परन्तु चाहे लाख विचार करो, बिना समाधि में लीन हुए शक्ति के इलाके के बाहर जाने की सामर्थ्य नहीं। मैं ध्यान कर रहा हूँ,—मैं चिन्तन कर रहा हूँ,—यह सब शक्ति के इलाके के अन्दर है—शक्ति के ऐश्वर्य के भीतर है।

"इसलिए ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं। एक को मानिये तो दूसरे को भी मानना पड़ता है। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। अग्नि को मानिये तो दाहिका शक्ति को भी मानना पड़ेगा। सूर्य को अलग करके उसकी किरणों की चिन्ता नहीं की

जा सकती, न किरणों को छोडकर कोई सूर्य को ही सोच सकता है।

"दूध कैसा है ?—सफेद। दूध को छोडकर दूध की धवलता नहीं सोची जा सकती और न बिना धवलता के दूध ही सोचा जा सकता है।

"इसीलिए ब्रह्म को छोडकर न शक्ति को कोई सोच सकता है और न शक्ति को छोड ब्रह्म को। उसी प्रकार नित्य को छोडकर न लीला को कोई सोच सकता है और न लीला को छोडकर नित्य को।

"आद्या-शक्ति लीलामयी हैं। वे सृष्टि, स्थिति और प्रलय करती हैं। उन्हीं का नाम काली है। **काली ही ब्रह्म हैं, ब्रह्म ही काली है।**

'एक ही वस्तु है। वे निष्क्रिय हैं, सृष्टि-स्थिति-प्रलय का कोई काम नहीं करते, यह बात जब सोचता हूँ तब उन्हें ब्रह्म कहता हूँ और जब वे ये सब काम करते है, तब उन्हें काली कहता हूँ—शक्ति कहता हूँ। एक ही व्यक्ति है, भेद सिर्फ नाम और रूप में है।

'जिस प्रकार 'जल', 'Water' और 'पानी'। एक तालाब में तीन-चार घाट हैं। एक घाट मे हिन्दू पानी पीते हैं, वे 'जल' कहते हैं,—और एक घाट मे मुसलमान पानी पीते हैं, वे 'पानी' कहते है और एक घाट मे अंग्रेज पानी पीते हैं, वे 'Water' कहते है। तीनों एक हैं, भेद केवल नामों मे है। उन्हे कोई 'अल्ला' कहता है, कोई 'God' कहता है, कोई 'ब्रह्म,' कोई 'काली', कोई 'राम', हरि, ईसा, दुर्गा—आदि।"

केशव (सहास्य)—तो यह कहिये कि काली कितने भावों से लीला कर रही हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—वे अनेकानेक भावों में लीला कर रही हैं। वे ही **महाकाली, नित्यकाली, श्मशानकाली, रक्षाकाली** और **श्यामाकाली** हैं। महाकाली और नित्यकाली की बात तन्त्रों में है। जब सृष्टि नहीं हुई थी, सूर्य-चन्द्र ग्रह-पृथ्वी आदि नहीं थे,—घोर अन्धकार था, तब केवल निराकार महाकाली महाकाल के साथ अभेद रूप से विराज रही थी।

'श्यामाकाली का बहुत कुछ कोमल भाव है,—वराभयदायिनी है। गृहस्थों के घर उन्हीं की पूजा होती है। जब अकाल, महामारी भूकम्प, अनावृष्टि, अतिवृष्टि होती है, तब रक्षाकाली की पूजा की जाती है। श्मशानकाली की संहारमूर्ति है शव शिवा-डाकिनी-योगिनियों के बीच श्मशान में रहती हैं। रुधिरधारा, गले में मुण्डमाला कटि में नरहस्तों का कमरबन्द। जब संसार का नाश होता है, तब माँ सृष्टि के बीज इकट्ठे कर लेती हैं। घर की गृहिणी के पास जिस प्रकार एक हण्डी रहती है और उसमें तरह-तरह की चीजें रखी रहती है। (केदार तथा अन्य लोग हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—हाँ जी, गृहिणियों के पास इस तरह की हण्डी रहती है। उसमें वे समुद्रफेन, नील की डला, खीरे, कोहड आदि के बीज छोटी छोटी गठरियों में बाँधकर रख देती हैं और जरूरत पडने पर निकालती हैं। माँ ब्रह्ममयी सृष्टि-नाश के बाद इसी प्रकार सब बीज इकट्ठे कर लेती हैं। सृष्टि के बाद आद्याशक्ति संसार के भीतर ही रहती हैं। वे संसार प्रसव करती हैं, फिर संसार के भीतर रहती हैं। वेदों में 'ऊर्णनाभ' की बात है, मकडी और उसका जाला। मकडी अपने भीतर से जाला निकालती है और उसी के ऊपर रहती भी है। ईश्वर

ससार के आधार और आवेय दोनो है ।

"काली का रग काला थोडे ही है । दूर है, इसी से काला जान पडता है, समझ लेने पर काला नही रहता ।

"आकाश दूर से नीला दिखाई पडता है । पास जाकर देखो तो कोई रग नहीं । समुद्र का पानी दूर से नीला जान पडता है, पास जाकर चुल्लू मे लेकर देखो, कोई रग नही ।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेम से मतवाले होकर गाने लगे—भाव यह है—मेरी माँ क्या काली है ? दिगम्बरी का काला रूप हृदय-पद्म को प्रकाशपूर्ण करता है ।

(५)

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्य- परमव्ययम् ॥ गीता, ७।१३

यह ससार क्यों है ?

श्रीरामकृष्ण (केशव आदि से)—बन्धन और मुक्ति दोनो ही की कर्त्री वे है । उनकी माया से ससारी जीव काम-काचन में बँधा है और फिर उनकी दया होते ही वह छूट जाता है । वे 'भवबन्धन की फाँस काटनेवाली तारिणी' है ।

यह कहकर गन्धर्वकण्ठ से भक्त रामप्रसाद का गीत गाने लगे जिसका आशय यह है —

"श्यामा माँ, ससार-रूपी बाजार के बीच तू पतग उडा रही है । यह आशा-वायु के सहारे उडता है । इसमें माया की डोर लगी हुई है । विषयों के माँजे से यह कर्री हो गयी है । लाखों में से दो ही एक (पतग) कटते हैं और तब तू हँसकर तालियाँ पीटती है"—इत्यादि ।

"वे लीलामयी हैं । यह ससार उनकी लीला है । वे इच्छामयी,

आनन्दमयी हैं, लाख आदमियों में कहीं एक को मुक्त करती हैं।"

ब्राह्मभक्त—महाराज, वे चाहें तो सभी को मुक्त कर सकती हैं, तो फिर क्यों हम लोगों को संसार में बाँध रखा है ?

श्रीरामकृष्ण—उनकी इच्छा ! उनकी इच्छा कि वे यह सब लेकर खेल करें। छुई-छुओअल खेलने वाले सभी लड़के अगर टाई को दौड़कर छू लें तो खेल ही बन्द हो जाय, और यदि सभी छू लें तो टाई नाराज भी होती है। खेल चलता है तो टाई खुश रहती है। इसीलिए कहते हैं—लाखों में से दो ही एक कटते हैं और तब तू हँसकर तालियाँ पीटती है। (सब प्रसन्न होते हैं)

"उन्होंने मन को आँखों के इशारे कह दिया है—'जा, संसार में विचर।' मन का क्या कसूर है ? वे यदि फिर कृपा करके मन को फेर दें तो विषय-बुद्धि से छुटकारा मिले, तो फिर उनके पादपद्मों में मन लगे।"

श्रीरामकृष्ण संसारियों के भावों में अभिमान करके गाने लगे —

(भावार्थ)

"मैं यह खेद करता हूँ कि तुम जैसी माँ के रहते, मेरे जागते हुए भी, घर में चोरी हो ! मन में होता है, कि तुम्हारा नाम लूँ, परन्तु समय टल जाता है। मैंने समझा है, जाना है और मुझे आशय भी मिला है कि यह सब तुम्हारी ही चातुरी है। तुमने न कुछ दिया, न पाया, न लिया, न खाया, यह क्या मेरा ही कसूर है ? यदि देती तो पाती, लेती और खाती, मैं भी तुम्हारा ही तुम्हें देता और खिलाता। यश अपयश, सुरस कुरस, सभी रस तुम्हारे हैं। रसेश्वरी ! रस में रहकर यह रसभंग क्यों ? प्रसाद कहता है—तुम्हीने मन को पैदा करते समय इशारा कर दिया है। तुम्हारी यह सृष्टि किसी की कुदृष्टि से जल गयी है, पर हम

उन्हें मीठी समझकर भटक रहे हैं।"

"उन्हीं की माया से भूलकर मनुष्य ससारी हुआ है। प्रमाद कहता है, तुम्हीं ने मन को पैदा करते समय इशारा कर दिया है।"

कर्मयोग। संसार तथा निष्काम कर्म

ब्राह्मभक्त—महाराज, बिना सब त्याग किये क्या ईश्वर नही मिलते?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—नहीं जी, तुम लोगो को सब कुछ क्यो त्याग करना होगा? तुम लोग तो बडे अच्छे हो, इधर भी हो और उधर भी, आधा खाँड और आधा गिरा! (लोग हँसते हैं) बडे आनन्द में हो। नक्स का खेल जानते हो? मैं ज्यादा काटकर जल गया हूँ। तुम लोग बडे सयाने हो, कोई दस मे हो, कोई छ मे, कोई पाँच मे। तुमने ज्यादा नही काटा इसलिए मेरी तरह जल नहीं गये। खेल चल रहा है। यह तो अच्छा है। (सब हँसे)

"सच कहता हूँ, तुम लोग गृहस्थी में हो, इसमे कोई दोष नही। बस, मन ईश्वर की ओर रखना चाहिए। नही तो न होगा। एक हाथ मे काम करो और एक हाथ से ईश्वर को पकडे रहो। काम खतम हो जाने पर दोनो हाथों से पकड लेना।

"सब कुछ मन पर निर्भर है। मन ही से बद्ध है और मन ही से मुक्त। मन पर जो रग चढाओगे उसी से वह रग जायगा। जैसे रगरेज के घर के कपडे, लाल रग से रगो तो लाल, हरे से रगो तो हरे, सब्ज से रगो, सब्ज, जिस रग से रगो वही रग चढ जायगा। देखो न, अगर कुछ अग्रेजी पढ लो तो मुँह में अँग्रेजी शब्द ही आते है। फूट्-फट् इट्-मिट्। (सब हँसे) और पैरो में बूट-जूता, सीटी बजाकर गाना—ये सब आ जाते है, और पण्डित

संस्कृत पढ़े तो श्लोक आवृत्ति करने लगता है! मन को यदि कुसंग में रखो तो वैसी ही बातचीत—वैसी ही चिन्ता हो जायगी। यदि भक्तों के साथ रखो तो ईश्वरचिन्तन, भगवत्प्रसंग—ये सब होंगे।

"मन ही को लेकर सब कुछ है। एक ओर स्त्री है और एक ओर सन्तान। स्त्री को एक भाव से और सन्तान को दूसरे भाव से प्यार करता है, किन्तु है एक ही मन।"

परिच्छेद ९

श्री शिवनाथ आदि ब्राह्म भक्तों के संग में

(१)

उत्सव मन्दिर

भगवान् श्रीरामकृष्ण सींती का ब्राह्मसमाज देखने आये हैं। २८ अक्टूबर १८८२ ई०, शनिवार, आश्विन की कृष्णा द्वितीया है।

आज यहाँ ब्राह्मसमाज के छठे महीने का उत्सव होगा। इसीलिए भगवान् श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण देकर बुलाया है। दिन के तीन-चार बजे का समय है, श्रीरामकृष्ण कई भक्तों के साथ गाडी पर चढकर दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर से श्रीयुत वेणीमाधव पाल के मनोहर बगीचे म पहुँचे हैं। इसी बगीचे में ब्राह्मसमाज का अधिवेशन हुआ करता है। ब्राह्मसमाज को वे बहुत प्यार करते हैं। ब्राह्मभक्त भी उन्हें बडी श्रद्धाभक्ति से देखते हैं। अभी कल ही शुक्रवार के दिन, पिछले पहर आप केशव सेन और उनके शिष्यों के साथ जहाज पर चढकर हवाखोरी को निकले थे।

सींती पाइकपाडा के पास है। कलकत्ते से तीन मील, उत्तर दिशा में। स्थान निर्जन और मनोहर है, ईश्वरोपासना के लिए अत्यन्त उपयोगी है। बगीचे के मालिक साल में दो बार उत्सव मनाते हैं। एक बार शरत्काल में और एक बार वसन्त म, इस महोत्सव मे वे कलकत्ते और सींती के आसपास के ग्रामवासी भक्तों को निमन्त्रण देते हैं। अतएव आज कलकत्ते से शिवनाथ आदि भक्त आये हैं। इनमें से अनेक प्रात काल की उपासना में सम्मिलित हुए थे। वे सब सायकालीन उपासना की प्रतीक्षा कर रहे हैं। विशेषत उन लोगों ने सुना है कि अपराह्न में महापुरुष का

आगमन होगा, अतएव उनकी आनन्द-मूर्ति देखेंगे,—उनका हृदय-मुग्धकारी वचनामृत पान करेंगे,—मधुर सङ्कीर्तन सुनेंगे और देखेंगे भागवत्-प्रेममय देवदुर्लभ नृत्य।

शाम को बगीचे में आदमी ठसाठस भर गये हैं। कोई लता-मण्डप की छाया में बेंच पर बैठा हुआ है, कोई सुन्दर तालाब के किनारे मित्रों के साथ घूम रहा है। कितने ही तो समाजगृह में पहले ही से मनमाने आसन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण के आने की बाट जोह रहे हैं। चारों ओर आनन्द उमड रहा है। शरद् के नील आकाश में भी आनन्द की छाया झलक रही है। बाग के फूलों से लदे हुए पेडों और लताओं से छनकर आती हुई हवा भक्तों के हृदय में आनन्द का एक झोंका लगा जाती है। सारी प्रकृति मानो मधुर स्वर से गा रही है—'आज हर्ष शीतल-समीर भरते भक्तों के उर में हैं विभु।' सभी उत्कण्ठित हो रहे हैं, ऐसे समय श्रीरामकृष्ण की गाडी आकर समाजगृह के सामने खडी हो गयी।

सभी ने उठकर महापुरुष का स्वागत किया। वे आये हैं—सुनते ही लोगों ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया।

समाजगृह के प्रधान कमरे में वेदी बनायी गयी है। वह जगह आदमियों से भर गयी है। सामने दालान है, वहाँ श्रीरामकृष्ण बैठे हैं, वहाँ भी लोग जम गये हैं। दालान के दोनों ओर दो कमरे हैं—वहाँ भी लोग हैं,—सभी दरवाजे पर खडे हुए बडे चाव से श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं। दालान पर चढने की सीढियाँ बराबर दालान के एक छोर से दूसरे छोर तक हैं। इन सीढियों पर भी अनेक लोग खडे हैं। वहाँ से कुछ दूर पेडों और लतामण्डपों के नीचे रखी हुई बेंचों पर से लोग महापुरुष के दर्शन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए आसन ग्रहण किया। सब की दृष्टि

एक साथ उनकी आनन्दमूर्ति पर जा गिरी। जब तक रंगमंच पर खेल शुरू नही होता तब तक दर्शक-वृन्दो मे से कोई तो हँसता है, कोई विषयचर्चा छेडता है, कोई पान खाता है, कोई सिगरेट पीता है, परन्तु परदा उठते ही सब लोग अनन्यचित्त होकर खेल देखने लगते है।

(२)

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते। गीता, १४।२६

भक्त-सम्भाषण। मनुष्यप्रकृति तथा तीन गुण

हँसमुख श्रीरामकृष्ण शिवनाथ आदि भक्तो की ओर स्नेह की दृष्टि फेरते हुए कहते है,—क्या शिवनाथ ! तुम भी आये हो ? देखो तुम लोग भक्त हो, तुम लोगो को देखकर बडा आनन्द होता है। गजेडी का स्वभाव होता है कि दूसरे गजेडी को देखते ही वह खुश हो जाता है, कभी तो उसे गले भी लगा लेता है। (शिवनाथ तथा अन्य सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण—जिन्हे मै देखता हूँ कि मन ईश्वर पर नही है, उनसे कहता हूँ—'तुम कुछ देर वहाँ जाकर बैठो।' या कह देता हूँ, 'जाओ इमारते देखो' (रानी रासमणि के मन्दिरो को लक्ष्य करके कहते है)। (सब हँसे)

"कभी तो देखा है कि भक्तो के साथ निकम्मे आदमी आये है। उनमें बडी विषयबुद्धि रहती है। ईश्वरी चर्चा नही सुहाती। भक्त तो बडी देर तक मुझसे ईश्वरी वार्तालाप करते है, पर वे लोग उधर बैठे नही रह सकते, तडफडाते है। बार-बार कानो मे फिसफिसाते हुए कहते है, 'कब चलोगे—कब चलोगे ?' उन्होने अगर कहा, 'ठहरो भी, जरा देर बाद चलते है' तो इन लोगो ने

रुठकर कहा, 'तो तुम बातचीत करो, हम नाव पर चलकर बैठते हैं।' (सब हँसे।)

"ससारी मनुष्यो से यदि कहो कि सब छोड़-छाडकर ईश्वर के पादपद्मो मे मन लगाओ तो वे कभी न सुनेंगे। यही कारण है कि **गौरांग और नित्यानन्द** दोनो भाइयो ने आपस में विचार करके यह व्यवस्था की—'मागुर माछेर झोल (मागुर मछली की रस-दार तरकारी), युवती मेयेर कोल (युवती स्त्री का अक), बोल हरि बोल।' प्रथम दोनो के लोभ से बहुत आदमी 'हरि बोल' मे शामिल होते थे। फिर तो हरिनामामृत का कुछ स्वाद पाते ही वे समझ जाते थे कि 'मागुर माछेर झोल' और कुछ नही है,—ईश्वरप्रेम के जो आँसू उमडते हैं,—वही है, और युवती स्त्री है पृथ्वी—'युवती स्त्री का अक' अर्थात् भगवत्-प्रेम के कारण धूलि में लोटपोट हो जाना।

"नित्यानन्द किसी तरह हरिनाम करा लेते थे। चैतन्यदेव ने कहा है, ईश्वर के नामो का बडा माहात्म्य है। फल जल्दी न मिलने पर भी कभी न कभी अवश्य प्राप्त होगा। जैसे, कोई पक्के मकान के आले में बीज रखा गया था; बहुत दिनो के बाद जब मकान गिर गया—मिट्टी में मिल गया, तब भी उस बीज से पेड पैदा हुआ और उसमें फल भी लगे।"

श्रीरामकृष्ण—जैसे ससारियो में सत्त्व, रज और तम—ये तीनो गुण हैं, वैसे भक्ति में भी सत्त्व, रज, और तम तीन गुण हैं।

"ससारियो का सत्त्वगुण कैसा होता है, जानते हो? घर यहाँ टूटा है, वहाँ टूटा है—मरम्मत नही कराते। ठाकुरजी के घर में कबूतरो की विष्ठा पडी है। आँगन में काई जम गयी है; होश तक नही। सामान सब पुराना हो गया है; साफ करने की कोशिश

नहीं करते। कपड़ा जो मिला वही सही। देखने में सीधे-सादे, दयालु, मिलनसार, कभी किसी का बुरा नहीं चाहते।

"और फिर संसारियों के रजोगुण के भी लक्षण हैं। जेब-घड़ी, चेन, उँगलियों में दो-तीन अँगूठियाँ, मकान की चीज बड़ी साफ, दीवार पर क्वीन (सम्राट-पत्नी) की तस्वीर—राजपुत्र की तस्वीर—किसी बड़े आदमी की तस्वीर। मकान चूने से पुता हुआ—कहीं एक दाग तक नहीं। तरह-तरह की अच्छी पोशाक। नौकरों के भी वर्दियाँ।—आदि-आदि।

"संसारियों के तमोगुण के लक्षण हैं—निद्रा, काम-क्रोध, अहंकार—यही सब।

"और भक्ति का भी सत्त्व है। जिस भक्त में सत्त्वगुण है वह एकान्त में ध्यान करता है। कभी तो वह मसहरी के भीतर ध्यान करता है। लोग समझते हैं कि आप सो रहे हैं, शायद रात को आँख नहीं लगी, इसलिए आज उठने में देर हो रही है। इधर शरीर का ख्याल बस भूख मिटाने तक, साग-पात खाने ही से चल गया। न भोजन में सरसान, न पोशाक में टीम-टाम और न घर में चीजों का जमाव। और फिर सतोगुणी भक्त कभी खुशामद करके धन नहीं कमाता।

"भक्ति का रज जिस भक्त को होता है वह तिलक लगाता है, रुद्राक्ष की माला पहनता है, जिसके बीच-बीच सोने के दाने पड़े रहते हैं। (सब हँसते हैं) जब पूजा करता है तब पीताम्बर पहन लेता है।"

(३)

क्लैब्यं मास्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ॥ गीता, २।३

'व्यक्ति' (Personal God) के रूप में आते हैं। ज्ञानी—जैसे वेदान्तवादी—मिर्फ 'नेति-नेति' विचार करता है। विचार करने पर उसे यह भासित होता है कि मैं मिथ्या हूँ, संसार भी मिथ्या—स्वप्नवत् है। ज्ञानी ब्रह्म को बोधरूप देखता है, परन्तु वे क्या हैं, यह मुँह से नहीं कह सकता।

'वे किस तरह हैं, जानते हो? मानो सच्चिदानन्द समुद्र है जिसका ओर-छोर नहीं। भक्ति के हिम से जगह-जगह जल बर्फ हो जाता है—बर्फ की तरह जम जाता है। अर्थात् भक्तों के पास वे व्यक्तभाव से कभी-कभी साकाररूप धारण करते हैं। ज्ञान-सूर्य का उदय होने पर वह बर्फ गल जाती है तब ईश्वर के व्यक्तित्व का बोध नहीं रह जाता—उनका रूप भी नहीं दिखाई देता। वे क्या हैं, मुँह से नहीं कहा जा सकता। कहे कौन! जो कहेंगे वे ही नहीं रह गये, उनका 'मैं' ढूँढने पर भी नहीं मिलता।

'विचार करते-करते फिर 'मैं' नहीं रह जाता। जब तुम प्याज छीलते हो, तब पहले लाल छिलके निकलते हैं। फिर सफेद मोटे छिलके। इसी तरह लगातार छीलते जाओ तो भीतर ढूँढने से कुछ नहीं मिलता।

"जहाँ अपना 'मैं' खोजे नहीं मिलता—और खोजे भी कौन?—वहाँ ब्रह्म के स्वरूप का बोध किस प्रकार होता है, यह कौन कहे! नमक का एक पुतला समुद्र की थाह लेने गया। समुद्र में ज्योंही उतरा कि गलकर पानी हो गया। फिर खबर कौन दे?

"पूर्ण ज्ञान का लक्षण यह है,—पूर्ण ज्ञान होने पर मनुष्य चुप हो जाता है। तब 'मैं' रूपी नमक का पुतला सच्चिदानन्द रूपी समुद्र में गलकर एक हो जाता है, फिर जरा भी भेदबुद्धि

नही रह जाती ।

"विचार करने का जब तक अन्त नही होता, तब तक लोग तर्क पर तुले रहते हैं । अन्त हुआ कि चुप हो गये । घडा भर जाने से,—घडे का जल और तालाब का जल एक हो जाने से—फिर शब्द नही होता । जब तक घडा भर नही जाता, शब्द तभी तक होता है ।

"पहले के लोग कहते थे, काले पानी मे जहाज जाने से फिर लौट नही सकता ।

" 'मैं' मरा कि बला टली । (हास्य) विचार चाहे लाख करो पर 'मैं' दूर नही होता । तुम्हारे और हमारे लिए 'मैं भक्त हूँ' यह अभिमान अच्छा हैं ।

"भक्तो के लिए सगुण ब्रह्म है अर्थात् वे सगुण अर्थात् मनुष्य के रूप में दर्शन देते है । प्रार्थनाओ के सुननेवाले वही है । तुम लोग जो प्रार्थना करते हो वह उन्ही से करते हो । तुम लोग न वेदान्तवादी हो, न ज्ञानी, तुम लोग भक्त हो । साकार रूप मानो चाहे न मानो इसमे कुछ हानि नही, केवल यह ज्ञान रहने ही से काम होगा कि ईश्वर एक वह व्यक्ति है जो प्रार्थनाओ को सुनते हैं,—सृजन, पालन और प्रलय करते है,—जिनमे अनन्त शक्ति है ।

"भक्तिमार्ग से ही वे जल्दी मिलते है ।"

(५)

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप । गीता, ११।४५

ईश्वर दर्शन—साकार तथा निराकार

एक ब्राह्मभक्त ने पूछा, "महाराज, ईश्वर को क्या कोई देख सकता है ? अगर देख सकता है तो हमें वे क्यो नही देखने

को मिलते ?"

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वे अवश्य देखने को मिलते हैं। साकार रूप देखने मे आता है और फिर अरूप भी दीख पड़ता है, परन्तु यह तुम्हे समझाऊँ किस तरह ?

ब्राह्मभक्त—हम उन्हे किस उपाय से देख सकते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—व्याकुल होकर उनके लिए रो सकते हो ? लड़के के लिए, स्त्री के लिए, धन के लिए लोग आँसुओ की झड़ी बाँध देते हैं, परन्तु ईश्वर के लिए कौन रोता है ? जब तक लड़का खिलौने पर भूला रहता है तब तक माँ रोटी पकाना आदि घर-गृहस्थी के कामो मे लगी रहती है। जब लड़के को खिलौना नहीं सुहाता, उसे फेक, गला फाड़कर रोने लगता है, तब माँ तवा उतारकर दौड़ आती है—बच्चे को गोद में उठा लेती है।

ब्राह्मभक्त—महाराज, ईश्वर के स्वरूप पर इतने भिन्न-भिन्न मत क्यो हैं ? कोई कहता है साकार और कोई कहता है निराकार। साकारवादियो से तो अनेक रूपो की चर्चा सुन पड़ती है। यह गोरखधन्धा क्यो रचा है ?

श्रीरामकृष्ण—जो भक्त जिस प्रकार देखता है वह वैसा ही समझता है। वास्तव में गोरखधन्धा कुछ भी नहीं। यदि उन्हें कोई किसी तरह एक बार प्राप्त कर सके, तो वे सब समझा देते हैं। उस मुहल्ले में गये ही नहीं,—कुल खबर कैसे पाओगे ?

"एक कहानी सुनो। एक आदमी शौच के लिए जगल गया। उसने देखा कि पेड पर एक कीड़ा बैठा है। लौटकर उसने एक दूसरे से कहा—'देखो जी, उस पेड पर हमने एक लाल रंग का सुन्दर कीड़ा देखा है।' उस आदमी ने जवाब दिया—'जब मैं शौच के लिए गया था तब मैंने भी देखा, पर उसका रग लाल

तो नही है—वह तो हरा है !' तीसरे ने कहा—'नही जी नही, हमने भी देखा है, पीला है।' इसी प्रकार और भी कुछ लोग थे जिनमे से किसी ने कहा भूरा, किसी ने बैंगनी, किसी ने आसमानी आदि-आदि। अन्त मे लडाई ठन गयी। तब उन लोगों ने पेड के नीचे जाकर देखा। वहाँ एक आदमी बैठा था, पूछने पर उसने कहा—'मैं इसी पेड के नीचे रहता हूँ। उस कीडे को मैं खूब पहचानता हूँ। तुम लोगो ने जो कुछ कहा, सब सत्य है। वह कभी लाल, कभी हरा, कभी पीला, कभी आसमानी और न जाने कितने रग बदलता है। बहुरुपिया है। और फिर कभी देखता हूँ, कोई रग नही !'

"अर्थात् जो मनुष्य सर्वदा ईश्वर-चिन्तन करता है, वही जान सकता है कि उनका स्वरुप क्या है। वही मनुष्य जानता है कि वे अनेकानेक रूपों में दर्शन देते हैं—अनेक भावो मे दीख पडते हैं—वे सगुण है और निर्गुण भी। जो पेड के नीचे रहता है वही जानता है कि उस बहुरुपिया के कितने रग है,—और कभी-कभी तो कोई रग भी नही रहता। दूसरे लोग केवल वादविवाद करके कष्ट उठाते है। कबीर कहते थे,—'निराकार मेरा पिता है और साकार मेरी माँ।'

"भक्त को जो स्वरूप प्यारा है, उसी रूप से वे दर्शन देते है—वे भक्तवत्सल है न। पुराण मे कहा है कि वीरभक्त हनुमान के लिए उन्होंने रामरुप धारण किया था।

"वेदान्त-विचार के सामने नाम-रूप कुछ नहीं ठहरते। उस विचार का चरम सिद्धान्त है—'ब्रह्म सत्य और नामरूपों वाला ससार मिथ्या।' जब तक 'मैं भक्त हूँ' यह अभिमान रहता है, तभी तक ईश्वर-का रूप दिखता है और तभी तक ईश्वर के

सम्बन्ध मे व्यक्ति (Person) का वोध रहना सम्भव है । विचार की दृष्टि से देखिये तो भक्त के 'मै भक्त'—अभिमान ने उसे कुछ दूर कर रखा है । कालीरूप या श्यामरूप साढे तीन हाथ का इसलिए है कि वह दूर है । दूर ही के कारग सूर्य छोटा दिखता है । पास जाओ तो इतना बड़ा मालूम होगा कि उसकी धारणा ही न कर सकोगे । और फिर कालीरूप या श्यामरूप श्यामवर्ण क्यो है ?—क्योकि वह भी दूर है । सरोवर का जल दूर से हरा, नीला या काला दीख पड़ता है, निकट जाकर हाथ में लेकर देखो, कोई रग नहीं ।

"इसलिए कहता हूँ, वेदान्त-दर्शन के विचार से ब्रह्म निर्गुण है । उनका स्वरूप क्या है, यह मुंह से नही कहा जा सकता । परन्तु जव तक तुम स्वय सत्य हो तव तक ससार भी सत्य है, ईश्वर के नाम-रूप भी सत्य हैं, ईश्वर को एक व्यक्ति समझना भी सत्य है ।

"तुम्हारा मार्ग भक्तिमार्ग है । यह वड़ा अच्छा है, मार्ग सरल है । अनन्त ईश्वर समझ में थोड़े ही आ सकते हैं ? और उन्हें समझने की जरूरत भी क्या ? यह दुर्लभ मनुष्य-जन्म प्राप्त कर हमें वह करना चाहिए जिससे उनके चरण-कमलों में भक्ति हो ।

"यदि लोटे भर पानी से हमारी प्यास बुझे तो तालाब में कितना पानी है, इसकी नापतौल करने की क्या जरूरत ? अगर अद्धे भर शराव से हम मस्त हो जायें, तो कलवार की दूकान में कितने मन शराव है, इसकी जाँच-पड़ताल करने का क्या काम, अनन्त का ज्ञान प्राप्त करने का क्या प्रयोजन ?

(६)

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।
आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥ गीता, ३।१७

ईश्वरलाभ के लक्षण, सप्तभूमि तथा ब्रह्मज्ञान

"वेदो मे ब्रह्मज्ञानी की अनेक प्रकार की अवस्थाओ का वर्णन है। ज्ञानमार्ग बडा कठिन मार्ग है। विषय-वासना--कामिनी-काचन के प्रति आसक्ति--का लेशमात्र रहते ज्ञान नही होता। **यह पथ कलिकाल में साधन करने योग्य नहीं।**

"इस विषय की वेदो मे **सप्तभूमि** (Seven Planes) की कथा है। मन इन सात सोपानो पर विचरण किया करता है। जब वह ससार मे रहता है तब लिंग, गुदा और नाभि उसके निवासस्थल हैं। तब वह उन्नत दशा पर नही रहता--केवल कामिनी-काचन मे लगा रहता है। मन की चौथी भूमि है हृदय। तब चैतन्य का उदय होता है, और मनुष्य को चारो ओर ज्योति दिखलाई पडती है। तब वह मनुष्य ईश्वरी ज्योति देखकर सविस्मय कह उठता है 'यह क्या, यह क्या है!' तब फिर नीचे (ससार की ओर) मन नही मुडता।

"मन की पचम भूमि है कण्ठ। जिसका मन कण्ठ तक पहुँचा है उसकी अविद्या--सम्पूर्ण अज्ञान दूर हो गया है। ईश्वरी प्रसग के सिवा और कोई बात न वह सुनता है, न कहने को उसका जी चाहता है। यदि कोई व्यक्ति दूसरी चर्चा छेडता है तो वह वहाँ से उठ जाता है।

"मन की छठी भूमि कपाल है। मन वहाँ जाने से दिनरात ईश्वरी रूप के दर्शन होते है। उस समय भी कुछ 'मैं' रहता है। वह मनुष्य उस अनुपम रूप को देखकर मतवाले की तरह उसे छूने तथा गले लगाने को बढता है, परन्तु पाता नही। जैसे लालटेन के भीतर बत्ती को जलते देखकर, मन मे आता है कि छूना चाहे तो हम इसे छू सकते हैं, परन्तु काँच के आवरण के

कारण हम उन्हें छू नहीं पाते ।

"शिरोदेश सप्तम भूमि है । वहाँ मन जाने से समाधि होती है और ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म का प्रत्यक्ष दर्शन करता है । परन्तु उस अवस्था में शरीर अधिक दिन नहीं रहता । सदा बेहोश, कुछ खाया नहीं जाता, मुँह में दूध डालने से भी गिर जाता है । इस भूमि में रहने से इक्कीस दिन के भीतर मृत्यु होती है । यही ब्रह्मज्ञानियों की अवस्था है । तुम लोगों के लिए भक्तिपथ है । भक्ति-पथ बड़ा अच्छा और सहज है ।

"मुझसे एक मनुष्य ने कहा था, महाराज, मुझे आप समाधि सिखा सकते हैं ? (सब हँसते हैं)

"समाधि होने पर सब कर्म छूट जाते हैं । पूजा-जपादि कर्म, विषय कर्म, सब छूट जाते हैं । पहले पहल कामों की बड़ी रेलपेल होती है, परन्तु ईश्वर की ओर जितना ही बढ़ोगे, कामों का आडम्बर उतना ही घटता जायगा, यहाँ तक कि नामगुणकीर्तन तक छूट जाता है । (शिवनाथ से) जब तक तुम सभा में नहीं आये कि तब तक तुम्हारे नामगुणों की बड़ी चर्चा चलती रही । ज्योंही तुम आये कि वे सब बातें बन्द हो गयीं । सब तुम्हारे दर्शन से ही आनन्द मिलने लगा । लोग कहने लगे, यह लो, शिवनाथ बाबू आ गये । फिर तुम्हारी और सब बातें बन्द हो जाती हैं ।

"यही अवस्था होने पर गंगा में तर्पण करने के लिए जाकर मैंने देखा, उँगलियों के भीतर से पानी गिरा जा रहा है । तब हलधारी से रोते हुए पूछा, दादा, यह क्या हो गया ! हलधारी बोला, इसे 'गलितहस्त' कहते हैं, ईश्वरदर्शन के बाद तर्पणादि कर्म नहीं रह जाते ।

"संकीर्तन करते समय पहले कहते हैं, 'निताइ आमार माता

हाथी '—निताइ आमार माना हाथी ! 'भाव गहरा होने पर सिर्फ 'हाथी हाथी' कहते है। इसके बाद केवल 'हाथी' शब्द मुँह म लगा रहता है। अन्त को 'हा' कहते हुए भक्तो को भाव-समाधि होती है, तब वे जो अब तक कीर्तन कर रहे थे, चुप हो जाते है।

"जैसे ब्रह्मभोज म पहले खूब शोरगुल मचता है। जब सभी के आगे पत्तल पड जाती है तब गुलगपाडा बहुत कुछ घट जाता है। केवल 'पूडी लाओ, पूडी लाओ' की आवाज होती रहती है। फिर जब लोग पूडी तरकारी खाना शुरु करते हैं तब बारह आना शब्द घट जाता है। जब दही आया तब सप्-सप्! (सब हँसते है)—शब्द मानो होता ही नहीं। और भोजन के बाद निद्रा। तब सब चुप!

"इसीलिए कहा कि पहले-पहल कामो की बडी रेल-पेल रहती है। ईश्वर के रास्ते पर जितना बढोगे उतना ही कर्म घटते जायँगे। अन्त को कर्म छूट जाते है। और समाधि होती है।

"गृहस्थ की बहू के गर्भवती होने पर उसकी सास काम घटा देती है। दसवें महीने में काम अक्सर नहीं करना पडता। लडका होने पर उसका काम बिलकुल छूट जाता है। फिर वह सिर्फ लडके की देखभाल में रहती है। घर-गृहस्थी का काम सास, ननद, जेठानी ये ही सब करती हैं।

"समाधिस्थ होने के बाद प्राय शरीर नहीं रहता। किसी-किसी का शरीर लोक-शिक्षण के लिए रह जाता है,—जैसे नारदादिको का और चैतन्य जैसे अवतार पुरुषो का भी शरीर रहता है। कुआँ खुद जाने पर कोई-कोई झौवा कुदार फेक देते हैं। कोई-कोई रख लेते हैं,—सोचते हैं, शायद पडोस में किसी दूसरे को जरूरत पडे। इसी प्रकार महापुरुष जीवो का दु ख देखकर

विकल हो जाते हैं। ये स्वार्थपर नहीं होते कि अपने ही ज्ञान से मतलब रखें। स्वार्थपर लोगों की कथा तो जानते हो। कड़ी उँगली पर भी नहीं मूतते कि कहीं दूसरे का उपकार न हो जाय! (सब हँसे) एक पैसे की बर्फी दूकान से ले आने को कहो तो उसमें से भी कुछ साफ कर जायँगे! (सब हँसते हैं)

"परन्तु शक्ति की विशेषता होती है। छोटा आधार (साधारण मनुष्य) लोक-शिक्षा देते डरता है। सड़ी लकड़ी खुद तो किसी तरह बह जाती है, परन्तु एक चिड़िया के बैठने से भी वह डूब जाती है। नारदादि 'बहादुरी' लकड़ी हैं। ऐसी लकड़ी खुद भी बहती है और कितने ही मनुष्यों, मवेशियों, यहाँ तक कि हाथी को भी अपने ऊपर लेकर बह जाती है।'

(७)

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा, भयेन च प्रव्यथितं मनो मे।
तदेव मे दर्शय देव रूपं, प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥

गीता, ११।४५

ब्राह्मसमाज की प्रार्थनापद्धति। ईश्वर का ऐश्वर्य-वर्णन

श्रीरामकृष्ण (शिवनाथ आदि से)—क्यों जी, तुम लोग इतना ईश्वर के ऐश्वर्य का वर्णन क्यों करते हो? मैंने केशव सेन से यही कहा था। एक दिन केशव वहाँ (काली-मन्दिर) गया था। मैंने कहा, तुम लोग किस तरह लेक्चर देते हो, मैं सुनूँगा। गंगाघाट की चाँदनी में सभा हुई, और केशव बोलने लगा। खूब बोला। मुझे भाव हो गया था। बाद को केशव से मैंने कहा, तुम यह सब इतना क्यों बोलते हो—हे ईश्वर, तुमने कैसे सुन्दर-सुन्दर फूलों की रचना की, तुमने आकाश की सृष्टि की, तुमने नक्षत्र बनाये, तुमने समुद्र का सृजन किया,—यह सब। जो स्वयं ऐश्वर्य

चाहते हैं, वे ईश्वर के ऐश्वर्य का वर्णन करना अच्छा समझते है। जब राधाकान्त का जेवर चोरी गया था, तब बाबू (रानी रासमणि के जामाता) राधाकान्त के मन्दिर मे जाकर ठाकुरजी से बोले, 'क्यो महाराज, तुम अपने जेवर की रक्षा न कर सके !' मैंने बाबू से कहा, 'यह तुम्हारी कैसी बुद्धि है ! स्वय लक्ष्मी जिनकी दासी है, चरणसेवा करती हैं, उनको ऐश्वर्य की क्या कमी है ? यह जेवर तुम्हारे लिए ही अमोल वस्तु है, ईश्वर के लिए तो ककड-पत्थर है। राम-राम ! ऐसी बुद्धिहीनता की बाते न किया करो। कौन बडा ऐश्वर्य तुम उन्हे दे सकते हो ?' इसीलिए कहता हूँ, जिसका मन जिस पर रम जाता है वह उसी को चाहता है, कहाँ वह रहता है, उसकी कितनी कोठियाँ हैं, कितने बगीचे हैं, कितना धन है, परिवार म कौन-कौन हैं, नौकर कितने हैं— इसकी खबर कौन लेता है ? जब मैं नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) को देखता हूँ, तब सब कुछ भूल जाता हूँ। उसका घर कहाँ है, उसका बाप क्या करता है, उसके कितने भाई हैं, ये सब बाते कभी भूलकर भी नही पूछी। ईश्वर के मधुर रस मे डूब जाओ। उनकी सृष्टि अनन्त है, ऐश्वर्य अनन्त है, ज्यादा ढूंढनलाश की क्या जरूरत ?"

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से गाने लगे। गीत इस आशय का है— "ऐ मन ! तू रूप के समुद्र में डूब जा। तलातल पाताल खोजने पर तुझे प्रेमरत्न धन मिलेगा। खोज, जी लगाकर खोज। खोजने ही से तू हृदय में वृन्दावन देखेगा, तब वहाँ सदा ज्ञान की बत्ती जलेगी। भला ऐसा कौन है जो जमीन पर डोगा चलायगा ? कबीर कहते हैं, तू सदा श्रीगुरु का चरणचिन्तन कर।

"दर्शन के बाद कभी-कभी भक्त की साध होती है कि उनकी

लीला देख । श्रीरामचन्द्रजी जब राक्षसों को मारकर लंकापुरी में घुसे तब बुड्ढी निकषा भागी। तब लक्ष्मण बोले, हे राम, भला यह क्या है ? यह निकषा इतनी बुड्ढी है, पुत्रशोक भी इसको थोड़ा नहीं हुआ, फिर भी इसे प्राणों का इतना भय है कि भाग रही है। श्रीरामचन्द्रजी ने निकषा को अभय देते हुए सामने लाकर कारण पूछा । वह बोली, इतने दिनों तक बची हूँ, इसी-लिए तुम्हारी इतनी लीला देखी, यही कारण है कि और भी बचना चाहती हूँ । न जाने और कितनी लीलाएँ देखूं ! (सब हँसते हैं)

(शिवनाथ से) "तुम्हें देखने को जी चाहता है। शुद्धात्माओं को बिना देखे किसको लेकर रहूँगा ? शुद्धात्माओं के पिछले जन्म का, जान पडता है, मित्र हूँ।"

एक ब्राह्मभक्त ने पूछा, "महाराज, आप जन्मान्तर मानते हैं ?"

श्रीरामकृष्ण—हाँ, मैंने सुना है, कि जन्मान्तर होता है। ईश्वर का काम हम लोग अल्पबुद्धि से कैसे समझ सकते हैं ? अनेकों ने कहा है, इसलिए अविश्वास नहीं कर सकते। भीष्मदेव देह छोड़ना चाहते हैं, शरों की शय्या पर लेटे हुए हैं, सब पाण्डव श्रीकृष्ण के साथ खड़े हैं। सब ने देखा, भीष्मदेव की आँखों से आँसू बह रहे हैं। अर्जुन श्रीकृष्ण से बोले, 'भाई, यह तो बड़े आश्चर्य की बात है कि पितामह—जो स्वयं भीष्मदेव ही हैं, सत्यवादी, जितेन्द्रिय, ज्ञानी, आठों वसुओं में से एक हैं—वे भी देह छोड़ते समय माया में पड़े रो रहे हैं ?' यह भीष्मदेव से जब श्रीकृष्ण ने कहा तब वे बोले, कृष्ण, तुम खूब जानते हो कि मैं इसलिए नहीं रो रहा हूँ। जब सोचता हूँ कि स्वयं भगवान् पाण्डवों के सारथी हैं, फिर भी उनके दुःख और विपत्तियों का अन्त नहीं होता तब

यही याद करके आँसू बहाता हूँ कि परमात्मा के कार्यों का कुछ भी भेद न पाया।' "

समाजगृह में सन्ध्याकाल की उपासना शुरू हुई। रात के साढ़े आठ बजे का समय है। समाजगृह के एक ओर संकीर्तन हो रहा है। श्रीरामकृष्ण भगवत्प्रेम से मतवाले होकर नाच रहे हैं। भक्त-गण खोल-करताल लेकर, उन्हें घेरकर नाच रहे हैं। भाव में भरे हुए सभी मानो ईश्वर-दर्शन कर रहे हैं। हरिनाम-ध्वनि उत्तरोत्तर बढ़ने लगी।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने जगन्माता को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। प्रणाम करते हुए कह रहे हैं, "भागवत भक्त भगवान, ज्ञानी के चरणों में प्रणाम है, साकारवादी भक्तों और निराकारवादी भक्तों के चरणों में प्रणाम है, पहले के ब्रह्मज्ञानियों के चरणों में और आजकल के ब्राह्मसमाज के ब्रह्मज्ञानियों के चरणों में प्रणाम है।"

वेणीमाधव ने रुचिकर अच्छे से अच्छे पकवान भक्तों को खिलाये। श्रीरामकृष्ण ने भी भक्तों के साथ आनन्दपूर्वक प्रसाद पाया।

परिच्छेद १०

भक्तों के संग में

(१)

सर्कस में। गृहस्थ तथा अन्य कर्मियों की कठिन समस्या और श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण गाड़ी करके श्यामपुकुर विद्यासागर स्कूल के फाटक पर आ पहुँचे। दिन के तीन बजे का समय होगा। साथ में उन्होंने मास्टर को भी ले लिया। राखाल तथा अन्य दो एक भक्त गाड़ी में हैं। आज बुधवार, १५ नवम्बर, १८८२ ई०, शुक्ल पंचमी है। गाड़ी चितपुर रास्ते से, किले के मैदान की ओर जा रही थी।

श्रीरामकृष्ण आनन्दमय हैं। मतवाले की तरह गाड़ी से कभी इस ओर तथा कभी उस ओर मुख करके बालक की तरह देख रहे हैं और अपने आप ही बातचीत कर रहे हैं मानो पथिकों से बातें करते जाते हों। मास्टर से कह रहे हैं, "देखो सब लोगों को देखता हूँ, कैसे निम्न दृष्टि के हैं, पेट के लिए सब जा रहे हैं। ईश्वर की ओर दृष्टि नहीं है।"

श्रीरामकृष्ण आज किले के मैदान में विल्सन सर्कस देखने जा रहे हैं। मैदान में पहुँचकर टिकट खरीदी गयी। आठ आने की अर्थात् अन्तिम श्रेणी की टिकट। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को लेकर ऊँचे स्थान पर जाकर एक बेंच पर बैठे। श्रीरामकृष्ण आनन्द से कह रहे हैं, "वाह! यहाँ से बहुत अच्छा दिखता है।"

सर्कस में तरह-तरह के खेल काफी देर तक दिखाये गये।

गोलाकार रास्ते पर घोडा दौड रहा है, घोडे के पीठ पर एक पैर पर मेम खडी है। फिर बीच-बीच में सामने बडे-बडे लोहे के चक्र रखे है। चक्र के पास आकर घोडा जब उसके नीचे से दौडता है, तो मेम घोडे की पीठ मे कूदकर चक्र के बीच में से होकर फिर घोडे की पीठ पर एक पैर से खडी हो जाती है! घोडा बार-बार तेजी के साथ उस गोलाकार पथ पर दौडने लगा, मेम भी फिर उसी प्रकार पीठ पर खडी है!

सर्कस समाप्त हुआ। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ उतरकर मैदान में गाडी के पास आये। ठण्ड पड रही थी। हरे रग का शाल ओढकर मैदान में खडे-खडे बातचीत कर रहे हैं। पास ही भक्तगण खडे है। एक भक्त के हाथ मे मसाले (लौग, इलायची आदि) का एक छोटासा बटुआ है। उसमें कुछ मसाला और विशेष रूप से कवाबचीनी है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है, "देखो, मेम कैसे एक पैर के सहारे घोडे पर खडी है और घोडा तेजी से दौड रहा है। कितना कठिन काम है! अनेक दिनो तक अभ्यास किया है, तब तो ऐसा सीखा। जरा असावधान होते ही हाथ-पैर टूट जायेंगे और मृत्यु भी हो सकती है। ससार करना इसी प्रकार कठिन है। बहुत साधन-भजन करने के बाद ईश्वर की कृपा से कोई-कोई इसमें सफल हुए हैं। अधिकाश लोग असफल हो जाते हैं। ससार करने जाकर और भी बद्ध हो जाते है, और भी डूब जाते हैं। मृत्युयत्रणा होती है। जनक आदि की तरह किसी-किसी ने उग्र तपस्या के बल पर ससार किया था। इसलिए साधन-भजन की विशेष आवश्यकता है। नही तो ससार में ठीक नही रहा जा सकता।"

श्रीरामकृष्ण गाडी पर बैठे। गाडी बाग बाजार के बनुपाडा में बलराम के मकान के दरवाजे पर आ खडी हुई। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ दुमजले पर बैठकघर में जा बैठे। सायकाल है— दिया जलाया गया है। श्रीरामकृष्ण सर्कस की बातें कर रहे है। अनेक भक्त एकत्रित हुए हैं। उनके साथ ईश्वर-सम्बन्धी चर्चा हो रही है, मुख मे दूसरी कोई भी बात नहीं है, केवल ईश्वर की बात।

जाति-भेद के सम्बन्ध में चर्चा चली।

श्रीरामकृष्ण बोले—एक उपाय से जाति भेद उठ सकता है। वह उपाय है—**भक्ति**। भक्तो की जाति नहीं है। भक्ति होने से ही देह, मन, आत्मा सब शुद्ध हो जाते हैं। गौर, निताई हरि-नाम गाने लगे और चाण्डाल तक सभी को गोद में लेने लगे। भक्ति न रहने पर ब्राह्मण, ब्राह्मण नहीं है। भक्ति रहने पर चाण्डाल, चाण्डाल नहीं है। अस्पृश्य जाति भक्ति के होने पर शुद्ध, पवित्र हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण ससारबद्ध जीवो की बात कर रहे हैं। वे मानो रेशम के कीड़े हैं। चाहे तो काटकर निकल आ सकते हैं, परन्तु काफी कोशिश से रेशम का घर बनाते हैं, छोडकर आ नहीं सकते। इसी से मरते हैं। फिर मानो जाल में फँसी हुई मछली। जिस रास्ते से गयी है, उसी रास्ते से निकल सकती है, परन्तु जल की मीठी आवाज और दूसरी मछलियों के साथ खेलकूद,—इसी में भूलकर रह जाती है। बाहर निकलने की चेष्टा नहीं करती। बच्चो की अस्फुट बाते मानो जलकल्लोल का मीठा शब्द है। मछली अर्थात् जीव और परिवारवर्ग। परन्तु एक दौड मे जो भाग जाते हैं उन्हे कहते हैं, मुक्त पुरुष।

श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे है ।

"महामाया की विचित्र माया है, जिसके प्रभाव से ब्रह्मा विष्णु भी अचैतन्य है, फिर जीव की क्या बात ? बिछे हुए जाल में मछली प्रवेश करती है, पर आने-जाने का रास्ता रहते हुए भी फिर उसमे मे भाग नही सकती ।"

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, जीव मानो दाल है । चक्की में पडे है, पिस जायेगे, परन्तु जो थोडे से दाल के दाने डण्डे को पकडकर रहते हैं वे नही पिसते । इसलिए डण्डा अर्थात् ईश्वर की शरण में जाना चाहिए । उन्हे पुकारो, उनका नाम लो, तब मुक्ति होगी । नही तो काल-रूपी चक्की मे पिस जाओगे ।

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं ।

"माँ, भवसागर मे पडकर शरीर-रूपी यह नौका डूब रही है । हे शकरि, माया की आँधी और मोह का तूफान अधिकाधिक तेज हो रहा है । एक तो मनरूपी माझी अनाडी है, उस पर छ: खेवैये गँवार है । आँधी में मझधार मे आकर डूबा जा रहा हूँ । भक्ति का डाड टूट गया, श्रद्धा का पाल फट गया, नाव काबू से बाहर हो गयी, अब मै उपाय क्या करूँ ? और तो कोई उपाय नही दीखता, लाचार होकर, सोच समझकर, तरग मे तैरकर श्रीदुर्गानाम रूपी 'भेले*' को पकडता हूँ ।'

विश्वास बाबू बहुत देर से बैठे थे, अब उठकर चले गये । उनके पास काफी धन था, परन्तु चरित्र भ्रष्ट हो जाने से सारा धन उड गया । अब स्त्री, कन्या आदि किसी को नहीं देखते है । बलराम ने उनकी बात उठाने पर श्रीरामकृष्ण बोले, "वह अभागा दरिद्री है । गृहस्थ का कर्तव्य है, ऋण है, देवऋण, पितृ-

* पानी पर तैरने का एक साधन जो केले के पेडो से बनाया जाता है ।

ऋण, ऋषिऋण—फिर परिवार का ऋण है। सती स्त्री होने पर उसका पालन-पोषण, सन्तान जब तक योग्य नही बन जाते हैं, तब तक उनका पालन-पोषण करना पडता है।

"साधु ही केवल सचय नही करेगा। 'पछी और दरवेश' सचय नही करते हैं। परन्तु माघ पक्षी का बच्चा होने पर वह सचय करती है। बच्चे के लिए मुख से उठाकर खाना ले जाती है।"

बलराम—अब विश्वास बाबू की साधु-सग करने की इच्छा है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—साधु का कमण्डल चार धाम घूमकर आता है, परन्तु वैसा ही कडुआ का कडुआ रहता है। मलय की हवा जिन पेडो को लगती है वे सब चन्दन हो जाते हैं, परन्तु सेमल, बड आदि चन्दन नही बनते! कोई-कोई साधु-सग करते हैं गाजा पीने के लिए! (हँसी) साधु लोग गाजा पीते हैं, इसीलिए उनके पास आकर बैठते हैं, गाजा तैयार कर देते हैं और प्रसाद पाते हैं! (सभी हँस पडे)·

(२)

षड्भुज-दर्शन तथा श्री राजमोहन के मकान पर शुभागमन। नरेन्द्र

श्रीरामकृष्ण ने जिस दिन किलेवाले मैदान में सर्कस देखा उसके दूसरे दिन फिर कलकत्ते में शुभागमन किया था। बृहस्पतिवार, १६ नवम्बर, १८८२ ई०, कार्तिक शुक्ल षष्ठी। आते ही पहले-पहल गरानहट्टा * में षड्भुज महाप्रभु का दर्शन किया। वैष्णव साधुओं का अखाड़ा,—महन्त हैं श्री गिरिधारी दास। षड्भुज महाप्रभु की सेवा बहुत दिनो से चल रही है। श्रीरामकृष्ण ने तीसरे पहर दर्शन किया।

* वर्तमान निमतल्ला स्ट्रीट।

सायकाल के कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण शिमुलिया निवासी श्रीयुत राजमोहन के मकान पर गाडी करके आ पहुँचे। श्रीरामकृष्ण ने सुना है कि यहाँ पर नरेन्द्र आदि लडके मिलकर ब्राह्मसमाज की उपासना करते है। इसीलिए वे देखने आये हैं। मास्टर तथा और भी दो एक भक्त साथ हैं। श्री राजमोहन पुराने ब्राह्मभक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को देख आनन्दित हुए और बोले, "तुम लोगो की उपासना देखूँगा।" नरेन्द्र गाना गाने लगे। श्री प्रिय आदि लडको मे से कोई-कोई उपस्थित थे।

अब उपासना हो रही है। नवयुवकों मे से एक व्यक्ति उपासना कर रहे हैं। वे प्रार्थना कर रहे हैं—"भगवन्, सब कुछ छोड तुममें मग्न हो जाऊँ।" श्रीरामकृष्ण को देख सम्भवत उनका उद्दीपन हुआ है। इसीलिए सर्वत्याग की बात कह रहे हैं! मास्टर, श्रीरामकृष्ण के बहुत ही निकट बैठे थे। उन्होने ही केवल सुना, श्रीरामकृष्ण मृदु स्वर में कह रहे हैं, "सो तो हो चुका!"

श्री राजमोहन श्रीरामकृष्ण को जलपान के लिए मकान के भीतर ले जा रहे है।

(३)

श्री मनोमोहन तथा श्री सुरेन्द्र के मकान पर श्रीरामकृष्ण

दूसरे रविवार को (ता १९-११-१८८२) श्री जगद्धात्री पूजा है। सुरेन्द ने निमन्त्रण दिया है। वे भीतर बाहर हो रहे हैं—कब श्रीरामकृष्ण आते हैं। मास्टर को देख वे कह रहे हैं, "तुम आये हो, और वे कहाँ हैं?" इतने में ही श्रीरामकृष्ण की गाडी आ खडी हुई। पास ही श्री मनोमोहन का मकान है। श्रीरामकृष्ण पहले वहीं पर उतरे, वहाँ पर जरा विश्राम करके सुरेन्द्र

के मकान पर आयेंगे।

मनोमोहन के बैठकखाने में श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "जो असहाय, दीन, दरिद्र हैं उसकी भक्ति ईश्वर को प्यारी है, जिस प्रकार खली मिला हुआ चारा गाय को प्यारा है। दुर्योधन उतना धन, उतना ऐश्वर्य दिखाने लगा पर उसके घर पर भगवान् न गये। वे विदुर के घर गये। वे भक्तवत्सल हैं। जिस प्रकार गाय अपने बच्चे के पीछे-पीछे दौडती है, उसी प्रकार वे भी भक्तों के पीछे-पीछे दौडते हैं।"

श्रीरामकृष्ण गाने लगे। भावार्थ यह है—

"उस भाव के लिए परम योगी युगयुगान्तर तक योग करते हैं, भाव का उदय होने पर वह ऐसे ही खींच लेते हैं जैसे लोहे को चुम्बक।"

"चैतन्य देव की आँखों से कृष्ण-नाम से आँसू गिरने लगते थे। **ईश्वर ही वस्तु है, शेष सब अवस्तु।** मनुष्य चाहे तो ईश्वर को प्राप्त कर सकता है, परन्तु वह कामिनी-काचन का भोग करने में ही मग्न रहता है। सिर पर मणि रहते भी साँप मेंढक खाता रहता है।

"**भक्ति ही सार है।** ईश्वर का विचार करके भी उन्हें कौन जान सकेगा? मुझे भक्ति चाहिए। उनका अनन्त ऐश्वर्य है। उतना जानने की मुझे क्या आवश्यकता है? एक बोतल शराब से यदि नशा आ जाय तो फिर यह जानने की क्या आवश्यकता है कि कलार की दूकान में कितने मन शराब है। एक लोटा जल से मेरी तृष्णा शान्त हो सकती है। पृथ्वी में कितना जल है यह जानने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं।"

श्रीरामकृष्ण अब सुरेन्द्र के मकान पर आये हैं। आकर दुम-

जले के बैठकघर मे बैठे हैं। सुरेन्द्र के मझले भाई जज भी बैठे हैं। अनेक भक्त कमरे मे इकट्ठे हुए है। श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के भाई से कह रहे हैं, "आप जज हैं, बहुत अच्छी बात है। इतना जानियेगा सभी कुछ ईश्वर की शक्ति है। बड़ा पद उन्होंने ही दिया है तभी बना है। लोग समझते हैं, 'हम बड़े आदमी है।' छत पर का जल शेर के मुँह वाले परनाले से गिरता है। ऐसा लगता है, मानो शेर मुँह मे पानी उगल रहा है। परन्तु देखो, कहाँ का जल है। कहाँ आकाश मे बादल बना, उसका जल छत पर गिरा और उसके बाद लुढ़ककर परनाले म जा रहा है और फिर शेर के मुँह से होकर निकल रहा है।"

सुरेन्द्र के भाई— महाराज, ब्राह्मसमाज वाले स्त्री-स्वाधीनता की बात कहते हैं, और कहते हैं जाति-भेद उठा दो। यह सब आपको कैसा लगता है ?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर से नया-नया प्रेम होने पर वैसा हो सकता है। आँधी आने पर धूल उड़ती है, समझ मे नहीं आता कि कौन आम का पेड़ है और कौन इमली का। आँधी शान्त होने पर फिर समझ में आता है। नये प्रेम की आँधी शान्त होने पर धीरे-धीरे समझ मे आ जाता है कि ईश्वर ही श्रेय नित्य पदार्थ है और सभी कुछ अनित्य है। साधु-संग और तपस्या न करने पर ठीक-ठीक धारणा नहीं होती। पखावज का बोल मुँह से बोलने से क्या होगा ? हाथ पर आना बहुत कठिन है। केवल लेक्चर देने से क्या होगा ? तपस्या चाहिए, तब धारणा होगी।

"जाति-भेद ? केवल एक उपाय से जाति-भेद उठ सकता है। वह है भक्ति। भक्त की जाति नहीं है। भक्ति से अछूत भी शुद्ध हो जाता है—भक्ति होने पर चाण्डाल फिर चाण्डाल नहीं

रहता। चैतन्य देव ने चाण्डाल से लेकर ब्राह्मण तक सभी को शरण दी थी।

"ब्राह्मगण हरिनाम करते हैं, बहुत अच्छी बात है। व्याकुल होकर पुकारने पर उनकी कृपा होगी, ईश्वरलाभ होगा।

"सभी पथों से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। एक ईश्वर को अनेक नामों से पुकारते हैं। जिस प्रकार एक घाट का जल हिन्दू लोग पीते हैं, कहते हैं जल, दूसरे घाट में ईसाई लोग पीते हैं कहते हैं वाटर और तीसरे घाट में मुसलमान पीते हैं, कहते हैं पानी।'

सुरेन्द्र के भाई—महाराज, थिओसफी कैसी लगती है ?

श्रीरामकृष्ण—सुना है लोग कहते हैं कि उनसे अलौकिक शक्ति प्राप्त होती है। देव मोडोल नामक व्यक्ति के मकान पर देखा था कि एक आदमी पिशाचसिद्ध है। पिशाच कितनी ही चीजें ला देता था। अलौकिक शक्ति लेकर क्या करूँगा ? क्या उससे ईश्वर-प्राप्ति होती है ? यदि ईश्वर-प्राप्ति न हुई तो सभी मिथ्या है।

(४)

मल्लिक के ब्राह्मोत्सव में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ते में श्री मणिलाल मल्लिक के सिन्दुरिया पट्टीवाले मकान पर भक्तों के साथ शुभागमन किया है। वहाँ पर ब्राह्मसमाज का प्रति वर्ष उत्सव होता है। दिन के चार बजे का समय होगा। यहाँ पर आज ब्राह्म-समाज का वार्षिकोत्सव है। २६ नवम्बर १८८३ ई०। श्री विजयकृष्ण गोस्वामी तथा अनेक ब्राह्म भक्त और श्री प्रेमचन्द्र बड़ाल तथा गृहस्वामी के अन्य मित्रगण आये हैं। मास्टर आदि साथ हैं।

श्री मणिलाल ने भक्तो की सेवा के लिए अनेक प्रकार का आयोजन किया है। प्रह्लाद चरित्र की कथा होगी, उसके बाद ब्राह्मसमाज की उपासना होगी, अन्त म भक्तगण प्रसाद पायेंगे।

श्री विजय अभी तक ब्राह्म समाज मे ही है। वे आज की उपासना करेंगे, उन्होंने अभी तक गैरिक वस्त्र धारण नहीं किया है।

कथक महाशय प्रह्लाद-चरित्र की कथा कह रहे है। पिता हिरण्यकशिपु हरि की निन्दा करते हुए पुत्र प्रह्लाद को बार-बार क्लेशित कर रहे हैं, प्रह्लाद हाथ जोड़कर हरि से प्रार्थना कर रहे हैं और कह रहे है, "हे हरि, पिता को सद्‌बुद्धि दो।" श्रीरामकृष्ण इस बात को सुनकर रो रहे हैं। श्री विजय आदि भक्तगण श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण की भावावस्था हो गयी है।

कुछ देर बाद विजय आदि भक्तो से कह रहे हैं, "भक्ति ही सार है। उनके नामगुण का कीर्तन सदा करते-करते भक्ति प्राप्त होती है। अहा, शिवनाथ की कैसी भक्ति है! मानो, रस में पड़ा हुआ रसगुल्ला।

"ऐसा समझना ठीक नही कि मेरा धर्म ही ठीक है तथा दूसरे सभी का धर्म असत्य है। सभी पथो से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है। हृदय में व्याकुलता रहनी चाहिए। अनन्त पथ, अनन्त मत।

"देखो, **ईश्वर को देखा जा सकता है**। वेद में कहा है, 'अवाङ्मनसगोचरम्।' इसका अर्थ यह है कि वे विषयासक्त मन के अगोचर हैं। वैष्णवचरण कहा करता था, '**वे शुद्ध मन, शुद्ध**

बुद्धि द्वारा प्राप्त करने योग्य है।' * इसीलिए साधु-संग, प्रार्थना, गुरु का उपदेश — यह सब आवश्यक है। तभी तो चित्तशुद्धि होती है—तब उनका दर्शन होता है। मैले जल में निर्मली डालने से वह साफ होता है, तब मुँह देखा जाता है। मैले आइने में भी मुँह नहीं देखा जा सकता।

"चित्तशुद्धि के बाद भक्ति प्राप्त करने पर, उनकी कृपा से उनका दर्शन होता है। दर्शन के बाद 'आदेश' पाने पर तब लोक-शिक्षा दी जा सकती है। पहले से ही लेक्चर देना ठीक नहीं है। एक गाने में कहा है—'मन अकेले बैठे क्या सोच रहे हो ? क्या कभी प्रेम के बिना ईश्वर मिल सकता है ?'

"फिर कहा—'तेरे मन्दिर में माधव नहीं हैं। शंख बजाकर तूने हल्ला मचा दिया, उसमें तो ग्यारह चमगीदड़ रात-दिन रहते हैं।'

"पहले हृदय-मन्दिर को साफ करना होता है। ठाकुरजी की प्रतिमा को लाना होता है। पूजा की तैयारी करनी होती है। कोई तैयारी नहीं, भों-भों करके शंख बजाने से क्या होगा ?"

अब श्री विजय गोस्वामी वेदी पर बैठे ब्राह्म-समाज की पद्धति के अनुसार उपासना कर रहे हैं। उपासना के बाद वे श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति)— अच्छा, तुम लोगों ने उतना पाप, पाप क्यों कहा ? सौ बार मैं पापी हूँ, मैं पापी हूँ, ऐसा कहने से वैसा ही हो जाता है। ऐसा विश्वास करना चाहिए कि

---

* मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ।
बन्धाय विषयासंगि मोक्षे निर्विषयं स्मृतम् ॥
—मैत्रायणी उपनिषद्

उनका नाम लिया है—मेरा फिर पाप कैसा ? वे हमारे माँ-बाप हैं। उनसे कहो कि पाप किया है अब कभी नहीं करूँगा और फिर उनका नाम लो। उनके नाम से मिलकर देह-मन को पवित्र करो— जिह्वा को पवित्र करो।

परिच्छेद ११

भक्तों के प्रति उपदेश

(१)

बाबूराम आदि के साथ 'स्वाधीन इच्छा' के सम्बन्ध में वार्तालाप । श्री तोतापुरी का आत्महत्या का संकल्प

श्रीरामकृष्ण तीसरे प्रहर के बाद दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे के पश्चिमवाले बरामदे में वार्तालाप कर रहे हैं। साथ बाबूराम, मास्टर, रामदयाल आदि हैं। दिसम्बर १८८३ ई० । बाबूराम, रामदयाल तथा मास्टर आज रात को यहीं रहेंगे। बड़े दिनों की छुट्टी हुई है। मास्टर कल भी रहेंगे। बाबूराम नये-नये आये हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—'ईश्वर सब कुछ कर रहे हैं, यह ज्ञान होने पर मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है। केशव सेन शम्भु मल्लिक के साथ आया था। मैंने उससे कहा, वृक्ष के पत्ते तक ईश्वर की इच्छा के बिना नहीं हिलते। 'स्वाधीन इच्छा' कहाँ ? सभी ईश्वर के अधीन हैं। नंगा * उतने बड़े ज्ञानी थे जो, वे भी पानी में डूबने गये थे ! यहाँ पर ग्यारह महीने रहे। पेट की पीड़ा हुई, रोग की यन्त्रणा से घबड़ाकर गंगा में डूबने गये थे। घाट के पास काफी दूर तक जल कम था। जितना ही आगे बढ़ते हैं, घुटने भर से अधिक जल नहीं मिलता। तब उन्होंने समझा, समझकर लौट आये। एक बार अत्यन्त अधिक बीमारी

* श्री तोतापुरी (श्रीरामकृष्णदेव के वेदान्त-साधना के गुरु) नागा-सम्प्रदाय के होने के कारण श्रीरामकृष्ण उन्हें 'नंगा' कहते थे।

के कारण मैं बहुत ही जिद्दी हो गया था। इसलिए गले में छुरी लगाने चला था। इसलिए कहता हूँ माँ मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री, मैं रथ हूँ, तुम रथी, जैसा चलाती हो वैसा ही चलता हूँ—जैसा कराती हो वैसा ही करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण के कमरे में गाना हो रहा है। भक्तगण गाना गा रहे हैं, उसका भावार्थ इस प्रकार है —

(१) 'हे कमलापति, यदि तुम हृदय-रूपी वृन्दावन में निवास करो तो हे भक्तिप्रिय, मेरी भक्ति बनेगी राधा बनेगी। मुक्ति की मेरी कामना गोप-नारी बनेगी। देह नन्द की नगरी बनेगी और प्रीति माँ यशोदा बन जायेगी। हे जनार्दन, मेरे पापसमूहरूपी गोवर्धन को धारण करो, इस समय काम-आदि कंस के छः चरों को विनष्ट करो। कृपा की बंसरी बजाते हुए मेरे मनरूपी गाय को वशीभूत कर मेरे हृदयरूपी चरागाह में निवास करो। मेरी इस कामना को पूर्ति करो, यही प्रार्थना है, इस समय मेरे प्रेमरूपी यमुना के तट पर आशारूपी वट के नीचे कृपा करके प्रकट होकर निवास करो। यदि कहो कि गोपालों के प्रेम में बन्दी होकर व्रजधाम में रहता हूँ, तो यह अज्ञानी 'दाशरथी' तुम्हारा गोपाल, तुम्हारा दास बनेगा।"

(२) 'हे मेरे प्राणरूपी पिंजरे के पक्षी, गाओ न। ब्रह्मरूपी कल्पतरु पर वह पक्षी बैठता है। हे विभुगण, गाओ न (गाओ, गाओ)। और साथ ही धर्म, अर्थ, काम, मोक्षरूपी पके फलों को खाओ न।"

नन्दन बाग के श्रीनाथ मित्र अपने मित्रों के साथ आये हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखकर कहते हैं, "यह देखो, इनकी आँखों में से भीतर का सब कुछ दिखाई पड रहा है, खिड़की के काँच में

से जिस प्रकार कमरे के भीतर की सभी चीजें देखी जाती हैं।"
श्रीनाथ, यज्ञनाथ ये लोग नन्दन बाग के ब्राह्मपरिवार के हैं। इनके मकान पर प्रतिवर्ष ब्राह्म-समाज का उत्सव होता था। बाद में श्रीरामकृष्ण उत्सव देखने गये थे।

सायकाल के बाद मन्दिर में आरती होने लगी। कमरे में छोटी खटिया पर बैठकर श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन कर रहे हैं। धीरे-धीरे भावमग्न हो गये। भाव शान्त होने पर कहते हैं, माँ, उसे भी खींच लो। वह इतने दीन भाव से रहता है, तुम्हारे पास आना जाना कर रहा है।

श्रीरामकृष्ण भाव में क्या बाबूराम की बात कह रहे हैं? बाबूराम मास्टर, रामदयाल आदि बैठे हैं। रात के ८-९ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण समाधि-तत्त्व समझा रहे हैं। जड समाधि चेतन समाधि, स्थित समाधि, उन्मना समाधि।

सुख-दुःख की बात चल रही है। ईश्वर ने इतना दुःख क्यों बनाया?

मास्टर—विद्यासागर प्रेमकोप से कहते हैं, "ईश्वर को पुकारने की और क्या आवश्यकता है? देखो, चंगेजखाँ ने जिस समय लूटमार करना आरम्भ किया था उस समय उसने अनेक लोगों को बन्द कर दिया था। धीरे-धीरे करीब एक लाख कैदी इकट्ठे हो गये। तब सेनापतियों ने आकर कहा, 'हुजूर, इन्हें खिलायेगा कौन? इन्हें साथ रखने पर भी हमारे लिए विपत्ति है। क्या किया जाय? छोड़ने पर भी विपत्ति है।' उस समय चंगेजखाँ ने कहा, 'तो फिर क्या किया जाय? उनका वध कर डालो।' इसलिए कचाकच काट डालने का आदेश हो गया। इस हत्याकाण्ड को तो ईश्वर ने देखा। कहाँ, जरा मना भी तो नहीं

किया। वे तो सो रहे हैं। मुझे उनकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। मेरा तो कोई भला न हुआ!"

श्रीरामकृष्ण—क्या ईश्वर का काम समझा जाता है कि वे किस उद्देश से क्या करते हैं? वे सृष्टि, पालन, संहार सभी कर रहे हैं। वे क्यों संहार कर रहे हैं, हम क्या समझ सकते हैं? मैं कहता हूँ, माँ मुझे समझने की आवश्यकता भी नहीं है। बस, अपने चरण-कमल मे भक्ति दो। मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है इसी भक्ति को प्राप्त करना। और माँ सब जानती है। बगीचे में आम खाने को आया हूँ, कितने पेड, कितनी शाखाएँ, कितने करोड पत्ते है यह सब हिसाब करने से मुझे क्या मतलब? मैं आम खाता हूँ, पेड और पत्तों के हिसाब से मेरा क्या सम्बन्ध?

आज रात में बाबूराम, मास्टर और रामदयाल श्रीरामकृष्ण के कमरे मे जमीन पर सोये।

आधी रात, दो तीन बजे का समय होगा, श्रीरामकृष्ण के कमरे मे बत्ती बुझ गयी है। वे स्वयं बिस्तर पर बैठे बीच-बीच मे भक्तो के साथ बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि भक्तों के प्रति)—देखो, दया और माया ये दो पृथक्-पृथक् चीजें है। माया का अर्थ है, आत्मीयो के प्रति ममता—जैसे बाप, माँ, भाई, बहिन, स्त्री, पुत्र इन पर प्रेम। दया का अर्थ है सब भूतो मे प्रेम, समदृष्टि। किसी में यदि दया देखो, जैसे विद्यासागर में, तो उसे ईश्वर की दया जानो। दया से सर्व भूतो की सेवा होती है। माया भी ईश्वर की दया ही है। माया द्वारा वे आत्मीयो की सेवा करा लेते है, परन्तु इसमें एक बात है। माया अज्ञानी बनाकर रखती है और बद्ध बनाती है, परन्तु दया से चित्तशुद्धि होती है और धीरे-धीरे

बन्धन-मुक्ति होती है। चित्तशुद्धि हुए बिना भगवान् का दर्शन नहीं होता। काम, क्रोध, लोभ, इन सब पर विजय प्राप्त करने से उनकी कृपा होती है, उनका दर्शन होता है। तुम लोगों को बहुत ही गुप्त बातें बता रहा हूँ। काम पर विजय प्राप्त करने के लिए मैंने बहुत कुछ किया था। मेरी १०–११ वर्ष की उम्र में, जब मैं उस देश में था, उस समय वह स्थिति—समाधि की स्थिति—प्राप्त हुई थी। मैदान में से जाते-जाते जो कुछ देखा उससे मैं विह्वल हो पड़ा था। ईश्वर-दर्शन के कुछ लक्षण हैं। ज्योति देखने में आती है, आनन्द होता है, हृदय के बीच में गुड़-गुड़ करके महावायु उठती है।

दूसरे दिन बाबूराम, रामदयाल घर लौट गये। मास्टर ने वह दिन और रात्रि श्रीरामकृष्ण के साथ बितायी। उस दिन उन्होंने मन्दिर में ही प्रसाद पाया।

(२)

दक्षिणेश्वर में मारवाड़ी भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण

तीसरा पहर बीत गया है। मास्टर तथा दो-एक भक्त बैठे हैं। कुछ मारवाड़ी भक्तों ने आकर प्रणाम किया। वे कलकत्ते में व्यापार करते हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण से कहा, "आप हमें कुछ उपदेश दीजिए।" श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मारवाड़ी भक्तों के प्रति)—देखो, 'मैं और मेरा' दोनों अज्ञान हैं। 'हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और यह सब तुम्हारा है' इसका नाम ज्ञान है। और 'मेरा' क्योंकर कहोगे? बगीचे का मैनेजर कहता है, 'मेरा बगीचा,' परन्तु कोई अपराध करने पर मालिक उसे निकाल देता है। उस समय ऐसा साहस नहीं होता कि वह आम की लकड़ी का बना खाली सन्दूक भी

बगीचे से बाहर ले जाय ! काम, क्रोध आदि जाने के नहीं । ईश्वर की ओर उनका मुँह घुमा दो । कामना, लोभ करना हो तो ईश्वर को पाने के लिए कामना, लोभ करो । विचार करके उन्हें भगा दो । हाथी जब दूसरों के केले के पेड़ खाने जाता है, तो महावत उसे अंकुश मारता है ।

"तुम लोग तो व्यापार करते हो । जानते हो कि धीरे-धीरे उन्नति करनी होती है । कोई पहले अण्डी पीसने की घानी खोलता है और फिर अधिक धन होने पर कपड़े की दूकान खोलता है । इसी प्रकार ईश्वर के पथ में आगे बढ़ना पड़ता है । बने तो बीच-बीच में कुछ दिन निर्जन में रहकर उन्हें अच्छी तरह से पुकारो ।"

'फिर भी जानते हो ? समय न होने पर कुछ नहीं होता । किसी-किसी का भोग-कर्म काफी बाकी रह जाता है । इसीलिए देरी होती है । फोड़ा कच्चा रहते चीरने पर हानि पहुँचाता है । पककर जब मुँह निकलता है, उस समय डॉक्टर चीरता है । लड़के ने कहा था, 'माँ अब मैं सोता हूँ । जब मुझे शौच लगे तो तुम जगा देना ।' माँ ने कहा, 'बेटा, शौच लगने पर तुम खुद ही उठ जाओगे ! मुझे उठाना न पड़ेगा ।" (सब हँसते हैं)

मारवाड़ी भक्तगण बीच-बीच में श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए मिठाई, फल आदि लाते हैं । परन्तु श्रीरामकृष्ण साधारणतः उन चीजों का सेवन नहीं करते । कहते हैं, वे लोग अनेक झूठी बातें कहकर धन कमाते हैं, इसलिए उपस्थित मारवाड़ियों को वार्तालाप के बहाने उपदेश दे रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण—देखो, व्यापार करने में सत्य बात की टेक नहीं रहती । व्यापार में तेजी-मन्दी होती रहती है । नानक की कहानी है, उन्होंने कहा, 'असाधु की चीजें खाने गया तो मैंने देखा कि वे

सब खून मे लयपय हो गयी है!'

"साधु को शुद्ध चीज देनी चाहिए। मिथ्या उपाय से प्राप्त की हुई चीजें नही देनी चाहिए। सत्य पथ द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है।*

"सदा उनका नाम लेना चाहिए। काम के समय मन को उनके हवाले कर देना चाहिए। जिस प्रकार मेरी पीठ पर फोडा हुआ है, सभी काम कर रहा हूँ, परन्तु मन फोडे मे ही है। रामनाम लेना अच्छा है, जो राम दशरथ का बेटा है, जिन्होंने जगत् की सृष्टि की है, जो सर्व भूतो में है और अत्यन्त निकट भी है, वे ही भीतर और बाहर हैं।

"वही राम दशरथ का बेटा, वही राम घट-घट म लेटा।
वही राम जगत पसेरा, वही राम सब से न्यारा॥"

(३)

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नाय भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽय पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥
गीता २।२०

श्री विजय गोस्वामी तथा अन्य ब्राह्मभक्तों के प्रति उपदेश

दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर में श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी भगवान् श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आये हैं। उनके साथ तीन-चार ब्राह्मभक्त भी हैं। अगहन की शुक्ला चतुर्थी है। बृहस्पतिवार, १४ दिसम्बर १८८५। श्रीरामकृष्णदेव के परम भक्त बलराम

---

* सत्येन लभ्यस्तपसाह्येष आत्मा। सम्यक् ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
—मुण्डकोपनिषद, ३।१।५

सत्यमेव जयते नानृतम्।—मुण्डकोपनिषद, ३।१।६

बाबू के साथ ये लोग कलकत्ते से नाव पर चढकर आये है। श्रीरामकृष्ण दोपहर को जरा विश्राम कर रहे हैं। उनके पास रविवार को भीड ज्यादा होती है। ये भक्त उनसे एकान्त मे बात-चीत करना चाहते हैं, इसलिए प्राय दूसरे ही समय मे आते है।

श्रीरामकृष्ण अपने तख्त पर बैठे हुए है, विजय, बलराम, मास्टर और दूसरे भक्त उनकी ओर मुंह करके पश्चिमास्य बैठे है।

इस समय विजय साधारण ब्राह्मसमाज म आचार्य की नौकरी करते है, इसलिए अपनी इच्छा के अनुसार कुछ नही कह सकते। सर्वदा नौकरी का ध्यान रखना पडता है। विजय का जन्म एक पवित्र और अत्यन्त उच्च कुल मे हुआ है। भगवान् श्री चैतन्य-देव के एक प्रधान पार्षद, निराकार परब्रह्म की चिन्ता म लीन रहने वाले अद्वैत गोस्वामी विजय के पूर्वपुरुष है, अतएव पवित्र रक्त की धारा अब तक विजय की देह में प्रवाहित हो रही है। भगवत्प्रेम का अकुर प्रकाशोन्मुख है, केवल समय की प्रतीक्षा कर रहा है। भगवान् श्रीरामकृष्ण की भगवत्प्रेम की अपूर्व अवस्था को वे मन्त्रमुग्ध सर्प की तरह टकटकी लगाये देख रहे हैं। श्रीराम-कृष्ण देव को नाचते हुए देखकर स्वय भी नाचने लग जाते हैं।

विष्णु 'एडेदय' में रहता था। उसने गले में छुरा लगाकर आत्महत्या कर ली। आज उसी की चर्चा हो रही है।

श्रीरामकृष्ण—देखो, इस लडके ने आत्महत्या कर ली, जब से यह सुना, मन खराब हो रहा है। यहाँ आता था, स्कूल में पढता था, कहता था—ससार अच्छा नही लगता। पश्चिम चला गया था, किसी आत्मीय के यहाँ कुछ दिन ठहरा था। वहाँ निर्जन वन में, मैदान में, पहाड में बैठा हुआ ध्यान करता था। उसने मुझसे कहा था, न जाने ईश्वर के कितने रूपो के दर्शन करता हूँ।

"जान पड़ता है, यह अन्तिम जन्म था। पूर्वजन्म में बहुत कुछ काम उसने कर डाला था। कुछ बाकी रह गया था, वह भी जान पड़ता है इस जन्म में पूरा हो गया।

"पूर्वजन्म का संस्कार मानना चाहिए। मैंने सुना है, एक मनुष्य शवसाधना कर रहा था। घने जंगल में भगवती की आराधना करता था। परन्तु वह अनेक प्रकार की विभीषिकाएँ देखने लगा। अन्त को उसे बाघ पकड़ ले गया। वहीं एक और आदमी बाघ के भय से पास के एक पेड़ पर बैठा हुआ था। शव तथा पूजा की अनेक सामग्रियाँ इकट्ठी देखकर वह उतर पड़ा और आचमन करके शव के ऊपर बैठ गया। कुछ जप करते ही माँ प्रकट होकर बोली, मैं तुम पर प्रसन्न हूँ—तू वर माँग। माता के पादपद्मों में प्रणत होकर वह बोला—माँ, एक बात पूछता हूँ तुम्हारा कार्य देखकर बड़ा आश्चर्य होता है। उस मनुष्य ने इतनी मेहनत की, इतना आयोजन किया, इतने दिनों से तुम्हारी साधना कर रहा था, उस पर तो तुम्हारी कृपा न हुई, और तुम मुझ पर हुई जो भजन-साधन-ज्ञान-भक्ति आदि कुछ नहीं जानता।' हँसकर भगवती बोलीं—'बेटा, तुम्हें जन्मान्तर की बात याद नहीं है। तुम जन्म-जन्म से मेरे लिए तपस्या कर रहे हो। उसी साधना-बल से इस प्रकार सब कुछ तैयार पाया और तुम्हें मेरे दर्शन भी मिले। अब कहो, क्या वर चाहते हो?'"

एक भक्त बोल उठे, "आत्महत्या की बात सुनकर भय लगता है।'"

श्रीरामकृष्ण—आत्महत्या करना महापाप है, घूम-फिरकर संसार में आना पड़ता है, और फिर वही संसार-दुःख भोगना पड़ता है।

"परन्तु यदि कोई ईश्वर-दर्शन के बाद शरीर त्याग दे, तो उसे आत्महत्या नहीं कहते। उस प्रकार के शरीर-त्याग में दोष नहीं है। ज्ञानलाभ के बाद कोई-कोई शरीर छोड़ देते हैं। जब मिट्टी के साँचे में सोने की मूर्ति ढल जाती है, तब मिट्टी का साँचा चाहे कोई रखे, चाहे तोड़ दे।

"कई वर्ष हो गये, बराहनगर से एक लड़का आता था, उम्र कोई बीस साल की होगी। नाम गोपाल सेन था। जब यहाँ आता था तब उसको इतना भाव हो जाता था कि हृदय (श्रीरामकृष्ण के भानजे) को उसे पकड़ रखना पड़ता था कि कहीं गिरकर उसके हाथ-पैर न टूट जायँ।

उस लड़के ने एक दिन एकाएक मेरे पैरों पर हाथ रख कहा—'और मैं न आ सकूँगा—तो अब मैं चला।' कुछ दिन बाद सुना कि उसने देह छोड़ दी।"

(४)

अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् ॥ गीता, ९।३३

जीव के चार दर्जे। बद्ध जीव के लक्षण। कामिनी-कांचन

श्रीरामकृष्ण—जीव चार दर्जे के कहे गये हैं—बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य। संसार की उपमा जाल से है और जीव की मछली से। ईश्वर (जिनकी माया यह संसार है) मछुए हैं। जब मछुए के जाल में मछलियाँ पड़ती हैं, तब कुछ मछलियाँ जाल चीरकर भागने की कोशिश करती हैं। उन्हें मुमुक्षु जीव कहना चाहिए। जो भागने की चेष्टा करती हैं उनमें से सभी नहीं भाग सकतीं। दो-चार मछलियाँ ही धड़ाम से कूदकर भाग जाती हैं। तब लोग कहते हैं, वह बड़ी मछली निकल गयी। ऐसे ही दो-चार मनुष्य मुक्त जीव हैं। कुछ मछलियाँ स्वभावतः ऐसी सावधानी

से रहती हैं कि कभी जाल में आती ही नहीं। नारदादि नित्य जीव कभी संसार-जाल में नहीं फँसते। परन्तु प्रायः अधिकतर मछलियाँ जाल में पड़ जाती हैं, उन्हें होश नहीं कि जाल में पड़ी हैं, अब मरना होगा। जाल में पड़ते ही जाल सहित इधर से उधर जाती हैं, कभी कीच में देह छिपाना चाहती हैं। भागने की कोई चेष्टा नहीं, बल्कि कीच में और गड़ जाती हैं। यही बद्ध जीव हैं। बद्ध जीव संसार में अर्थात् कामिनी-कांचन में फँसे हुए हैं, कलंकसागर में मग्न हैं, और सोचते हैं कि बड़े आनन्द में हैं! जो मुमुक्षु या मुक्त हैं संसार उन्हें कूप जान पड़ता है, अच्छा नहीं लगता, इसीलिए कोई-कोई ज्ञानलाभ हो जाने पर शरीर छोड़ देते हैं, परन्तु इस तरह का शरीर-त्याग बड़ी दूर की बात है।

बद्ध जीवों—संसारी जीवों को किसी तरह होश नहीं होता। कितना दुःख पाते हैं, कितना धोखा खाते हैं, कितनी विपदाएँ झेलते हैं, फिर भी बुद्धि ठिकाने नहीं होती।

"ऊँट कँटीली घास को बहुत चाव से खाता है। परन्तु जितना ही खाता है उतना ही मुँह से धर-धर खून गिरता है, फिर भी कँटीली घास को खाना नहीं छोड़ता! संसारी मनुष्यों को इतना शोकताप मिलता है, किन्तु कुछ दिन बीते कि सब भूल गये। बच्चे की वही माँ जो मारे शोक के अधीर हो रही थी, कुछ दिन बीत जाने पर फिर बाल सँवारती, जूड़ा बाँधती और आभूषणों से सजती है। इसी तरह मनुष्य बेटी के ब्याह में कुल धन गँवा बैठता है, परन्तु हर साल बेटियों को पैदा करने में घाटा नहीं होने देता! मुकदमेबाजी से घर में एक कौड़ी नहीं रह जाती तो भी मुकदमे के लिए लोटा-डोर ढोते फिरते हैं! जितने लड़के

पैदा हुए हैं, अच्छा भोजन, अच्छे कपड़े, अच्छा घर, उन्हीं को नहीं मिलता, ऊपर से हर साल एक और पैदा होता है !

"कभी-कभी तो 'साँप छछूँदर' वाली गति होती है। न निगल सके, न उगल सके, बद्ध जीव कभी समझ भी गया कि संसार में कुछ है नहीं, सिर्फ गुठली चाटना है, तो भी वह उसे नहीं छोड़ सकता, ईश्वर की ओर मन नहीं ले जा सकता।

"केशव सेन के एक आत्मीय को देखा, उम्र कोई पचास साल की थी, पर ताश खेल रहा था ! मानो ईश्वर का नाम लेने का समय नहीं आया।

"बद्ध जीव का एक और लक्षण है। यदि उसको संसार से हटाकर किसी अच्छी जगह पर ले जाओ, तो वह तड़प-तड़पकर मर जायगा। विष्ठा के कीट को विष्ठा ही में आनन्द मिलता है। उसी से वह हृष्टपुष्ट होता है। उस कीट को अगर अन्न की हाँड़ी में रख दो तो वह मर जायगा। (सब स्तब्ध)

(५)

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते॥ गीता, ६।३५

तीव्र वैराग्य तथा बद्ध जीव

विजय—बद्ध जीवों के मन की कैसी अवस्था हो तो मुक्ति हो सकती है ?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर की कृपा से तीव्र वैराग्य होने पर इस कामिनी-कांचन की आसक्ति से निस्तार हो सकता है। जानते हो तीव्र वैराग्य किसे कहते हैं ? 'बनत-बनत बनि जाई,' 'चलो राम भजो,' यह सब मन्द वैराग्य है। जिसे तीव्र वैराग्य होता है उसके प्राण भगवान् के लिए व्याकुल रहते हैं, जैसे अपनी कोख के बच्चे

के लिए माँ व्याकुल रहती है। जिसको तीव्र वैराग्य होता है वह भगवान् को छोड़ और कुछ नहीं चाहता। संसार को वह कुआँ समझता है उसे जान पड़ता है कि अब डूबा। आत्मीयों को वह काला नाग देखता है, उनके पास से उसकी भागने की इच्छा होती है और भागता भी है। 'घर का काम पूरा कर लें तब ईश्वर की चिन्ता करेंगे,' यह उसके मन में आता ही नहीं, भीतर बड़ी जिद् रहती है।

"तीव्र वैराग्य किसे कहते हैं, इसकी एक कहानी सुनो। किसी देश में एक बार वर्षा कम हुई। किसान नालियाँ काट-काटकर दूर से पानी लाते थे। एक किसान बड़ा हठी था। उसने एक दिन शपथ ली कि जब तक पानी न आने लगे, नहर से नाली का योग न हो जाय, तब तक बराबर नाली खोदूँगा। इधर नहाने का समय हुआ। उसकी स्त्री ने लड़की को उसे बुलाने भेजा। लड़की बोली, पिताजी, दोपहर हो गयी, चलो तुमको माँ बुलाती हैं। उसने कहा, तू चल, हमें अभी काम है। दोपहर ढल गयी, पर वह काम पर डटा रहा। नहाने का नाम न लिया। तब उसकी स्त्री खेत में जाकर बोली, 'नहाओगे कि नहीं? रोटियाँ ठंडी हो रही हैं। तुम तो हर काम में हठ करते हो। काम कल करना या भोजन के बाद करना।' गालियाँ देता हुआ कुदार उठाकर किसान स्त्री को मारने दौड़ा। बोला, तेरी बुद्धि मारी गयी है क्या? देखती नहीं कि पानी नहीं बरसता, खेती का काम सब पड़ा है, अब की बार लड़के-बच्चे क्या खायेंगे? सब को भूखों मरना होगा। हमने यही ठान लिया है कि खेत में पहले पानी लायेंगे, नहाने-खाने की बात पीछे होगी। मामला टेढ़ा देखकर उसकी स्त्री वहाँ से लौट पड़ी। किसान ने दिन भर

जो तोड़ मेहनत करके शाम के समय नहर के साथ नाली का योग कर दिया। फिर एक किनारे बैठकर देखने लगा, किस तरह नहर का पानी खेत में 'कलकल' स्वर में बहता हुआ जा रहा है, तब उसका मन शान्ति और आनन्द से भर गया। घर पहुँचकर उसने स्त्री को बुलाकर कहा, ले आ अब डोल और रस्सी। स्नान-भोजन करके निश्चिन्त होकर फिर वह सुख से खर्राटे लेने लगा। जिद् यह है और यही तीव्र वैराग्य की उपमा है।

खेत में पानी लाने के लिए एक और किसान गया था। उसकी स्त्री जब गयी और बोली,—धूप बहुत हो गयी, चलो अब, इतना काम नहीं करते, तब वह चुपचाप कुदार एक ओर रखकर बोला—अच्छा, तू कहती है तो चल। (सब हँसते हैं) वह किसान खेत में पानी न ला सका। यह मन्द वैराग्य की उपमा है।

"हठ बिना जैसे किसान खेत में पानी नहीं ला सकता, वैसे ही मनुष्य ईश्वरदर्शन नहीं कर सकता।"

(६)

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत् कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी॥

गीता, २।७०

कामिनी-कांचन के लिए दासत्व

श्रीरामकृष्ण—पहले तुम इतना आते थे पर अब क्यों नहीं आते?

विजय—यहाँ आने की बड़ी इच्छा रहती है, परन्तु अब मैं स्वाधीन नहीं हूँ, ब्राह्म-समाज में नौकरी करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—कामिनी-कांचन जीव को बाँध लेते हैं। जीव की स्वाधीनता चली जाती है। कामिनी ही से कांचन की

आवश्यकता होती है जिनके लिए दूसरों की गुलामी की जाती है, फिर स्वाधीनता नहीं रहती, फिर तुम अपने मन का काम नहीं कर सकते।

"जयपुर में गोविन्दजी के पुजारी पहले पहल अपना विवाह नहीं करते थे। तब वे बड़े तेजस्वी थे। एक बार राजा के बुलाने पर भी वे नहीं गये और कहा—राजा ही को आने को कहो। फिर राजा और पंचों ने मिलकर उनका विवाह करा दिया, तब राजा से साक्षात् करने के लिए किसी को बुलाना नहीं पड़ा। वे खुद हाजिर होते थे। कहते 'महाराज, आशीर्वाद देने आये हैं, धारण कीजिये।' आज घर बनवाना है, आज लड़के का 'अन्न-प्राशन' है, आज लड़के का पाठशाला जाने का शुभ मुहूर्त है, इन्हीं कारणों से आना पड़ता है।

"बारह सौ 'नगन' और तेरह सौ 'भगनिन'—वाली कहावत तो जानते हो न ? नित्यानन्द गोस्वामी के पुत्र वीरभद्र के तेरह सौ 'भगत' शिष्य थे। जब वे सिद्ध हो गये तब वीरभद्र डरे। वे सोचने लगे कि ये सब के सब सिद्ध हो गये, लोगों को जो कह देंगे वही होगा, जिधर से निकलेंगे वहीं भय है, क्योंकि मनुष्य बिना जाने यदि कोई अपराध कर डालेंगे तो उनका अहित होगा। यह सोचकर वीरभद्र ने उन्हें बुलाकर कहा, तुम गंगातट से सन्ध्या-उपासना करके हमारे पास आओ। 'भगत' सब ऐसे तेजस्वी थे कि ध्यान करते ही करते समाधिमग्न हो गये। कब ज्वार का पानी सिर से बह गया, इसकी उन्हें खबर ही नहीं। भाटा हो गया, तथापि ध्यानभंग न हुआ। तेरह सौ भगतों में से एक सौ समझ गये थे कि वीरभद्र क्या कहेंगे। आचार्य की बात को टालना नहीं चाहिए, अतएव वे तो खिसक गये, वीरभद्र से

साक्षात् नहीं किया, रहे बारह सौ भगत, वे वीरभद्र के पास लौटकर आये। वीरभद्र बोले, ये तेरह सौ भगतिन तुम्हारी सेवा करेंगी, तुम लोग इनमे विवाह करो। शिष्यो ने कहा, जैसी आप की आज्ञा, परन्तु हममे से एक सौ न जाने कहाँ चले गये। उन बारह सौ भगतो के साथ एक-एक सेवादासी रहने लगी। फिर उनका वह तेज, वह तपस्या-बल न रह गया। स्त्री के साथ रहने के कारण वह बल जाता रहा, क्योकि उसके साथ स्वाधीनता नही रह जाती। (विजय से) तुम लोग स्वय यह देखते हो, दूसरो का काम करते हुए क्या हो रहे हो। और देखो, इतने पासवाले कितने अंग्रेजी के पण्डित नौकरी करके सुबह-शाम मालिको के बूट की ठोकरे खाते हैं। इसका कारण केवल 'कामिनी' है। विवाह करके यह हरी-भरी दुनिया उजाडने की इच्छा नहीं होती। इसीलिए यह अपमान, दासता की यह इतनी मार!

"यदि एक बार उस प्रकार के तीव्र वैराग्य से भगवान् मिल जायँ तो फिर स्त्रियो के प्रति आसक्ति नही रह जाती। घर में रहने से भी स्त्री की लालसा नही होती, फिर उससे कोई भय नहीं रहता। यदि एक चुम्बक-पत्थर बडा हो और एक छोटा, तो लोहे को कौन खीच सकता है? बडा ही खींच सकता है। बडा चुम्बक-पत्थर ईश्वर हैं और कामिनी छोटा चुम्बक-पत्थर है। तो भला कामिनी क्या कर सकेगी?"

एक भक्त—महाराज, स्त्रियो से घृणा करे?

श्रीरामकृष्ण—जिन्होने ईश्वरलाभ कर लिया है, वे स्त्रियो को ऐसी दृष्टि से नहीं देखते, जिससे भय हो। वे यथार्थ देखते हैं कि स्त्रियो म ब्रह्ममयी माता का अश है, और उन्हे माता जानकर उनकी पूजा करते हैं। (विजय से) तुम कभी-कभी

आया करो, तुम्हें देखने की बड़ी इच्छा होती है।

(७)

ईश्वरादेश के बाद आचार्य पद

विजय—ब्राह्मसमाज का काम करना पड़ता है, इसलिए हर समय नहीं आ सकता। अवकाश मिलने पर आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण (विजय से)—देखो, आचार्य का काम बड़ा कठिन है। ईश्वर का प्रत्यक्ष आदेश पाये बिना लोकशिक्षा नहीं दी जा सकती।

'यदि आदेश पाये बिना ही उपदेश दिया जाय तो लोग उस ओर ध्यान नहीं देते, उस उपदेश में कोई शक्ति नहीं रहती। पहले साधना करके या जिस तरह हो ईश्वर को प्राप्त करना चाहिए। उनकी आज्ञा मिलने पर फिर लेक्चर दिया जा सकता है। उस देश (श्रीरामकृष्ण अपनी जन्मभूमि को 'वह देश' कहते थे) में 'हलदारपुकुर' नाम का एक तालाब है। उसके बाँध पर लोग शौच के लिए जाते थे। जो लोग घाट पर जाते थे, वे उन्हें खूब गालियाँ देते थे, खूब गुलगपाड़ा मचाते थे, परन्तु गालियों से कोई काम न होता था। दूसरे दिन फिर वही हालत होती थी। अन्त को कम्पनी के चपरासी नोटिस लटका गये कि शौच के लिए जाने की सख्त मनाही है, न मानने वाले को सजा दी जायगी। इस नोटिस के बाद फिर वहाँ कोई शौच के लिए नहीं जाता था।

"उनके आदेश के बाद कहीं भी आचार्य हुआ जा सकता है। जिसको उनका आदेश मिलता है, उसे उनकी शक्ति भी मिलती है, तब वह आचार्य का कठिन काम कर सकता है।

"एक बड़े जमींदार से उसकी एक प्रजा मुकदमा लड़ रही थी। तब लोग समझ गये कि उस प्रजा के पीछे कोई जोरदार आदमी

है, सम्भव है कि कोई बड़ा जमींदार ही उसकी ओर से मुकदमा चला रहा हो। मनुष्य साधारण जीव है, ईश्वर की शक्ति के बिना आचार्य जैसा कठिन काम वह नहीं कर सकता।"

विजय—महाराज, ब्राह्म समाज में जो उपदेश दिये जाते हैं, क्या उनसे लोककल्याण नहीं होता ?

श्रीरामकृष्ण—मनुष्य में वह शक्ति कहाँ कि वह दूसरे को संसारबन्धन से मुक्त कर सके ? यह भुवनमोहिनी माया जिनकी है वे ही इस माया से मुक्त कर सकते हैं। सच्चिदानन्द गुरु को छोड़ और दूसरी गति नहीं है। जिनको ईश्वर-दर्शन नहीं हुआ, उनका आदेश नहीं मिला, जो ईश्वर की शक्ति से शक्तिशाली नहीं हैं, उनकी क्या मजाल जो जीवों का भवबन्धन-मोचन कर सकें ?

"मैं एक दिन पंचवटी के निकट झाऊतल्ले की ओर गया था। एक मेंढक की आवाज सुनी। बढ़कर देखा तो कौड़ियाला साँप उसको पकड़े हुए था, न छोड़ सकता था, न निगल सकता था, उस मेंढक की भी भवव्यथा दूर नहीं होती थी। तब मैंने सोचा कि यदि इसको कोई असल साँप पकड़ता तो तीन ही पुकार में इसको चुप हो जाना पड़ता। इस कौड़ियाले ने पकड़ा है, इसीलिए साँप की भी दुर्दशा है और मेंढक की भी !

'यदि सद्गुरु हो तो जीव का अहंकार तीन ही पुकार में दूर होता है। गुरु कच्चा हुआ तो गुरु की भी दुर्दशा है और शिष्य की भी। शिष्य का अहंकार दूर नहीं होता, न उसके भवबन्धन की फाँस ही कटती है। कच्चे गुरु के पल्ले पड़ा तो शिष्य मुक्त नहीं होता।"

(८)

अहंकारविमूढात्मा कर्ताहं इति मन्यते ।—गीता

अहंबुद्धि का नाश और ईश्वर-दर्शन

विजय—महाराज, हम लोग इस तरह बद्ध क्यों हो रहे हैं ? ईश्वर को क्यों नहीं देख पाते ?

श्रीरामकृष्ण—जीव का अहंकार ही माया है। यही अहंकार कुल आवरणों का कारण है। 'मैं' मरा कि बला टली। यदि ईश्वर की कृपा से 'मैं अकर्ता हूँ,' यह ज्ञान हो गया तो वह मनुष्य तो जीवन्मुक्त हो गया। फिर उसे कोई भय नहीं।

"यह माया या 'अहं' मेघ की तरह का एक छोटा सा ही टुकड़ा क्यों न हो, पर उसके कारण सूर्य नहीं दीख पड़ते। उसके हट जाने से ही सूर्य दीख पड़ते हैं। यदि श्रीगुरु की कृपा से एक बार अहंबुद्धि दूर हो जाय तो फिर ईश्वर-दर्शन होते हैं।

"सिर्फ ढाई हाथ की दूरी पर श्रीरामचन्द्र हैं, जो साक्षात् ईश्वर हैं। बीच में सीतारूपिणी माया का पर्दा पड़ा हुआ है, जिसके कारण लक्ष्मणरूपी जीव को ईश्वर के दर्शन नहीं होते। यह देखो, तुम्हारे मुँह के आगे मैं इस अँगोछे की ओट करता हूँ। अब तुम मुझे नहीं देख सकते। पर हूँ मैं तुम्हारे बिलकुल निकट। इसी तरह औरों की अपेक्षा भगवान् निकट हैं, परन्तु इस माया-वरण के कारण तुम उनके दर्शन नहीं पाते।

"जीव तो स्वयं सच्चिदानन्दस्वरूप हैं, परन्तु इसी माया या अहंकार से वे नाना उपाधियों में पड़े हुए अपने स्वरूप को भूल गये हैं।

"एक-एक उपाधि होती है, और जीवों का स्वभाव बदल जाता है। किसी ने काली धारीदार धोती पहनी कि देखना, प्रेम-गीतों की तान मुँह से आप ही आप निकल पड़ती है, और ताश खेलना, सैरसपाटे के लिए निकलना तो हाथ में छड़ी लेकर—ये सब

आप ही आप जुट जाते है ! चाहे दुबला-पतला ही हो परन्तु बूट पहनते ही सीटी बजाना शुरू हो जाता है, सीढ़ियो पर चढ़ते समय साहबो की तरह उछलकर चढ़ता है ! मनुष्य के हाथ म कलम रहे तो उसका यह गुण है कि कागज का जैसा-तैसा टुकडा पाते ही वह उस पर कलम घिसना शुरू कर देता है ।

'रुपया भी एक विचित्र उपाधि है । रुपया होते ही मनुष्य एक दूसरी तरह का हो जाता है । वह पहले जैसा नहीं रह जाता। यहाँ एक ब्राह्मण आया जाया करता था । बाहर से वह बडा विनयी था । कुछ दिन बाद हम लोग कोन्नगर गये, हृदय साथ था । हम लोग नाव पर स उतरे कि देखा, वही ब्राह्मण गगा के किनारे बैठा हुआ है । शायद हवाखोरी के लिए आया था । हम लोगो को देखकर बोला, 'क्यो महाराज, कहो कैसे हो ?' उसकी आवाज सुनकर मैने हृदय से कहा—'हृदय, सुना, इसके धन हो गया है, इसी से आवाज किरकिराने लगी !' हृदय हँसने लगा ।

"किसी मेढक के पास एक रुपया था । वह एक बिल म रखा रहता था । एक हाथी उस बिल को लाँघ गया । तब मेढक बिल से निकलकर बडे गुस्से मे आकर लगा हाथी को लात दिखाने ! और बोला, 'तुझे इतनी हिम्मत कि मुझे लाँघ जाय !' रुपये का इतना अहकार होता है ।

"ज्ञानलाभ होने से अहकार दूर हो सकता है । ज्ञानलाभ होने से समाधि होती है । जब समाधि होती है, तभी अहकार जाता है । ऐसा ज्ञानलाभ बडा कठिन है ।

'वेदो मे कहा है कि मन सप्तम भूमि पर जाने से समाधि होती है । समाधि होने से ही अहकार दूर हो सकता है । मन प्राय प्रथम तीन भूमियो में रहता है । लिंग, गुदा और नाभि ये

ही तीन भूमियाँ हैं। तब मन संसार की ओर—कामिनी-कांचन की ओर खिंचा रहता है। जब मन हृदय में रहता है, तब ईश्वरी ज्योति के दर्शन होते हैं। वह मनुष्य ज्योति देखकर कह उठता है—'यह क्या, यह क्या है!' इसके बाद मन कण्ठ में आता है। तब केवल ईश्वर की ही चर्चा करने और सुनने की इच्छा होती है। कपाल या भौंहों के बीच में जब मन जाता है तब सच्चिदानन्द-रूप दीख पड़ता है। उस रूप को गले लगाने और उसे छूने की इच्छा होती है, परन्तु छुआ नहीं जाता। लालटेन के भीतर की बत्ती को कोई चाहे देख ले पर उसे छू नहीं सकता, जान पड़ता है कि छू लिया, परन्तु छू नहीं पाता। जब सप्तम भूमि पर मन जाता है तब अहं नहीं रह जाता, समाधि होती है।

विजय—वहाँ पहुँचने पर जब ब्रह्मज्ञान होता है, तब मनुष्य क्या देखता है?

श्रीरामकृष्ण—सप्तम भूमि में मन के जाने पर क्या होता है, वह मुँह से नहीं कहा जा सकता।

'जो 'मैं' संसारी बनता है, कामिनी-कांचन में फँसता है, वह बदमाश 'मैं' है। जीव और आत्मा में भेद सिर्फ इसलिए है कि बीच में यह 'मैं' जुड़ा हुआ है। पानी पर अगर लाठी डाल दी जाय तो पानी दो हिस्सों में बँटा हुआ दीख पड़ता है। परन्तु वास्तव में है वह एक ही पानी, लाठी से उसके दो हिस्से नजर आते हैं।

"यह लाठी 'अहं' ही है। लाठी उठा लो, वही एक जल रह जायगा।

"बदमाश 'मैं' वह है जो कहता है, मुझे नहीं जानते हो? मेरे इतने रुपये हैं, क्या मुझसे भी कोई बड़ा आदमी है? यदि

किसी ने दस रुपये चुरा लिए तो पहले वह चोर से रुपये छीन लेता है, फिर चोर की ऐसी मरम्मत करता है कि पसली-पसली ढीली कर देता है, इतने पर भी उसको नहीं छोड़ता, पहरेवाले के हाथ सौंपता है और सजा दिलवाता है! 'बदमाश मैं' कहता है, अरे, इसने मेरे दस रुपये चुराये थे, उफ इतनी हिम्मत!

विजय—यदि बिना 'अहं' के दूर हुए सांसारिक भोगों में पिण्ड नहीं छूटने का—समाधि नहीं होने की, तो ज्ञानमार्ग पर आना ही अच्छा है, क्योंकि उसमें समाधि होगी। यदि भक्तियोग में 'अहं' रह जाता है तो ज्ञानयोग ही अच्छा ठहरा।

श्रीरामकृष्ण—समाधि से एक दो मनुष्यों का अहंकार जाता है अवश्य, परन्तु प्राय. नहीं जाता। लाख विचार करो, पर देखना कि 'अहं' घूम-घामकर फिर उपस्थित है। आज बरगद का पेड़ काट डालो, कल सुबह को उसमें अंकुर निकला हुआ ही देखोगे। **ऐसी दशा में यदि 'मैं' नहीं दूर होने का तो रहने दो साले को दास 'मैं' बना हुआ।** 'हे ईश्वर! तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ, इसी भाव में रहो। 'मैं दास हूँ,' 'मैं भक्त हूँ' ऐसे 'मैं' में दोष नहीं। मिठाई खाने से अम्लशूल होता है, पर मिश्री मिठाइयों में नहीं गिनी जाती।

"ज्ञानयोग बड़ा कठिन है। देहात्मबुद्धि का नाश हुए बिना ज्ञान नहीं होता। कलियुग में प्राण अन्नगत है, अतएव देहात्म-बुद्धि, अहंबुद्धि नहीं मिटती। इसलिए कलियुग के लिए भक्तियोग है। भक्तिपथ सीधा पथ है। हृदय से व्याकुल होकर उनके नाम का स्मरण करो, उनसे प्रार्थना करो, भगवान् मिलेंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं।

"मानो जलराशि पर बिना बाँस रखे ही एक रेखा खींची गयी

है, मानो जल के दो भाग हो गये हैं, परन्तु वह रेखा बड़ी देर तक नहीं रहती। दास मैं' या 'भक्त का मैं' अथवा 'बालक का मैं' ये सब 'मैं' की रेखाएँ मात्र हैं।"

(९)

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते। गीता, १२।५

भक्तियोग ही युगधर्म है। ज्ञानयोग की विशेष कठिनता

विजय—महाराज, आप 'बदमाश मैं' को दूर करने के लिए कहते हैं तो क्या 'दास मैं' दोष नहीं?

श्रीरामकृष्ण—नहीं। 'दास मैं' अर्थात् मैं ईश्वर का दास हूँ, इस अभिमान में दोष नहीं, बल्कि इससे भगवान् मिलते हैं।

विजय—अच्छा, तो 'दास मैं' वाले के कामक्रोधादि कैसे हैं?

श्रीरामकृष्ण—अगर उसके भाव में पूरी सचाई आ जाय तो कामक्रोधादि का आकार मात्र रह जाता है। यदि ईश्वरलाभ के बाद भी किसी का 'दास मैं' या 'भक्त मैं' बना रहा तो वह मनुष्य किसी का अनिष्ट नहीं कर सकता। पारस पत्थर छू जाने पर तलवार सोना हो जाती है, तलवार का स्वरूप तो रहता है, पर वह किसी की हिंसा नहीं करती।

'नारियल के पेड़ का पत्ता झड़ जाता है, उसकी जगह सिर्फ दाग बना रहता है, जिससे यह समझ लिया जाता है कि कभी यहाँ पत्ता लगा हुआ था। इसी तरह जिनको ईश्वर मिल गये हैं, उनके अहंकार का चिह्न भर रह जाता है, काम क्रोध का स्वरूप मात्र रह जाता है, पर उनकी बालक जैसी अवस्था हो जाती है। बालक सत्त्व, रज, तम में से किसी गुण के बन्धन में नहीं आता। बालक जितनी जल्दी किसी वस्तु पर अड़ जाता है, उतनी ही

जल्दी वह उसे छोड भी देता है। एक पाँच रुपये की कीमत का कपडा चाहे तुम धेले के खिलौने पर रिझाकर फुसला लो। कभी तो वह बहककर कह देगा—'नही, मैं न दूँगा, मेरे बाबूजी ने मोल ले दिया है।' और लडके के लिए सभी बराबर हैं। ये बडे हैं, यह छोटा है, यह ज्ञान उसे नही, इसीलिए उसे जाति-पाँति का विचार भी नही है। माँ ने कह दिया है—'वह तेरा दादा है,' फिर चाहे वह कलार हो, वह उसी के साथ बैठकर रोटी खाता है। बालक को घृणा नही, शुचि और अशुचि पर ध्यान नही, शौच के लिए जाकर हाथ नही मटियाता।

"कोई-कोई समाधि के बाद भी 'भक्त का मैं,' 'दास का मैं' लेकर रहते हैं। 'मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो,' 'मैं भक्त हूँ, तुम भगवान् हो,' यह अभिमान भक्तो का बना रहता है। ईश्वरलाभ के बाद भी रहता है। सम्पूर्ण 'मैं' नही दूर होता। और फिर इसी अभिमान का अभ्यास करते-करते ईश्वर-प्राप्ति भी होती है। यही भक्तियोग है।"

"भक्ति के मार्ग पर चलने से भी ब्रह्मज्ञान होता है। भगवान् सर्वशक्तिमान् हैं। वे इच्छा करे तो ब्रह्मज्ञान भी दे सकते हैं। भक्त प्राय ब्रह्मज्ञान नही चाहते। 'मैं भक्त हूँ, तुम प्रभु हो,' 'मैं बच्चा हूँ, तू माँ है' वे ऐसा अभिमान रखना चाहते है।"

विजय—जो लोग वेदान्त-विचार करते है, वे भी तो उन्हे पाते हैं?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, विचारमार्ग मे भी वे मिलते हैं। इसी को ज्ञानयोग कहते हैं। विचारमार्ग बडा कठिन है। सप्तम भूमि की बात तो तुम्हे बतलायी गयी। सप्तम भूमि पर मन के पहुँचने से समाधि होती है, परन्तु कलि में जीवो का प्राण अन्नगत है, तो

'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' का बोध फिर कब हो सकता है? ऐसा ज्ञान देहबुद्धि के बिना दूर हुए नहीं हो सकता। 'मैं न शरीर हूँ न मन हूँ, न चौबीस तत्त्व हूँ, मैं सुख और दुःख से परे हूँ, मुझे फिर कैसा रोग—कैसा शोक—कैसी जरा—कैसी मृत्यु?' ऐसा बोध कलिकाल में होना कठिन है। चाहे जितना विचार करो, देहात्मबुद्धि कहीं न कहीं से आ ही जाती है। बड़ के पेड़ को काट डालो, तुम तो सोचते हो कि जड़समेत उखाड़ फेंका, पर उसमें कल्ला निकला ही हुआ देखा! देहाभिमान नहीं दूर होता। इसीलिए कलिकाल में भक्तियोग अच्छा है, सीधा है।

और मैं चीनी बन जाना नहीं चाहता, चीनी खाना ही मुझे अच्छा जान पड़ता है। मेरी कभी यह इच्छा नहीं होती कि कहूँ मैं ही ब्रह्म हूँ। मैं तो कहता हूँ तुम भगवान् हो, मैं तुम्हारा दास हूँ।' पाँचवीं और छठी भूमि के बीच में चक्कर काटना अच्छा है। छठी भूमि को पारकर सप्तम भूमि में अधिक देर तक रहने की मेरी इच्छा नहीं होती। मैं उनका नामगुण-कीर्तन करूँगा, यही मेरी इच्छा है। सेव्यसेवक भाव बड़ा अच्छा है। और देखो, ये तरंगें गंगा ही की हैं, परन्तु तरंगों की गंगा है, ऐसा कोई नहीं कहता। 'मैं वही हूँ' यह अभिमान अच्छा नहीं। देहात्मबुद्धि के रहते ऐसा अभिमान जिसको होता है उसकी बड़ी हानि होती है, फिर वह आगे बढ़ नहीं सकता, धीरे-धीरे पतित हो जाता है। वह दूसरों की आँखों में धूल झोंकता है, साथ ही अपनी आँखों में भी, अपनी स्थिति का हाल वह नहीं समझ पाता।

'परन्तु भेड़ियासाधन की भक्ति से ईश्वर नहीं मिलते, उन्हें पाने के लिए 'प्रेमाभक्ति' चाहिए। 'प्रेमाभक्ति' का एक और नाम है 'रागभक्ति'। प्रेम या अनुराग के बिना भगवान नहीं

मिलते। ईश्वर पर जब तक प्यार नही होता तब तक उन्हे कोई प्राप्त नही कर सकता।

"और एक प्रकार की भक्ति है उसका नाम है 'वैधी भक्ति'। इसका बहुत कुछ अनुष्ठान करते-करते क्रमश 'रागभक्ति' होती है। जब तक रागभक्ति न होगी, तब तक ईश्वर नही मिलेगे। उन्हे प्यार करना चाहिए। जब ससारबुद्धि बिलकुल चली जायगी--सोलह आना मन उन्ही पर लग जायगा, तब वे मिलेगे।

"परन्तु किसी-किसी को रागभक्ति अपने आप ही होती है, स्वत सिद्ध, बचपन से ही। बचपन से ही वह ईश्वर के लिए रोता है, जैसे प्रह्लाद। और एक 'विधिवादीय' भक्ति है। ईश्वर पर अनुराग उत्पन्न करने के लिए जप, तप, उपवास आदि विधिनिषेध माने जाते हैं, जैसे हवा लगने के लिए पखा झलना, पखे की जरूरत हवा के लिए है, परन्तु जब दक्षिणी हवा आप वह चलती है तब लोग पखा रख देते है। ईश्वर पर अनुराग— प्रेम आप आ जाने से जप, तप आदि कर्म छूट जाते है। भगवत्प्रेम मे मस्त हो जाने से वैध कर्म करने के लिए फिर किसको समय है ?

"जब तक उन पर प्यार नही होगा, तब तक वह भक्ति कच्ची भक्ति है। जब उन पर प्यार होता है, तब वह भक्ति सच्ची भक्ति कहलाती है।

"जिसकी भक्ति कच्ची है वह ईश्वर की कथा और उपदेशो की धारणा नही कर सकता। पक्की भक्ति होने पर ही धारणा होती है। फोटोग्राफ के शीशे पर अगर स्याही (Silver Nitrate) लगी हो तो जो चित्र उस पर पडता है वह ज्यो का त्यो उतर जाता है, परन्तु सादे शीशे पर चाहे हजारो चित्र दिखाये जायँ,

एक भी नहीं उतरता। शीशे पर से चित्र हटा कि वही ज्यों का त्यों सफेद शीशा! ईश्वर पर प्रीति हुए बिना उपदेशों की धारणा नहीं होती।

विजय—महाराज, ईश्वर को कोई प्राप्त करना चाहे, उनके दर्शन करना चाहे तो क्या सिर्फ भक्ति से काम सध जायगा?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, भक्ति ही से उनके दर्शन हो सकते हैं। परन्तु पक्की भक्ति, प्रेमाभक्ति, रागभक्ति चाहिए। उसी भक्ति से उन पर प्रीति होती है, जैसे बच्चों को माँ का प्यार, माँ को बच्चे का प्यार और पत्नी को पति का प्यार होता है।

'इस प्यार, इस रागभक्ति के होने पर, स्त्री-पुत्र और आत्मीयों की ओर पहले जैसा आकर्षण नहीं रह जाता, फिर तो उन पर दया होती है। घर-द्वार विदेश जैसा जान पड़ता है। उसे देखकर सिर्फ एक कर्मभूमि का ख्याल जान पड़ता है, जैसे घर देहात में और कलकत्ता है कर्मभूमि, कलकत्ते में किराये के मकान में रहना पड़ता है कर्म करने के लिए। ईश्वर का प्यार होने से संसार की आसक्ति—विषयबुद्धि बिलकुल जाती रहेगी!

"विषयबुद्धि का लेशमात्र रहते उनके दर्शन नहीं हो सकते। दियासलाई अगर भीगी हो तो चाहे जितना रगड़ो वह जलेगी नहीं। और कीनो दियासलाई व्यर्थ ही बरबाद हो जाती हैं। विषयी मन भीगी दियासलाई है।

'श्रीमती (राधिका) ने जब कहा—मैं सर्वत्र कृष्णमय देखती हूँ, तब सखियाँ बोलीं—कहाँ, हम तो उन्हें नहीं देखतीं; तुम प्रलाप तो नहीं कर रही हो? श्रीमती बोली, सखियो, नेत्रों में अनुराग का अंजन लगा लो, तभी उन्हें देखोगी। (विजय से) तुम्हारे ब्राह्मसमाज ही के उपदेश में है—

"यह अनुराग, यह प्रेम, यह सच्ची भक्ति, यह प्यार यदि एक बार भी हो तो साकार और निराकार दोनों मिल जाते हैं।

ईश्वर-दर्शन उनकी कृपा बिना नहीं होता

विजय--महाराज, क्या किया जाय जो ईश्वर-दर्शन हो ?

श्रीरामकृष्ण--चित्तशुद्धि के बिना ईश्वर के दर्शन नही होते। कामिनी-कांचन में पड़कर मन मलिन हो गया है, उसमें जंग लग गया है। सुई में कीच लग जाने से उसे चुम्बक नही खींच सकता, मिट्टी साफ कर देने ही से चुम्बक खींचता है। मन का मैल नेत्र-जल से धोया जा सकता है। 'हे ईश्वर, अब ऐसा काम न करूँगा', यह कहकर यदि कोई अनुताप करता हुआ रोये तो मैल धुल जाता है। तब ईश्वर रूपी चुम्बक मनरूपी सुई को खींच लेता है। समाधि होती है, ईश्वर के दर्शन होते हैं।

"परन्तु चेष्टा चाहे जितनी करो, बिना उनकी कृपा के कुछ नही होता। **उनकी कृपा बिना, उनके दर्शन नहीं मिलते।** और कृपा भी क्या सहज ही होती है ? अहंकार का सम्पूर्ण त्याग कर देना चाहिए। मैं कर्ता हूँ, इस ज्ञान के रहते ईश्वर के दर्शन नही होते। भण्डार में अगर कोई हो, और तब घर के मालिक से अगर कोई कहे कि आप खुद चलकर चीजें निकाल दीजिये, तो वह यही कहता है, 'है तो वहाँ एक आदमी, फिर मैं क्यों जाऊँ ?' जो खुद कर्ता बना बैठा है, उसके हृदय में ईश्वर सहज ही नहीं आते।

"कृपा होने से दर्शन होते हैं। वे ज्ञानसूर्य हैं। उनकी एक ही किरण से संसार में यह ज्ञानलोक फैला हुआ है। उसी से हम एक-दूसरे को पहचानते हैं और संसार में कितनी ही तरह की विद्याएँ सीखते हैं। अपना प्रकाश यदि वे एक बार अपने मुँह के

सामने रखें तो दर्शन हो जायें। सार्जन्ट रात को अँधेरे में हाथ मे लालटेन लेकर घूमता है, पर उसका मुँह कोई नहीं देख पाता। और उसी लालटेन के उजाले मे वह सबको देखता है, और आपस में सभी एक दूसरे का मुँह देखते हैं।

"यदि कोई सार्जन्ट को देखना चाहे तो उससे विनती करे, कहे—साहब, जरा लालटेन अपने मुँह के सामने लगाइये, आपको एक नजर देख लूँ।

"ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि भगवन्, एक बार कृपा करके आप अपना ज्ञानलोक अपने श्रीमुख पर धारण कीजिये, मैं आपके दर्शन करूँगा।

'घर में यदि दीपक न जले तो वह दारिद्र्य का चिह्न है। हृदय में ज्ञान का दीपक जलना चाहिए। हृदय में ज्ञान का दीपक जलाकर उसको देखो।"

विजय अपने साथ दवा भी लाये हैं। श्रीरामकृष्ण के सामने पीयेंगे। दवा पानी में मिलाकर पी जाती है। श्रीरामकृष्ण पानी ले आये। विजय किराये की गाड़ी या नाव द्वारा आने में असमर्थ हैं, इसलिए कभी-कभी श्रीरामकृष्ण खुद आदमी भेजकर उन्हें बुला लेते हैं। इस बार बलराम को भेजा था। किराया बलराम देंगे। शाम के समय विजय, नवकुमार और उनके दूसरे साथी बलराम की नाव पर चढ़े। बलराम उन्हें बागबाजार के घाट पर उतार देंगे। मास्टर भी साथ हो गये।

नाव बागबाजार के अन्नपूर्णाघाट पर लगायी गयी। उतरकर सभी श्रीरामकृष्ण के अमृतोपम उपदेशों का मनन करते हुए अपने-अपने घर पहुँचे।

परिच्छेद १२

प्राणकृष्ण, मास्टर आदि भक्तों के साथ

(१)

समाधि में

जाडे का मौसम—पूस का महीना है। सोमवार, दिन के आठ बजे है। अगहन की कृष्णाष्टमी है, पहली जनवरी १८८३।

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर के अपने कमरे मे भक्तो के साथ बैठे हैं। दिन-रात भगवत्प्रेम—ब्रह्ममयी माता के प्रेम मे मस्त रहते हैं।

फर्श पर चटाई बिछी है। आप उसी पर आकर बैठ गये। सामने हैं प्राणकृष्ण और मास्टर। श्रीयुत राखाल भी कमरे मे बैठे हुए हैं। (इन्हें श्रीरामकृष्ण की अभीष्टदेवी काली ने श्रीरामकृष्ण को उनका मानसपुत्र बतलाया था, ये ही बाद मे स्वामी ब्रह्मानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए और रामकृष्ण-संघ के प्रथम सचालक हुए थे।) हाजरा महाशय घर के बाहर दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में बैठे हैं।

इस समय श्रीरामकृष्ण के अन्तरग सभी भक्त आने-जाने लगे हैं। लगभग साल भर से नरेन्द्र, राखाल, भवनाथ, बलराम, मास्टर, बाबूराम, लाटू, आदि भक्त सदा आते-जाते रहते हैं। इनके आने के साल भर पूर्व मे राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र और केदार आया करते हैं।

लगभग पाँच महीने हुए होगे, जब श्रीरामकृष्ण विद्यासागर के 'बादुड़बागान' वाले मकान में पधारे थे। दो महीने पूर्व आप श्रीयुत

केशव सेन के साथ विजय आदि ब्राह्म भक्तो को लेकर नाव पर आनन्द करते हुए कलकत्ता गये थे।

श्रीयुत प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय कलकत्ता के श्यामपुकुर मुहल्ले में रहते हैं। पहले वे जनाई मौजे मे रहते थे। श्रीरामकृष्ण पर इनकी बडी भक्ति है। स्थूल शरीर होने के कारण कभी-कभी श्रीरामकृष्ण इन्हे 'मोटा ब्राह्मण' कहकर पुकारते हैं। लगभग नौ महीने हुए होंगे, श्रीरामकृष्ण ने भक्तो के साथ इनका निमन्त्रण स्वीकार किया था। इन्होंने बडे आदर से सबको भोजन कराया था।

श्रीरामकृष्ण जमीन पर बैठे हुए हैं। पास ही टोकरी भर जलेबियाँ रखी हैं। आपने जलेबी का एक टुकडा तोडकर खाया।

श्रीरामकृष्ण (प्राणकृष्ण आदि से, हँसते हुए)—देखा, मैं माता का नाम जपता हूँ, इसीलिए ये सब चीजें खाने को मिलती हैं। (हास्य)

"परन्तु वे लौकी-कोहडे जैसे फल नहीं देतीं—वे देती हैं अमृत-फल, ज्ञान, प्रेम, विवेक, वैराग्य।"

कमरे में छ-सात साल की उम्र का एक लडका आया। इधर श्रीरामकृष्ण की भी बालकों जैसी अवस्था है। जैसे एक बालक किसी दूसरे बालक को देखकर उससे खाने की चीज छिपा लेता है जिससे वह छीनाझपटी न करे, वैसे ही श्रीरामकृष्ण की अवस्था उस बालक को देखकर होने लगी। उन्होंने जलेबियों को एक ओर हटाकर रख दिया।

प्राणकृष्ण गृहस्थ तो हैं परन्तु वे वेदान्तचर्चा भी करते हैं, कहते हैं—ब्रह्म ही सत्य है, ससार मिथ्या, मैं वही हूँ—सोऽहम्। श्रीरामकृष्ण उन्हें समझाते हैं—"कलिकाल में प्राण अन्नगत है, कलिकाल में नारदीय भक्ति चाहिए।"

"वह विषय भाव का है, बिना भाव के कौन उसे पा सकता है ?"

बालको की तरह हाथो से जलेबियो की टोकरी छिपाते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये ।

(२)

भावराज्य तथा रूपदर्शन

श्रीरामकृष्ण समाधि में मग्न हैं । कुछ समय बाद समाधि छूटी, भाव के आवेश में पूर्ण बने बैठे हैं। न देह डुलती है, न पलक गिरते हैं, साँस भी चलती है या नही, जान नहीं पडता ।

बडी देर बाद आपने एक लम्बी साँस छोडी—मानो इन्द्रिय-राज्य में फिर लौट रहे है ।

श्रीरामकृष्ण (प्राणकृष्ण से)—वे केवल निराकार नही, साकार भी हैं। उनके स्वरूप के दर्शन होते हैं। भाव और भक्ति से उनके अनुपम रूप के दर्शन मिलते हैं। माँ अनेक रूपो में दर्शन देती है ।

"कल माँ को देखा, गेरुए रग का अँगरखा पहने हुए मेरे साथ बाते कर रही थी ।

"और एक दिन मुसलमान लडकी के रूप में मेरे पास आयी थी । कपाल पर तिलक, पर शरीर पर कपडा नही !—छ -सात साल की बालिका, मेरे साथ-साथ घूमने और मुझसे हँसी ठट्टा करने लगी ।

"जब मैं हृदय के घर पर था तब गौराग के दर्शन हुए थे, वे काली धारीदार धोती पहने थे ।

"हलधारी कहता था, वे भाव और अभाव से परे है । मैंने माँ से जाकर कहा—'माँ, हलधारी ऐसी बात कह रहा है, तो क्या रूप

आदि मिथ्या हैं ?' माँ रति की माँ के रूप में मेरे पास आयी और बोली—'तू भाव में रह।' मैंने भी हलधारी से यही कहा।

"कभी-कभी यह बात भूल जाता हूँ, इसलिए कष्ट भोगना पड़ता है। भाव में न रहने के कारण दाँत टूट गये। अतएव 'देववाणी' या 'प्रत्यक्ष' न होने तक भाव में ही रहूँगा—भक्ति ही लेकर रहूँगा। क्यों—तुम क्या कहते हो ?"

प्राणकृष्ण—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—और तुम्हीं से क्यों पूछूँ ? इसके भीतर कोई एक रहता है। वही मुझे इस तरह चला रहा है। कभी-कभी मुझमें देवभाव का आवेग होता था, तब बिना पूजा किये चित्त शान्त न होता था।

"मैं यन्त्र हूँ और वे यन्त्री। वे जैसा कराते हैं, वैसा ही करता हूँ। जो कुछ बुलवाते हैं, वही बोलता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण ने भक्त रामप्रसाद का एक गीत उदाहरण के लिए गाया, उसका अर्थ यह है—

'भवसागर में अपना डोंगा बहाकर उस पर बैठा हुआ हूँ। जब ज्वार आयेगा, तब पानी के साथ-साथ मैं भी चढ़ता जाऊँगा और जब भाटा हो जायगा, तब उतरता जाऊँगा।'

श्रीरामकृष्ण—जूठी पत्तल हवा के झोंके से उड़कर कभी तो अच्छी जगह पर गिरती है, कभी नाली में गिर जाती है—हवा जिधर ले जाती है उधर ही चली जाती है।

"जुलाहे ने कहा—राम की मर्जी से डाका डाला गया, राम ही की मर्जी से पुलिसवालों ने मुझे पकड़ा, और फिर राम ही की मर्जी से मुझे छोड़ दिया।

"हनुमान ने कहा—हे राम, मैं शरणागत हूँ—शरणागत

हूँ—यही आशीर्वाद दीजिये कि आपके पादपद्मों में मेरी शुद्धा भक्ति हो, फिर कभी तुम्हारी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध न होऊँ।

"मेंढक बोला—राम, जब साँप पकड़ता है, तब तो 'राम, रक्षा करो' कहकर चिल्लाता हूँ, परन्तु अब जब कि राम ही के धनुष से बिंधकर मर रहा हूँ, तो चुप्पी साधनी ही पड़ी।

'पहले प्रत्यक्ष दर्शन होते थे—इन्हीं आँखों से, जैसे तुम्हें देख रहा हूँ, अब भावावेश में दर्शन होते हैं।

"ईश्वर-लाभ होने पर बालकों का सा स्वभाव हो जाता है। जो जिसका चिन्तन करता है, वह उसकी सत्ता को भी पाता है। ईश्वर का स्वभाव बालकों जैसा है। खेलते हुए बालक जैसे घरौंदा बनाते, बिगाड़ते, और उसे फिर से बनाते हैं—उसी तरह वे भी सृष्टि, स्थिति और प्रलय कर रहे हैं। बालक जैसे किसी गुण के वश में नहीं है उसी प्रकार वे भी सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों से परे हैं।

"इसीलिए जो परमहंस होते हैं, वे दस पाँच बालक अपने साथ रखते हैं—अपने पर उनके स्वभाव का आरोप करने के लिए।"

आगड़पाड़ा से एक २०-२२ साल का लड़का आया है। यह जब आता है, श्रीरामकृष्ण को इशारा करके एकान्त में ले जाता है और वहीं चुपचाप अपने मन की बात कहता है। यह अभी हाल ही में आने-जाने लगा है। आज वह निकट आकर बैठा।

प्रकृतिभाव तथा कामजय। सरलता और ईश्वरलाभ

श्रीरामकृष्ण (उसी लड़के से)—आरोप करने पर भाव बदल जाता है। प्रकृति के भाव का आरोप करो तो धीरे-धीरे कामादि रिपु नष्ट हो जाते हैं। ठीक स्त्रियों के से हाव भाव हो जाते हैं।

नाटक में जो लोग स्त्रियों का पार्ट खेलते हैं, उन्हें नहाते समय देखा है—स्त्रियों की ही तरह दाँत माँजते और बातचीत करते हैं।

"तुम किसी शनिवार या मंगलवार को आओ।"

(प्राणकृष्ण से) "ब्रह्म और शक्ति अभेद है। शक्ति न मानो तो संसार मिथ्या हो जाता है। हम, तुम, घर, परिवार—सब मिथ्या हो जाते हैं। आद्या शक्ति के रहने ही के कारण संसार का अस्तित्व है। बिना आधार के कोई चीज कभी ठहर सकती है? साँचा न होता तो उसकी ढली वस्तुओं की तारीफ कैसे होती?

"विषय-बुद्धि का त्याग किये बिना चैतन्य नहीं होता है—ईश्वर नहीं मिलते। उसके रहने ही से कपटता आ जाती है। बिना सरल हुए कोई उन्हें पा नहीं सकता।

'ऐसी भक्ति करो घट भीतर, छोड़ कपट चतुराई।
सेवा हो, अधीनता हो, तो सहज मिलें रघुराई।'

"जो लोग विषयकर्म करते हैं, आफिस का काम या व्यवसाय करते हैं, उन्हें भी सचाई से रहना चाहिए। सच बोलना कलिकाल की तपस्या है।

प्राणकृष्ण—अस्मिन् धर्मे महेशि स्यात् सत्यवादी जितेन्द्रियः।
परोपकारनिरतो निर्विकार सदाशयः॥

यह महानिर्वाणतन्त्र में लिखा है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, इसकी धारणा करनी चाहिए।

(२)

श्रीरामकृष्ण का यशोदा-भाव तथा समाधि

श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। भाव में तो

सदा ही पूर्ण रहते हैं। भावनेत्रों से राखाल को देख रहे है। देखते ही देखते वात्सल्यरस हृदय मे उमडने लगा, अग पुलकित होने लगे और आप समाधिलीन हो गये। कमरे के भीतर जितने भक्त बैठे हुए थे, श्रीरामकृष्ण के भाव की यह अद्‌भुत अवस्था देखकर, सभी आश्चर्यचकित हो गये।

श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ होकर कहते है—राखाल को देखकर इतनी उद्दीपना क्यो होती है? जितना ही ईश्वर की ओर बढते जाओगे, ऐश्वर्य की मात्रा उतनी ही घटती जायगी। साधक पहले दशभुजा मूर्ति देखता है। वह ईश्वरी मूर्ति है। इसमें ऐश्वर्य का प्रकाश अधिक रहता है। इसके बाद द्विभुजा मूर्ति देखता है। तब दस हाथ नही रहते—इतने अस्त्र शस्त्र नही रहते। इसके बाद गोपाल-मूर्ति के दर्शन होते है, कोई ऐश्वर्य नही—केवल एक छोटे बच्चे की मूर्ति। इससे भी परे है—केवल ज्योति-दर्शन।

"उन्हे प्राप्त कर लेने पर—उनमे समाधिमग्न हो जाने पर, फिर ज्ञान विचार नही रह जाता।

"ज्ञान-विचार तो तभी तक है, जब तक अनेक वस्तुओं की धारणा रहती है—जब तक जीव, जगत्, हम, तुम—यह ज्ञान रहता है। जब एकत्व का ज्ञान हो जाना है तब चुप हो जाना पड़ता है। जैसे त्रैलगस्वामी।

"ब्रह्मभोज के समय नहीं देखा? पहले खूब गुलगपाडा मचता है। ज्यो-ज्यो पेट भरता जाता है, त्यों-त्यों आवाज घटती जाती है। जब दही आया, तब सुप्-सुप्, बस और कोई शब्द नही। इसके बाद ही निद्रा—समाधि। तब आवाज जरा भी नहीं रह जाती।

(मास्टर और प्राणकृष्ण से) "कितने ही ऐसे है जो ब्रह्मज्ञान की डींग मारते हैं परन्तु क्षुद्र वस्तु ग्रहण करते हैं—घर-द्वार, धन-मान, इन्द्रिय-सुख । मनूमेण्ट (Monument) के नीचे जब तक रहा जाता है, तब तक गाडी, घोडा, साहब, मेम—यही सब दीख पडते हैं । ऊपर चढने पर सिर्फ आकाश, समुद्र, धुआँ-सा छाया हुआ दीख पडता है । तब घर-द्वार, घोडा-गाडी, आदमी—इन पर मन नहीं रमता, ये सब चींटी-जैसे नजर आते हैं ।

"ब्रह्मज्ञान होने पर ससार की आसक्ति चली जाती है—कामकाचन के लिए उत्साह नहीं रहता—सब 'शान्ति' बन जाते हैं । काठ जब जलता है तब उसमें चटाचट आवाज भी होती है और कडआ धुआँ भी निकलता है । जब सब जलकर खाक हो जाता है, तब फिर शब्द नहीं होता । आसक्ति के जाने से उत्साह भी चला जाता है । अन्त में केवल शान्ति रह जाती है ।

"ईश्वर की ओर कोई जितना ही बढता है, उतनी ही शान्ति मिलती है । शान्ति: शान्ति: शान्ति: प्रशान्ति: । गगा के निकट जितना ही जाया जाता है, शीतलता का अनुभव उतना ही होता जाता है । नहाने पर और भी शान्ति मिलती है ।

"परन्तु जीव, जगत्, चौबीस तत्त्व, इनकी सत्ता उन्ही की सत्ता से भासित हो रही है । उन्हे छोड़ देने पर कुछ भी नही रह जाता । १ के बाद शून्य रखने से संख्या बढ जाती है । एक को निकाल डालो तो शून्य का कोई अर्थ नही रह जाता ।"

प्राणकृष्ण से श्रीरामकृष्ण अपनी अवस्था के सम्बन्ध में कह रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण—ब्रह्मज्ञान के पश्चात्, समाधि हो जाने पर, कोई-कोई विद्या के राज्य का, 'ज्ञान का मैं'—'भक्ति का मैं'

लेकर रहते है। हाट का क्रय-विक्रय समाप्त हो जाने पर भी कुछ लोग अपनी इच्छानुसार हाट मे ही रह जाते हैं, जैसे नारद आदि। वे 'भक्ति का मैं' सहित लोकशिक्षा के लिए ससार मे रहते है। शकराचार्य ने लोकशिक्षा के लिए 'विद्या का मैं' रखा था।

"आसक्ति का नाम मात्र भी रहते वे नहीं मिल सकते। सूत के रेशे निकले हुए हो तो वह सुई के भीतर नहीं जा सकता।

"जिन्होने ईश्वर को प्राप्त कर लिया है, उनके काम-क्रोध नाम मात्र के है, जैसे जली रस्सी,—रस्सी का आकार तो है परन्तु फूँकने से ही उड जाती है।

"मन से आसक्ति के चले जाने पर उनके दर्शन होते है। शुद्ध मन से जो निकलेगी, वह उन्ही की वाणी है। शुद्ध मन जो है, शुद्ध बुद्धि भी वही है और शुद्ध आत्मा भी वही है, क्योकि **उन्हे छोड़ कोई दूसरा शुद्ध नहीं है।**

"परन्तु उन्हे पा लेने पर लोग धर्माधर्म को पार कर जाते है।"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से भक्त रामप्रसाद का एक गीत गाने लगे। उसका मर्म यह है—

"मन, चल, तू मेरे साथ सैर कर। कल्पलता काली के चरणों में तुझे चारो फल मिल जायँगे। उसकी प्रवृत्ति, और निवृत्ति, इन दोनो लडकियों में से निवृत्ति को साथ लेना और उसी के पुत्र विवेक से तत्त्व की बाते पूछना।"

(४)

श्रीरामकृष्ण का श्रीराधा-भाव

श्रीरामकृष्ण दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में आकर बैठे। प्राण-कृष्णादि भक्त भी साथ-साथ आये हैं। हाजरा महाशय बरामदे

म बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए प्राणकृष्ण से कह रहे हैं—
हाजरा कुछ कम नहीं है। अगर यहाँ (स्वयं को लक्ष्य करके) कोई बड़ा दागेगा हो तो हाजरा छोटा दागेगा है।" (सब हँसते हैं)

नवकुमार आकर बरामदे के दरवाजे में खड़े हुए और इशारे से भक्तों को बतलाकर चले गये। उन्हें देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा—'अहंकार की मूर्ति है।"

दिन के ८ बज चुके हैं। प्राणकृष्ण ने प्रणाम करके चलने की आज्ञा ली, उन्हें कलकत्ते के मकान में लौट जाना है।

एक वैरागी गोपीयन्त्र (एकतारे की सूरत-शक्ल का) लेकर श्रीरामकृष्ण के कमरे में गा रहे हैं। गीतों का आशय यह है—

१ 'नित्यानन्द का जहाज आया है। तुम्हें पार जाना हो तो इस पर आ जाओ। छ गोरे इसमें सदा पहरा देते हैं। उनकी पीठ ढाल से घिरी हुई है और तलवार लटक रही है। सदर दरवाजा खोलकर वे धनरत्न लुटा रहे हैं।"

२ "इस समय घर छा लेना। इस बार वर्षा जोरों की होगी, सावधान हो जाओ, अदरक का पानी पीकर अपने काम पर डट जाओ। जब श्रावण लग जायगा तब कुछ भी न सूझेगा। छप्पर का ठाट सड़ जायगा। फिर तुम घर न छा सकोगे। जब झकोरे लगेंगे, तब छप्पर उड़ जायगा। घर वीरान हो जायगा। तुम्हें भी फिर स्थान बदलना ही पड़ेगा।"

३ "किसके भाव में नदिये में आकर दरिद्र वेश धारण किये हुए तुम हरिनाम गा रहे हो? किसका भाव लेकर तुमने यह भाव और ऐसा स्वभाव धारण किया? कुछ समझ में नहीं आता।"

श्रीरामकृष्ण गाना सुन रहे हैं, इसी समय श्रीयुत केदार चटर्जी

आये और उन्होने प्रणाम किया। वे आफिस के कपडे—चोगा, अचकन पहने और घडी चेन लगाये हुए आये हैं। परन्तु ईश्वर-चर्चा होनी है तो आपकी आँखो से आँसुओ की झडी लग जाती हैं। आप बडे प्रेमी हैं। हृदय मे गोपीभाव विराजमान है।

केदार को देखकर श्रीरामकृष्ण के मन मे वृन्दावन की लीला का उद्दीपन होने लगा। आप प्रेमोन्मत्त हो गये। खडे होकर केदार को सुनाते हुए इस मर्म का गाना गाने लगे—

"क्यो सखि, वह बन अभी कितनी दूर है जहाँ मेरे श्यामसुन्दर हैं ? अब तो चला नहीं जाता !"

श्रीराधिका के भावावेश में गाते ही गाते श्रीरामकृष्ण चित्रवत् खडे हुए समाधिमग्न हो गये। नेत्रो के दोनो कोरो से आनन्दाश्रु छलक रहे हैं। भूमिष्ठ होकर श्रीरामकृष्ण के चरणों का स्पर्श करके केदार उनकी स्तुति करने लगे—

हृदयकमलमध्ये निर्विशेष निरीहं
हरिहरविधिवेद्य योगिभिर्ध्यानगम्यम्।
जननमरणभीतिभ्रंशि सच्चित्स्वरूप
सकलभुवनबीजं ब्रह्म चैतन्यमीडये ॥

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। केदार को अपने घर हालीशहर से कलकत्ते में काम पर जाना है। रास्ते में दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करके जा रहे हैं। कुछ विश्राम के पश्चात् केदार ने बिदाई ली।

इसी तरह भक्तो से वार्तालाप करते हुए दोपहर का समय हो गया। श्रीयुत रामलाल श्रीरामकृष्ण के लिए थाली में काली का प्रसाद ले आये। घर मे आसन पर दक्षिणास्य बैठकर श्रीरामकृष्ण ने प्रसाद पाया। बालकों की तरह थोड़ा-थोड़ा सभी कुछ खाये।

भोजन करके श्रीरामकृष्ण उसी छोटी खाट पर विश्राम करने लगे। कुछ समय पश्चात् मारवाडी भक्तों का आगमन होने लगा।

(५)

अभ्यासयोग। दो पथ—विचार और भक्ति

दिन के तीन बजे हैं। मारवाडी भक्त जमीन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे हैं। कमरे में मास्टर, राखाल और दूसरे भक्त भी हैं।

मारवाडी भक्त—महाराज, उपाय क्या है ?

श्रीरामकृष्ण—उपाय दो हैं। विचार-पथ और अनुराग अथवा भक्ति का मार्ग।

"सदसत् का विचार। एकमात्र सत्य या नित्य वस्तु ईश्वर हैं, और सब कुछ असत् या अनित्य है। इन्द्रजाल दिखलाने वाला ही सत्य है, इन्द्रजाल मिथ्या है। यही विचार है।

"विवेक और वैराग्य। इस सदसत् विचार का नाम विवेक है। वैराग्य अर्थात् संसार की वस्तुओं से विरक्ति। यह एकाएक नहीं होता—प्रतिदिन अभ्यास करना चाहिए। कामिनी-कांचन का त्याग पहिले मन से करना पडता है। फिर तो उनकी इच्छा होने ही वह मन से त्याग कर सकता है और बाहर से भी त्याग कर सकता है। पर कलकत्ते के आदमियों से क्या हिम्मत जो कहा जाय कि ईश्वर के लिए सब कुछ छोडो, उनसे यही कहना पडता है कि मन में त्याग का भाव लाओ। अभ्यासयोग से कामिनी-कांचन में आसक्ति का त्याग होता है—यह बात गीता में है। अभ्यास से मन में असाधारण शक्ति आ जाती है। तब इन्द्रियसंयम करने और काम-क्रोध को वश में लाने में कष्ट नहीं उठाना पडता। जैसे कछुआ पैर समेट लेने पर फिर बाहर नहीं

निकालना चाहता—कुल्हाडी से टुकडे-टुकडे कर डालने पर भी बाहर नहीं निकालता।"

मारवाडी भक्त—महाराज, आपने दो रास्ते बतलाये, दूसरा कौनसा है ?

श्रीरामकृष्ण—वह अनुराग या भक्ति का मार्ग है। व्याकुल **होकर एक बार निर्जन में रोओ**, अकेले में दर्शन की प्रार्थना करो।

"ऐ मन, जैसे पुकारा जाना है उस तरह तुम पुकारो तो सही, फिर देखो भला तुम्हे छोडकर माँ श्यामा कैसे रह सकती है ?"

मारवाडी भक्त—महाराज, साकार-पूजा का क्या अर्थ है ? और निराकार-निर्गुण का क्या मतलब है ?

श्रीरामकृष्ण—जैसे पिता का फोटोग्राफ देखने मे पिता की याद आती है, वैसे ही प्रतिमा की पूजा करते-करते सत्य के रूप की उद्दीपना होती है।

"साकार रूप कैसा है, जानते हो ? जैसे जलराशि से बुलबुले निकलते हैं, वैसा ही। महाकाश—चिदाकाश से एक-एक रूप आविर्भूत होते हुए दीख पडते है। अवतार भी एक रूप ही हैं। अवतार-लीला भी आद्याशक्ति ही की क्रीडा है।

"पाण्डित्य में क्या रखा है ? व्याकुल होकर बुलाने पर वे मिलते हैं। अनेकानेक विषयो का ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता नही।

"जो आचार्य है उन्ही को कई विषयो का ज्ञान रखना चाहिए। दूसरो को मारने के लिए ढाल-तलवार की जरूरत होती है, परन्तु अपने को मारने के लिए एक सुई या नहरनी ही से काम चल सकता है।

"मैं कौन हूँ, इसकी टूँट-तलाश करने के लिए चलो तो उन्हीं के निकट जाना पड़ता है। क्या मैं मांस हूँ ? या हाड़, रक्त या मज्जा हूँ ? मन या बुद्धि हूँ ? अन्त में विचार करते हुए देखा जाता है कि मैं यह सब कुछ नहीं हूँ। 'नेति' 'नेति'। आत्मा वह चीज नहीं कि पकड़ में आ जाय। वह निर्गुण और निरुपाधि है।

"परन्तु भक्ति मत से वे सगुण हैं। चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम—सब चिन्मय !"

मारवाड़ी भक्तगण प्रणाम करके विदा हुए। सन्ध्या हो गयी। श्रीरामकृष्ण गंगा-दर्शन कर रहे हैं। घर में दीपक जलाया गया। श्रीरामकृष्ण जगन्माता का नामस्मरण कर रहे हैं और अपनी खाट पर बैठे हुए उन्हीं के ध्यान में मग्न हैं।

श्रीठाकुर-मन्दिर में अब आरती होने लगी। जो लोग इस समय भी पंचवटी में घूम रहे हैं, वे दूर से आरती की मधुर घण्टाध्वनि सुन रहे हैं। ज्वार आ गयी है, भागीरथी कल-कल स्वर से उत्तर-वाहिनी हो रही हैं। आरती का मधुर शब्द इस 'कल-कल' ध्वनि से मिलकर और भी मधुर हो गया है। इस माधुर्य के भीतर प्रेमोन्मत्त श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। सब कुछ मधुर हो रहा है।

परिच्छेद १३

भक्तों के साथ वार्तालाप और आनन्द

(१)

बेलघर-निवासियों को उपदेश। पापवाद

श्रीरामकृष्ण ने बेलघर के श्री गोविन्द मुखोपाध्याय के मकान पर शुभागमन किया है, रविवार, १८ फरवरी १८८३ ई०। माघ शुक्ल द्वादशी, पुष्य नक्षत्र। नरेन्द्र, राम आदि भक्तगण आये हैं, पड़ोसीगण भी आये हैं। सवेरे सात-आठ बजे के समय श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र आदि के साथ संकीर्तन में नृत्य किया था।

कीर्तन के बाद सभी बैठ गये। सभी श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण बीच-बीच में कह रहे हैं, 'ईश्वर को प्रणाम करो।' फिर कह रहे हैं, "वे ही सब रूपों में हैं, परन्तु किसी-किसी स्थान पर विशेष प्रकाश है—जैसे साधुओं में। यदि कहो दुष्ट लोग तो हैं, बाघ-सिंह भी हैं, परन्तु बाघरूपी नारायण से आलिंगन करने की आवश्यकता नहीं है, दूर से प्रणाम करके चले जाना होता है। फिर देखो जल। कोई जल पिया जाता है, किसी जल में पूजा की जाती है, किसी जल से स्नान किया जाता है, और फिर किसी जल से केवल हाथ-मुंह धोया जाता है।"

पड़ोसी—वेदान्त का क्या मत है?

श्रीरामकृष्ण—वेदान्तवादी कहते हैं, 'सोऽहं,' ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या है। 'मैं' भी मिथ्या, केवल वह परब्रह्म ही सत्य है।

"परन्तु 'मैं' तो नहीं जाता। इसलिए मैं उनका दास, मैं उनकी सन्तान, मैं उनका भक्त यह अभिमान बहुत अच्छा है।

"कलियुग में भक्तियोग ही ठीक है। भक्ति द्वारा भी उन्हें प्राप्त किया जाता है। देह-बुद्धि रहने से विषय बुद्धि होती है। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श—ये सब विषय हैं। विषय-बुद्धि दूर होना बहुत कठिन है, विषय बुद्धि के रहते 'सोऽहं' नहीं होता। *

"सन्यासियों में विषय-बुद्धि कम है। संसारीगण सदैव विषय-चिन्ता लेकर ही रहते हैं, इसलिए संसारियों के लिए 'दासोऽहं'।"

पड़ोसी—हम पापी हैं, हमारा क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण—उनका नाम-गुणगान करने से देह से सब पाप भाग जाते हैं। देहरूपी वृक्ष में पाप-पक्षी हैं, उनका नाम-कीर्तन मानो ताली बजाना है। ताली बजाने से जिस प्रकार वृक्ष के ऊपर के सभी पक्षी भाग जाते हैं, उसी प्रकार उनके नाम-गुणकीर्तन से सभी पाप भाग जाते हैं। §

"फिर देखो मैदान के तालाब का जल धूप से स्वयं ही सूख जाता है। इसी प्रकार नाम-गुणकीर्तन से पाप रूपी तालाब का जल स्वयं ही सूख जाता है।

"रोज अभ्यास करना पड़ता है। सर्कस में देख आया, घोड़ा दौड़ रहा है, उस पर मेम एक पैर से खड़ी है। कितने अभ्यास से ऐसा हुआ होगा।

"और उनके दर्शन के लिए कम से कम एक बार रोओ।

"यही दो उपाय हैं,—अभ्यास और अनुराग, अर्थात् उन्हें देखने के लिए व्याकुलता।"

दुमजले पर बैठकखाने के बरामदे में श्रीरामकृष्ण भक्तों

---

* अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।—गीता, १२।५

§ मामेकं शरणं व्रज, अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।
—गीता, १८।६६

के साथ प्रसाद पा रहे हैं। दिन के एक बजे का समय हुआ। भोजन समाप्त होने के साथ ही नीचे के आगन मे एक भक्त गाने लगा।

"जागो, जागो जननि! हे कुलकुण्डलिनि, मूलाधार मे सोते हुए कितने दिन बीत गये।"

श्रीरामकृष्ण गाना सुनकर समाधिमग्न हुए। सारा शरीर स्थिर है, हाथ प्रसाद पात्र पर जैसा था वैसा ही चित्रलिखित सा रह गया। और भोजन न हुआ। काफी देर बाद भाव कुछ कम होने पर कह रहे हैं "मै नीचे जाऊँगा, मै नीचे जाऊँगा।"

एक भक्त उन्हे बडी सावधानी के साथ नीचे ले जा रहे हैं।

आँगन में ही प्रात काल नामसंकीर्तन तथा प्रेमानन्द से श्रीरामकृष्ण का नृत्य हुआ था। अभी तक दरी और आसन बिछा हुआ है। श्रीरामकृष्ण अभी तक भावमग्न हैं। गानेवाले के पास आकर बैठे। गायक ने इतनी देर में गाना बन्द कर दिया था। श्रीरामकृष्ण दीन भाव से कह रहे हैं, भाई, और एक बार 'माँ' का नाम सुनूंगा। गायक फिर गाना गा रहे हैं। भावार्थ —

"जागो, जागो जननि! हे कुलकुण्डलिनि! मूलाधार में निद्रितावस्था में कितने दिन बीत गये। अपनी कार्य-सिद्धि के लिए मस्तक की ओर चलो जहाँ सहस्रदलपद्म में परमशिव विराजमान हैं। हे माँ, चैतन्यरूपिणि, षड्चक्र को भेद कर मन के खेद को दूर करो।"

गाना सुनते-सुनते श्रीरामकृष्ण फिर भावमग्न हो गये।

(२)

निर्जन में साधन। ईश्वर दर्शन। गीता

श्रीरामकृष्ण अपने उसी कमरे में दोपहर को भोजन करके

भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। आज २५ फरवरी १८८३ ई० है।

राखाल, हरीश, लाटू, हाजरा आजकल श्रीरामकृष्ण के पास ही रहते है। कलकत्ते से राम, केदार, नित्यगोपाल, मास्टर आदि भक्त आये हैं और चौधरी भी आये हैं।

अभी-अभी चौधरी की पत्नी का स्वर्गवास हो गया है। मन में शान्ति पाने के उद्देश्य से कई बार वे श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आ चुके हैं। उन्हे उच्च शिक्षा मिली है, सरकारी पद पर नौकरी करते हैं।

श्रीरामकृष्ण (राम आदि भक्तों से)—राखाल (स्वामी ब्रह्मानन्द), नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द), भवनाथ, ये सब नित्य-सिद्ध हैं, जन्म ही से इन्हे चैतन्य प्राप्त है, लोक-शिक्षा के लिए ही शरीर धारण करते हैं।

"एक श्रेणी के लोग और होते हैं। वे कृपासिद्ध कहलाते हैं। एकाएक उनकी कृपा हुई कि दर्शन हुए और ज्ञानलाभ हुआ। जैसे हजार वर्षों के अँधेरे कमरे में चिराग ले जाओ तो क्षणभर मे उजाला हो जाता है—धीरे-धीरे नही होता।

"जो लोग संसार में हैं, उन्हे साधना करनी चाहिए। निर्जन में व्याकुल होकर ईश्वर को बुलाना चाहिए।

(चौधरी से) "पाण्डित्य से वे नही मिलते।

"और उन्हें विचार करके समझने वाला है कौन? उनके पादपद्मों मे जिस प्रकार से भक्ति हो, सबको वही करना चाहिए।

"उनका ऐश्वर्य अनन्त है—समझ में क्या आये? और उनके कार्यों को भी कोई क्या समझे?

"भीष्मदेव जो साक्षात् अष्टवसुओं में एक हैं, शरशय्या पर रोने लगे, कहा—क्या आश्चर्य! पाण्डवों के साथ सदा स्वयं भग-

वान् रहते हैं फिर भी उनके दुख और विपत्तियों का अन्त नहीं!—भगवान् के कार्यों को कोई क्या समझे!

"कोई-कोई सोचते हैं कि हम भजन-पूजन करते हैं—हम जीत गये। परन्तु हारजीत उनके हाथो मे है। यहाँ एक वेश्या मरने के समय ज्ञानपूर्वक गगा-स्पर्श करके मरी!

चौधरी—किस तरह उनके दर्शन हो।

श्रीरामकृष्ण—इन आँखो से वे नही दीख पडते। वे दिव्यदृष्टि देते है, तब उनके दर्शन होते हैं! अर्जुन को विश्वरूप दर्शन के समय श्रीभगवान् ने दिव्यदृष्टि दी थी।

"तुम्हारी फिलासफी (Philosophy) में सिर्फ हिसाबकिताब होना है—सिर्फ विचार करते है। इससे वे नही मिलते।

"यदि रागभक्ति—अनुराग के साथ भक्ति—हो तो वे स्थिर नही रह सकते।

"भक्ति उनको उतनी ही प्रिय है जितनी बैल को सानी।

"रागभक्ति—शुद्धाभक्ति—अहैतुकी भक्ति, जैसे प्रह्लाद की।

"तुम किसी बडे आदमी से कुछ चाहते नही हो, परन्तु रोज आते हो, उन्हे देखना ही चाहते हो। पूछने पर कहते हो—'जी नहीं, कोई काम नही है, बस दर्शन के लिए आ गया।' इसे अहैतुकी भक्ति कहते हैं। तुम ईश्वर से कुछ चाहते नहीं, सिर्फ प्यार करते हो।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गीत का मर्म यह है —

"मैं मुक्ति देने मे कातर नही होता, किन्तु शुद्धा भक्ति देने में कातर होता हूँ।"

"मूल बात है ईश्वर में रागानुगा भक्ति होनी चाहिए और विवेक-वैराग्य।"

चौधरी— महाराज, गुरु के न होने से क्या नहीं होता ?

श्रीरामकृष्ण—सच्चिदानन्द ही गुरु हैं।

"शवसाधना करते समय जब इष्ट-दर्शन का मौका आता है, तब गुरु सामने आकर कहते हैं—'वह देख अपना इष्ट।' फिर गुरु इष्ट में लीन हो जाते हैं। जो गुरु हैं वे ही इष्ट हैं। गुरु पतवार पकड़े रहते हैं।

"अनन्त का तो व्रत, पर पूजा विष्णु की की जाती है। उसी में ईश्वर का अनन्त रूप विराजमान है।

(राम आदि भक्तों से) "यदि कहो कि किस मूर्ति का चिन्तन करेंगे, तो जो मूर्ति अच्छी लगे, उसी का ध्यान करना। परन्तु समझना कि सभी एक हैं।

"किसी से द्वेष न करना चाहिए। शिव, काली, हरि—सब एक ही के भिन्न-भिन्न रूप हैं। वह धन्य है जिसको उनके एक होने का ज्ञान हो गया है।

"बाहर शैव, हृदय में काली, मुख में हरिनाम!

"कुछ-कुछ काम-क्रोधादि के न रहने से शरीर नहीं रहता। परन्तु तुम लोग घटाने ही की चेष्टा करना।"

श्रीरामकृष्ण केदार को देखकर कह रहे हैं—

"ये अच्छे हैं। नित्य भी मानते हैं, लीला भी मानते हैं। एक ओर ब्रह्म और दूसरी ओर देवलीला से लेकर मनुष्यलीला तक!"

नित्यगोपाल को देखकर श्रीरामकृष्ण बोले—

"इसकी अच्छी अवस्था है। (नित्यगोपाल से) वहाँ ज्यादा न जाना। कहीं एक-आध बार चले गये। भक्त है तो क्या हुआ—स्त्री है न ? इसीलिए सावधान रहना।

"सन्यासी के नियम बड़े कठिन हैं। उसके लिए स्त्रियों के चित्र

देखने की भी मनाही है। यह संसारियों के लिए नहीं है।

"स्त्री यदि भक्त भी हो तो भी उससे ज्यादा न मिलना चाहिए।

"जितेन्द्रिय होने पर भी मनुष्य को लोक-शिक्षा के लिए यह सब करना पड़ता है।

"साधु पुरुष का सोलहों आना त्याग देखने पर दूसरे लोग त्याग की शिक्षा लेंगे। नहीं तो वे भी डूब जायँगे। सन्यासी जगद्गुरु हैं।"

अब श्रीरामकृष्ण और भक्तगण उठकर घूमने लगे।

परिच्छेद १४

श्रीरामकृष्ण का जन्ममहोत्सव

(१)

अमावस्या के दिन श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ। राखाल के प्रति गोपाल-भाव

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में राखाल, मास्टर आदि दो-एक भक्तो के साथ बैठे हैं। शुक्रवार ९ मार्च, १८८३ ई०। माघी अमावस्या, प्रातःकाल ८-९ बजे का समय होगा।

अमावस्या के दिन श्रीरामकृष्ण को सदा ही जगन्माता का उद्दीपन हो रहा है। वे कह रहे हैं, 'ईश्वर ही वस्तु है, बाकी सब अवस्तु। माँ ने अपनी महामाया द्वारा मुग्ध कर रखा है। मनुष्यों में देखो, बद्ध जीव ही अधिक हैं। इतना कष्ट पाते हैं, फिर भी उसी 'कामिनी-काचन' में उनकी आसक्ति है। काँटेदार घास खाते समय ऊँट के मुंह से धर-धर खून बहता है, फिर भी वह उसे छोडता नही, खाते ही जाता है। प्रसववेदना के समय स्त्रियाँ कहती हैं, "ओ, अब और पति के पास नही जाऊँगी," परन्तु फिर भूल जाती हैं।

"देखो, उनकी खोज कोई नही करता। अननास को छोड लोग उसके पत्ते खाते हैं।"

भक्त--महाराज, ससार में वे क्यो रख देते हैं?

श्रीरामकृष्ण--ससार कर्मक्षेत्र है। कर्म करते-करते ही ज्ञान होता है। गुरु ने कहा, इन कर्मों को करो और इन कर्मों को न

करो । फिर वे निष्काम कर्म का उपदेश देते हैं * । कर्म करते-करते मन का मैल धुल जाता है । अच्छे डाक्टर की चिकित्सा मे रहने पर दवा खाते-खाते कैसा ही रोग क्यो न हो, ठीक हो जाता है ।

"ससार से वे क्यो नही छोडते ? रोग अच्छा होगा तब छोड़ेगे । कामिनी-काचन का भोग करने की इच्छा जब न रहेगी, तब छोडेगे । अस्पताल में नाम लिखाकर भाग आने का उपाय नही है । रोग रहते डाक्टर साहब न छोड़ेगे ।"

श्रीरामकृष्ण आजकल यशोदा की तरह सदा वात्सल्य रस मे मग्न रहते है, इसलिए उन्होने राखाल को साथ रखा है । राखाल के साथ श्रीरामकृष्ण का गोपाल भाव है । जिस प्रकार माँ की गोद मे छोटा लडका जाकर बैठता है, उसी प्रकार राखाल भी श्रीरामकृष्ण की गोद के सहारे बैठते थे । मानो स्तन-पान कर रहे हों ।

श्रीरामकृष्ण इसी भाव मे बैठे है, इसी समय एक आदमी ने आकर समाचार दिया कि बाढ आ रही है । श्रीरामकृष्ण, राखाल मास्टर सभी लोग बाढ़ देखने के लिए पचवटी की ओर दौडने लगे । पचवटी के नीचे आकर सभी बाढ देख रहे है । दिन के करीब १०॥ बजे का समय होगा । एक नौका की स्थिति को देख श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "देखो, देखो, उस नाव की न जाने क्या दशा होगी !"

अब श्रीरामकृष्ण पचवटी के पथ पर मास्टर, राखाल आदि के साथ बैठे है ।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—अच्छा, बाढ कैसे आती है ?

* कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।—गीता, २।४७

अच्छा साफ जल पाओगे, अधिक नीचे हाथ डालकर हिलाने से जल मैला हो जाता है। इसलिए उनसे भक्ति की प्रार्थना करो। ध्रुव की भक्ति सकाम थी, उसने राज्य पाने के लिए तपस्या की थी, परन्तु प्रह्लाद की निष्काम अहेतुकी भक्ति थी।"

भक्त—ईश्वर कैसे प्राप्त होते है ?

श्रीरामकृष्ण—उसी भक्ति के द्वारा, परन्तु उनसे जबरदस्ती करनी होती है। दर्शन नहीं देगा तो गले मे छुरा भोक लूंगा,—इसका नाम है भक्ति का तम।

भक्त—क्या ईश्वर को देखा जाता है ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ अवश्य देखा जाता है। निराकार-साकार दोनो ही देखे जाते है। चिन्मय साकार रूप का दर्शन होता है। फिर साकार मनुष्यरूप मे भी वे प्रत्यक्ष हो सकते है। अवतार को देखना और ईश्वर को देखना एक ही है। ईश्वर ही युग-युग में मनुष्य के रूप मे अवतीर्ण होते है।

(२)

भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण

कालीमन्दिर में श्रीरामकृष्ण का जन्ममहोत्सव है। फाल्गुन की शुक्ला द्वितीया दिन रविवार, ११ मार्च १८८३। आज श्रीरामकृष्ण के अन्तरग भक्त उन्हे लेकर जन्ममहोत्सव मनायेंगे।

सबेरे से भक्त एक-एक करके एकत्र हो रहे है। सामने माता भवतारिणी का मन्दिर है। मगलारती के बाद ही प्रभाती रागिणी मे मधुर तान लगाती हुई नौबत बज रही है। वसन्त का सुहावना मौसम है, लता वृक्ष नये कोमल पल्लवो से लहराते हुए दीख पडते हैं। इधर श्रीरामकृष्ण के जन्मदिन की याद करके भक्तो के हृदय में आनन्द-सिन्धु उमड रहा है। मास्टर ने देखा,

भवनाथ, राखाल, भवनाथ के मित्र कालीकृष्ण आ गये हैं। श्रीरामकृष्ण पूर्व वाले बरामदे में बैठे हुए इनसे वार्तालाप कर रहे हैं। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—'तुम आये हो। (भक्तों से) लज्जा, घृणा, भय इन तीनों के रहते काम सिद्ध नहीं होता। आज कितना आनन्द होगा, परन्तु जो लोग भगवनाम में मस्त होकर नृत्य-गीत न कर सकेंगे, उनका कहीं कुछ न होगा। ईश्वरी चर्चा में कैसी लज्जा और कैसा भय? अच्छा, अब तुम लोग गाओ।' भवनाथ और कालीकृष्ण गा रहे हैं। गीत इस आशय का है —

'हे आनन्दमय! आज का दिन धन्य है! हम सब तुम्हारे सत्य-धर्म का भारत में प्रचार करेंगे। हर एक हृदय में तुम्हीं विराजित हो, चारों ओर तुम्हारे ही पवित्र नाम की ध्वनि गूँजती है, भक्त-समाज तुम्हारी ही स्तुति करते हैं। धन, जन और मान न चाहिए, दूसरी कामना भी नहीं है, विकल जन तुम्हारी प्रार्थना कर रहे हैं। हे प्रभो, तुम्हारे चरणों में शरण ली तो फिर न विपत्ति में भय है, न मृत्यु में, मुझे तो अमृत मिल गया। तुम्हारी जय हो!"

हाथ जोड़कर बैठे हुए मन लगाकर श्रीरामकृष्ण गाना सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण का मन सूखी दियासलाई है। एक बार घिसने से उद्दीपना होती है। प्राकृत मनुष्यों का मन भींगी दियासलाई है, कितनी ही घिसो, पर जलती नहीं। श्रीरामकृष्ण बड़ी देर तक ध्यान में लगे हुए हैं। कुछ देर बाद कालीकृष्ण भवनाथ से कुछ कह रहे हैं।

कालीकृष्ण श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उठे। श्रीरामकृष्ण

ने विस्मित होकर पूछा—कहाँ जाओगे ?

भवनाथ—कुछ काम है, इसीलिए वे जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—क्या काम है ?

भवनाथ—श्रमजीवियों के शिक्षालय में (Baranagore Workingmen's Institute) जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—भाग्य ही में नहीं है। आज हरिनाम-कीर्तन में कितना आनन्द होता है, देखा नहीं। उसके भाग्य ही में नहीं था।

(३)

जन्मोत्सव के अवसर पर भक्तों के साथ।
सन्यासियों के कठिन नियम।

दिन के साढ़े-आठ नौ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण ने आज गंगा में स्नान नहीं किया, शरीर कुछ अस्वस्थ है। घड़ा भरकर पानी बरामदे में लाया गया। भक्त उनको स्नान करा रहे हैं। नहाते हुए श्रीरामकृष्ण ने कहा, "एक लोटा पानी अलग रख दो।' अन्त में वही पानी सिर पर डाला। आज आप बड़े सावधान हैं, एक लोटे से ज्यादा पानी सिर पर नहीं डाला।

स्नान के बाद मधुर कण्ठ से भगवान् का नाम ले रहे है। धोया हुआ कपड़ा पहने, एक-दो भक्तों के साथ आँगन से होते हुए कालीमाता के मन्दिर की ओर जा रहे हैं। लगातार नाम उच्चारण कर रहे हैं। चितवन बाहर की ओर नहीं है—अण्डे को सेने वाली चिड़िया के सदृश हो रही है।

कालीमाता के मन्दिर में जाकर आपने प्रणाम और पूजा की। पूजा का कोई नियम न था—गन्ध-पुष्प कभी माता के चरणों में देते हैं और कभी अपने सिर पर। अन्त में माता का निर्माल्य सिर पर रख भवनाथ से कहा, 'यह लो डाब' (कच्चा नारियल);

माता का प्रसादी डाब था।

फिर आँगन से होते हुए अपने कमरे की तरफ आ रहे हैं। साथ में भवनाथ और मास्टर हैं। रास्ते की दाहिनी ओर श्रीराधाकान्त का मन्दिर है, जिसे श्रीरामकृष्ण 'विष्णुघर' कहा करते थे। इन युगलमूर्तियों को देखकर आपने भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। बायीं ओर बारह शिव-मन्दिर थे। शिवजी को हाथ जोड़कर प्रणाम करने लगे।

अब श्रीरामकृष्ण अपने डेरे पर पहुँचे। देखा कि और भी कई भक्त आये हुए हैं। राम, नित्यगोपाल, केदार, चटर्जी आदि अनेक लोग आये हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। आपने भी उनसे कुशल प्रश्न पूछा।

नित्यगोपाल को देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "तू कुछ खायेगा?" ये भक्त उस समय बालक के भाव में थे। इन्होंने विवाह नहीं किया था, उम्र २३-२४ वर्ष की होगी। वे सदा भावराज्य में रहते थे और कभी अकेले, कभी राम के साथ, प्रायः श्रीरामकृष्ण के पास आया करते थे। श्रीरामकृष्ण उनकी भावावस्था को देखकर उनसे बड़ा प्यार करते हैं—और कभी-कभी कहते हैं कि उनकी परमहंस की अवस्था है, इसलिए आप उनको गोपाल जैसे देख रहे हैं।

भक्त ने कहा, "खाऊँगा।" उनकी बातें ठीक एक बालक की सी थीं।

खिलाने के बाद श्रीरामकृष्ण उनको गंगा की ओर अपने कमरे के गोल बरामदे में ले गये और उनसे बातें करने लगे।

एक परम भक्त स्त्री, जिनकी उम्र कोई ३१-३२ वर्ष की होगी, श्रीरामकृष्ण के पास अक्सर आती हैं और उनकी बड़ी

भक्ति करती हैं। वे भी इन भक्त की अद्भुत भावावस्था को देखकर उन्हे लडके की भाँति प्यार करती है और उन्हे प्राय अपने घर लिवा ले जाती हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्त से)—क्या तू वहाँ जाता है।

नित्यगोपाल (वालक की तरह)—हाँ, जाता हूँ। मुझे लिवा ले जाती है।

श्रीरामकृष्ण—अरे साधु सावधान! एक-आध बार जाना, बस। ज्यादा मत जाना, नही तो गिर पडेगा। कामिनी और काचन ही माया है। साधु को स्त्रियो से बहुत दूर रहना चाहिए। वहाँ सब डूब जाते है। वहाँ ब्रह्मा और विष्णु तक लोटपोट हो जाते हैं।

भक्त ने सब सुना।

मास्टर (स्वगत)—क्या आश्चर्य की बात है। इन भक्त की परमहस की अवस्था है, यह कहते हुए भी आप इनके पतन की आशका करते हैं। साधुओं के लिए आपने क्या ही कठिन नियम बना दिये है। फिर इन भक्त पर आपका कितना प्रेम है। पहले ही से इन्हे सचेत कर रहे हैं।

(४)

साकार-निराकार। श्रीरामकृष्ण की रामनाम में समाधि

अब श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ अपने कमरे के उत्तर-पूर्व वाले बरामदे में आ गये हैं। भक्तो में दक्षिणेश्वर के रहनेवाले एक गृहस्थ भी बैठे हैं, वे घर पर वेदान्त की चर्चा करते हैं। श्रीरामकृष्ण के सामने वे केदार चटर्जी से शब्द-ब्रह्म पर बातचीत कर रहे हैं।

दक्षिणेश्वर वाले—यह अनाहत शब्द सदैव अपने भीतर और

बाहर हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण—केवल शब्द होने से ही तो सब कुछ नहीं हुआ। शब्द का एक प्रतिपाद्य विषय भी तो होना चाहिए। तुम्हारे नाम ही से मुझे थोड़े ही आनन्द होता है। बिना तुमको देखे सोलहों आने आनन्द नहीं होता।

दक्षिणेश्वर वाले—वही शब्द ब्रह्म है—अनाहत शब्द।

श्रीरामकृष्ण (केदार से)—अहा, समझे तुम? इनका ऋषियों का सा मत है। ऋषियों ने श्रीरामचन्द्र से कहा, "राम, हम जानते हैं कि तुम दशरथ के पुत्र हो। भरद्वाज आदि ऋषि भले ही तुम्हें अवतार जानकर पूजें, पर हम तो अखण्ड सच्चिदानन्द को चाहते हैं।" यह सुनकर राम हँसते हुए चल दिये।

केदार—ऋषियों ने राम को अवतार नहीं जाना। तो वे नासमझ थे।

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर भाव से)—तुम ऐसा मत कहना! जिसकी जैसी रुचि! और जिसके पेट में जो चीज पचे!

"ऋषि ज्ञानी थे, इसीलिए वे अखण्ड सच्चिदानन्द को चाहते थे। पर भक्त अवतार को चाहते हैं, भक्ति का स्वाद चखने के लिए। ईश्वर के दर्शन से मन का अन्धकार दूट जाता है। पुराणों में लिखा है कि जब श्रीरामचन्द्र सभा में पधारे, तब वहाँ सौ सूर्यों का मानो उदय हो गया! तो प्रश्न उठता है कि सभा में बैठे हुए लोग जल क्यों नहीं गये? इसका उत्तर यह है कि उनकी ज्योति जड़ज्योति नहीं है। सभा में बैठे हुए सब लोगों के हृदय-कमल खिल उठे! सूर्य के निकलने से कमल खिल जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण खड़े होकर भक्तों से यह कह ही रहे थे कि एकाएक उनका मन बाहरी जगत् को छोड़ भीतर की ओर मुड़

गया। "हृदयकमल खिल उठे"— ये शब्द कहते ही आप समाधिमग्न हो गये।

श्रीरामकृष्ण उसी अवस्था मे खडे हैं। क्या भगवान् के दर्शन से आपका हृदय-कमल खिल उठा? बाहरी जगत् का कुछ भी ज्ञान आपको न था। मूर्ति की तरह आप खडे हैं। मुँह उज्ज्वल और सहास्य है। भक्तो मे से कुछ खडे और कुछ बैठे हैं, सभी निर्वाक् होकर टकटकी लगाये प्रेम-राज्य की इस अनोखी छवि को--इस अपूर्व समाधिदृश्य को—देख रहे हैं।

बडी देर बाद समाधि टूटी। श्रीरामकृष्ण लम्बी साँस छोडकर बारम्बार "राम-नाम" उच्चारण कर रहे हैं। नाम के प्रत्येक वर्ण से मानो अमृत टपक रहा था। श्रीरामकृष्ण बैठे। भक्त भी चारो तरफ बैठकर उनको एकटक देख रहे थे।

श्रीरामकृष्ण (भक्त से)--जब अवतार आते है, तो साधारण लोग उनको नही जान सकते। वे छिपकर आते है। दो ही चार अन्तरग भक्त उनको जान सकते है। राम पूर्णब्रह्म थे, पूर्ण अवतार थे, यह बात केवल बारह ऋषियो को मालूम थी। अन्य ऋषियो ने कहा था, 'राम, हम तो तुमको दशरथ का बेटा ही समझते हैं।'

'अखण्ड सच्चिदानन्द को सब कोई थोडे ही समझ सकते है। परन्तु भक्ति उसी की पक्की है, जो नित्य को पहुँचकर विलास के उद्देश्य से लीला लेकर रहता है। विलायत में क्वीन (रानी) को जब देखकर आओ, तब क्वीन की बातें, क्वीन के कार्य, इन सबका वर्णन हो सकता है। क्वीन के विषय में कहना तभी ठीक उतरता है। भरद्वाज आदि ऋषियो ने राम की स्तुति की थी और कहा था, 'हे राम, तुम्ही वह अखण्ड सच्चिदानन्द हो! हमारे सामने

तुम मनुष्य के रूप में अवतीर्ण हुए हो। सच तो यह है कि माया के द्वारा ही तुम मनुष्य जैसे दिखते हो।' भरद्वाज आदि ऋषि राम के परम भक्त थे। उन्हीं की भक्ति पक्की है।"

(५)

कीर्तन का आनन्द तथा समाधि

भक्त निर्वाक् होकर यह अवतार तत्त्व सुन रहे हैं। कोई-कोई सोच रहे हैं, "क्या आश्चर्य है! वेदोक्त अखण्ड सच्चिदानन्द जिन्हें वेद ने मन-वचन से परे बताया है—क्या वे ही हमारे सामने साढ़े-तीन हाथ का मनुष्य-शरीर लेकर आते हैं? जब श्रीरामकृष्ण कहते हैं तो वैसा अवश्य ही होगा! यदि ऐसा न होता तो 'राम राम' कहते हुए इन महापुरुष को क्यों समाधि होती? अवश्य इन्होंने हृदय-कमल में राम का रूप देखा होगा।"

थोड़ी देर में कोन्नगर से कुछ भक्त मृदंग और झाँझ लिये संकीर्तन करते हुए बगीचे में आये। मनमोहन, नवाई आदि बहुत से लोग नामसंकीर्तन करते हुए श्रीरामकृष्ण के पास उत्तरी बरामदे में पहुँचे। श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त होकर उनमें मिलकर संकीर्तन कर रहे हैं।

नाचते-नाचते बीच-बीच में समाधि हो जाती है। तब संकीर्तन के बीच में निःस्पन्द होकर खड़े रहते हैं। उसी अवस्था में भक्तों ने उनको फूलों के बड़े-बड़े गजरों से सजाया। भक्त देख रहे हैं मानो सामने ही श्रीगौराङ्ग खड़े हैं। गहरी भाव-समाधि में मग्न हैं। श्रीगौराङ्ग की तरह श्रीरामकृष्ण की भी तीन दशाएँ हैं, कभी अन्तर्दशा—तब जड़ वस्तु की भाँति आप बेहोश और निःस्पन्द हो जाते हैं, कभी अर्धबाह्य दशा—तब प्रेम से भरपूर होकर नाचते हैं, और फिर बाह्य दशा—तब भक्तों के साथ

कीर्तन करते हैं।

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो पड़े हैं। गले में मालाएँ हैं। कहीं आप गिर न पड़ें इसीलिए एक भक्त उनको पकड़े हुए हैं। चारों ओर भक्त खड़े होकर मृदंग और झाँझ से कीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की दृष्टि स्थिर है। श्रीमुख पर प्रेम की छटा झलक रही है। आप पश्चिम की ओर मुँह किये हैं। बड़ी देर तक सब लोग यह आनन्द-मूर्ति देखते रहे।

समाधि खुली। दिन चढ़ गया है। थोड़ी देर बाद कीर्तन भी बन्द हुआ। भक्त श्रीरामकृष्ण को भोजन कराने के लिए व्यग्र हुए।

कुछ विश्राम के पश्चात् श्रीरामकृष्ण एक नया पीला कपड़ा पहने अपनी छोटी खाट पर बैठे। आनन्दमय महापुरुष की उस अनुपम रूपछवि को भक्त देख रहे थे, पर देखने की प्यास नहीं मिटी। वे सोचते थे कि इस रूप-सागर में डूब जायँ।

श्रीरामकृष्ण भोजन करने बैठे। भक्तों ने भी प्रसाद पाया।

(६)
श्रीरामकृष्ण और सर्वधर्मसमन्वय

भोजन के उपरान्त श्रीरामकृष्ण छोटे तख्त पर आराम कर रहे हैं। कमरे में लोगों की भीड़ बढ़ रही है। बाहर के बरामदे भी लोगों से भरे हैं। कमरे के भीतर जमीन पर भक्त बैठे हैं और श्रीरामकृष्ण की ओर ताक रहे हैं। केदार, सुरेश, राम, मनमोहन, गिरीन्द्र, राखाल, भवनाथ, मास्टर आदि बहुत लोग वहाँ पर मौजूद हैं। राखाल के पिता आये हैं, वे भी वहीं बैठे हैं।

एक वैष्णव गोसाईं भी उसी स्थान पर बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे बातें कर रहे हैं। गोसाइयों को देखते ही श्रीरामकृष्ण उनके सामने सिर झुका देते थे—कभी-कभी तो साष्टांग प्रणाम

भी करते थे।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम क्या कहते हो? उपाय क्या है?

गोसाई—जी, नाम से ही सब कुछ होगा। कलियुग में नाम की बड़ी महिमा है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, नाम की बड़ी महिमा तो है, पर बिना अनुराग के क्या हो सकता है? ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होने चाहिए। सिर्फ नाम लेता जा रहा हूँ, पर चित्त कामिनी और काचन में है, इससे क्या होगा?

"बिच्छू या मकड़ी के काटने पर खाली मन्त्र से वह अच्छा नहीं होता—उसके लिए कड़े का ताप भी देना पड़ता है।"

गोसाई—तो अजामिल को क्यों हुआ। वह महा पातकी था, ऐसा पाप ही न था जो उसने न किया हो, पर मरते समय अपने लड़के को 'नारायण' कहकर बुलाने से ही उसका उद्धार हो गया।

श्रीरामकृष्ण—शायद अजामिल पूर्व जन्म में बहुत कर्म कर चुका था। और यह भी लिखा है कि उसने पहले भी तपस्या की थी।

"अथवा यों कहिए कि उस समय उसके अन्तिम क्षण आ गये थे। हाथी को नहला देने से क्या होगा, फिर कूड़ा करकट लिपटाकर वह ज्यों का त्यों हो जाता है। पर हाथीखाने में घुसने के पहले ही अगर कोई उसकी धूल झाड़ दे और उसे नहला दे तो फिर उसका शरीर साफ रह सकता है।

"मान लिया कि नाम से जीव एक बार शुद्ध हुआ, पर वह फिर तरह-तरह के पापों में लिप्त हो जाता है। मन में बल नहीं, वह प्रण नहीं करता कि फिर पाप नहीं करूँगा। गगास्नान से सब

पाप मिट जाते हैं सही, पर सब लोग कहते हैं कि वे पाप एक पेड पर चढे रहते हैं। जब वह मनुष्य गंगाजी से नहाकर लौटता है, तो वे पुराने पाप पेड से कूदकर फिर उसके सिर पर सवार हो जाते हैं। (सब हँसे) उन पुराने पापों ने उसे फिर घेर लिया है! दो-चार कदम चलते ही उसे धर दबाया!

"इसीलिए नाम भी करो और साथ ही प्रार्थना भी करो कि ईश्वर पर अनुराग हो, और जो चीजें दो-चार दिन के लिए हैं—जैसे, धन, मान, देहसुख आदि—उनसे आसक्ति घट जाय।

(गोसाई से) "यदि आन्तरिकता हो तो सभी धर्मों से ईश्वर मिल सकते हैं। वैष्णवों को भी मिलेंगे तथा शाक्तों, वेदान्तियों और ब्राह्मों को भी, मुसलमानों और ईसाइयों को भी। हृदय से चाहने पर सब को मिलेंगे। कोई-कोई झगडा कर बैठते हैं। वे कहते हैं कि हमारे श्रीकृष्ण को भजे बिना कुछ न बनेगा, या हमारी कालीमाता को भजे बिना कुछ न होगा, अथवा हमारे ईसाई धर्म को ग्रहण किये बिना कुछ न होगा।

"ऐसी बुद्धि का नाम हठधर्म है, अर्थात् मेरा ही धर्म ठीक है और बाकी सब का गलत। यह बुद्धि खराब है। ईश्वर के पास हम बहुत रास्तों से पहुँच सकते हैं।

"फिर कोई-कोई कहते हैं कि ईश्वर साकार है, निराकार नहीं। यह कहकर वे झगडने लग जाते हैं! जो वैष्णव है वह वेदान्ती से झगडता है।

"यदि ईश्वर के साक्षात् दर्शन हों, तो सब हाल ठीक-ठीक बताया जा सकता है। जिसने दर्शन किये हैं वे ठीक जानते हैं कि भगवान् साकार भी हैं और निराकार भी, वे और भी कैसे-कैसे हैं, यह कौन बताये।

'कुछ अन्धे एक हाथी के पास गये थे। एक ने बता दिया, इस चौपाये का नाम हाथी है। तब अन्धों से पूछा गया, हाथी कैसा है ? वे हाथी की देह छूने लगे। एक ने कहा, हाथी खम्भे के आकार का है। उसने हाथी का पैर ही छुआ था। दूसरे ने कहा हाथी सूप की तरह है। उसके हाथ हाथी के कान में पड़े थे। इसी तरह किसी ने पेट पकड़कर कुछ कहा, किसी ने सूँड़ पकड़कर कुछ कहा, ऐसे ही ईश्वर के सम्बन्ध में जिसने जितना देखा है, उसने यही सोचा है कि ईश्वर बस ऐसे ही हैं और कुछ नहीं।

'एक आदमी शौच के लिए गया था। लौटकर उसने कहा, मैंने पेड़ के नीचे एक सुन्दर लाल गिरगिट देखा। दूसरे ने कहा, तुमसे पहले मैं उस पेड़ के नीचे गया था परन्तु वह लाल क्यों होने लगा ? वह तो हरा है मैंने अपनी आँखों से देखा है। तीसरे ने कहा —मैं तुम दोनों से पहले गया था, उसको मैंने भी देखा है परन्तु वह न लाल है, न हरा वह तो नीला है। और दो थे उनमें से एक ने बतलाया, पीला और एक ने, खाकी। इस तरह अनेक रंग हो गये। अन्त में सब में झगड़ा होने लगा। हरएक का यही विश्वास था कि उसने जो कुछ देखा है, वही ठीक है। उनकी लड़ाई देख एक ने पूछा, तुम लड़ते क्यों हो ? जब उसने कुल हाल सुना तब कहा, "मैं उसी पेड़ के नीचे रहता हूँ, और उस जानवर को मैं खूब पहचानता हूँ। तुममें से हरएक का कहना सच है। वह कभी हरा, कभी नीला, कभी लाल, इस तरह अनेक रंग धारण करता है। और कभी देखता हूँ, कोई रंग नहीं। निर्गुण है।"

साकार अथवा निराकार ?

(गोस्वामी से) "ईश्वर को सिर्फ साकार कहने से क्या होगा।

वे श्रीकृष्ण की तरह मनुष्यरूप धारण करके आते हैं यह भी सत्य है, अनेक रूपों से भक्तों को दर्शन देते हैं यह भी सत्य है, और फिर वे निराकार अखण्ड सच्चिदानन्द हैं, यह भी सत्य है। वेदों ने उनको साकार भी कहा है, निराकार भी कहा है, सगुण भी कहा है और निर्गुण भी।

"किस तरह, जानते हो? सच्चिदानन्द मानो एक अनन्त समुद्र है। ठंडक के कारण समुद्र का पानी बर्फ बनकर तैरता है। पानी पर बर्फ के कितने ही आकार के टुकड़े तैरते हैं। वैसे ही भक्ति-हिम के लगने से सच्चिदानन्द-सागर में साकार-मूर्ति के दर्शन होते हैं। वे भक्त के लिए साकार होते हैं। फिर जब ज्ञानसूर्य का उदय होता है तब बर्फ गल जाती है, फिर वही पहले का पानी ज्यों का त्यों रह जाता है। ऊपर-नीचे जल ही जल भरा हुआ है। इसीलिए श्रीमद्भागवत में सब स्तव करते हैं, 'हे देव, तुम्हीं साकार हो, तुम्हीं निराकार हो। हमारे सामने तुम मनुष्य बने घूम रहे हो, परन्तु वेदों ने तुम्हीं को वाक्य और मन से परे कहा है।'

"परन्तु यह कह सकते हो कि किसी-किसी भक्त के लिए वे नित्य साकार हैं। ऐसा भी स्थान है जहाँ बर्फ गलती नहीं, स्फटिक का आकार धारण करती है।"

केदार—श्रीमद्भागवत में व्यासदेव ने तीन दोषों के लिए परमात्मा से क्षमा प्रार्थना की है। एक जगह कहा है, हे भगवन्, तुम मन और वाणी से दूर हो, किन्तु मैंने केवल तुम्हारी लीला, तुम्हारे साकार रूप का वर्णन किया है, अतएव अपराध क्षमा कीजियेगा।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ईश्वर साकार भी है और निराकार भी,

फिर साकार-निराकार के भी परे हैं। उनकी इति नहीं की जा सकती।

(७)

श्रीरामकृष्ण, नित्यसिद्ध तथा कौमार वैराग्य

राखाल के पिता बैठे हुए हैं। राखाल आजकल श्रीरामकृष्ण के पास ही रहते हैं। राखाल की माता की मृत्यु हो जाने पर उनके पिता ने अपना दूसरा विवाह कर लिया है। राखाल यहाँ रहते हैं, इसलिए उनके पिता कभी-कभी आया करते हैं। राखाल के यहाँ रहने में इनकी ओर से कोई बाधा नहीं है। ये श्रीमान् और विषयी मनुष्य हैं। सदा मुकदमों की पैरवी में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण के पास कितने ही वकील और डिप्टी मैजिस्ट्रेट आया करते हैं। राखाल के पिता इनसे वार्तालाप करने के लिए कभी-कभी आ जाते हैं। उनसे मुकदमों की बहुत सी बातें सूझ जाती हैं।

श्रीरामकृष्ण रह-रहकर राखाल के पिता को देख रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की इच्छा है, राखाल उन्हीं के पास रह जायँ।

श्रीरामकृष्ण (राखाल के पिता और भक्तों से)—अहा, आजकल राखाल का स्वभाव कैसा हुआ है! उसके मुँह पर दृष्टि डालने से देखोगे, उसके होंठ रह-रहकर हिल रहे हैं। अन्दर में ईश्वर का नाम जपता है, इसलिए होंठ हिलते रहते हैं।

"ये सब लड़के नित्यसिद्ध की श्रेणी के हैं। ईश्वर का ज्ञान साथ लेकर पैदा हुए हैं। कुछ उम्र होते ही ये समझ जाते हैं कि संसार की छूत देह में लगी तो फिर निस्तार न होगा। वेदों में 'होमा' पक्षी की कहानी है। वह चिड़िया आकाश ही में रहती है। आकाश ही में अण्डे देती है। अण्डे गिरते रहते हैं, पर वे

इतनी ऊँचाई से गिरते हैं कि गिरते ही गिरते बीच में वे फूट जाते हैं। तब बच्चे निकल आते हैं। वे भी गिरते रहते हैं। उस समय भी वे इतने ऊँचे पर रहते हैं कि गिरते ही गिरते उनकी आँखें भी खुल जाती हैं। तब वे समझ जाते है कि अरे हम मिट्टी में गिर जायेंगे, और गिरे तो चकनाचूर। मिट्टी देखते ही वे ऊपर अपनी माता की ओर फिर उड जाते हैं। जमीन कभी छूते ही नही। माता के निकट पहुँचना ही उनका लक्ष्य हो जाता है।

"ये सब लडके ठीक वैसे ही हैं। बचपन ही मे ससार देखकर डर जाते है। इनकी एकमात्र चिन्ता यही है कि किस तरह माता के निकट जायँ, किस प्रकार ईश्वर के दर्शन हो।

"यदि यह कहो कि ये रहे विषयी मनुष्यों में, पैदा हुए विषयी के यहाँ, फिर इनमें ऐसी भक्ति, ऐसा ज्ञान कैसे हो गया, तो इसका भी अर्थ है। मैली जमीन पर यदि चना गिर जाय, तो उसमें चना ही फलता है। उस चने से कितने अच्छे काम होते है। मैली जमीन पर गिर गया है, इसलिए उससे कोई दूसरा पौधा थोडे ही होगा।

"अहा, राखाल का स्वभाव आजकल कैसा हो गया है। और होगा भी क्यो नही ? यदि सूरण अच्छा हुआ, तो उसके अकुर भी अच्छे होते है।"

मास्टर (गिरीन्द्र से अलग)—साकार और निराकार की बात कैसी समझायी उन्होंने ! जान पडता है, वैष्णव केवल साकार ही मानते हैं।

गिरीन्द्र—होगा। वे एक ही भाव पर अडे रहते हैं।

मास्टर—'नित्य साकार' आप समझे ? स्फटिकवाली बात ? मैं उसे अच्छी तरह नहीं समझ सका।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—क्या जी, तुम लोग क्या बात-चीत कर रहे हो?

मास्टर और गिरीन्द्र जरा हँसकर चुप हो गये।

वृन्दा दासी (रामलाल से)—रामलाल, अभी इस आदमी को मिठाइयाँ दो, हमें बाद में देना।

श्रीरामकृष्ण—वृन्दा को अभी मिठाइयाँ नहीं दी गयी?

(८)

पंचवटी में कीर्तनानन्द

दिन के तीसरे पहर भक्तगण पंचवटी में कीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भी उनमें मिल गये, भक्तों के साथ नाम संकीर्तन करते हुए आनन्द में मग्न हो रहे हैं।

गीत का भावार्थ —

श्यामा माँ के चरणरूपी आकाश में मन की पतंग उड़ रही थी। कलुष की वायु से वह चक्कर खाकर गिर पड़ी। माया का बोझ भारी हुआ, मैं उसे फिर उठा नहीं सका। स्त्री-पुत्रादि के तागे में उलझकर वह फट गयी। उसका ज्ञानरूपी मस्तक (ऊपर का हिस्सा) अलग हो गया है। उठाने से ही वह गिर पड़ती है। जब सिर ही नहीं रह गया तो वह उड़ कैसे सकती है। साथ के छः आदमियों की (कामनाधादि की) विजय हुई। वह भक्ति के तागे में बँधी थी। खेलने के लिए आते ही तो यह भ्रम सवार हो गया, 'नरेशचन्द्र' का इस हँसने और रोने में तो बेहतर आना ही न था।"

फिर गाना होने लगा। गीत के साथ ही मृदंग-करताल बजने लगे। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ नाच रहे हैं।

गीत का भावार्थ —

"मेरा मन-मधुप श्यामापद-नीलकमल में मस्त हो गया। कामादि पुष्पों में जितने विषय मधु थे, सब तुच्छ हो गये। चरण काले हैं, मधुप काला है, काले में काला मिल गया। पंचतत्त्व यह तमाशा देखकर भाग गये। कमलाकान्त के मन की आशा इतने दिनों में पूर्ण हुई। सुख-दु:ख दोनों बराबर हुए केवल आनन्द का सागर उमड़ रहा है।"

कीर्तन हो रहा है, और भक्त गा रहे हैं।

"श्यामा माँ ने एक कल बनायी है। साढ़े तीन हाथ की कल के भीतर वह कितने ही रंग दिखा रही है। वह स्वयं कल के भीतर रहकर कल की डोर पकड़कर उसे घुमाया करती है। कल कहती है, मैं खुद घूमती हूँ। वह यह नहीं जानती कि कौन उसे घुमा रहा है। जिसने कल को पहचान लिया है, उसे कल न होना होगा। किसी-किसी कल की भक्तिरूपी डोर में श्यामा माँ बँधी हुई है।"

भक्त लोग आनन्द करने लगे। जब उन्होंने थोड़ी देर के लिए गाना बन्द किया तब श्रीरामकृष्ण उठे। इधर-उधर अभी अनेक भक्त हैं। श्रीरामकृष्ण पंचवटी से अपने कमरे की ओर जा रहे हैं। मास्टर साथ हैं। बकुल के पेड़ के नीचे जब वे आये तब त्रैलोक्य से भेंट हुई। उन्होंने प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (त्रैलोक्य से)—पंचवटी में वे लोग गा रहे हैं, एक बार चलकर देखो तो।

त्रैलोक्य—मैं जाकर क्या करूँ?

श्रीरामकृष्ण—क्यों, देखने का आनन्द मिलता।

त्रैलोक्य—एक बार देख आया।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा।

(९)

श्रीरामकृष्ण और गृहस्थधर्म

साढ़े-पाँच या छः बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने घर के दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में बैठे हुए हैं। भक्तों को देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केदार आदि भक्तों से)—जो संसार-त्यागी है वह ईश्वर का नाम तो लेगा ही। उसको तो और दूसरा काम ही नहीं। वह यदि ईश्वर का चिन्तन करता है तो उसमें आश्चर्य की बात क्या है। वह यदि ईश्वर की चिन्ता न करे, यदि ईश्वर का नाम न ले, तो लोग उसकी निन्दा करेंगे।

"संसारी मनुष्य यदि ईश्वर का नाम जपे, तो समझो उसमें बड़ी मर्दानगी है। देखो, राजा जनक बड़े ही मर्द थे। वे दो तलवार चलाते थे, एक ज्ञान की और एक कर्म की। एक ओर पूर्ण ज्ञान था, और दूसरी ओर वे संसार का कर्म कर रहे थे। बदचलन स्त्री घर के सब काम-काज बड़ी खूबी से करती है, परन्तु वह सदा अपने यार की चिन्ता में रहती है।

"साधुसंग की सदा आवश्यकता है। साधु ईश्वर से मिला देते हैं।"

केदार—जी हाँ, महापुरुष जीवों के उद्धार के लिए आते हैं। जैसे रेलगाड़ी के इंजिन के पीछे कितनी ही गाड़ियाँ बँधी रहती हैं, परन्तु वह उन्हें घसीट ले जाता है। अथवा जैसे नदी या तड़ाग कितने ही जीवों की प्यास बुझाते हैं।"

क्रमशः भक्तगण घर लौटने लगे। सभी ने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। भवनाथ को देखकर श्रीरामकृष्ण बोले,

"तू आज न जा, तुझ जैसों को देखते ही उद्दीपना हो जाती है।"

नवनाथ अभी संसारी नहीं हुए। उम्र उन्नीस-बीस होगी। गोरा रंग, सुन्दर देह। ईश्वर के नाम से आँखों में आँसू आ जाते हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें साक्षात् नारायण देखते हैं।

परिच्छेद १५

ब्राह्म भक्तों के प्रति उपदेश

(१)

समाधि में

फाल्गुन के कृष्णपक्ष की पंचमी है, बृहस्पतिवार, २९ मार्च, १८८३। दोपहर को भोजन करके भगवान् श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर के लिए दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर के उसी पहले के कमरे में विश्राम कर रहे हैं। सामने पश्चिम की ओर गंगा बह रही है। दिन के दो बजे का समय है, ज्वार आ रही है।

कोई कोई भक्त आ गये हैं। ब्राह्म भक्त श्रीयुत अमृत और ब्राह्म समाज के नामी गवैये श्रीयुत त्रैलोक्य आ गये हैं।

राखाल बीमार हैं। उन्हीं की बात श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— यह देखो, राखाल बीमार पड़ गया। परन्तु सोडा पीने से कोई कभी अच्छा होता है? इससे क्या होगा? राखाल, तू जगन्नाथ का प्रसाद खा।

यह कहते-कहते श्रीरामकृष्ण एक अद्भुत भाव में आ गये। शायद आप देख रहे हैं, साक्षात् नारायण सामने राखाल के रूप में बालक का वेष धारण करके आ गये हैं। इधर कामिनी-कांचन-त्यागी बालभक्त शुद्धात्मा राखाल हैं और उधर भगवत्प्रेम में सदा मग्न रहनेवाले श्रीरामकृष्ण की प्रेमभरी दृष्टि—अतएव वात्सल्यभाव का उदय होना स्वाभाविक था। वे राखाल को वात्सल्यभाव से देखते हुए बड़े ही प्रेम से 'गोविन्द' 'गोविन्द'

उच्चारण करने लगे। श्रीकृष्ण को देखकर यशोदा के मन में जिस भाव का उदय होता था, यह शायद वही भाव है! भक्तगण यह अद्भुत दृश्य देखकर स्थिर भाव से बैठे हैं। 'गोविन्द' नाम जपते हुए भक्तावतार श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। शरीर चित्रवत् स्थिर हो गया! इन्द्रियाँ मानो अपने काम से जवाब देकर चली गयीं। नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि स्थिर हो रही है। साँस चल रही है या नहीं, इसमें सन्देह है। इस लोक में केवल शरीर पड़ा हुआ है, आत्माराम चिदाकाश में विहार कर रहे हैं। अब तक जो माता की तरह सन्तान के लिए घबड़ाये हुए थे, अब कहाँ हैं? क्या इसी अद्भुत अवस्था का नाम 'समाधि' है?

इसी समय गेरुए कपड़े पहने हुए एक बंगाली आ पहुँचे। भक्तों के बीच में बैठ गये।

(२)

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते।। गीता, ३।६

वैराग्य। नरेन्द्र आदि नित्यसिद्ध हैं। समाधितत्त्व

धीरे-धीरे श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटने लगी। भाव में आप ही आप बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (गेरुआ देखकर)—यह गेरुआ क्यों? क्या कुछ लपेट लेने ही से हो गया? (हँसते हैं) किसी ने कहा था—'चण्डी छोड़कर अब ढोल बजाता हूँ।' पहले चण्डी के गीत गाता था, फिर ढोल बजाने लगा। (सब हँसते हैं)

"वैराग्य तीन-चार प्रकार के होते हैं। जिसने संसार की ज्वाला से दग्ध होकर गेरुआ धारण कर लिया है, उसका वैराग्य अधिक दिन नहीं टिकता। किसी ने देखा, काम कुछ मिलता

नहीं, झट गेरुआ पहनकर काशी चला गया ! तीन महीने बाद घर में चिट्ठी आयी, उसने लिखा—'मुझे काम मिल गया है, कुछ ही दिनों में घर आऊँगा, चिन्ता न करना !' परन्तु जिसके सब कुछ है, चिन्ता की कोई बात नहीं, किन्तु फिर भी कुछ अच्छा नहीं लगता, अकेले-अकेले में भगवान् के लिए रोता है, उसी का वैराग्य यथार्थ वैराग्य है ।

"मिथ्या कुछ भी अच्छा नहीं । मिथ्या वेष भी अच्छा नहीं । वेष के अनुकूल यदि मन न हुआ, तो क्रमशः उससे महा अनर्थ हो जाता है । झूठ बोलने या बुरा कर्म करने से धीरे-धीरे उसका भय चला जाता है । इससे सादे कपड़े पहनना अच्छा है । मन में आसक्ति भरी है, कभी-कभी पतन भी हो जाता है, और बाहर से गेरुआ ! यह बड़ा ही भयानक है !

"यहाँ तक कि जो लोग सच्चे हैं उनके लिए कौतुकवश भी झूठ की नकल बुरी चीज है । केशव सेन के यहाँ से वृन्दावन-नाटक देखने गया था । न जाने कैसा क्रॉस (Cross) वह लाया और फिर पानी छिड़कने लगा, कहता था, शान्तिजल है । एक को देखा, मतवाला बना बहक रहा था ।

ब्राह्मभक्त—कु—बाबू थे ।

श्रीरामकृष्ण—भक्त के लिए इस तरह का स्वांग करना अच्छा नहीं । उन सब विषयों में बड़ी देर तक मन को डाल रखना ही दोष है । मन धोबी के घर का कपड़ा है, जिस रंग में रंगोगे, वही रंग उस पर चढ़ जायगा । मिथ्या में बड़ी देर तक डाल रखोगे तो मिथ्या ही हो जायगा ।

"एक दूसरे दिन निमाई-सन्यास का अभिनय था । केशव के घर में मैं भी देखने के लिए गया था । केशव के खुशामदी चेले

ने अभिनय बिगाड़ डाला था। एक ने केशव से कहा—'कलिकाल के चैतन्य तो आप ही हैं।' केशव मेरी ओर देखकर हँसता हुआ कहने लगा, तो फिर ये क्या हुए ? मैंने कहा—'मैं तुम्हारे दासों का दास—रज की रज हूँ।' केशव को नाम और यश की अभिलाषा थी।"

श्रीरामकृष्ण (अमृत और त्रैलोक्य से)—नरेन्द्र और राखाल आदि ये जो लड़के हैं, ये नित्यसिद्ध हैं। ये जन्म-जन्मान्तर से ईश्वर के भक्त हैं। अनेक लोगों को बड़ी साधना के बाद कहीं थोड़ी सी भक्ति प्राप्त होती है, परन्तु इन्हें जन्म से ही ईश्वर पर अनुराग है। मानो स्वयम्भू शिव है—बैठाये हुए शिव नहीं।

"नित्यसिद्धों का एक दर्जा ही अलग है। सभी चिड़ियों की चोंच टेढ़ी नहीं होती। ये कभी संसार में नहीं फँसते, जैसे प्रह्लाद।

"साधारण मनुष्य साधना करता है। ईश्वर पर भक्ति भी करता है और संसार में भी फँस जाता है, स्त्री और धन के लिए भी हाथ लपकाता है। मक्खी जैसे फूल पर भी बैठती है, बर्फियों पर भी बैठती है और विष्ठा पर भी बैठती है। (सब स्तब्ध हैं)

"नित्यसिद्ध तो मधुमक्खी की तरह होते हैं। मधुमक्खियाँ केवल फूल पर बैठती हैं और मधु ही पीती हैं। नित्यसिद्ध रामरस का ही पान करते हैं, विषयरस की ओर नहीं जाते।

"साधना द्वारा जो भक्ति प्राप्त होती है, इनकी वह भक्ति नहीं है। इतना जप, इतना ध्यान करना होगा, इस तरह पूजा करनी होगी, यह सब विधिवादीय भक्ति है। जैसे किसी गाँव में किसी को जाना है, परन्तु रास्ते में धनहे खेत पड़ते हैं, तो मेड़ों से घूम-कर उसे जाना पड़ता है। अगर किसी को सामनेवाले गाँव में जाना है, परन्तु रास्ते में नदी पड़ती है, तो टेढ़ा रास्ता चलकर

लगाते हुए ही पार करना पडता है ।

"रागभक्ति, प्रेमाभक्ति, ईश्वर पर आत्मीयों की सी प्रीति होने पर फिर कोई विधिनियम नहीं रह जाता । तब का जाना धनहे खेतों की मेडों पर का जाना नहीं, किन्तु कटे हुए खेतों से सीधा निकल जाना है । चाहे जिस ओर से सीधे चले जाओ ।

"बाढ आने पर फिर नदी के टेढे रास्ते से नहीं जाना पडता । तब इधर उधर की जमीन पर और रास्ते पर एक बाँस पानी चढ जाता है । तब तो बस सीधे नाव चलाकर पार हो जाओ ।

"इस रागभक्ति, अनुराग या प्रेम के बिना ईश्वर नहीं मिलते ।"

अमृत—महाराज ! इस समाधि अवस्था में भला आपको क्या जान पडता है ?

श्रीरामकृष्ण—सुना नहीं ? किस तरह होता है, सुनो । जैसे हण्डी की मछली गंगा में छोड देने से फिर वह गंगा की मछली हो जाती है ।

अमृत—क्या जरा भी अहंकार नहीं रह जाता ?

श्रीरामकृष्ण—नहीं, पर मेरा कुछ अहंकार रह जाता है । सोने के एक टुकडे को तुम चाहे जितना घिस डालो, पर अन्त में एक छोटा सा कण बचा ही रहता है । और, जैसे कोई बडी भारी अग्निराशि है, उसकी एक जरा सी चिनगारी हो । बाह्य ज्ञान चला जाता है, परन्तु थोडा सा अहंकार रह जाता है, शायद वे विलास के लिए रख छोडते हैं । 'मैं' और 'तुम' इन दोनों के रहने ही से स्वाद मिलता है । कभी-कभी वे 'अहं' को भी मिटा देते हैं । इसे 'जड समाधि' या 'निर्विकल्प समाधि' कहते हैं ।

तब क्या अवस्था होती है, यह कहा नहीं जा सकता ! नमक का पुतला समुद्र नापने गया था। ज्यो ही समुद्र मे उतरा कि गल गया। 'तदाकाराकारित'। अब लौटकर कौन बतलाये कि समुद्र कितना गहरा है।

परिच्छेद १६

ईश्वरलाभ के उपाय

(१)

कीर्तनानन्द में । संसारी तथा शास्त्रार्थ

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बलराम बाबू के मकान में बैठे हुए है, बैठक के उत्तर-पूर्व वाले कमरे में । दोपहर ढल चुकी, एक बजा होगा । नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द), भवनाथ, राखाल, बलराम और मास्टर कमरे में उनके साथ बैठे हुए हैं ।

आज अमावस्या है, शनिवार ७ अप्रैल, १८८३ । श्रीरामकृष्ण बलराम बाबू के घर सुबह को आये थे । दोपहर को भोजन वहीं किया है । नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल तथा और भी दो एक भक्तों को आपने निमन्त्रित करने के लिए कहा था, अतएव उन लोगों ने भी यहीं आकर भोजन किया है । श्रीरामकृष्ण बलराम से कहते थे—"इन्हें खिलाना, तो बहुत से साधुओं के खिलाने का पुण्य होगा ।"

कुछ दिन हुए श्रीरामकृष्ण श्रीयुत केशव बाबू के यहाँ नव वृन्दावन नाटक देखने गये थे । साथ नरेन्द्र और राखाल भी गये थे । नरेन्द्र ने भी अभिनय में भाग लिया । केशव पवहारी बाबा बने थे ।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्रादि भक्तों से)—केशव साधु बनकर शान्तिजल छिड़कने लगा । परन्तु मुझे यह अच्छा न लगा । अभिनय में शान्ति-जल !

"और एक आदमी पाप-पुण्य बना था । ऐसा करना भी अच्छा

नही। न पाप करना ही अच्छा है और न पाप का अभिनय करना ही।"

नरेन्द्र का शरीर अच्छा नही, परन्तु उनका गाना सुनने की श्रीरामकृष्ण को बडी इच्छा है। वे कहने लगे—"नरेन्द्र, ये लोग कह रहे हैं, तू कुछ गा।"

नरेन्द्र तानपुरा लेकर गाने लगे। गीत का भावार्थ यह है—

१। 'मेरे प्राण-पिंजरे के पक्षी, गाओ। ब्रह्म-कल्पतरु पर बैठकर परमात्मा के गुण गाओ, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष-रूपी पके हुए फल खाओ।. "

२। "वे विश्वरजन हैं, परम-ज्योति ब्रह्म है, अनादिदेव जगत्पति हैं, प्राणो के भी प्राण है। "

३। "हे राजराजेश्वर! दर्शन दो! मै जिन प्राणो को तुम्हारे चरणो मे अर्पित कर रहा हूँ, वे ससार के अनल-कुण्ड मे पडकर झुलस गये है। और उस पर यह हृदय कलुप-कलक से आवृत है, दयामय! मोहमुग्ध होकर मैं मृतकल्प हो रहा हूँ, तुम मृत-सजीवनी दृष्टि से मेरा शोधन कर लो।"

और भी दो गाने नरेन्द्रनाथ ने गाये। गानो के समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने भवनाथ से गाने के लिए कहा। भवनाथ ने भी एक गाना गाया।

नरेन्द्र (हँसते हुए)—इसने (भवनाथ ने) पान और मछली खाना छोड दिया है।

श्रीरामकृष्ण (भवनाथ से हँसते हुए)—क्यो रे, यह क्या किया? इससे कुछ नही होता। **कामिनी-कांचन का त्याग ही त्याग है।** राखाल कहाँ है?

एक भक्त—जी, राखाल सो रहे है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—"एक आदमी बगल में चटाई लेकर नाटक देखने के लिए गया था। नाटक शुरु होने में देर थी, इसलिए वह चटाई बिछाकर सो गया। जब जागा तब सब समाप्त हो गया था! (सब हँसते हैं)

"फिर चटाई बगल मे दबाकर घर लौट आया!"

रामदयाल बहुत बीमार हैं। एक दूसरे कमरे मे, बिछौने पर पड़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण उस कमरे में जाकर उनकी बीमारी का हाल पूछने लगे।

तीसरे पहर के चार बज चुके हैं। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र, राखाल, मास्टर, भवनाथ आदि के साथ बैठक मे बैठे हुए हैं। कई ब्राह्म-भक्त भी आये हैं। उन्हीं के साथ बातचीत हो रही है।

ब्राह्मभक्त—महाराज ने पचदशी देखी है?

श्रीरामकृष्ण—यह सब पहले-पहल एक बार सुनना पड़ता है—पहले-पहल एक बार विचार कर लेना पड़ता है। इसके बाद—

'यत्नपूर्वक आदरणीय श्यामा माँ को हृदय में रखना। मन तू देख और मैं देखूँ और दूसरा कोई न देखने पाये।'

"साधन-अवस्था में वह सब सुनना पड़ता है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर ज्ञान का अभाव नहीं रहता। माँ ज्ञान की राशि ठेलती रहती हैं।

"पहले हिज्जे करके लिखना पड़ता है—फिर सीधे घसीटते जाओ।

"सोना गलाने के समय कमर कसकर काम में लगना पड़ता है। एक हाथ में धौंकनी—दूसरे में पंखा—मुँह से फूँकना,—जब तक सोना न गल जाय। गल जाने पर ज्यों ही साँचे में छोड़ा कि सब चिन्ता दूर हो गयी।

"शास्त्र पढने ही से कुछ नही होता। कामिनी-काचन मे रहने से वे शास्त्र का अर्थ समझने नही देते। ससार की आसक्ति मे ज्ञान का लोप हो जाता है।

" 'प्रयत्नपूर्वक मैंने काव्यरसो के जितने भेद सीखे थे वे सब इस बहरे की प्रीति में पडने से नष्ट हो गये।' " (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण ब्राह्मभक्तो से केशव की बात कहने लगे—

"केशव योग और भोग दोनो मे है। ससार मे रहकर ईश्वर की ओर उनका मन लगा रहता है।"

एक भक्त विश्वविद्यालय की उपाधिवितरण सभा (Convocation) के सम्बन्ध में कहते हुए बोले—"देखा, वहाँ बडी भीड लगी हुई थी।"

श्रीरामकृष्ण—एक जगह बहुत से लोगो को देखने पर ईश्वर का उद्दीपन होता है। यदि मैं ऐसा देखता तो विह्वल हो जाता।

(२)

मणिलाल और काशीदर्शन ! 'ईश्वर कर्ता'

दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर मे भगवान श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ आनन्द कर रहे हैं। सदा ईश्वर के भावो में मस्त रहते हैं। कभी समाधिमग्न, कभी कीर्तन के आनन्द में डूबे हुए, कभी प्राकृत मनुष्यो की तरह भक्तो से वार्तालाप करते हैं, मुख मे सदा ईश्वरी प्रसग रहता है, मन सदा अन्तर्मुख, और व्यवहार पाँच वर्ष के बालक की तरह। अभिमान कही छू तक नही गया।

रविवार, चैत्र की शुक्ला प्रतिपदा, ८ अप्रैल १८८३। कल शनिवार को श्रीरामकृष्ण बलराम बाबू के घर गये थे।

श्रीरामकृष्ण बच्चे की तरह बैठे हुए है। पास ही बालकभक्त राखाल बैठे हैं। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण के भतीजे रामलाल भी हैं। किशोरी तथा और भी कुछ भक्त आ गये। थोड़ी देर में पुराने ब्राह्मभक्त श्रीयुत मणिलाल मल्लिक भी आये और भूमिष्ठ हो उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

मणिलाल काशी गये थे। व्यवसायी आदमी हैं, काशी में उनकी कोठी है।

श्रीरामकृष्ण—क्यों जी, काशी गये थे, कुछ साधुमहात्मा भी देखे?

मणिलाल—जी हाँ, त्रैलंग स्वामी, भास्करानन्द, इन सबको देखने गया था।

श्रीरामकृष्ण—कहो, इन सबको कैसे देखा?

मणि—त्रैलंग स्वामी उसी ठाकुरवाड़ी में हैं, मणिकर्णिका घाट पर वेणीमाधव के पास। लोग कहते हैं, पहले उनकी बड़ी ऊँची अवस्था थी। बड़े-बड़े चमत्कार दिखला सकते थे। अब बहुत कुछ घट गया है।

श्रीरामकृष्ण—यह सब विषयी लोगों की निन्दा है।

मणि—भास्करानन्द सबसे मिलते जुलते हैं, वे त्रैलंगस्वामी की तरह नहीं हैं कि एकदम बोलना ही बन्द।

श्रीरामकृष्ण—भास्करानन्द से तुम्हारी कोई बातचीत हुई?

मणि—जी हाँ, बड़ी बातें हुई। उनसे पापपुण्य की भी बात चली थी। उन्होंने कहा, पापमार्ग का त्याग करना, पाप की चिन्ता न करना; ईश्वर यही सब चाहते हैं। जिन कामों के करने से पुण्य होता है, उन्हें अवश्य करना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह एक तरह की बात है। ऐहिक इच्छाएँ रखनेवालों के लिए। परन्तु जिनमें चैतन्य का उदय हुआ है,

उनका भाव एक दूसरी तरह का होता है। वे जानते हैं कि ईश्वर ही एकमात्र कर्ता है और सब अकर्ता हैं। जिन्हे चैतन्य हुआ है, उनके पैर बेताल नही पडते। उन्हे हिसाब-किताब करके पाप का त्याग नहीं करना पडता। ईश्वर पर उनका इतना अनुराग होता है कि जो कर्म वे करते हैं, वही सत्कर्म हो जाता है, परन्तु वे जानते हैं कि इन सब कर्मों का कर्ता मै नही हूँ। मै तो उनका दास हूँ। मै यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं। वे जैसा कराते हैं वैसा ही करता हूँ, जैसा कहलाते हैं, वैसा ही कहता हूँ जैसा चलाते है, वैसा ही चलता हूँ।

'जिन्हे चैतन्य हुआ है, वे पाप-पुण्य के अतीत हो गये, वे देखते हैं, ईश्वर ही सब कुछ करते हैं। कहीं एक मठ था। मठ के साधु-महात्मा रोज भिक्षा के लिए जाया करते थे। एक दिन एक साधु ने देखा कि एक जमीदार किसी किसान को पीट रहा है। साधु बडे दयालु थे। बीच मे पडकर उन्होने जमीदार को मारने से मना किया। जमीदार उस समय मारे गुस्से के आग-बबूला हो रहा था। उसने दिल का सारा बुखार महात्माजी पर ही उतारा, उन्हे इतना पीटा कि वे बडी देर तक बेहोश पडे रहे। किसी ने मठ मे जाकर खबर दी कि तुम्हारे किसी साधु को एक जमीदार ने बहुत मारा। मठ के अन्य साधु दौडते हुए आये और देखा तो वे साधु बेहोश पडे हैं। तब उन्हे उठाकर मठ के भीतर किसी कमरे मे सुलाया। साधु बेहोश थे, चारो ओर से लोग उन्हे घेरे दुःखित भाव से बैठे थे। कोई-कोई पखा झल रहे थे। एक ने कहा, मुँह मे जरा दूध डालकर तो देखो। मुँह मे दूध डालते ही उन्हे होश आया। आँखें खोलकर ताकने लगे। किसी ने कहा, अब यह देखना चाहिए कि इन्हे इतना ज्ञान है

था नहीं कि आदमी पहचान सके। यह कहकर उसने ऊँची आवाज लगाकर पूछा—क्यों महाराज, आपको दूध कौन पिला रहा है? साधु ने धीमे स्वर में कहा—भाई! जिसने मुझे मारा था वही अब दूध पिला रहा है।

"ईश्वर को बिना जाने ऐसी अवस्था नहीं होती।"

मणिलाल—जी हाँ, पर आपने यह जो कहा यह बड़ी ऊँची अवस्था की बात है। भास्करानन्द के साथ ऐसी ही कुछ बातें हुई थी।

श्रीरामकृष्ण—वे किसी मकान में रहते हैं?

मणिलाल—जी हाँ, एक आदमी के घर में रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण—उम्र क्या है?

मणिलाल—पचपन की होगी।

श्रीरामकृष्ण—कुछ और भी बातें हुई?

मणिलाल—मैंने पूछा, भक्ति कैसे हो? उन्होंने बतलाया, नाम जपो, राम राम कहो।

श्रीरामकृष्ण—यह बड़ी अच्छी बात है।

(२)

गृहस्थ और कर्मयोग

श्रीठाकुर-मन्दिर में भवतारिणी, श्रीराधाकान्त और द्वादश शिवमन्दिरों के महादेवों की पूजा समाप्त हो गयी। अब उनकी भोगारती के बाजे बज रहे हैं। चैत का महीना, दोपहर का समय है। अभी-अभी ज्वार का चढ़ना आरम्भ हुआ है। दक्षिण की ओर से बड़े जोरों की हवा चल रही है। पूतसलिला भागीरथी अभी-अभी उत्तरवाहिनी हुई हैं। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद विश्राम कर रहे हैं।

राखाल बसीरहाट मे रहते हैं । वहाँ, गरमी के दिनों मे पानी के अभाव से लोगों को बडा कष्ट होता है ।

श्रीरामकृष्ण (मणिलाल से)—देखो, राखाल कहता था, उसके देश में लोगों को पानी बिना बडा कष्ट होता है । तुम वहाँ एक तालाब क्यों नही खुदवा देते ? इससे लोगों का बडा उपकार होगा । (हँसते हुए) तुम्हारे पास तो बहुत रुपये है, इतने रुपये रखकर क्या करोगे ? ……(श्रीरामकृष्ण के साथ दूसरे भक्त भी हँस पडे)

मणिलाल कलकत्ते की सिंदूरिया पट्टी मे रहते हैं । सिंदूरिया पट्टी के ब्राह्मसमाज के वार्षिक उत्सव मे वे बहुत से लोगो को आमन्त्रित करते हैं । वराहनगर में मणिलाल का एक बगीचा भी है । वहाँ वे बहुधा अकेले आया करते हैं और उस समय श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर जाया करते हैं । वे सचमुच बडे हिसाबी है । रास्ते भर के लिए किराये की गाडी नही करते । पहले ट्राम में चढकर शोभाबाजार तक आते हैं । फिर वहाँ से कई आदमियो के साथ हिस्से मे किराया देकर घोडागाडी पर चढकर वराहनगर आते हैं, परन्तु रुपये की कमी नही है । कई साल बाद गरीब विद्यार्थियो के लिए उन्होने एक ही किश्त मे पचीस हजार रुपये देने का बन्दोबस्त कर दिया था ।

मणिलाल चुप बैठे रहे । कुछ देर दूसरी बाते करके बोले —महाराज ! आप तालाब खुदाने की बात कह रहे थे । कहने ही से काम हो जाता ।

(४)

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण तथा ब्राह्मभक्त । प्रेमतत्त्व

कुछ देर बाद कलकत्ते से कई पुराने ब्राह्मभक्त आ पहुँचे ।

उनमे एक श्रीठाकुरदास सेन भी थे। कमरे मे कितने ही भक्तो का समागम हुआ है। श्रीरामकृष्ण अपने छोटे तख्त पर बैठे हुए हैं। महास्य वदन, बालक की सी मूर्ति, उत्तरास्य होकर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (ब्राह्म तथा दूसरे भक्तो से)—तुम प्रेम-प्रेम चिल्लाते हो, पर प्रेम को क्या ऐसी साधारण वस्तु समझ लिया है? प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था। **प्रेम के दो लक्षण हैं।** पहला, ससार भूल जाना है। ईश्वर पर इतना प्यार होता है कि ससार का कोई ज्ञान ही नही रह जाता। चैतन्यदेव वन देखकर वृन्दावन सोचते थे और समुद्र देखकर यमुना सोचते थे। दूसरा लक्षण यह है कि अपनी देह जो इतनी प्यारी वस्तु है, उस पर भी ममता न रह जायगी। देहात्मबोध समूल नष्ट हो जाता है।

ईश्वर-प्राप्ति के कुछ लक्षण हैं। जिसके भीतर अनुराग के लक्षण प्रकाशित हो रहे हैं, उसके लिए ईश्वर-प्राप्ति मे अधिक देर नहीं है।

'अनुराग के ऐश्वर्य क्या हैं, सुनोगे? विवेक, वैराग्य, जीवो पर दया, साधुसेवा, साधुसग, ईश्वर का नाम-गुणकीर्तन, सत्य बोलना, यही सब।

"अनुराग के ये ही सब लक्षण देखने पर ठीक-ठीक कहा जा सकता है कि ईश्वर-प्राप्ति में अब बहुत देर नही है। यदि किसी नौकर के घर उसके मालिक का जाना ठीक हो जाय तो नौकर के घर की दशा देखकर यह बात समझ मे आ जाती है। पहले घासफूस की कटाई होती है, घर का जाला झाडा जाता है, घर बुहारा जाता है। बाबू खुद अपने यहाँ मे दरी और हुक्का भेज देते हैं। यह सब सामान जब उसके घर आने लगता है, तब समझने में कुछ बाकी नही रहता कि अब बाबूजी आना ही

चाहते हैं।"

एक भक्त—क्या पहले विचार करके इन्द्रियनिग्रह करना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण—वह भी एक रास्ता है, विचार-मार्ग। भक्ति-मार्ग से अन्तरिन्द्रिय-निग्रह आप ही आप हो जाता है और सहज ही हो जाता है। ईश्वर पर प्यार जितना ही बढता जाता है, उतना ही इन्द्रिय-सुख अलोना मालूम पडता है।

"जिस रोज लडका मर जाता है उस रोज क्या स्त्री-पुरुष का मन देहसुख की ओर जा सकता है?"

एक भक्त—उन्हे प्यार कर कहां सकते हैं?

श्रीरामकृष्ण—उनका नाम लेते रहने से सब पाप कट जाते हैं। काम, क्रोध, शरीर-सुख की इच्छा, ये सब दूर हो जाते हैं?

एक भक्त—उनके नाम मे रुचि नहीं होती।

श्रीरामकृष्ण—व्याकुल होकर उनसे प्रार्थना करो जिसमे उनके नाम मे रुचि हो। वे ही तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करेंगे।

श्रीरामकृष्ण गन्धर्व कण्ठ से गाने लगे। जीवों के दुःख से कातर होकर माँ से अपने हृदय का दुःख कह रहे हैं। अपने पर प्राकृत जीवो की अवस्था का आरोप करके माँ को जीवो का दुःख गाकर सुना रहे है। गीत का आशय यह है—

"माँ श्यामा! दोष किसी का नहीं, मैं जिस पानी मे डूब रहा हूँ, वह मेरे ही हाथो के खोदे कुएँ का है। माँ कालमनोरमा, षड्रिपुओ की कुदाल लेकर मैंने पुण्य-क्षेत्र पर कूप खोदा जिसमें अब कालरूपी पानी भरा हुआ है। तारिणि, त्रिगुण-धारिणि माँ, सगुण ने विगुण कर दिया है, परन्तु अब मेरी क्या दशा होगी? इन वारि का निवारण कैसे करूँ? जब यह सोचता हूँ तब आँखो

मे वारिधारा वहने लगती है। पहले पानी कमर तक था, वहाँ मे छाती तक आया। इस पानी मे मेरे जीवन की रक्षा कैसे होगी ? माँ मुझे तेरी ही अपेक्षा है। मुझे तू मुक्ति-भिक्षा दे, कृपा-कटाक्ष करके भवसागर से पार कर दे।"

फिर गाना होने लगा—उनके नाम पर रुचि होने से जीवो का विकार दूर हो जाता है—इसी भाव का।

'हे शंकरि ! यह कैसा विकार है ? तुम्हारी कृपा-औषधि मिलने पर ही यह दूर होगा। मिथ्या गर्व से मेरा सर्वांग जल रहा है धन जन की तृष्णा छूटती भी नही, अब मै कैसे जीवित रह सकता हूँ ? जो कुछ कहता हूँ सब अनित्य प्रलाप है। माया की नीद किसी तरह नही छटती। पेट मे हिंसा की कृमि हो गयी है व्यर्थ कामो में घूमते रहने का भ्रम-रोग हो गया है। जब तुम्हारे नाम ही पर अरुचि है, तब भला इस रोग से मै कैसे बच सकूँगा ?'

श्रीरामकृष्ण—उनके नाम में अरुचि। रोग में यदि अरुचि हो गयी तो फिर वचने की राह नही रह जाती। यदि जरा भी रुचि हो तो वचने की बहुत कुछ आशा है। इसीलिए नाम में रुचि होनी चाहिए। ईश्वर का नाम लेना चाहिए, दुर्गानाम, कृष्ण-नाम, शिवनाम, चाहे जिस नाम से पुकारो। यदि नाम लेने में दिन-दिन अनुराग बढ़ता जाय, आनन्द हो तो फिर कोई भय नही, विकार दूर होगा ही—उनकी कृपा अवश्य होगी।

आन्तरिक भक्ति तथा दिखावटी भक्ति। भगवान् मन देखते हैं

जैसा भाव होता है लाभ भी वैसा ही होता है। रास्ते मे दो मित्र जा रहे थे। एक मित्र ने कहा आओ भाई, जरा भागवत

सुने । दूसरे ने जरा झाँककर देखा । फिर वहाँ से वेश्या के घर चला गया । वहाँ कुछ देर बाद उसके मन मे बडी विरक्ति हो गयी । वह आप ही आप कहने लगा, 'मुझे धिक्कार है । मेरे मित्र ने मुझसे भागवत सुनने के लिए कहा और मै यहाँ कहाँ पडा हूँ ?' इधर जो व्यक्ति भागवत सुन रहा था वह भी अपने मन को धिक्कार रहा था । वह कह रहा था, 'मै कैसा मूर्ख हूँ ! यह पण्डित न जाने क्या बक रहा है और मै यहाँ बैठा हुआ हूँ ! मेरा मित्र वहाँ कैसे आनन्द मे होगा ।' जब ये दोनो मरे, तब जो भागवत सुन रहा था, उसे तो यमदूत ले गये और जो वेश्या के घर गया था, उसे विष्णु के दूत वैकुण्ठ मे ले गये ।

"भगवान् मन देखते है । कौन क्या कर रहा है, कहाँ पडा हुआ है, यह नही देखते । 'भावग्राही जनार्दन ।'

"कर्तभिजा नाम का एक सम्प्रदाय है । मन्त्र-दीक्षा देने के समय कहते है, 'अब मन तेरा है' । अर्थात् सब कुछ तेरे मन पर निर्भर है ।

"वे कहते है जिसका मन ठीक है, उसका करण ठीक है, वह अवश्य ईश्वर को प्राप्त करेगा ।

"मन के ही गुण से हनुमान समुद्र पार कर गये । 'मै श्रीरामचन्द्र का दास हूँ, मैने रामनाम उच्चारण किया है, मै क्या नही कर सकता ?'—विश्वास इसे कहते है ।

"जब तक अहकार है तब तक अज्ञान है । अहकार के रहते मुक्ति नही होती ।

"गौएँ 'हम्मा' 'हम्मा' करती है और बकरे 'मे' 'मे' करते हैं । इसीलिए उनको इतना कष्ट भोगना पडता है । कसाई काटते है । चमडे से जूते बनते है, ढोल मढा जाता है, दु:ख की परा-

काष्ठा हो जाती है। हिन्दी म अपन को 'हम' कहते हैं और 'मैं' भी कहते हैं। मै मै करने के कारण कितने कर्म भोगने पडते हैं। अन्त में आँतो से धनुहे की तांत बनाई जाती है। जुलाहे के हाथ म जब वह पडती है, तब 'तूं तूं' कहती है। 'तूं' कहने के बाद निस्तार होता है। फिर दु ख नहीं उठाना पडता।

हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और मै अकर्ता हूँ, इसी का नाम ज्ञान है।

नीचे आने से ही ऊँचे उठा जाता है। चातक पक्षी का घोसला नीचे रहता है, परन्तु वह बहुत ऊँचे उड जाता है। ऊँची जमीन म कृषि नहीं होती। नीची जमीन चाहिए, पानी इसी में रुकता है। तभी कृषि होती है।

कुछ कष्ट उठाकर सत्सग करना चाहिए। घर में तो केवल विषय-चर्चा होती है, रोग लगा ही रहता है। जब चिडिया सीखचे पर बैठती है तभी राम-राम बोलती है, जब उड जाती है तब वही टे टे करने लगती है।

'धन होने से ही कोई बडा आदमी नही हो जाता। बडे आदमी के घर का यह लक्षण है कि सब कमरो में दिये जलते रहते हैं। गरीब तेल नही खर्च कर सकते, इसीलिए दिये का वैसा बन्दोबस्त नही कर सकते। यह देह-मन्दिर अँधेरे में न रखना चाहिए, ज्ञान-दीप जला देना चाहिए। ज्ञान-दीप जलाकर ब्रह्ममयी का मुँह देखो।

"ज्ञान सभी को हो सकता है। जीवात्मा और परमात्मा। प्रार्थना करो, उस परमात्मा के साथ सभी जीवो का योग हो सकता है। गैस का नल सब घर में लगाया हुआ है। और गैस गैस-कम्पनी के यहाँ मिलती है। अर्जी भेजो, गैस का बन्दोबस्त हो

जायगा, घर में गैसबत्ती जल जायगी। सियालदह में आफिस है। (सब हँसते हैं)

"किसी-किसी को चैतन्य हुआ है इसके लक्षण भी हैं। ईश्वरी प्रसंग को छोड़ और कुछ सुनने को उसका जी नहीं चाहता, न उसके अतिरिक्त कोई दूसरी बात वह कहता ही है! जैसे सातों समुद्र, गंगा-यमुना और सब नदियों में पानी है, परन्तु चातक को स्वाती की बूँदों की ही रट रहती है। मारे प्यास के जी चाहे जितना व्याकुल हो, परन्तु वह दूसरा पानी कभी नहीं पीता।"

(२)

ईश्वर-लाभ का उपाय–अनुराग। गोपीप्रेम; अनुरागरूपी बाघ

श्रीरामकृष्ण ने कुछ गाने के लिए कहा। रामलाल और कालीमन्दिर के एक ब्राह्मण कर्मचारी गाने लगे। ठेका लगाने के लिए एक बायाँ मात्र था। कई भजन गाये गये।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—बाघ जैसे दूसरे पशुओं को खा जाता है, वैसे 'अनुरागरूपी बाघ' काम-क्रोध आदि रिपुओं को खा जाता है। एक बार ईश्वर पर अनुराग होने से फिर काम-क्रोध आदि नहीं रह जाते। गोपियों की ऐसी ही अवस्था हुई थी। श्रीकृष्ण पर उनका ऐसा ही अनुराग था।

"और है 'अनुराग-अंजन'। श्रीमती (राधा) कहती हैं—'सखियों, मैं चारों ओर कृष्ण ही देखती हूँ।' उन लोगों ने कहा—'सखि, तुमने आँखों में अनुराग-अंजन लगा लिया है, इसीलिए ऐसा देखती हो।'

"इस प्रकार लिखा है कि मेंढक का सिर जलाकर उसका अंजन आँखों में लगाने से चारों ओर साँप ही साँप दीख पड़ते हैं।

"जो लोग केवल कामिनी-कांचन में पड़े हुए हैं, कभी ईश्वर का स्मरण नहीं करते, वे बद्ध जीव हैं। उन्हें लेकर क्या कभी अच्छा कार्य हो सकता है? जैसे कौए का चोंच मारा हुआ आम ठाकुरसेवा में लगाने की क्या, खाने में भी हिचकिचाहट होती है।

"संसारी जीव बद्ध जीव, ये रेशम के कीड़े हैं। यदि चाहें तो काटकर उसमें निकल सकते हैं परन्तु खुद जिस घर को बनाया है, उसे छोड़ने में बड़ा मोह होता है। फल यह होता है कि उसी में उनकी मृत्यु हो जाती है।

जो मुक्त जीव हैं वे कामिनी-कांचन के वशीभूत नहीं होते। कोई-कोई कीड़े (रेशम के) जिस कोये को इतने प्रयत्न से बनाते हैं, उसे काटकर निकल भी आते हैं, परन्तु ऐसे एक ही दो होते हैं।

"माया मोह में डाले रहती है। दो एक मनुष्यों को ज्ञान होता है। वे माया के धोखे में नहीं आते—कामिनी-कांचन के वशीभूत नहीं होते।

"साधनसिद्ध और कृपासिद्ध। कोई-कोई बड़े परिश्रम से खेत में सींचकर पानी लाते हैं। यदि ला सके तो फसल भी अच्छी होती है। किसी-किसी को पानी सींचना ही नहीं पड़ा, वर्षा के जल से खेत भर गया। उसे पानी सींचने के लिए कष्ट नहीं उठाना पड़ा। माया के हाथ से रक्षा पाने के लिए कष्टसाध्य साधनभजन करना पड़ता है। कृपासिद्ध को कष्ट नहीं उठाना पड़ता। परन्तु ऐसे दो ही एक मनुष्य होते हैं।

"और हैं नित्यसिद्ध। इनका ज्ञान—चैतन्य—जन्म-जन्मान्तरों में बना ही रहता है। मानो फव्वारे की कल बन्द है, मिस्त्री ने

इसे-उसे खोलते हुए उनको भी खोल दिया और उससे फर्श से पानी निकलने लगा। जब नित्यसिद्ध का प्रथम अनुराग मनुष्य देखते हैं तब कहने लगते हैं— इतनी भक्ति, इतना अनुराग, इतना प्रेम इसमें कहाँ था ?' "

श्रीरामकृष्ण गोपियों के अनुराग की बात कह रहे हैं। बात समाप्त होते ही रामलाल गाने लगे। गीत का आशय यह है—

'हे नाथ ! तुम्हीं हमारे सर्वस्व हो, तुम्हीं हमारे प्राणों के आधार हो और सब वस्तुओं में सार पदार्थ भी तुम्हीं हो। तुम्हें छोड़ तीनों लोक में अपना और कोई नहीं। सुख, शान्ति, सहाय, सम्बल, सम्पद्, ऐश्वर्य, ज्ञान, बुद्धि, बल, वासगृह, आरामस्थल, आत्मीय, बन्धु, परिवार सब कुछ तुम्हीं हो। तुम्हीं हमारे इहकाल हो और तुम्हीं परकाल हो, तुम्हीं परित्राण हो और तुम्हीं स्वर्गधाम हो, शास्त्रविधि और कल्पतरु गुरु भी तुम्हीं हो, तुम्हीं हमारे अनन्त सुख के आधार हो। हमारे उपाय, हमारे उद्देश्य तुम्हीं हो। तुम्हीं स्रष्टा, पालनकर्ता और उपास्य हो ! दण्डदाता पिता, स्नेहमयी माता और भवार्णव के कर्णधार भी तुम्हीं हो।"

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—अहा ! कैसा गीत है ! —'तुम्हीं हमारे सर्वस्व हो।' अक्रूर के आने पर गोपियों ने श्रीराधा से कहा, 'राधे ! यह तेरे सर्वस्व-धन का हरण करने के लिए आया है।' प्यार यह है। ईश्वर के लिए व्याकुलता इसे कहते हैं।

सगीत सुनते ही श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि-सागर में डूब गये। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को चुपचाप टकटकी लगाये देख रहे हैं। कमरे में सन्नाटा छाया हुआ है। श्रीरामकृष्ण हाथ जोड़े हुए समाधिस्थ हैं—वैसे ही जैसे फोटोग्राफ में उनका चित्र है। नेत्रों

से आनन्दधारा बह रही है।

बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। परन्तु अभी उन्हीं से वार्तालाप कर रहे हैं, जिन्हें समाधि-अवस्था में देख रहे थे। कोई-कोई शब्द सुन पड़ता है। श्रीरामकृष्ण आप ही आप कह रहे हैं "तुम्हीं मैं हो, मैं ही तुम हूँ। खूब करते हो परन्तु !"

"यह मुझे पीलिया रोग तो नहीं हो गया ?—चारों ओर तुम्हीं को देख रहा हूँ।

'हे कृष्ण, दीनबन्धु ! प्राणवल्लभ ! गोविन्द !"

'प्राणवल्लभ ! गोविन्द !' कहते हुए श्रीरामकृष्ण फिर समाधि-मग्न हो गये। भक्तगण महाभावमय श्रीरामकृष्ण को बार-बार देख रहे हैं, किन्तु फिर भी नेत्रों की तृप्ति नहीं होती।

(६)

श्रीरामकृष्ण का ईश्वरावेश। उनके मुख से ईश्वरवाणी

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हैं। अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। चारों ओर भक्तगण हैं। श्रीयुत अधर सेन कई मित्रों के साथ आये हैं। अधर बाबू डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं। इन्होंने श्रीरामकृष्ण को पहली ही बार देखा है। इनकी उम्र लगभग २९-३० वर्ष की होगी। इनके मित्र, सारदाचरण को मृत पुत्र का शोक है। ये स्कूलों के डिप्टी इन्सपेक्टर रह चुके हैं। अब पेन्शन ले ली है। साधन-भजन पहले ही से कर रहे हैं। बड़े लड़के का देहान्त हो जाने से किसी तरह मन को सान्त्वना नहीं मिलती। श्रीरामकृष्ण के पास इसीलिए आये हैं। बहुत दिनों से आप श्रीरामकृष्ण को देखना भी चाहते थे।

श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। आँखें खोलकर आपने देखा, कमरे भर के लोग आपकी ओर ताक रहे हैं। उस समय श्रीराम-

कृष्ण मन ही मन कुछ कह रहे थे।

"कभी-कभी विषयी मनुष्यों में ज्ञान का उन्मेष होता है, दीप-शिखा की तरह दीख पडता है, नहीं-नहीं, सूर्य की एक किरण की तरह। छेद के भीतर से मानो किरण निकल रही है। विषयी मनुष्य और ईश्वर का नाम ! उसमें अनुराग नहीं होता। जैसे बालक कहता है, तुझे भगवान की शपथ है। घर की स्त्रियों का झगडा सुनकर 'भगवान् की शपथ' याद कर ली है।

"विषयी मनुष्यों में निष्ठा नहीं होती। हुआ हुआ, न हुआ तो न सही। पानी की जरूरत है, कुआँ खोद रहा है। खोदते-खोदते जैसे ही कंकड निकला कि बस छोड दी वह जगह, दूसरी जगह खोदने लगा। लो, वहाँ भी वालू ही वालू निकलती है ! बस वहाँ से भी अलग हुआ। जहाँ खोदना आरम्भ किया है, वहीं जब खोदता रहे तभी तो पानी मिलेगा।

"जीव जैसे कर्म करता है वैसे ही फल भी पाता है।

"इसीलिए कहा है—

(गीत) "माँ श्यामा ! दोष किसी का नहीं, मैं जिस पानी में डूब रहा हूँ वह मेरे ही हाथों के खोदे कुएँ का है।" इत्यादि

'मैं' और 'मेरा' अज्ञान है। विचार तो करो, देखोगे जिसे 'हम' कह रहे हो, वह आत्मा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। विचार करो—तुम शरीर हो या मांस या और कुछ ? तब देखोगे, तुम कुछ नहीं हो। तुम्हारी कोई उपाधि नहीं। तब कहोगे मैंने कुछ भी नहीं किया, न दोष, न गुण। मुझे न पाप है, न पुण्य।

"यह सोना है और यह पीतल, ऐसे विचार को अज्ञान कहते हैं और सब कुछ सोना है, इसे ज्ञान।

"ईश्वरदर्शन होने पर विचार बन्द हो जाता है, और ऐसा भी कोई है कि ईश्वर-लाभ करके भी मनुष्य विचार करता है। कोई-कोई भक्ति लेकर रहते हैं उनका गुणगान करते हैं।

"बच्चा तभी तक रोता है जब तक उसे माता का दूध पीने को नहीं मिलता। मिला कि रोना बन्द हो गया। तब आनन्दपूर्वक पीता रहता है। परन्तु एक बात है। कभी-कभी वह दूध पीते-पीते खेलता भी है और आनन्द से किलकारियाँ भरता रहता है।

"वे ही सब कुछ हुए हैं। परन्तु मनुष्य में उनका प्रकाश अधिक है। जहाँ शुद्धसत्त्व बालकों का सा स्वभाव है कि कभी हँसता है, कभी रोता है, कभी नाचता है, कभी गाता है, वहाँ वे प्रत्यक्ष भाव से रहते हैं।"

श्रीरामकृष्ण अघर का परिचय ले रहे हैं। अघर ने अपने मित्र के पुत्रशोक का हाल कहा। श्रीरामकृष्ण मन ही मन गाने लगे। भाव —

"जीव! समर के लिए तैयार हो जाओ। रण के वेश से काल तुम्हारे घर में घुस रहा है। भक्तिरथ पर चढ़कर, ज्ञानतून लेकर रसनाधनुष में प्रेम-गुण लगा, ब्रह्ममयी के नामरूपी ब्रह्मास्त्र का संधान करो। लड़ाई के लिए एक युक्ति और है। तुम्हें रथरथी की आवश्यकता न होगी यदि भागीरथी के तट पर तुम्हारी यह लड़ाई हो।"

"क्या करोगे? इसी काल के लिए तैयार हो जाओ। काल घर में घुस रहा है। उनका नामरूपी अस्त्र लेकर लड़ना होगा। कर्ता वही हैं। मैं कहता हूँ, जैसा कराते हो वैसा ही करता हूँ। जैसा कहाते हो, वैसा ही कहता हूँ। मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो,

मैं घर हूँ, तुम घर के मालिक, मैं गाडी हूँ, तुम इंजिनियर। आममुख्तार उन्हीं को बनाओ। काम का भार अच्छे आदमी को देने से कभी अमगल नही होता। उनकी जो इच्छा हो, करे।

"शोक भला क्यो नही होगा? आत्मज है न। रावण मरा तो लक्ष्मण दौडे हुए गये, देखा, उसके हाडो म ऐसी जगह नहीं थी जहाँ छेद न रहे हो। लौटकर राम से बोले—भाई, तुम्हारे बाणो की बडी महिमा है, रावण की देह म ऐसी जगह नही है जहाँ छेद न हो! राम बोले—हाड के भीतर वाले छेद हमारे बाणो के नही है, मारे शोक के उसके हाड जर्जर हो गये हैं। वे छेद शोक के ही चिह्न है।

"परन्तु है यह सब अनित्य। गृह, परिवार, सन्तान, सब दो दिन के लिए है। ताड का पेड ही सत्य है। दो एक फल गिर जाते है पर उसे कोई दु ख नहीं।

"ईश्वर तीन काम करते है,—सृष्टि, स्थिति और प्रलय। मृत्यु है ही। प्रलय के समय सब ध्वस हो जायगा, कुछ भी न रह जायगा। माँ केवल सृष्टि के बीज बीनकर रख देंगी। फिर नयी सृष्टि होने के समय उन्हे निकालेगी। घर की स्त्रियो के जैसे हण्डी रहती है जिसमे वे खीरे-कोहडे के बीज, समुद्रफेन, नील, बडी आदि पोटलियो में बाँधकर रख देती हैं। (सब हँसते है)

(८)

अधर को उपदेश

श्रीरामकृष्ण अधर के साथ अपने कमरे के उत्तरी ओर के बरामदे मे खडे होकर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (अधर से)—तुम डिप्टी हो। यह पद भी ईश्वर के ही अनुग्रह से मिला है। उन्हे न भूलना, समझना, सबको

एक ही रास्ते से जाना है, यहाँ सिर्फ दो दिन के लिए आना हुआ है।

'संसार कर्मभूमि है। यहाँ कर्म करने के लिए आना हुआ है, जैसे देहात में घर है और कलकत्ते में काम करने के लिए आना जाता है।

"कुछ काम करना आवश्यक है। यह साधन है। जल्दी-जल्दी सब काम समाप्त कर लेना चाहिए। जब सुनार सोना गलाते हैं, तब धौंकनी, पखा, फुँकनी आदि से हवा करते हैं, जिससे आग तेज हो और सोना गल जाय। सोना गल जाता है, तब कहते हैं, चिलम भरो। अब तक पसीने-पसीने हो रहे थे, पर काम करके ही तम्बाकू पीयेंगे।

"पूरी जिद चाहिए, साधन तभी होता है। दृढ़ प्रतिज्ञा होनी चाहिए।

"उनके नाम-बीज में बड़ी शक्ति है। वह अविद्या का नाश करता है। बीज कितना कोमल है, और अंकुर भी कितना नरम होता है, परन्तु मिट्टी कैसी ही कड़ी क्यों न हो, वह उसे पार कर ही जाता है—मिट्टी फट जाती है।

"कामिनी-कांचन के भीतर रहने से वे मन को खींच लेते हैं। सावधानी से रहना चाहिए। त्यागियों के लिए विशेष भय की बात नहीं। यथार्थ त्यागी कामिनी-कांचन से अलग रहता है। साधन के बल से सदा ईश्वर पर मन रखा जा सकता है।

"जो यथार्थ त्यागी हैं वे सर्वदा ईश्वर पर मन रख सकते हैं, वे मधुमक्खी की तरह केवल फूल पर बैठते हैं, मधु ही पीते हैं। जो लोग संसार में कामिनी-कांचन के भीतर हैं उनका मन ईश्वर में लगता तो है, पर कभी-कभी कामिनी-कांचन पर भी चला

जाता है, जैसे साधारण मक्खियाँ बर्फी पर भी बैठती हैं और सड़े घाव पर भी बैठती हैं। हाँ, विष्ठा पर भी बैठती है।

"मन सदा ईश्वर पर रखना। पहले कुछ मेहनत करनी पड़ेगी, फिर पेन्शन पा जाओगे।"

(८)

अहंकार। स्वाधीन इच्छा अथवा ईश्वर-इच्छा। साधुसंग

सुरेन्द्र के घर के आँगन में श्रीरामकृष्ण सभा को आलोकित कर बैठे हुए हैं। शाम के छः बजे होंगे।

आँगन से पूर्व की ओर, दालान के भीतर, देवी-प्रतिमा प्रतिष्ठित है। माता के पादपद्मों में जवा और गले में फूलों की माला शोभायमान है। माता भी ठाकुर-दालान को आलोकित करके बैठी हुई हैं।

आज अन्नपूर्णा देवी की पूजा है। चैत्र शुक्ला अष्टमी, १५ अप्रैल १८८३, दिन रविवार। सुरेन्द्र माता की पूजा कर रहे हैं, इसीलिए निमन्त्रण देकर श्रीरामकृष्ण को ले गये हैं। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आये हैं। आते ही उन्होंने ठाकुर-दालान पर चढ़कर देवी के दर्शन किये। फिर खड़े होकर उँगलियों पर मूलमन्त्र जपने लगे।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आँगन में आये। आँगन में दरी पर साफ धुली हुई चद्दर बिछी है।

बिस्तरे पर कई तकिये रखे हुए हैं। एक ओर खोल-करताल लेकर कई वैष्णव आकर एकत्रित हुए, संकीर्तन होगा। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को घेरकर बैठ गये।

लोग श्रीरामकृष्ण को एक तकिये के पास ले जाकर बैठाने लगे, परन्तु वे तकिया हटाकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—तकिये के सहारे बैठना ! जानते हो न अभिमान छोड़ना बड़ा कठिन है। अभी विचार कर रहे हो कि अभिमान कुछ नहीं है, परन्तु फिर न जाने कहाँ से आ जाता है।

"बकरा काट डाला गया, फिर भी उसके अंग हिल रहे हैं।

"स्वप्न में डर गये हो आँख खुल गयी, बिलकुल सचेत हो गये, फिर भी छाती धड़क रही है। अभिमान ठीक ऐसा ही है। हटा देने पर भी न जाने कहाँ से आ जाता है ! बस आदमी मुँह फुलाकर कहने लगता है, मेरा आदर नहीं किया।"

केदार—तृणादपि सुनीचेन तरोरिव सहिष्णुना।'

श्रीरामकृष्ण—मैं भक्तों की रेणु की रेणु हूँ।

(वैद्यनाथ आते हैं)

वैद्यनाथ विद्वान् हैं। कलकत्ते के हाईकोर्ट के वकील हैं, श्रीरामकृष्ण को हाथ जोड़कर प्रणाम करके एक ओर बैठ गये।

सुरेन्द्र (श्रीरामकृष्ण से)—ये मेरे आत्मीय हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, इनका स्वभाव तो बड़ा अच्छा है।

सुरेन्द्र—ये आपसे कुछ पूछना चाहते हैं, इसीलिए आये हैं।

श्रीरामकृष्ण (वैद्यनाथ से)—जो कुछ देख रहे हो, सभी उनकी शक्ति है। उनकी शक्ति के बिना कोई कुछ भी नहीं कर सकता। परन्तु एक बात है। उनकी शक्ति सब जगह बराबर नहीं है। विद्यासागर ने कहा था, परमात्मा ने क्या किसी को अधिक शक्ति दी है ? मैंने कहा, शक्ति अगर अधिक न देते तो तुम्हें हम लोग देखने क्यों आते ? तुम्हारे दो सींग थोड़े ही हैं ? अन्त में यही ठहरा कि विभुरूप से सर्वभूतों में ईश्वर हैं, केवल शक्ति का भेद है।

वैद्यनाथ—महाराज ! मुझे एक सन्देह है। यह जो Free Will

अर्थात् स्वाधीन इच्छा की बात होती है,—कहते हैं कि हम इच्छा करे तो अच्छा काम भी कर सकते है और बुरा भी, क्या यह सच है ? क्या हम सचमुच स्वाधीन हैं ?

श्रीरामकृष्ण—सभी ईश्वर के अधीन हैं। उन्ही की लीला है। उन्होने अनेक वस्तुओ की सृष्टि की है,—छोटी-बडी, भली-बुरी, मजबूत-कमजोर। अच्छे आदमी, बुरे आदमी। यह सब उन्ही की माया है—उन्ही का खेल है। देखो न, बगीचे के सब पेड बराबर नही होते।

"जब तक ईश्वर नही मिलते, तब तक जान पडता है, हम स्वाधीन है। यह भ्रम वे ही रख देते है, नही तो पाप की वृद्धि होती, पाप से कोई न डरता, न पाप का फल मिलता।

'जिन्होने ईश्वर को पा लिया है, उनका भाव जानते हो क्या है ? मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो, मै गृह हूँ, तुम गृहस्थ, मै रथ हूँ, तुम रथी, जैसा चलाते हो, वैसा ही चलता हूँ, जैसा कहाते हो, वैसा ही कहता हूँ।

"तर्क करना अच्छा नही। (वैद्यनाथ से) आप क्या कहते है ?

वैद्यनाथ—जी हाँ, तर्क करने का स्वभाव ज्ञान होने पर नष्ट हो जाता है।

श्रीरामकृष्ण—Thank you (थैंक्यू-धन्यवाद) (लोग हँसते है) तुम पाओगे। ईश्वर की बात कोई कहता है, तो लोगो को विश्वास नही होता। यदि कोई महापुरुष कहे, मैने ईश्वर को देखा है, तो कोई उस महापुरुष की बात ग्रहण नही करता। लोग सोचते है, इसने अगर ईश्वर को देखा है तो हमे भी दिखायें तो जानें। परन्तु नाडी देखना कोई एक दिन मे थोडे ही सीख लेता है ? वैद्य के पीछे महीनो घूमना पडता है। तभी वह कह सकता

है, कौन कफ की नाडी है, कौन पित्त की है और कौन वात की है। नाडी देखना जिनका पेशा है, उनका संग करना चाहिए। (सब हँसते हैं)

"क्या सभी पहचान सकते हैं कि यह अमुक नम्बर का सूत है ? सूत का व्यवसाय करो, जो लोग व्यवसाय करते हैं, उनकी दूकान में कुछ दिन रहो, तो कौन चालीस नम्बर का सूत है—कौन इकतालीस नम्बर का तुरन्त कह सकोगे।"

(९)

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द । समाधि में

अब संकीर्तन होगा। खोल बजाया जा रहा है। अभी गाना शुरू नहीं हुआ। खोल का मधुर वाद्य गौरांग-मण्डल और उनके नाम संकीर्तन की याद दिलाकर मन को उद्दीप्त कर रहा है। श्रीरामकृष्ण भाव में मग्न हो रहे हैं। रह-रहकर खोल पर दृष्टि डालकर कह रहे हैं—"अहा ! मुझे रोमांच हो रहा है !"

गवैयों ने पूछा 'कैसा पद गावें ?' श्रीरामकृष्ण ने विनीत भाव से कहा—"जरा गौरांग के कीर्तन गाओ।"

कीर्तन आरम्भ हो गया। पहले गौरचन्द्रिका होगी, फिर दूसरे गाने।

कीर्तन में गौरांग के रूप का वर्णन हो रहा है। कीर्तन-गवैये अन्तरों में चुन-चुनकर अच्छे पद जोड़ते हुए गा रहे हैं—"सखी, मैंने पूर्णचन्द्र देखा"—"न ह्रास है—न मृगांक"—"हृदय को आलोकित करता है।"

गवैयों ने फिर गाया—"कोटि चन्द्र के अमृत से उनका मुख घुला हुआ है।"

श्रीरामकृष्ण सुनते ही सुनते समाधिमग्न हो गये।

गाना होता ही रहा। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। वे भाव में मग्न होकर एकाएक उठकर खडे हो गये तथा प्रेमोन्मत्त गोपिकाओं की तरह श्रीकृष्ण के रूप का वर्णन करते हुए कीर्तन-गवैयों के साथ-साथ गाने लगे,—"सखि! रूप का दोष है या मन का?"—"दूसरो को देखती हुई तीनों लोक में श्याम ही श्याम देखती हूँ।"

श्रीरामकृष्ण नाचते हुए गा रहे हैं। भक्तगण निर्वाक् होकर देख रहे हैं। गवैये फिर गा रहे है,—गोपिका की उक्ति। 'बंसी री! तू अब न बज। क्या तुझे नींद भी नहीं आती?" इसमें पद जोड़कर गा रहे हैं—"और नींद आये भी कैसे!"—"सेज तो करपल्लव है न?"—"श्रीमुख के अमृत का पान करती हैं!" —"तिस पर उँगलियाँ सेवा करती हैं!"

श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण किया। कीर्तन होता रहा। श्रीमती राधा की उक्ति गायी जाने लगी। वे कहती हैं—"दृष्टि, श्रवण और घ्राण की शक्ति तो चली गयी—इन्द्रियों ने उत्तर दे दिया, तो मैं ही अकेली क्यों रह गयी?"

अन्त में श्रीराधा-कृष्ण दोनों के एक दूसरे से मिलन का कीर्तन होने लगा —

"राधिकाजी श्रीकृष्ण को पहनाने के लिए माला गूँथ ही रही थीं कि अचानक श्रीकृष्ण उनके सामने आकर खडे हो गये।"

युगल-मिलन के संगीत का आशय यह है —

"कुंजवन में श्याम-विनोदिनी राधिका कृष्ण के भावावेश में विभोर हो रही हैं। दोनों में से न तो किसी के रूप की उपमा हो सकती है और न किसी के प्रेम की ही सीमा है। आधे में सुनहली किरणों की छटा है और आधे में नीलकान्त मणि की

ज्योति। गले के आधे हिस्से में वन के फूलों की माला है और आधे में गज-मुक्ता। कानों के अर्धभाग में मकर कुण्डल हैं और अर्धभाग में रत्नों की छवि। अर्धललाट में चन्द्रोदय हो रहा है और आधे में सूर्योदय। मस्तक के अर्धभाग में मयूरशिखण्ड शोभा पा रहा है और आधे में वेणी। कर-कमल झिलमिला रहे हैं, फणी मानो मणि उगल रहा है।

कीर्तन बन्द हुआ। श्रीरामकृष्ण "भागवत, भक्त, भगवान्" इस मन्त्र का बार-बार उच्चारण करते हुए भूमिष्ठ हो प्रणाम कर रहे हैं। चारों ओर के भक्तों को उद्देश्य करके प्रणाम कर रहे हैं और सर्कीर्तन-भूमि की धूलि लेकर अपने मस्तक पर रख रहे हैं।

(१०)

श्रीरामकृष्ण और साकार-निराकार

रात के साढ़े नौ बजे का समय होगा। अन्नपूर्णा देवी ठाकुर-दालान को आलोकित कर रही हैं। सामने श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ खड़े हुए हैं। सुरेन्द्र, राखाल, केदार, मास्टर, राम, मन-मोहन तथा और भी अनेक भक्त हैं। उन लोगों ने श्रीरामकृष्ण के साथ ही प्रसाद पाया है। सुरेन्द्र ने सबको तृप्तिपूर्वक भोजन कराया है। अब श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर लौटनेवाले हैं। भक्तजन भी अपने-अपने घर जायेंगे। सब लोग ठाकुर-दालान में आकर इकट्ठे हुए हैं।

सुरेन्द्र (श्रीरामकृष्ण से)—परन्तु आज मातृ-वन्दना का एक भी गाना नहीं हुआ।

श्रीरामकृष्ण (देवीप्रतिमा की ओर उँगली उठाकर)—अहा! दालान की कैसी शोभा हुई है! माँ मानो अपनी दिव्य छटा

छिटकाकर बैठी हुई हैं। इस रूप के दर्शन करने पर कितना आनन्द होता है! भोग की इच्छा, शोक, ये सब भाग जाते हैं। परन्तु क्या निराकार के दर्शन नहीं होते? नहीं, होते हैं। हाँ, जरा भी विषय-बुद्धि के रहते नहीं होते। ऋषियों ने सर्वस्व त्याग करके 'अखण्ड-सच्चिदानन्द' में मन लगाया था।

"आजकल ब्रह्मज्ञानी उन्हें 'अचल-घन' कहकर गाते हैं,—मुझे अलोना लगता है। जो लोग गाते हैं, वे मानो कोई मधुर रस नहीं पाते। शीरे पर ही भूले रहे, तो मिश्री की खोज करने की इच्छा नहीं हो सकती।

"तुम लोग देखते हो—बाहर कैसे सुन्दर दर्शन हो रहे हैं, और आनन्द भी कितना मिलता है। जो लोग निराकार-निराकार करके कुछ नहीं पाते, उनके न है बाहर और न है भीतर।"

श्रीरामकृष्ण माता का नाम लेकर इस भाव का गीत गा रहे हैं,—"माँ, आनन्दमयी होकर मुझे निरानन्द न करना। मेरा मन तुम्हारे उन दोनों चरणों के सिवा और कुछ नहीं जानता। मैं नहीं जानता, धर्मराज मुझे किस दोष से दोषी बतला रहे हैं। मेरे मन में यह वासना थी कि तुम्हारा नाम लेता हुआ मैं भव-सागर से निकल जाऊँगा। मुझे स्वप्न में भी नहीं मालूम था कि यम मुझे असीम सागर में डुबा देगा। दिनरात मैं दुर्गानाम जप रहा हूँ, किन्तु फिर भी मेरी दुःखराशि दूर न हुई। परन्तु हे हर-सुन्दरि, यदि इस बार भी मैं मरा, तो यह निश्चय है कि संसार में फिर तुम्हारा नाम कोई न लेगा।"

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे। गीत इस आशय का है —

"मेरे मन! दुर्गानाम जपो। जो दुर्गा-नाम जपता हुआ रास्ते में चला जाता है, शूलपाणि शूल लेकर उसकी रक्षा करते हैं।

तुम दिवा हो, तुम सन्ध्या हो, तुम्ही रात्रि हो, कभी तो तुम पुरुष का रूप धारण करती हो, कभी कामिनी बन जाती हो। तुम तो कहती हो कि मुझे छोड दो, परन्तु मैं तुम्हें कदापि न छोडूँगा,—मैं तुम्हारे चरणों म नूपुर होकर बजता रहूँगा,—जय दुर्गा-श्रीदुर्गा कहता हुआ! माँ, जब शकरी होकर तुम आकाश म उडती रहोगी तब मैं मीन बनकर पानी में रहूँगा, तुम अपने नखो पर मुझे उठा लेना। हे ब्रह्ममयी, नखो के आघात से यदि मेरे प्राण निकल जायँ, तो कृपा करके अपने अरुण चरणों का स्पर्श मुझे करा देना।"

श्रीरामकृष्ण ने देवी को फिर प्रणाम किया। अब सीढियों से उतरते समय पुकारकर कह रहे हैं—

आ रा—जू हैं?" (ओ राखाल! जूते सब हैं?)

श्रीरामकृष्ण गाडी पर चढे। सुरेन्द्र ने प्रणाम किया। दूसरे भक्तो ने भी प्रणाम किया। चाँदनी अभी भी रास्ते पर पड रही है। श्रीरामकृष्ण की गाडी दक्षिणेश्वर की ओर चल दी।

परिच्छेद १७

ब्राह्मभक्तों के संग में

(१)

संसार में निष्काम कर्म

श्रीरामकृष्ण ने श्री वेणीपाल के सींती के बगीचे में शुभागमन किया है। आज सींती के ब्राह्मसमाज का छः माही महोत्सव है। रविवार, चैत्र पूर्णिमा, २२ अप्रैल १८८३। तीसरे प्रहर का समय। अनेक ब्राह्मभक्त उपस्थित है। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को घेरकर दक्षिण के बरामदे में आ बैठे। सायंकाल के बाद आदि-समाज के आचार्य श्री बेचाराम उपासना करेंगे। ब्राह्म भक्तगण बीच-बीच में श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे है।

ब्राह्मभक्त—महाराज, मुक्ति का उपाय क्या है ?

श्रीरामकृष्ण—उपाय अनुराग, अर्थात् उनसे प्रेम करना, और प्रार्थना।

ब्राह्मभक्त—अनुराग या प्रार्थना ?

श्रीरामकृष्ण—अनुराग पहले, फिर प्रार्थना।

श्रीरामकृष्ण सुर के साथ गाना गाने लगे जिसका भावार्थ यह है,—'हे मन, पुकारने की तरह पुकारो तो देखूं श्यामा कैसे रह सकती हैं।'

"और सदा ही उनका नामगुण-गान, कीर्तन और प्रार्थना करनी चाहिए। पुराने लोटे को रोज मांजना होगा, एक बार मांजने से क्या होगा ? और विवेक-वैराग्य, संसार अनित्य है यह बुद्धि।"

ब्राह्मभक्त—संसार छोड़ना क्या अच्छा है ?

श्रीरामकृष्ण—सभी के लिए संसार त्याग ठीक नहीं। जिनके भोग का अन्त नहीं हुआ, उनसे संसार त्याग नहीं होता। रत्ती भर शराब से क्या मस्ती आती है।

ब्राह्मभक्त—तो फिर वे लोग क्या संसार करेंगे ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वे लोग निष्काम कर्म करने की चेष्टा करें। हाथ में तेल मलकर कटहल छीलें। धनियों के घर में दासियाँ सब काम करती हैं, परन्तु मन रहता है अपने निज के घर में, इसी का नाम निष्काम कर्म है। * इसी का नाम है मन से त्याग। तुम लोग मन से त्याग करो। सन्यासी बाहर का त्याग और मन का त्याग दोनों ही करे।

ब्राह्मभक्त—भोग के अन्त का क्या अर्थ है ?

श्रीरामकृष्ण—कामिनी-काञ्चन भोग है। जिस घर में इमली का आचार और पानी की सुराही है, उस घर में यदि सन्निपात का रोगी रहे, तो मुश्किल ही है। रुपया, पैसा, मान, इज्जत, शारीरिक सुख ये सब भोग एक बार न हो जाने पर—भोग का अन्त न होने पर, ईश्वर के लिए सभी को व्याकुलता नहीं होती।

ब्राह्मभक्त—स्त्री-जाति खराब है या हम खराब हैं ?

श्रीरामकृष्ण—विद्यारूपिणी स्त्री भी है, और फिर अविद्यारूपिणी स्त्री भी है। विद्यारूपिणी स्त्री भगवान् की ओर ले जाती है और अविद्यारूपिणी स्त्री ईश्वर को भुला देती है, संसार में डुबा देती है।

---

* कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।—गीता, २।४७
यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥—गीता, ९।२७

"उनकी महामाया से यह ससार हुआ है। इस माया के भीतर विद्यामाया और अविद्यामाया दोनों ही हैं। विद्यामाया का आश्रय लेने पर साधुसग की इच्छा, ज्ञान, भक्ति, प्रेम, वैराग्य ये सब होते है। पचभूत तथा इन्द्रियो के भोग के विषय अर्थात् रूप-रस-गन्ध-स्पर्श-शब्द, यह सब अविद्यामाया है। यह ईश्वर को भुला देती है।

ब्राह्मभक्त—अविद्या यदि अज्ञान पैदा करती है तो उन्होंने अविद्या को पैदा क्यों किया ?

श्रीरामकृष्ण—उनकी लीला। अन्धकार न रहने पर प्रकाश की महिमा समझी नही जा सकती। दुःख न रहने पर सुख समझा नहीं जा सकता। बुराई का ज्ञान रहने पर ही भलाई का ज्ञान होता है।

'फिर आम पर छिलका है इसीलिए आम बढ़ता है और पकता है। आम जब तैयार हो जाता है उस समय छिलका फेंक देना पड़ता है। मायारूपी छिलका रहने पर ही धीरे-धीरे ब्रह्म-ज्ञान होता है। विद्यामाया, अविद्यामाया, आम के छिलके की तरह हैं। दोनों ही आवश्यक हैं।

ब्राह्मभक्त—अच्छा, साकार पूजा, मिट्टी से बनायी हुई देव-मूर्ति की पूजा—ये सब क्या ठीक हैं ?

श्रीरामकृष्ण—तुम लोग साकार नही मानते हो, अच्छी बात है। तुम्हारे लिए मूर्ति नही, भाव मुख्य है। तुम लोग आकर्षण मात्र को लो, जैसे श्रीकृष्ण का राधा पर आकर्षण, प्रेम। साकारवादी जिस प्रकार माँ काली, माँ दुर्गा की पूजा करते हैं, 'माँ, माँ' कहकर पुकारते हैं, कितना प्यार करते हैं, तुम लोग इसी भाव को लो, मूर्ति को न भी मानो तो कोई बात नही है।

ब्राह्मभक्त—वैराग्य कैसे होता है ? और सभी को क्यों नहीं होता ?

श्रीरामकृष्ण—भोग की शान्ति हुए बिना वैराग्य नहीं होता। छोटे बच्चे को खाना और खिलौना देकर अच्छी तरह से भुलाया जा सकता है, परन्तु जब खाना हो गया और खिलौने के साथ खेल भी समाप्त हो गया, तब वह कहता है, 'माँ के पास जाऊँगा।' माँ के पास न ले जाने पर खिलौना पटक देता है और चिल्लाकर रोता है।

ब्राह्म भक्तगण गुरुवाद के विरोधी हैं। इसलिए ब्राह्मभक्त इस सम्बन्ध में चर्चा कर रहे हैं।

ब्राह्मभक्त—महाराज, गुरु न होने पर क्या ज्ञान न होगा ?

श्रीरामकृष्ण—सच्चिदानन्द ही गुरु हैं। यदि मनुष्य गुरु के रूप में चैतन्य देखता है, तो जानो कि सच्चिदानन्द ने ही उस रूप को धारण किया है। गुरु मानो सखा हैं। हाथ पकड़कर ले जाते हैं। भगवान् का दर्शन होने पर फिर गुरु-शिष्य का ज्ञान नहीं रह जाता। 'वह बड़ा कठिन स्थान है, वहाँ पर गुरु-शिष्यों में साक्षात्कार नहीं होता।' इसीलिए जनक ने शुकदेव से कहा था—'यदि ब्रह्मज्ञान चाहते हो तो पहले दक्षिणा दो; क्योंकि ब्रह्मज्ञान हो जाने पर गुरु-शिष्यों में भेद-बुद्धि नहीं रहेगी। जब तक ईश्वर का दर्शन नहीं होगा, तभी तक गुरु-शिष्य का सम्बन्ध रहता है।'

थोड़ी देर में सन्ध्या हुई। ब्राह्मभक्तों में से कोई-कोई श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं, "शायद अब आपको सन्ध्या करनी होगी।"

श्रीरामकृष्ण—नहीं, ऐसा कुछ नहीं। यह सब पहले पहल

एक-एक बार कर लेना पड़ता है। उसके बाद फिर अर्घ्यपात्र या नियम आदि की आवश्यकता नहीं रहती।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा आचार्य श्री बेचाराम, वेदान्त और ब्रह्मतत्त्व के प्रसंग में

सन्ध्या के बाद आदि-समाज के आचार्य श्री बेचाराम ने वेदी पर बैठकर उपासना की। बीच-बीच में ब्राह्म-संगीत और उपनिषद् का पाठ होने लगा।

उपासना के बाद श्रीरामकृष्ण के साथ बैठकर आचार्यजी अनेक प्रकार के वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है। आपका क्या मत है?

आचार्य – जी, निराकार मानो बिजली के प्रवाह जैसा है, आँखों से देखा नहीं जाता, परन्तु अनुभव किया जाता है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, दोनो ही सत्य हैं। साकार-निराकार, दोनो सत्य है। केवल निराकार कहना कैसा है जानते हो?

"जैसे शहनाई में सात छेद रहते हुए भी एक व्यक्ति केवल 'पों' करता रहता है, परन्तु दूसरे को देखो, कितनी ही राग-रागिनियाँ बजाता है। उसी प्रकार देखो, साकारवादी ईश्वर का कितने भावों में आस्वाद लेता है। शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर—अनेक भावों से।

"असली बात क्या है जानते हो? किसी भी प्रकार से अमृत के कुण्ड में गिरना है। चाहे स्तव करके गिरो अथवा कोई धक्का दे दे और तुम जाकर कुण्ड में गिर पड़ो। परिणाम एक ही

होगा। दोनों ही अमर होंगे। *

'ब्राह्मों के लिए जल और बरफ की उपमा ठीक है। सच्चिदानन्द मानो अनन्त जलराशि है। महासागर का जल ठण्डे देश में स्थान-स्थान पर जिस प्रकार बरफ का आकार धारण कर लेता है, उसी प्रकार भक्तिरूपी ठण्ड से वह सच्चिदानन्द भक्त के लिए साकार रूप धारण करते हैं। ऋषियों ने उस अतीन्द्रिय, चिन्मय-रूप का दर्शन किया था और उनके साथ वार्तालाप किया था। भक्त के प्रेम के शरीर—भागवती तनु † द्वारा इस चिन्मयरूप का दर्शन होता है।

फिर है ब्रह्म 'अवाङ्मनसगोचरम्।' ज्ञानरूपी सूर्य के ताप से साकार बरफ गल जाता है, ब्रह्मज्ञान के बाद, निर्विकल्प समाधि के बाद, फिर वही अनन्त, वाक्य-मन के अतीत, अरूप, निराकार ब्रह्म।

"उसका स्वरूप मुख से नहीं कहा जाता, चुप हो जाना पड़ता है। मुख से कहकर अनन्त को कौन समझायेगा? पक्षी जितना ही ऊपर उठता है, उसके ऊपर और भी है। आप क्या कहते हैं?"

आचार्य—जी हाँ, वेदान्त में इसी प्रकार की बातें हैं।

---

* अमृतकुण्ड.—आनन्दरूपममृतं यद्विभाति, ब्रह्मैवेदममृतं, पुरस्ताद्‌ब्रह्म, पश्चाद्‌ब्रह्म, दक्षिणतश्चोत्तरेण अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्म।

—मुण्डकोपनिषद् २।२।११

† नारद ने कहा, 'मुझे शुद्धा, सर्वमयी, भागवती तनु प्राप्त हो गयी।'

प्रयुज्यमाने मयि तां शुद्धां भागवतीं तनुम्
आरब्धकर्मनिर्वाणो न्यपतत् पाञ्चभौतिकः।

—श्रीमद्भागवत, १।६।२९

श्रीरामकृष्ण—नमक का पुतला समुद्र नापने गया था। लौट-कर फिर उसने खबर न दी। एक मत में है, शुकदेव आदि ने दर्शन-स्पर्शन किया था, डुबकी नहीं लगायी थी।

"मैंने विद्यासागर से कहा था, 'सब चीजें उच्छिष्ट हो गयी हैं, परन्तु ब्रह्म उच्छिष्ट नहीं हुआ।' ‡ अर्थात् ब्रह्म क्या है, कोई मुँह से कह नहीं सका। मुख से बोलने से ही चीज उच्छिष्ट हो जाती है। विद्यासागर विद्वान् हैं, यह सुनकर बहुत खुश हुए।

"सुना है, केदार के उस तरफ बरफ से ढका पहाड़ है। अधिक ऊँचाई पर उठने से फिर लौटना नहीं होता। जो लोग यह जानने के लिए गये हैं कि अधिक ऊँचाई पर क्या है तथा वहाँ जाने पर कैसी स्थिति होती है, उन्होंने फिर लौटकर खबर नहीं दी।

"उनका दर्शन होने पर मनुष्य आनन्द से विह्वल हो जाता है, चुप हो जाता है। * खबर कौन देगा? समझायेगा कौन?

"सात फाटकों से परे राजा है। प्रत्येक फाटक पर एक-एक महा ऐश्वर्यवान् पुरुष बैठे हैं। प्रत्येक फाटक में शिष्य पूछ रहा है, 'क्या यही राजा है?' गुरु भी कह रहे हैं 'नहीं नेति-नेति।' सातवें फाटक पर जाकर जो कुछ देखा, एकदम अवाक् रह गये। आनन्द से विह्वल हो गये। § फिर यह पूछना न पड़ा कि क्या यही राजा है? देखते ही सब सन्देह मिट गये।"

आचार्य—जी हाँ, वेदान्त में इसी प्रकार सब लिखा है।

---

‡ अचिन्त्यम् अव्यपदेश्यम् अद्वैतम्। —माण्डूक्य उपनिषद्

* यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह। —तैत्तिरीय उपनिषद् ब्रह्मानन्द वल्ली।

§ छिद्यन्ते सर्वसंशयाः तस्मिन् दृष्टे परावरे। —मुण्डकोपनिषद्, २।२।८

श्रीरामकृष्ण—जब वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते हैं, तब हम उन्हें सगुण ब्रह्म, आद्याशक्ति कहते हैं। जब वे तीनों गुणों से अतीत हैं, तब उन्हें निर्गुण ब्रह्म, वाक्य मन के अतीत परब्रह्म कहा जाता है।

"मनुष्य उनकी माया में पड़कर अपने स्वरूप को भूल जाता है। इस बात को भूल जाता है कि वह अपने पिता के अनन्त ऐश्वर्य का अधिकारी है। उनकी माया त्रिगुणमयी है। ये तीनों ही गुण डाकू हैं। सब कुछ हर लेते हैं, हमारे स्वरूप को भुला देते हैं। सत्त्व, रज, तम तीन गुण हैं। इनमें से केवल सत्त्व गुण ही ईश्वर का रास्ता बताता है, परन्तु ईश्वर के पास सत्त्व गुण भी नहीं ले जा सकता।

"एक धनी जंगल के बीच में से जा रहा था। इसी समय तीन डाकुओं ने आकर उसे घेर लिया और उसका सब कुछ छीन लिया। सब कुछ छीनकर एक डाकू ने कहा, 'और इसे रखकर क्या करोगे? इसे मार डालो' ऐसा कहकर वह उसे काटने गया। दूसरा डाकू बोला, 'जान से मत मारो, हाथ पैर बाँधकर इसे यहीं पर छोड़ दिया जाय, तो फिर यह पुलिस को खबर नहीं दे सकेगा।' यह कहकर उसे बाँधकर डाकू लोग वहीं छोड़कर चले गये।

"थोड़ी देर के बाद तीसरा डाकू लौट आया। आकर बोला, 'खेद है, तुमको बहुत कष्ट हुआ? मैं तुम्हारा बन्धन खोले देता हूँ।' बन्धन खोलने के बाद उस व्यक्ति को साथ लेकर डाकू रास्ता दिखाता हुआ चलने लगा। सरकारी रास्ते के पास आकर उसने कहा, 'इस रास्ते से चले जाओ, अब तुम सहज ही अपने घर जा सकोगे।' उस व्यक्ति ने कहा, 'यह क्या महाशय? आप

भी चलिये, आपने मेरा कितना उपकार किया ! हमारे घर पर चलने से हम कितने आनन्दित होंगे !' डाकू ने कहा, 'नहीं, मेरे वहाँ जाने पर छुटकारे का उपाय नहीं, पुलिस पकड़ लेगी। यह कहकर रास्ता बताकर वह लौट गया।

"पहला डाकू तमोगुण है, जिसने कहा था, 'इसे रखकर क्या करोगे, मार डालो।' तमोगुण से विनाश होता है। दूसरा डाकू रजोगुण है, रजोगुण से मनुष्य संसार में आबद्ध होता है। अनेकानेक कार्यों में जकड़ जाता है। रजोगुण ईश्वर को भुला देता है। सत्त्वगुण ही केवल ईश्वर का रास्ता बताता है। दया, धर्म, भक्ति यह सब सत्त्वगुण से उत्पन्न होते हैं। सत्त्वगुण मानो अन्तिम सीढ़ी है। उसके बाद ही है छत। **मनुष्य का स्वभाव है परब्रह्म।** त्रिगुणातीत न होने पर ब्रह्मज्ञान नहीं होता।

आचार्य—अच्छा हुआ, ये सब बातें हुईं।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—भक्त का स्वभाव क्या है, जानते हो ? मैं कहूँ, तुम सुनो या तुम कहो मैं सुनूँ। तुम लोग आचार्य हो, कितने लोगों को शिक्षा दे रहे हो। तुम लोग जहाज हो, हम तो हैं मछुओं की छोटी नैया। (सभी हँस पड़े)

(३)

श्रीमन्दिर-दर्शन और उद्दीपन। श्रीराधा का प्रेमोन्माद

श्रीरामकृष्ण नन्दनबागान के ब्राह्मसमाज-मन्दिर में भक्तों के साथ बैठे हैं। ब्राह्मभक्तों से बातचीत कर रहे हैं। साथ में राखाल, मास्टर आदि हैं। शाम के पाँच बजे होंगे।

स्वर्गीय काशीश्वर मित्र का मकान नन्दनबागान में है। वे पहले सबजज थे। वे आदि ब्राह्मसमाज वाले ब्राह्म थे। अपने ही घर पर ईश्वर की उपासना किया करते थे, और बीच-बीच में

भक्तों को निमन्त्रण देकर उत्सव मनाते थे । उनके देहान्त के बाद श्रीनाथ, यज्ञनाथ आदि उनके पुत्रों ने कुछ दिन तक उसी तरह उत्सव मनाये थे । वे ही श्रीरामकृष्ण को बड़े आदर से आमन्त्रित कर लाये हैं ।

श्रीरामकृष्ण तीसरे पहर नीचे के एक कमरे में बैठे, जहाँ धीरे धीरे बहुत से ब्राह्मभक्त सम्मिलित हुए । रवीन्द्र बाबू आदि ठाकुर परिवार के सज्जन भी इस उत्सव में सम्मिलित हुए थे ।

बुलाये जाने पर श्रीरामकृष्ण दुमंजले के उपासना-मन्दिर में जा विराजे । कमरे के पूर्व की ओर वेदी रखी गयी है । नैऋत्य कोण में एक पियानो है । कमरे के उत्तरी हिस्से में कई कुर्सियाँ रखी हुई हैं । उसी के पूर्व की ओर अन्तःपुर में जाने का दरवाजा है ।

गर्मी का मौसम है—आज बुधवार, चैत्र की कृष्णा दशमी है । २ मई १८८३ । अनेक ब्राह्मभक्त नीचे के बड़े आँगन या बरामदे में इधर-उधर घूम रहे हैं । श्रीयुत जानकी घोषाल आदि दो चार सज्जन श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हैं ।—वे उनके श्रीमुख से ईश्वरी प्रसंग सुनेंगे । कमरे में प्रवेश करते ही श्रीरामकृष्ण ने वेदी के सम्मुख प्रणाम किया । फिर बैठकर राखाल, मास्टर आदि से कहने लगे—

"नरेन्द्र ने मुझसे कहा था, 'समाज-मन्दिर को प्रणाम करने से क्या होता है ?' मन्दिर देखने से ईश्वर ही की याद आती है—उद्दीपना होती है । जहाँ उनकी चर्चा होती है, वहाँ उनका आविर्भाव होता है, और सारे तीर्थ वहाँ आ जाते हैं । ऐसे स्थानों के देखने से भगवान् की ही याद होती है ।

"एक भक्त बबूल का पेड़ देखकर भावाविष्ट हुआ था । वहीं

सोचकर कि इसी लकड़ी से श्रीराधाकान्त के बगीचे के लिए कुल्हाड़ी का बट बनना है।

"किसी-किसी भक्त की ऐसी गुरुभक्ति होती है कि गुरुजी के मुहल्ले के एक आदमी को ही देखकर भावों से तर हो गया!

"मेघ देखकर, नीला कपड़ा देखकर अथवा एक चित्र देखकर श्रीराधा को श्रीकृष्ण की उद्दीपना हो जाती थी! ये सब चीजें देखकर वे 'कृष्ण कहाँ है?' कहकर बावली-सी हो जाती थी!"

घोषाल—उन्माद तो अच्छा नहीं है।

श्रीरामकृष्ण—यह तुम क्या कह रहे हो? यह उन्माद विषयचिन्ता का फल थोड़े ही है कि उससे बेहोशी आ जायगी! यह अवस्था तो ईश्वर-चिन्ता से उत्पन्न होती है! क्या तुमने प्रेमोन्माद, ज्ञानोन्माद की बात नहीं सुनी?

एक ब्राह्मभक्त—किस उपाय से ईश्वर मिल सकता है?

श्रीरामकृष्ण—उस पर प्रेम होना चाहिए, और सदा यह विचार रहे कि ईश्वर ही सत्य है, और जगत् अनित्य।

"पीपल का पेड़ ही सत्य है—फल तो दो ही दिन के लिए हैं।"

ब्राह्मभक्त—काम, क्रोध आदि रिपु हैं—इनका क्या किया जाय?

श्रीरामकृष्ण—छः रिपुओं को ईश्वर की ओर मोड़ दो। आत्मा के साथ रमण करने की कामना हो। जो ईश्वर की राह पर बाधा पहुँचाते हैं उन पर क्रोध हो। उसे ही पाने के लिए लोभ। यदि ममता है तो उसी के लिए हो। जैसे 'मेरे राम' 'मेरे कृष्ण'। यदि अहंकार करना है तो विभीषण की तरह—'मैंने श्रीरामचन्द्रजी को प्रणाम किया, फिर यह सिर किसी दूसरे के सामने

नहीं नवाऊँगा।'

ब्राह्मभक्त—यदि ईश्वर ही सब कुछ करा रहा है तो मैं पापों के लिए उत्तरदायी नहीं हूँ?

पापकर्मों का उत्तरदायित्व

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—दुर्योधन ने वही बात कही थी—'त्वया हृषीकेश हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।'—हे हृषीकेश, तुम हृदय में बैठकर जैसा करा रहे हो, वैसा ही मैं करता हूँ।' जिनको ठीक विश्वास है कि ईश्वर ही कर्ता हैं और मैं अकर्ता हूँ, वह पाप नहीं कर सकता। जिसने नाचना सीख लिया है उसके पैर ताल के विरुद्ध नहीं पड़ते।

'मन शुद्ध न होने से यह विश्वास ही नहीं होता कि ईश्वर है।"

श्रीरामकृष्ण उपासना-मन्दिर में एकत्रित भक्तों को देख रहे हैं और कहते हैं, "बीच-बीच में इस तरह एक साथ मिलकर ईश्वर चिन्तन करना और उनके नामगुण गाना बहुत अच्छा है।

"परन्तु संसारी लोगों का ईश्वरानुराग क्षणिक है—वह उतनी ही देर तक ठहरता है जितना तपाये हुए लोहे पर पानी का छिड़काव।"

अब सन्ध्या की उपासना होगी। वह बड़ा कमरा भक्तों से भर गया। कई ब्राह्म महिलाएँ हाथों में संगीत पुस्तक लिये कुर्सियों पर आ बैठीं।

पियानो और हार्मोनियम के सहारे ब्राह्मसंगीत होने लगा। गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण के आनन्द की सीमा न रही। थोड़ी देर में उद्बोधन, प्रार्थना और उपासना हुई। आचार्य वेदी पर बैठ वेदों से मंत्रपाठ करने लगे। "ॐ पिता नोऽसि पिता नो

बोधि। नमस्तेऽस्तु मा मा हिंसीः।—तुम हमारे पिता हो, हमें सद्बुद्धि दो। तुम्हें नमस्कार है। हमें नष्ट न करो।' ब्राह्मभक्त उनसे स्वर मिलाकर कहते हैं—"ॐ सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। आनन्दरूपममृतं यद्विभाति। शान्तं शिवमद्वैतम्। शुद्धमपापविद्धम्।" फिर आचार्यों ने स्तवपाठ किया।

"ॐ नमस्ते सते ते जगत्कारणाय। नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय।।" इत्यादि।

तदनन्तर उन्होंने प्रार्थना की—"असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतं गमय। आविराविर्म एधि। रुद्र यत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां पाहि नित्यम्।"—"मुझे अनित्य से नित्य को, अन्धकार से ज्योति को और मृत्यु से अमरत्व को पहुँचाओ। मेरे पास आविर्भूत होओ। हे रुद्र, अपने कारुण्यपूर्ण मुख से सदा मेरी रक्षा करो।"

ये पाठ सुनकर श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो रहे हैं। अब आचार्य निबन्ध पढ़ते हैं।

उपासना समाप्त हो गयी। भक्तों को खिलाने का प्रबन्ध हो रहा है।

रात के नौ बज गये। श्रीरामकृष्ण को दक्षिणेश्वर लौट जाना है। घर के मालिक निमंत्रित गृही भक्तों की सवर्धना में इतने व्यस्त हैं कि श्रीरामकृष्ण की कोई खबर ही नहीं ले सकते।

श्रीरामकृष्ण (राखाल आदि से)—अरे, कोई बुलाता भी तो नहीं!

राखाल (क्रोध में)—महाराज, आइये चलें, हम दक्षिणेश्वर जायँ।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—अरे ठहर। गाड़ी का किराया—

तीन रुपये दो आने—कौन देगा ? किटने से ही काम न चलेगा ! पैसे का नाम नहीं, और थोथी झाँझ ! फिर इतनी रात को जाऊँ कहाँ ?

बड़ी दूर में सुना गया कि पत्तल बिछे हैं। सब भक्त एक साथ बुलाये गये। उस भीड़ में श्रीरामकृष्ण भी गवाल आदि के साथ एक मजले में भोजन करने चले। भीड़ में बैठने की जगह नहीं मिलती थी। बड़ी मुश्किल से श्रीरामकृष्ण एक तरफ बैठाये गये। स्थान भद्दा था। एक ग्नोइया ठकुराइन ने भाजी परोसी। श्रीरामकृष्ण को उसे खाने की रुचि नहीं हुई। उन्होंने नमक के सहारे एक आध पूड़ी और थोड़ी सी मिठाई खायी।

आप दयासागर हैं। गृहस्वामी लड़के हैं। वे आपकी पूजा करना नहीं जानते तो क्या आप उनसे नाराज होंगे ? अगर आप बिना खाये चले जायँ तो उनका अमंगल होगा। फिर उन्होंने तो ईश्वर के ही उद्देश्य से इतना आयोजन किया।

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। गाड़ी का किराया कौन दे ? उन भीड़ में गृहस्वामियों का पता ही नहीं चलता था। इस किराये के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण ने बाद में विनोद करते हुए भक्तों से कहा था—

"गाड़ी का किराया माँगने गया ! पहले तो उसे भगा ही दिया। फिर बड़ी कोशिश से तीन रुपये मिले, पर दो आने नहीं दिये। कहा कि उसी से हो जायगा !"

परिच्छेद १८

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द में

(१)

हरि-कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ता कँसारी-पाड़ा की हरिभक्ति-प्रदायिनी सभा में शुभागमन किया है। रविवार, शुक्ल सप्तमी सक्रान्त, १३ मई १८८३। आज सभा में वार्षिकोत्सव हो रहा है। मनोहर साँई का कीर्तन हो रहा है।

श्रीराधाकृष्ण-प्रेम का गाना हो रहा है। सखियाँ श्रीमती राधिका से कह रही हैं, 'तूने प्रणयकोप क्यों किया ? तो क्या तू कृष्ण का सुख नहीं चाहती ?' श्रीमती कहती हैं—'उनके चन्द्रावली के कुंज में जाने के लिए मैंने कोप नहीं किया। वहाँ उन्हें क्यों जाना चाहिए ? चन्द्रावली तो सेवा नहीं जानती।'

दूसरे रविवार को (२०-५-८३) रामचन्द्र के मकान पर फिर कीर्तन हो रहा है। श्रीरामकृष्ण आये हैं। वैशाख शुक्ल चतुर्दशी। श्रीमती राधिका श्रीकृष्ण के विरह में बहुत कुछ कह रही हैं, "जब मैं बालिका थी उसी समय से श्याम को देखना चाहती थी। सखि, दिन गिनते-गिनते नाखून घिस गये। देखो, उन्होंने जो माला दी थी वह सूख गयी है, फिर भी मैंने उसे नहीं फेंका। कृष्णचन्द्र का उदय कहाँ हुआ ? वह चन्द्र प्रणयकोप (मान) रूपी राहू के भय से कहीं चला तो नहीं गया। हाय ! उस कृष्ण मेघ का कब दर्शन होगा ? क्या फिर दर्शन होगा, प्रिय, प्राण खोलकर तुम्हें कभी भी न देख सकी ? एक तो कुल दो ही आँखें, उसमें फिर पलक, उसमें फिर आँसुओं की धारा। उनके

सिर पर मोर का पंख मानो स्थिर बिजली के समान है। मोर-गण उस मेघ को देख पंख खोलकर नृत्य करते थे।

"सखि ! यह प्राण तो नहीं रहेगा—मेरी देह तमाल वृक्ष की शाखा पर रख देना और मेरे शरीर पर कृष्ण नाम लिख देना।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'वे और उनका नाम अभिन्न हैं। इसीलिए श्रीमती राधिका इस प्रकार कह रही हैं। जो राम वही नाम हैं।' श्रीरामकृष्ण भावमग्न होकर यह कीर्तन का गाना सुन रहे हैं। गोस्वामी कीर्तनिया इन गानों को गा रहे हैं। अगले रविवार को फिर दक्षिणेश्वर मन्दिर में वही गाना होगा। उसके बाद के शनिवार को फिर अधर के मकान पर वही कीर्तन होगा।

(२)

ईश्वरनिष्ठा। श्रीरामकृष्ण द्वारा जगन्माता की पूजा। विपत्ति-नाशिनी मन्त्र

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं। रविवार, कृष्ण पंचमी, २७ मई १८८३। दिन के नौ बजे का समय होगा। भक्तगण धीरे-धीरे आकर उपस्थित हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि भक्तों के प्रति)—विद्वेष भाव अच्छा नहीं,—शाक्त, वैष्णव, वेदान्ती ये सब झगड़ा करते हैं, यह ठीक नहीं। पद्मलोचन बर्दवान के सभापण्डित थे। सभा में विचार हो रहा था,—

'शिव बड़े हैं या ब्रह्मा।' पद्मलोचन ने बहुत सुन्दर बात कही थी,—'मैं नहीं जानता, मुझसे न शिव का परिचय है, और न ब्रह्मा का!' (सभी हँसने लगे)

"व्याकुलता रहने पर सभी पथों से उन्हें प्राप्त किया जाता है,

परन्तु निष्ठा रहनी चाहिए। निष्ठा भक्ति का दूसरा नाम है—अव्यभिचारिणी भक्ति, जिस प्रकार एक शाखावाला वृक्ष सीधा ऊपर की ओर जाता है। व्यभिचारिणी भक्ति जैसे पाँच शाखा-वाला वृक्ष। गोपियों की ऐसी निष्ठा थी कि वृन्दावन के पीताम्बर और मोहन चूडावाले गोपालकृष्ण के अतिरिक्त और किसी से प्रेम न करेंगी। मथुरा में जब राजवेष था, तो सिर पर पगडी वाले कृष्ण को देख उन्होंने घूँघट की आड में मुँह छिपा लिया और कहा,—

'यह कौन है? क्या इनके साथ बात करके हम द्विचारिणी बनेंगी?'

'स्त्री जो स्वामी की सेवा करती है वह भी निष्ठा-भक्ति है। देवर, जेठ को खिलाती है, पैर धोने को जल देती है, परन्तु स्वामी के साथ दूसरा ही सम्बन्ध रहता है। इसी प्रकार अपने धर्म में भी निष्ठा हो सकती है। इसीलिए दूसरे धर्म से घृणा नहीं करना बल्कि उनके साथ मीठा व्यवहार करना।"

श्रीरामकृष्ण गंगास्नान करके काली के दर्शन करने गये है। साथ में मास्टर हैं। श्रीरामकृष्ण पूजा के आसन पर बैठे है, माँ के चरण कमलों पर फूल रख रहे हैं। बीच बीच में अपने सिर पर भी रख रहे है। और ध्यान कर रहे हैं।

बहुत समय के बाद श्रीरामकृष्ण आसन से उठे—भाव में विभोर होकर नृत्य कर रहे हैं और मुँह से माँ का नाम ले रहे हैं। कह रहे हैं, 'माँ विपदनाशिनी।' देह धारण करने से ही दुःख, विपदाएँ होती है, सम्भव है इसीलिए जीव को इस विपद-नाशिनी महामन्त्र का उच्चारण करके कातर होकर पुकारना सिखा रहे है।

अब श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के पश्चिम वाले बरामदे में आकर बैठे हैं। अभी तक भाव का आवेश है। पास हैं मास्टर, नकुड वैष्णव आदि। नकुड वैष्णव को श्रीरामकृष्ण २८-२९ वर्षों से जानते हैं। जिस समय वे पहले-पहल कलकत्ते में आकर झामापुकुर में रहे थे और घर-घर मे जा-जाकर पूजा करते थे, उस समय कभी-कभी नकुड वैष्णव की दूकान मे जाकर बैठते थे और आनन्द मनाते थे। आजकल पानिहाटी में राघव पण्डित के महोत्सव के उपलक्ष्य मे नकुड बाबाजी आकर प्राय प्रतिवर्ष श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते हैं। नकुड वैष्णव भक्त थे। कभी-कभी वे भी महोत्सव का भण्डारा देते थे। नकुड मास्टर के पड़ोसी थे।

श्रीरामकृष्ण जिस समय झामापुकुर में थे, उस समय गोविन्द चटर्जी के मकान मे रहते थे। नकुड ने मास्टर को वह पुराना मकान दिखाया था।

जगन्माता के नामकीर्तन के आनन्द में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण भाव के आवेश में गाना गा रहे हैं, जिसका भावार्थ यह है —

कीर्तन

(१) "महाकाल की मनमोहिनी सदानन्दमयी काली, माँ, तुम अपने आनन्द में आप ही नाचती हो और आप ही ताली बजाती हो। हे आदिभूते सनातनि, शून्यरूपे शशिभालिके, जिस समय ब्रह्माण्ड न था, उस समय तुझे मुण्डमाला कहाँ मिली? एक मात्र तुम यन्त्री हो, हम सब तुम्हारे निर्देश पर चलते हैं। माँ, तुम जैसा कराती हो, हम वैसा ही करते हैं, जैसा कहलाती हो वैसा ही कहते हैं। हे निर्गुणे, माँ, कमलाकान्त गाली देकर

कहता है कि तुम सर्वनाशिनी ने खड्ग धारण करके धर्म और अधर्म दोनों को नष्ट कर दिया है !"

(२) 'हे तारा, तुम ही मेरी मा हो। तुम निगुणधरा परात्परा हो। मैं जानता हूँ, माँ, कि तुम दीनों पर दया करनेवाली और विपत्ति मे दुःख को हरण करनेवाली हो। तुम सन्ध्या, तुम गायत्री, तुम जगद्धात्री हो। माँ, तुम असहाय को बचानेवाली तथा सदाशिव के मन को हरनेवाली हो। माँ, तुम जल मे, थल मे और आदि मूल मे विराजमान हो। तुम साकार रूप में सर्व घट मे विद्यमान होते हुए भी निराकार हो।"

श्रीरामकृष्ण ने 'माँ' के और भी कुछ गीत गाये। फिर भक्तो से कह रहे हैं, "ससारियो के सामने केवल दुःख की बात ठीक नही। आनन्द चाहिए। जिनको अन्न का अभाव है, वे दो दिन उपवास भी कर सकते है, परन्तु खाने मे थोडा विलम्ब होने पर जिन्हे दुःख होना है उनके पास केवल रोने की बातें, दुःख की बाते करना ठीक नहीं।

"वैष्णवचरण कहा करता था, केवल, पाप, पाप यह सब क्या है? आनन्द करो।"

श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद विश्राम भी न कर सके थे कि मनोहर साँई गोस्वामी आ पधारे।

श्रीराधा के भाव में महाभावमय श्रीरामकृष्ण, क्या श्रीरामकृष्ण गौरांग हैं?

गोस्वामी पूर्वराग का कीर्तन कर रहे हैं। थोडा सुनकर ही श्रीरामकृष्ण राधा के भाव में भावाविष्ट हो गये।

पहले ही गौरचन्द्रिका-कीर्तन। 'हथेली पर हाथ—चिन्तित गोरा—आज क्यों चिन्तित है?—सम्भवतः राधा के भाव में

भावित हुए हैं।'

गोस्वामी फिर गा रहे हैं। भावार्थ —

'घड़ी में सौ बार, पल-पल में घर से बाहर आती और फिर भीतर जाती है, कहीं पर भी मन नहीं लग रहा है, जोर जोर से श्वास चल रहा है, बार-बार बगीचे की ओर ताकती है। (सखे, ऐसा क्यों हुआ ?)'

संगीत की इसी पंक्ति को सुन श्रीरामकृष्ण की महाभाव की स्थिति हुई है! उन्होंने अपनी कमीज को फाड़कर फेंक दिया।

कीर्तनकार का संगीत सुनते-सुनते महाभाव में श्रीरामकृष्ण काँप रहे हैं! केदार को देख वे कीर्तन के स्वर में कह रहे हैं, "प्राणनाथ, हृदयवल्लभ, तुम लोग मुझे कृष्ण ला दो, यही तो मित्रों का काम है, या तो उन्हें ला दो और नहीं तो मुझे ले चलो, तुम लोगों की मैं चिरकाल के लिए दासी बनी रहूँगी।"

गोस्वामी कीर्तनिया श्रीरामकृष्ण के महाभाव की स्थिति को देखकर मुग्ध हुए हैं। वे हाथ जोड़कर कह रहे हैं, "मेरी विषय-बुद्धि मिटा दीजिये।"

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—तुम उस साधु के सदृश हो जिसने पहले रहने की जगह ठीक कर, फिर शहर देखना शुरू किया। तुम इतने बड़े रसिक हो, तुम्हारे भीतर से इतना मीठा रस निकल रहा है!

गोस्वामी—प्रभो, मैं चीनी का बोझ ढोनेवाला बैल हूँ, चीनी का आस्वादन कहाँ कर सका ?

फिर कीर्तन होने लगा। कीर्तनकार श्रीमती राधिका की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं—"कोकिलकुल कुर्वंति कलनादम्।"

कोकिल का कलनाद सुनकर श्रीमती को वज्रध्वनि जैसा लग रहा है। इसलिए वे जैमिनि का नाम उच्चारण कर रही है और कह रही है,—"सखि, कृष्ण के विरह मे यह प्राण नही रहेगा, इस देह को तमाल वृक्ष की शाखा पर रख देना।"

गोस्वामी ने राधाश्याम का मिलन गाकर कीर्तन समाप्त किया।

परिच्छेद १९

भक्तों के मकान पर

(१)

कलकत्ते में बलराम तथा अधर के मकान पर श्रीरामकृष्ण। नरलीला का दर्शन और आस्वादन

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर से कलकत्ता आये हैं। बलराम के मकान से होकर अधर के मकान पर और उसके बाद राम के मकान पर जायेंगे। अधर के मकान में मनोहर साँई का कीर्तन होगा। राम के घर पर कथा होगी। शनिवार, कृष्ण द्वादशी, २ जून १८८३ ई०।

श्रीरामकृष्ण गाड़ी में आते-आते राखाल, मास्टर आदि भक्तों से कह रहे हैं, 'देखो, उन पर प्रेम हो जाने पर पाप आदि सब भाग जाते हैं, जैसे धूप से मैदान के तालाब का जल सूख जाता है।"

'विषय की वासना तथा कामिनी-कांचन पर मोह रखने से कुछ नहीं होता। यदि विषयासक्ति रहे तो संन्यास लेने पर भी कुछ नहीं होता—जैसे थूक को फेंककर फिर चाट लेना।'

थोड़ी देर बाद गाड़ी में श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, 'ब्राह्मसमाजी लोग साकार को नहीं मानते। (हँसकर) नरेन्द्र कहता है, पुत्तलिका! फिर कहता है, 'वे अभी तक कालीमन्दिर में जाते हैं।"

श्रीरामकृष्ण बलराम के घर पर आये हैं। वे एकाएक भावाविष्ट हो गये हैं। सम्भव है, देख रहे हैं, ईश्वर ही जीव तथा जगत् बने हुए हैं, ईश्वर ही मनुष्य बनकर घूम रहे हैं। जगन्माता से

कह रहे हैं, माँ, यह क्या दिखा रही हो ? रुक जाओ, यह सब क्या दिखा रही हो ? राखाल आदि के द्वारा क्या-क्या दिखा रही हो, माँ ! रूप आदि सब उड़ गया । अच्छा माँ, मनुष्य तो केवल ऊपर का ढाँचा ही है न ? चैतन्य तुम्हारा ही है ।

माँ, आजकल के ब्राह्म समाजी मीठा रस नहीं पाते ! आँखें सूखी, मुँह सूखा, प्रेमभक्ति न होने से कुछ न हुआ !

"माँ, तुमने कहा था, एक व्यक्ति का साथी बना दो, मेरे जैसे किसी को ! इसीलिए राखाल को दिया है न ?'

श्रीरामकृष्ण अधर के मकान पर आये हैं । मनोहर साँई के कीर्तन की तैयारी हो रही है ।

श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए अधर के बैठक-घर में अनेक भक्त तथा पड़ोसी आये हैं । सभी की इच्छा है कि श्रीरामकृष्ण कुछ कहें ।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—संसार और मुक्ति दोनों ही ईश्वर की इच्छा पर निर्भर हैं । उन्होंने ही संसार में अज्ञान बनाकर रखा है । फिर जिस समय वे अपनी इच्छा से पुकारेंगे, उसी समय मुक्ति होगी । लड़का खेलने गया है, खाने के समय माँ बुला लेती है ।

"जिस समय वे मुक्ति देंगे उस समय वे साधु-संग करा देते हैं और फिर अपने को पाने के लिए व्याकुलता उत्पन्न कर देते हैं ।"

पड़ोसी—महाराज, किस प्रकार व्याकुलता होती है ?

श्रीरामकृष्ण—नौकरी छूट जाने पर क्लर्क को जिस प्रकार व्याकुलता होती है । वह जिस प्रकार रोज आफिस-आफिस में घूमता है और पूछता रहता है, "साहब, कोई नौकरी की जगह खाली हुई ?" व्याकुलता होने पर छटपटाता है—कैसे ईश्वर को

पाऊँ ! और यदि मूछों पर हाथ फेरते हुए पैर पर पैर धरकर बैठे-बैठे पान चबा रहा है—कोई चिन्ता नहीं, तो ऐसी स्थिति में ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती।

पड़ोसी—साधुसंग होने पर क्या व्याकुलता हो सकती है ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, हो सकती है परन्तु पाखण्डियों को नहीं होती, साधु का कमण्डलु चारों धाम होकर आने पर भी कड़ुए का कड़ुआ ही रह जाता है !

अब कीर्तन शुरू हुआ है, गोस्वामीजी कलह-संवाद गा रहे हैं—

श्रीमतीजी कह रही हैं, 'सखि ! प्राण जाता है, कृष्ण को ला दे।

सखी—राधे, कृष्णरूपी मेघ बरसता है, परन्तु तूने प्रेमकोप-रूपी आँधी से उस मेघ को उड़ा दिया। तू कृष्णसुख में सुखी नहीं है नहीं तो प्रेमकोप क्यों करती ?

श्रीमती—'सखि, प्रेमकोप तो मेरा नहीं है। जिसका प्रेमकोप है उसी के साथ चला गया है।' ललिता श्रीमती की ओर से कुछ कह रही है।

अब कीर्तन में गोस्वामी कह रहे हैं कि सखियाँ राधाकुण्ड के पास श्रीकृष्ण की खोज करने लगीं। उनके बाद यमुना-तट पर श्रीकृष्ण का दर्शन, साथ में श्रीदाम, सुदाम, मधु-मंगल। वृन्दा के साथ श्रीकृष्ण का वार्तालाप, श्रीकृष्ण का योगी का सा भेष, जटिला-संवाद, राधा का भिक्षादान, राधा का हाथ देख योगी द्वारा गणना तथा कष्ट की भविष्य वाणी। कात्यायनी की पूजा में जाने की तैयारी !

कीर्तन समाप्त हुआ। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ वार्तालाप

कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण--गोपियों ने कात्यायनी की पूजा की थी। सभी उस महामाया आद्याशक्ति के आधीन है। अवतार आदि तक उस माया का आश्रय लेकर ही लीला करते है, इसीलिए वे आद्या-शक्ति की पूजा करते है, देखो न, राम सीता के लिए कितने रोये है। पच-भूतो के फन्दे मे पडकर ब्रह्म रोते है।

"हिरण्याक्ष का वध कर वराह अवतार कच्चे-बच्चे लेकर थे। आत्मविस्मृत होकर उन्हे स्तनपान करा रहे थे। देवताओ ने परामर्श करके शिवजी को भेज दिया। शिवजी ने त्रिशूल के आघात से वराह का शरीर विनिष्ट कर दिया। तब वे स्वधाम में पधारे, शिवजी ने पूछा था,—तुम आत्मविस्मृत क्यों हो गये हो? इस पर उन्होंने कहा था, मैं बहुत अच्छा हूँ।"

अधर के मकान से होकर अब श्रीरामकृष्ण राम के मकान पर आये है। वहाँ पर कथाकार के मुख से उद्धव-सवाद सुना। राम के मकान पर केदार आदि भक्तगण उपस्थित थे।

(२)

भक्त-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण। ज्ञान-भक्ति और प्रेम-भक्ति

आज वैशाख की कृष्णा द्वादशी है, शनिवार, तारीख २ जून, १८८३। श्रीरामकृष्णदेव का कलकत्ते मे शुभागमन हुआ। वे बलराम बाबू के मकान से होकर अधर बाबू के मकान पर आये। वहाँ से कीर्तन सुनकर, सिमुलिया मोहल्ले की मधु राय की गली मे राम बाबू के मकान पर आये हैं।

रामचन्द्र दत्त श्रीरामकृष्णदेव के विशिष्ट भक्त थे। वे डाक्टरी की शिक्षा प्राप्त कर मेडिकल कालेज में रसायन-शास्त्र के सहकारी परीक्षक नियुक्त हुए थे और साइन्स असोसिएशन

(Science Association) में रसायन-शास्त्र के अध्यापक भी थे। उन्होंने स्वोपार्जित धन से यह मकान बनवाया था। इस मकान में श्रीरामकृष्णदेव कई बार आये थे इसीलिए यह मकान भक्तों के लिए आज तीर्थ के समान महान् पवित्र है। रामचन्द्र गुरुदेव की कृपा लाभ कर ज्ञानपूर्वक संसार-धर्म पालन करने की चेष्टा करते थे। श्रीरामकृष्णदेव मुक्तकण्ठ से राम बाबू की प्रशंसा करते और कहते थे, राम अपने मकान में भक्तों को स्थान देता है, कितनी सेवा करता है, उसका मकान भक्तों का एक अड्डा है। नित्यगोपाल, लाटू, तारक आदि एक प्रकार से रामचन्द्र के घर के आदमी हो गये थे। उनके साथ बहुत दिनों तक एकत्र वास भी किया था। इसके सिवाय उनके मकान में प्रतिदिन नारायण की पूजा और सेवा भी होती थी।

रामचन्द्र श्रीरामकृष्ण को वैशाख की पूर्णिमा को, जिस समय हिंडोले का शृंगार होता है, इस मकान में उनकी पूजा करने के लिए सर्वप्रथम ले आये थे। प्राय प्रतिवर्ष आज के दिन वे उनको ले जाकर भक्तों से सम्मिलित हो महोत्सव मनाया करते थे। रामचन्द्र के प्यारे शिष्य-वृन्द अब भी उस दिन उत्सव मनाते हैं।

आज रामचन्द्र के मकान में उत्सव है, श्रीरामकृष्ण आयेंगे। आप ईश्वरी प्रसंग सुनकर मुग्ध होते हैं, इसीलिए रामचन्द्र ने श्रीमद्भागवत की कथा का प्रबन्ध किया है, छोटा सा आँगन है, कथक महोदय बैठे हैं। राजा हरिश्चन्द्र की कथा हो रही है। इसी समय बलराम और अधर के मकान से होकर श्रीरामकृष्ण यहाँ आ पहुँचे। रामचन्द्र ने आगे बढ़कर उनकी चरण-रज को मस्तक में धारण किया और वेदी के सम्मुख उनके लिए निर्दिष्ट आसन पर उन्हें लाकर बैठाया। चारों ओर भक्त और पास ही

मास्टर बैठे हैं।

राजा हरिश्चन्द्र की कथा होने लगी। विश्वामित्र बोले, 'महाराज! तुमने मुझे ससागरा पृथ्वी दान कर दी है, इसलिए अब इसके भीतर तुम्हारा स्थान नहीं है, किन्तु तुम काशीधाम में रह सकते हो, वह महादेव का स्थान है। चलो, तुम्हें और तुम्हारी सहधर्मिणी शैव्या और तुम्हारे पुत्र को वहाँ पहुँचा दें। वहीं पर जाकर तुम प्रबन्ध करके मुझे दक्षिणा दे देना।' यह कहकर राजा को साथ ले विश्वामित्र काशीधाम की ओर चले। काशी मे आकर उन लोगो ने विश्वेश्वर के दर्शन किये।

विश्वेश्वर-दर्शन की बात होते ही श्रीरामकृष्ण एकदम भावाविष्ट हो अस्पष्ट रूप मे 'शिव' 'शिव' उच्चारण कर रहे हैं।

कथक कथा कहते गये। अन्त में रोहिताश्व की जीवनदान, सब लोगों का विश्वेश्वर दर्शन और हरिश्चन्द्र का पुन राज्यलाभ वर्णन कर कथक महोदय ने कथा समाप्त की। श्रीरामकृष्ण बहुत समय तक वेदी के सम्मुख बैठकर कथा सुनते रहे। कथा समाप्त होने पर बाहर के कमरे में जाकर बैठे। चारो ओर भक्तमण्डली बैठी है, कथक भी पास आकर बैठ गये। श्रीरामकृष्ण कथक से बोले, कुछ उद्धव-सवाद कहो।

कथक कहने लगे, "जब उद्धव वृन्दावन आये, गोपियाँ और ग्वाल-बाल उनके दर्शन के लिए व्याकुल हो दौडकर उनके पास गये। सभी पूछने लगे, 'श्रीकृष्ण कैसे हैं? क्या वे हम लोगों को भूल गये? क्या वे कभी हम लोगो को स्मरण करते हैं?' यह कहकर कोई रोने लगा, कोई उन्हे साथ ले वृन्दावन के अनेक स्थानो को दिखलाने और कहने लगा, 'इस स्थान में श्रीकृष्ण गोवर्धन धारण किये थे, यहाँ पर धेनुकासुर और वहाँ पर शकटा-

-सुर का वध किये थे, इस मैदान में गौओं को चराते थे, इसी यमुना के तट पर वे विहार करते थे, यहाँ पर ग्वाल-बालों सहित क्रीड़ा करते थे। इस कुंज में गोपियों के साथ आलाप करते थ।' उद्धव बोले, 'आप लोग कृष्ण के लिए इतने व्याकुल क्यों हो रहे हैं? वे तो सर्व भूतों में व्याप्त हैं। वे साक्षात् नारायण हैं! उनके सिवाय और कुछ नहीं है।' गोपियों ने कहा, 'हम यह सब नहीं समझ सकतीं। लिखना पढ़ना हमें नहीं मालूम, हम तो केवल अपने वृन्दावन-विहारी कृष्ण को जानती हैं। वे यहाँ बहुत कुछ लीला कर गये हैं।' उद्धव फिर बोले, 'वे साक्षात् नारायण हैं, उनकी चिन्ता करने से पुन संसार में नहीं आना पड़ता, जीव मुक्त हो जाता है।' गोपियों ने कहा, 'हम मुक्ति आदि—यह सब बातें नहीं समझतीं। हम तो अपने प्राणवल्लभ कृष्ण को चाहती हैं।'"

श्रीरामकृष्णदेव यह सब ध्यान से सुनते रहे और भाव में मग्न हो बोले, 'गोपियों का कहना सत्य है।' यह कहकर वे अपने मधुर कण्ठ से गाने लगे। गाने का आशय यह है —

'मैं मुक्ति देने में कातर नहीं होता, पर शुद्धा भक्ति देने में कातर होता हूँ। जो शुद्धा भक्ति प्राप्त कर लेते हैं वे सबसे आगे हैं। वे पूज्य होकर त्रिलोकजयी होते हैं। सुनो चन्द्रावलि, भक्ति की बात करता हूँ, मुक्ति तो मिलती है, पर भक्ति कहाँ मिलती है? भक्ति के कारण मैं पाताल में बलिराजा का द्वारपाल होकर रहता हूँ। शुद्धा भक्ति एक वृन्दावन में है जिसे गोप-गोपियों के सिवाय दूसरा कोई नहीं जानता। भक्ति के कारण मैं नन्द के भवन में उन्हें पिता जानकर उनके जूते सिर पर ले चलता हूँ।'

श्रीरामकृष्ण (कथक के प्रति)—गोपियों की भक्ति थी प्रेमाभक्ति—**अव्यभिचारिणी भक्ति**—निष्ठा-भक्ति। व्यभिचारिणी भक्ति किसे कहते हैं, जानते हो ? ज्ञानमिश्रित भक्ति। जैसे कृष्ण ही सब हुए हैं—वे ही परब्रह्म हैं, वे ही राम, वे ही शिव, वे ही शक्ति हैं। पर प्रेमा-भक्ति मे उस ज्ञान का संयोग नहीं है। द्वारका में आकर हनुमान ने कहा, 'सीताराम के दर्शन करूँगा।' भगवान् रुक्मिणी से बोले, 'तुम सीता बनकर बैठो, अन्यथा हनुमान से रक्षा नहीं है।' पाण्डवों ने जब राजसूय यज्ञ किया, उस समय देश-देश के नरेश युधिष्ठिर को सिंहासन पर बिठाकर प्रणाम करने लगे। विभीषण बोले, 'मैं एक नारायण को प्रणाम करूँगा, और दूसरे को नहीं।' यह सुनते ही भगवान् स्वयं भूमिष्ठ होकर युधिष्ठिर को प्रणाम करने लगे, तब विभीषण ने राजमुकुट धारण किये हुए भी युधिष्ठिर को साष्टांग प्रणाम किया।

"किस प्रकार, जानते हो ?—जैसे घर की बहू अपने देवर, जेठ, ससुर और स्वामी सबकी सेवा करती है। पैर धोने के लिए जल देती है, अगौछा देती है, पीढ़ा रख देती है, परन्तु दूसरी तरह का सम्बन्ध एकमात्र स्वामी ही के साथ रहता है।

"इस प्रेमा-भक्ति में दो चीजें है। 'अहंता' और 'ममता'। यशोदा सोचती थी, गोपाल को मैं न देखूँगी तो और कौन देखेगा ? मेरे देख-भाल न करने पर उन्हे रोग व्याधि हो सकती है। यशोदा नहीं जानती थी कि कृष्ण स्वयं भगवान् हैं। और 'ममता'—मेरा कृष्ण, मेरा गोपाल। उद्धव बोले, 'मा, तुम्हारे कृष्ण साक्षात् नारायण हैं, वे संसार के चिन्तामणि हैं। वे सामान्य वस्तु नहीं हैं।' यशोदा कहने लगी, 'अरे तुम्हारे चिन्तामणि

कौन ! मेरा गोपाल कैसा है, मैं पूछती हूँ। चिन्तामणि नहीं, मेरा गोपाल।'

"गोपियों की निष्ठा कैसी थी ! मथुरा में द्वारपाल से अनुनय-विनय कर वे सभा में आयीं। द्वारपाल उन लोगों को कृष्ण के पास ले गया। कृष्ण को देख गोपियाँ मुख नीचा कर परस्पर कहने लगीं 'यह पगड़ी बाँधे राजवेश में कौन है ? इसके साथ वार्तालाप कर क्या अन्त में हम द्विचारिणी बनेंगी ? हमारे मोहन मोरमुकुट पीताम्बरधारी प्राणवल्लभ कहाँ हैं ?' देखते हो इन लोगों की निष्ठा कैसी है ! वृन्दावन का भाव ही दूसरा है। सुना है द्वारका की तरफ लोग पार्थसखा श्रीकृष्ण की पूजा करते हैं—वे राधा को नहीं चाहते !"

भक्त—कौन श्रेष्ठ है, ज्ञानमिश्रित भक्ति या प्रेमाभक्ति ?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर के प्रति एकान्त अनुराग हुए विना प्रेमाभक्ति का उदय नहीं होता। और 'ममत्व'-ज्ञान अर्थात् भगवान् मेरे अपने हैं, यह ज्ञान। तीन भाई जगल में जा रहे थे, सहसा एक बाघ सामने आ खड़ा हुआ ! एक आदमी बोला, 'भाई, हम सब आज मरे।' एक आदमी बोला, 'क्यों, मरेंगे क्यों ? आओ, ईश्वर का स्मरण करें।' दूसरा आदमी बोला, 'नहीं, भगवान् को कष्ट देकर क्या होगा ? आओ इसी पेड़ पर चढ़कर बैठें।'

"जिस आदमी ने कहा था, 'हम लोग मरे' वह नहीं जानता था कि ईश्वर रक्षा करनेवाले हैं। जिसने कहा, 'आओ भगवान् को स्मरण करें,' वह ज्ञानी था, वह जानता था कि ईश्वर सृष्टि, स्थिति, प्रलय के मूल कारण हैं। और जिसने कहा, 'भगवान् को कष्ट देकर क्या होगा, आओ पेड़ पर चढ़ बैठें', उसके भीतर

प्रेम उत्पन्न हुआ था—स्नेहममता का भाव आया था। तो प्रेम का स्वभाव ही यह है कि प्रेमी अपने को बड़ा समझता है और प्रेमास्पद को छोटा देखता है, कहीं उसे कोई कष्ट न हो। उसकी यही इच्छा होती है कि जिससे प्रेम करे उसके पैर में एक काँटा भी न चुभे।"

श्रीरामकृष्णदेव तथा भक्तों को ऊपर ले जाकर अनेक प्रकार के मिष्टान्न आदि से रामबाबू ने उनकी सेवा की। भक्तों ने बड़े आनन्द से प्रसाद पाया।

परिच्छेद २०

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ

(१)

मनुष्य में ईश्वरदर्शन, नरेन्द्र से प्रथम भेंट

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में अपने कमरे में बैठे हैं। भक्तगण उनके दर्शन के लिए आ रहे हैं। आज ज्येष्ठ मास की कृष्ण चतुर्दशी, सावित्री चतुर्दशी व्रत का दिन है। सोमवार, तारीख ४ जून, १८८३ ई०। आज रात को अमावस्या तिथि में फलहारिणी कालीपूजा होगी।

मास्टर कल रविवार से आये हैं। कल रात को कात्यायनी की पूजा हुई थी। श्रीरामकृष्ण प्रेमाविष्ट हो नाटमन्दिर में माता के सामने खड़े हो कह रहे हैं, 'माता, तुम्हीं ब्रज की कात्यायनी हो।' यह कहकर उन्होंने एक गाना गाया। जिसका आशय यह है —तुम्हीं स्वर्ग हो, तुम्हीं मर्त्य हो, तुम्हीं पाताल भी हो। तुम्हीं से हरि, ब्रह्मा और द्वादश गोपाल पैदा हुए हैं। दशमहाविद्याएँ, और दशावतार भी तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं। अब की बार तुम्हें किसी प्रकार मुझे पार करना होगा।

श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं, और अपनी माँ से बातें कर रहे हैं। प्रेम से बिल्कुल मतवाले हो गये हैं। मन्दिर से वे अपने कमरे में आकर तख्त पर बैठे।

रात के दूसरे पहर तक माँ का नाम-कीर्तन होता रहा।

सोमवार को सबेरे के समय बलराम और कई दूसरे भक्त आये। फलहारिणी काली-पूजा के उपलक्ष्य में त्रैलोक्य बाबू आदि

भी सपरिवार आये हैं। सवेरे नौ बजे का समय है। श्रीरामकृष्णदेव प्रसन्नचित्त, गंगा की ओर के गोल बरामदे में बैठे हैं। पास ही राखाल लेटे हैं। आनन्द में उन्होंने राखाल का मस्तक अपनी गोद में उठा लिया है। आज कई दिनों से श्रीरामकृष्ण राखाल को साक्षात् गोपाल के रूप में देखते हैं।

त्रैलोक्य सामने से माँ काली के दर्शन को जा रहे हैं। साथ में नौकर उनके सिर पर छाता लगाये जा रहा है। श्रीरामकृष्ण राखाल से बोले, 'उठ रे, उठ !'

श्रीरामकृष्ण बैठे हैं। त्रैलोक्य ने आकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (त्रैलोक्य से)—कल 'यात्रा' नहीं हुई ?

त्रैलोक्य—जी नहीं, अब की बार 'यात्रा' की वैसी सुविधा नहीं हुई।

श्रीरामकृष्ण—लो इस बार जो हुआ सो हुआ। देखना, जिसमें फिर ऐसा न होने पाये। जैसा नियम है वैसा ही बराबर होना अच्छा है।

त्रैलोक्य यथोचित उत्तर देकर चले गये। कुछ देर बाद विष्णुमन्दिर के पुरोहित श्रीयुत राम चटर्जी आये।

श्रीरामकृष्ण—राम, मैंने त्रैलोक्य से कहा, इस साल 'यात्रा' नहीं हुई, देखना जिसमें आगे ऐसा न हो। तो क्या यह कहना ठीक हुआ ?

राम—महाराज, उसमें क्या हुआ ! अच्छा ही तो कहा। जैसा नियम है उसी प्रकार ठीक-ठीक होना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (बलराम से)—अजी, आज तुम यहीं भोजन करो।

भोजन के कुछ पहले श्रीरामकृष्णदेव अपनी अवस्था के

सम्बन्ध में भक्तो से बहुत सी बाते करने लगे। राखाल, बलराम, मास्टर, रामलाल, और दो-एक भक्त बैठे थे।

श्रीरामकृष्ण—हाजरा मुझे उपदेश देता है कि तुम इन लडकों के लिए इतनी चिन्ता क्यो करते हो? गाडी में बैठकर बलराम के मकान पर जा रहा था, उसी समय मन में बडी चिन्ता हुई। कहने लगा, 'माँ, हाजरा कहता है, नरेन्द्र आदि बालकों के लिए मैं इतनी चिन्ता क्यों करता हूँ, वह कहता है, ईश्वर की चिन्ता त्यागकर इन लडको की चिन्ता आप क्यो करते हैं?' यह कहते-कहते अचानक उन्होंने दिखलाया कि वे ही मनुष्य-रूप मे लीला करती हैं। शुद्ध आधार में उनका प्रकाश स्पष्ट होता है। इस दर्शन के बाद जब समाधि कुछ टूटी तो हाजरा के ऊपर बडा क्रोध हुआ। कहा, उसने मेरा मन खराब कर दिया था। फिर सोचा, उस बेचारे का अपराध ही क्या है, वह यह कैसे जान सकता है?

"मैं इन लोगो को साक्षात् नारायण जानता हूँ। नरेन्द्र के साथ पहले भेट हुई। देखा, देह-बुद्धि नही है। जरा छाती को स्पर्श करते ही उसका बाह्य-ज्ञान लोप हो गया। होश आने पर कहने लगा, 'आपने यह क्या किया! मेरे तो माता-पिता है।' यदु मल्लिक के मकान में भी ऐसा ही हुआ था। क्रमशः उसे देखने के लिए व्याकुलता बढ़ने लगी, प्राण छटपटाने लगे। तब भोलानाथ* से कहा, 'क्यो जी, मेरा मन ऐसा क्यो होता है? नरेन्द्र नाम का एक कायस्थ लडका है, उसके लिए ऐसा क्यों होता है?' भोलानाथ बोले, 'इस सम्बन्ध में महाभारत में लिखा है कि समाधिवान् पुरुषों का मन जब नीचे उतरता है, तब सतो-

* भोलानाथ मुकर्जी ठाकुरबाडी के मुन्शी थे, बाद में खजांची हुए थे।

गुणी लोगों के साथ विलास करता है, सतोगुणी मनुष्य देखने से उनका मन शान्त होता है।'—यह बात सुनकर मेरे चित्त को शान्ति मिली। बीच-बीच में नरेन्द्र को देखने के लिए मैं बैठा-बैठा रोया करता था।"

(२)

श्रीरामकृष्ण का प्रेमोन्माद और रूपदर्शन

श्रीरामकृष्ण—ओह, कैसी-कैसी अवस्था बीत गयी है! पहले जब ऐसी अवस्था हुई थी तो रात-दिन कैसे बीत जाते थे, कह नहीं सकता। सब कहने लगे थे, पागल हो गया, इसीलिए इन लोगों ने शादी कर दी। उन्माद अवस्था थी। पहले स्त्री के बारे मे चिन्ता हुई, बाद मे सोचा कि वह भी इसी प्रकार रहेगी, खायेगी, पियेगी। ससुराल गया, वहाँ भी खूब संकीर्तन हुआ। नफर, दिगम्बर बनर्जी के पिता आदि सब लोग आये। खूब संकीर्तन होता था। कभी-कभी सोचता था, क्या होगा। फिर कहता था, माँ, गांव के जमीदार यदि मानें तो समझूँगा यह अवस्था सत्य है। और सचमुच वे भी आप ही आने लगे और बातचीत करने लगे।

"कैसी अवस्था बीत गयी है! किंचित् ही कारण से एकदम भगवान् की उद्दीपना होती थी। मैंने सुन्दरी की पूजा की, चौदह वर्ष की लडकी थी। देखा साक्षात् माँ जगदम्बा! रुपये देकर मैंने प्रणाम किया।

"रामलीला देखने के लिए गया तो सीता, राम, लक्ष्मण, हनुमान, विभीषण, सभी को साक्षात् प्रत्यक्ष देखा। तब जो-जो बने थे उनकी पूजा करने लगा।

"कुमारी कन्याओं को बुलाकर उनकी पूजा करता—देखता

साक्षात् माँ जगदम्बा।

'एक दिन बकुलवृक्ष के तले देखा, नीला वस्त्र पहने हुए एक लड़की खड़ी है। वह वेश्या थी, पर मेरे मन मे एकदम सीता की उद्दीपना हो गयी। उस कन्या को बिलकुल भूल गया और देखा साक्षात् सीता देवी लंका से उद्धार पाकर राम के पास जा रही हैं। बहुत देर तक बाह्य-संज्ञाहीन हो समाधि अवस्था में रहा।

'और एक दिन कलकत्ते में किले के मैदान मे घूमने के लिए गया था। उस दिन बेलून (हवाई जहाज) उड़नवाला था। बहुत से लोगों की भीड़ थी। अचानक एक अंग्रेज बालक की ओर दृष्टि गयी, वह पेड़ के सहारे त्रिभंग होकर खड़ा था। श्रीकृष्ण की उद्दीपना हो समाधि हो गयी।

"शिऊड़ गाँव मे कई चरवाहों को भोजन कराया। सबके हाथ मे मैंने जलपान की सामग्री दी। देखा, साक्षात् व्रज के ग्वालबाल! उनसे जलपान लेकर मैं भी खाने लगा।

"प्राय होश न रहता था। मथुर बाबू ने मुझे ले जाकर जानबाजार के मकान में कुछ दिन रखा। मैं देखने लगा, साक्षात् माँ की दासी हो गया हूँ। घर की औरतें बिल्कुल शरमाती नहीं थीं, जैसे छोटे-छोटे बच्चों को देख कोई भी स्त्री लज्जा नहीं करती। रात को बाबू की कन्या को जमाई के पास पहुँचाने जाता था।

"अब भी सामान्य उद्दीपना से ही भाव हो जाता है। राखाल जप करते समय ओठ हिलाता था। मैं उसे देखकर स्थिर नहीं रह सकता था, एकदम ईश्वर की उद्दीपना होती और विह्वल हो जाता।"

श्रीरामकृष्ण अपने प्रकृति-भाव की और भी कथाएँ कहने

लगे। बोले, मैंने एक कीर्तनियाँ को स्त्री-कीर्तनियाँ के ढग दिखलाये थे। उसने कहा, 'आप बिलकुल ठीक कहते है। आपने यह सब कैसे सीखा ?' यह सब कहकर आप स्त्री-कीर्तनियाँ के ढग का अनुकरण कर दिखलाने लगे। कोई भी अपनी हँसी न रोक सका।

(२)

श्रीरामकृष्ण 'अहेतुक कृपा-सिन्धु'।
गुरुकृपा से मुक्ति

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण थोडा विश्राम कर रहे हैं। गाढ़ी नींद नहीं, तन्द्रा-सी है। श्रीयुत मणिलाल मल्लिक ने आकर प्रणाम किया और आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण अब भी लेटे हैं। मणिलाल बीच-बीच में बाते करते हैं। श्रीरामकृष्ण अर्धनिद्रित अर्धजाग्रत अवस्था में है, वे किसी-किसी बात का उत्तर दे देते हैं।

मणिलाल—शिवनाथ नित्यगोपाल की प्रशसा करते है। कहते हैं, उनकी अच्छी अवस्था है।

श्रीरामकृष्ण अभी पूरी तरह से नहीं जागे। वे पूछते है, 'हाजरा को वे लोग क्या कहते हैं ?'

श्रीरामकृष्ण उठ बैठे। मणिलाल से भवनाथ की भक्ति के बारे मे पूछ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—अहा, उसका भाव कैसा सुन्दर है ! गाना गाते-गाते आँखे आँसुओ से भर जाती हैं। हरीश को देखते ही उसे भाव हो गया। कहता है, ये लोग अच्छे है। हरीश घर छोड यहाँ कभी-कभी रहता है न, इसीलिए।

मास्टर से प्रश्न कर रहे हैं, 'अच्छा, भक्ति का कारण क्या

है? भवनाथ आदि बालकों की उद्दीपना क्यों होती है?' मास्टर चुप हैं।

श्रीरामकृष्ण—बात यह है कि बाहर से देखने में सभी मनुष्य एक ही तरह के होते हैं। पर किसी-किसी में खोये का पूर भरा है। पक्वान्न तो कई प्रकार के हो सकते हैं। उनमें उड़द का पूर भी रहता है और खोये का भी, पर देखने में सब एक-से हैं। भगवान को जानने की इच्छा, उन पर प्रेम और भक्ति, इसी का नाम खोये का पूर है।

अब आप भक्तों को अभय देते हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—कोई सोचता है कि मुझे ज्ञान भक्ति न होगी, मैं शायद बद्धजीव हूँ। श्रीगुरु की कृपा होने पर कोई भय नहीं है। बकरियों के एक झुण्ड में बाघिन पड़ी थी। कूदते समय बाघिन को बच्चा पैदा हो गया। बाघिन तो मर गयी, पर वह बच्चा बकरियों के साथ पलने लगा। बकरियाँ घास खातीं तो वह भी घास खाता था। बकरियाँ 'मैं मैं' करतीं तो वह भी करता। धीरे-धीरे वह बच्चा बड़ा हो गया। एक दिन इन बकरियों के झुण्ड पर एक दूसरा बाघ झपटा। वह उस घास खानेवाले बाघ को देखकर आश्चर्य में पड़ गया। दौड़कर उसने उसे पकड़ा तो वह 'मैं मैं' कर चिल्लाने लगा। उसे घसीटकर वह जल के पास ले गया और बोला, 'देख, जल में तू अपना मुँह देख। देख, मेरे ही समान तू भी है, और ले यह थोड़ा सा माँस है, इसे खा ले।' यह कहकर वह उसे बलपूर्वक खिलाने लगा। पर वह किसी तरह खाने को राजी न हुआ, 'मैं मैं' चिल्लाता ही रहा। अन्त में रक्त का स्वाद पाकर वह खाने लगा। तब उस नये बाघ ने कहा, अब तूने समझा कि जो मैं हूँ,

वहीं तू भी है, अब आ, मेरे साथ जगल को चल।'

"इसीलिए गुरु की कृपा होने पर फिर कोई भय नहीं।

"वे बतला देंगे, तुम कौन हो, तुम्हारा स्वरूप क्या है। थोडा साधन करने पर गुरु सब बाते साफ-साफ समझा देते हैं। तब मनुष्य स्वय समझ सकता है, क्या सत् है, क्या असत्। ईश्वर ही सत्य और यह ससार अनित्य है।

"एक धीवर किसी दूसरे के बाग मे रात के समय चुराकर मछलियाँ पकड रहा था। मालिक को इसकी टोह लग गयी और दूसरे लोगों की सहायता से उसने उसे घेर लिया। मशाल जलाकर वे चोर को खोजने लगे। इधर वह धीवर शरीर मे कुछ भस्म लगाये, एक पेड के नीचे साधु बनकर बैठ गया। उन लोगो ने अनेक ढूँढ-तलाश की, पर केवल भभूत रमाये एक ध्यानमग्न साधु के सिवाय और किसी को न पाया। दूसरे दिन गाँव भर में खबर फैल गयी कि अमुक के बाग मे एक बडे महात्मा आये हैं। फिर क्या था, सब लोग फल, फूल, मिठाई आदि लेकर साधु के दर्शन को आये। बहुत से रुपये-पैसे भी साधु के सामने पडने लगे। धीवर ने विचारा, आश्चर्य की बात है कि मैं सच्चा साधु नहीं हूँ, फिर भी मेरे ऊपर लोगो की इतनी भक्ति है। इसलिए यदि मैं हृदय से साधु हो जाऊँ तो अवश्य ही भगवान मुझे मिलेंगे, इसमें सन्देह नहीं।

"कपट-साधन मे ही उसे इतना ज्ञान हुआ, सत्य-साधन होने पर तो कोई बात ही नहीं। क्या सत्य है, क्या असत्य—साधन करने मे तुम समझ सकोगे। ईश्वर ही सत्य है और सारा ससार अनित्य।"

एक भक्त चिन्ता कर रहे हैं, क्या ससार अनित्य है?

धीवर तो संसार त्याग कर चला गया। फिर जो संसार में हैं उनका क्या होगा? उन लोगों को भी क्या त्याग करना होगा? श्रीरामकृष्ण अहेतुक कृपासिन्धु हैं, इसलिए कहते हैं, "यदि किसी आफिस के कर्मचारी को जेल जाना पड़े तो वह जेल में सजा काटेगा सही, पर जब जेल से मुक्त हो जायगा, तब क्या वह रास्ते में नाचता फिरेगा? वह फिर किसी आफिस की नौकरी ढूँढ़ लेगा, वही पुराना काम करता रहेगा। इसी तरह गुरु की कृपा से ज्ञानलाभ होने पर मनुष्य संसार में भी जीवन्मुक्त होकर रह सकता है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने सांसारिक मनुष्यों को अभय प्रदान किया।

(४)

निराकारवाद। विश्वास ही कुछ है। स्त्रीत्व धर्म

मणिलाल (श्रीरामकृष्ण से)—पूजा के समय उनका ध्यान किस जगह करेंगे?

श्रीरामकृष्ण—हृदय तो खूब प्रसिद्ध स्थान है। वहीं उनका ध्यान करना।

मणिलाल निराकारवादी ब्राह्म हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें लक्ष्य कर कहते हैं, कबीर कहते थे,

निर्गुण तो है पिता हमारा और सगुण महतारी।
काको निन्दौं काको बन्दौं दोनों पल्ले भारी॥

"हलधारी दिन में साकार भाव में और रात को निराकार भाव में रहता था। बात यह है कि चाहे जिस भाव का आश्रय करो, विश्वास पक्का होना चाहिए। चाहे साकार में विश्वास करो चाहे निराकार में, परन्तु वह ठीक-ठीक होना चाहिए।

"शम्भु मल्लिक बागबाजार से पैदल अपने बाग में आया करते थे। किसी ने कहा था, 'इतनी दूर है, गाड़ी से क्यों नहीं आते? रास्ते में कोई घटना हो सकती है।' उस समय शम्भु ने नाराज होकर कहा, 'क्या! मैं भगवान् का नाम लेकर निकला हूँ, फिर मुझे विपत्ति!'

'विश्वास से ही सब कुछ होता है। मैं कहता था यदि अमुक से भेंट हो जाय या यदि अमुक खजांची मेरे साथ बात करे तो समझूँ कि मेरी यह अवस्था सत्य है। परन्तु जो मन में आता है वही हो जाता है।"

मास्टर ने अंग्रेजी का न्याय-शास्त्र पढ़ा था। उसमें लिखा है कि सवेरे के स्वप्न का सत्य होना लोगों के कुसंस्कार की ही उपज है। इसलिए उन्होंने पूछा, "अच्छा, कभी ऐसा भी हुआ है कि कोई घटना नहीं हुई?"

श्रीरामकृष्ण—"नहीं, उस समय सब हो जाता था। ईश्वर का नाम लेकर जो विश्वास करता था, वही हो जाता था। (मणिलाल से) पर इसमें एक बात है। सरल और उदार हुए बिना यह विश्वास नहीं होता। जिसके शरीर की हड्डियाँ दिखाई देती हैं, जिसकी आँखें छोटी और घुसी हुई हैं, जो ऐंचाताना है, उसे सहज में विश्वास नहीं होता। इसी प्रकार और भी कई लक्षण हैं।"

शाम हो गयी। दासी कमरे में धूनी दे गयी। मणिलाल आदि के चले जाने के बाद दो भक्त अभी बैठे हैं। घर शान्त और धूने से सुवासित है। श्रीरामकृष्ण अपने तख्त पर बैठे हुए जगन्माता की चिन्ता कर रहे हैं। मास्टर और राखाल जमीन पर बैठे हैं।

थोड़ी देर बाद मथुर बाबू के घर की दासी भगवती ने आकर

दूर से श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। उन्होंने उसे बैठने के लिए कहा। भगवती बाबू की पुरानी दासी है। श्रीरामकृष्ण उसे बहुत दिनों से जानते हैं। पहले उसका स्वभाव अच्छा न था, पर श्रीरामकृष्ण दया के सागर, पतितपावन हैं, इसीलिए उससे पुरानी बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—अब तो तेरी उम्र बहुत हुई है। जो रुपये कमाये हैं उनसे साधु-वैष्णवों को खिलाती है या नहीं?

भगवती (मुसकराकर)—यह भला कैसे कहूँ?

श्रीरामकृष्ण—काशी, वृन्दावन यह सब तो हो आयी?

भगवती (थोड़ा सकुचाती हुई)—कैसे बतलाऊँ? एक घाट बनवा दिया है। उसमें पत्थर पर मेरा नाम लिखा है।

श्रीरामकृष्ण—ऐसी बात!

भगवती—हाँ, नाम लिखा है, 'श्रीमती भगवती दासी।'

श्रीरामकृष्ण (मुसकराकर)—बहुत अच्छा।

भगवती ने साहस पाकर श्रीरामकृष्ण के चरण छूकर प्रणाम किया।

बिच्छू के काटने से जैसे कोई चौंक उठता है और अस्थिर हो खड़ा हो जाता है, वैसे ही श्रीरामकृष्ण अधीर हो, 'गोविन्द' 'गोविन्द' उच्चारण करते हुए खड़े हो गये। घर के कोने में गंगाजल का एक मटका था—और अब भी है—हाँफते-हाँफते, मानो घबराये हुए, उसी के पास गये और पैर के जिस स्थान को दासी ने छुआ था, उसे गंगाजल से धोने लगे।

दो-एक भक्त जो घर में थे, निर्वाक् हो एकटक यह दृश्य देख रहे थे। दासी जीवन्मृत की तरह बैठी थी। दयासिन्धु श्रीराम-

कृष्ण ने दासी से करुणा से सने हुए स्वर से कहा, "तुम लोग ऐसे ही प्रणाम करना।" यह कहकर फिर आसन पर बैठकर दासी को बहलाने की चेष्टा करते रहे। उन्होंने कहा, "कुछ गाते हैं, सुन।" यह कहकर उसे गाना सुनाने लगे।

परिच्छेद २१

ईश्वरदर्शन तथा साधना

(१)

पूर्वकथा--देवेन्द्र ठाकुर, दीन मुखर्जी, और कुँवरसिंह

आज अमावस्या, मंगलवार का दिन है, ५ जून १८८३ ई०। श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर में हैं। भक्त-समागम रविवार को विशेष होता है, आज अधिक लोग नहीं हैं। राखाल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। हाजरा भी हैं, श्रीरामकृष्ण के कमरे के सामनेवाले बरामदे में अपना आसन लगाया है। मास्टर पिछले रविवार से यहाँ हैं।

दोपहर को भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण अपने प्रेमोन्माद की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—कैसी हालत बीत चुकी है! यहाँ भोजन न करता था, बराहनगर या दक्षिणेश्वर या आरियादह में किसी ब्राह्मण के घर चला जाता, और जाता भी देर में था। जाकर बैठ जाता था, पर बोलता कुछ नहीं। घर के लोग पूछते तो केवल कहता, मैं यहाँ खाऊँगा। और कोई बात नहीं है।

"एक दिन हठ कर बैठा, देवेन्द्रनाथ ठाकुर के घर जाऊँगा। मथुर बाबू से कहा, देवेन्द्र ईश्वर का नाम लेते हैं, उनको देखना चाहता हूँ, मुझे ले चलोगे? मथुर बाबू को अपनी मान मर्यादा का बड़ा अभिमान था, वे अपनी गरज से किसी के मकान पर क्यों जाने लगे? आगापीछा करने लगे। बाद में बोले, 'अच्छा,

देवेन्द्र और हम एक साथ पढ़ चुके हैं, चलिए, आपको ले चलेंगे।'

"एक दिन सुना कि दीन मुखर्जी नाम का एक भला आदमी बागबाजार के पुल के पास रहता है। भक्त है। मथुर बाबू को पकड़ा, दीन मुखर्जी के यहाँ जाऊँगा। मथुर बाबू क्या करते, गाड़ी पर मुझे ले गये। छोटा सा मकान और इधर एक बड़ी भारी गाड़ी पर एक मेरु आया है, वह भी शरमा गया और हम भी। फिर उनके लड़के का जनेऊ होनेवाला था। कहाँ बैठाये ! हम लोग पास के घर में जाने लगे, तो उसने कहा, 'वहा न जाइये, उस घर में औरतें हैं।' बड़ा असमंजस था। मथुर बाबू लौटते समय बोले, 'बाबा, तुम्हारी बात अब कभी न मानूँगा।' मैं हँसने लगा।

"कैसी अनोखी अवस्था थी, कुँवरसिंह ने साधुओं को भोजन कराना चाहा, मुझे भी न्योता दिया। जाकर देखा बहुत से साधु आये हैं। मेरे बैठने पर साधुओं में से कोई-कोई मेरा परिचय पूछने लगे 'आप गिरी हैं या पुरी ?' पर ज्योंही उन्होंने पूछा, त्योंही मैं अलग जाकर बैठा। सोचा कि इतनी खबर काहे की ? बाद को ज्योंही पत्तल बिछाकर भोजन के लिए बैठाया, किसी के कुछ कहने के पहले ही मैंने खाना शुरू कर दिया। साधुओं में से किसी-किसी को कहते सुना, 'अरे यह क्या !'"

(७)

साधु और अवतार में अन्तर

पाँच बजे हैं। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के बरामदे की सीढ़ी पर बैठे हैं। राखाल, हाजरा और मास्टर पास बैठे हैं।

हाजरा का भाव है, 'सोऽहम्—मैं ही ब्रह्म हूँ।'

श्रीरामकृष्ण (हाजरा से)—हाँ, यह सोचने से सब गड़बड़ मिट जाता है,—वे ही आस्तिक हैं वे ही नास्तिक वे ही भले हैं, वे ही बुरे, वे ही नित्य वस्तु हैं, वे ही अनित्य जगत्, जागृति और निद्रा उन्हीं की अवस्थाएँ हैं, फिर वे ही इन सारी अवस्थाओं से परे भी हैं।

"एक किसान को बुढ़ापे में एक लड़का हुआ था। लड़के को वह बहुत यत्न से पालता था। धीरे-धीरे लड़का बड़ा हुआ। एक दिन जब किसान खेत में काम कर रहा था, किसी ने आकर उसे खबर दी कि तुम्हारा लड़का बहुत बीमार है—अब-तब हो रहा है। उसने घर में आकर देखा, लड़का मर गया है। स्त्री खूब रो रही है, पर किसान की आँखों में आँसू तक नहीं। उसकी स्त्री अपनी पड़ोसिनियों के पास इसलिए और भी शोक करने लगी कि ऐसा लड़का चला गया, पर इनकी आँखों में आँसू का नाम नहीं। बड़ी देर बाद किसान ने अपनी स्त्री को पुकारकर कहा, 'मैं क्यों नहीं रोता, जानती हो? मैंने कल स्वप्न में देखा कि राजा हो गया हूँ और सात लड़कों का बाप बना हूँ। स्वप्न में ही देखा कि वे लड़के रूप और गुण में अच्छे हैं। क्रमशः वे बड़े हुए और विद्या तथा धर्म उपार्जन करने लगे। इतने में ही नींद खुल गयी। अब सोच रहा हूँ कि तुम्हारे इस एक लड़के के लिए रोऊँ या अपने इन सात लड़कों के लिए? ज्ञानियों के मत से स्वप्न की अवस्था जैसी सत्य है, जाग्रत् अवस्था भी वैसी ही सत्य है।

"ईश्वर ही कर्ता हैं, उन्हीं की इच्छा से सब कुछ हो रहा है।"

हाजरा—पर यह समझना बड़ा कठिन है। भू-कैलाश के

साधु को कितना कष्ट दिया गया, जो एक तरह से उनकी मृत्यु का कारण हुआ। वे समाधि की हालत मे मिले थे। होश मे लाने के लिए लोगो ने उन्हे कभी जमीन मे गाडा, कभी जल में डुबोया और कभी उनका शरीर दाग दिया। इस तरह उन्हे चैतन्य कराया। इन यन्त्रणाओ के कारण उनका शरीर छूट गया। लोगो ने उन्हे कष्ट भी दिया और इधर ईश्वर की इच्छा से उनकी मृत्यु भी हुई।

श्रीरामकृष्ण--जिसका जैसा कर्म है, उसका फल वह पायेगा। किन्तु ईश्वर की इच्छा से उन साधु का शरीर-त्याग हुआ। वैद्य बोतल के अन्दर मकरध्वज तैयार करते हैं। उसके चारो ओर मिट्टी लीपकर वे उसे आग मे रख देते हैं। बोतल के अन्दर का सोना आग की गरमी से और कई चीजो के साथ मिलकर मकरध्वज बन जाता है। तब वैद्य बोतल को उठाकर उसे धीरे-धीरे तोडता है और उसमे मकरध्वज निकालकर रख लेता है। उस समय बोतल रहे चाहे नष्ट हो जाय, उससे क्या? उसी तरह लोग सोचते है कि साधु मार डाले गये, पर शायद उनकी चीज बन चुकी होगी। भगवान्-लाभ होने के बाद शरीर रहे भी तो क्या, और जाय तो भी क्या?

"भू-कैलास के वे साधु समाधिस्थ थे। समाधि अनेक प्रकार की होती है। हृषीकेश के साधु के कथन से मेरी हालत मिल गयी थी। कभी शरीर मे चींटी की तरह वायु चलती हुई जान पड़ती थी, कभी बडे वेग के साथ, जैसे बन्दर एक डाल से दूसरी डाल पर कूदते हैं, कभी मछली की तरह गति थी। जिसको हो वही जान सकता है। जगत् का ख्याल जाता रहता है। मन के कुछ उतरने पर मैं कहता था, मा, मुझे अच्छा कर दो, मैं बाते

करना चाहता हूँ ।

"ईश्वर-कोटि के, जैसे अवतार आदि, न होने पर मनुष्य समाधि से नही लौट सकता । जीव-कोटि के कोई-कोई साधना के बल से समाधिस्थ होते तो हैं, पर वे फिर नही लौटते । जब ईश्वर स्वय मनुष्य होकर आते हैं, अवतार रूप में आते हैं और जीवों की मुक्ति की चाभी उनके हाथ में रहती है, तब वे समाधि के बाद लौटते हैं—लोगो के कल्याण के लिए ।'

मास्टर (मन ही मन)--क्या श्रीरामकृष्ण के हाथ मे जीवो की मुक्ति की चाभी है ?

हाजरा—ईश्वर को सन्तुष्ट करने से सब कुछ हुआ । अवतार हो या न हो ।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—हाँ, हा । विष्णुपुर म रजिस्टरी का बडा दफ्तर है, वहाँ रजिस्टरी हो जाने पर फिर 'गोघाट' में कोई बखेडा नही होता ।

शाम हुई । मन्दिर म आरती हो रही है । बारह शिवमन्दिरो तथा श्रीराधाकान्त के और माता भवतारिणी के मन्दिरों में शख घण्टा आदि मगल-वाद्य बज रहे हैं । आरती समाप्त होने के कुछ समय बाद श्रीरामकृष्ण अपने घर से दक्षिण के बरामदे में आ बैठे । चारो ओर घना अन्धकार है, केवल मन्दिर में स्थान-स्थान पर दीपक जल रहे हैं । गगाजी के वक्ष पर आकाश की काली छाया पडी है । आज अमावस्या है । श्रीरामकृष्ण सहज ही भावमय हैं, आज भाव और भी गम्भीर हो रहा है, बीच बीच में प्रणव उच्चारण कर रहे हैं और देवी का नाम ले रहे हैं । ग्रीष्म का मौसम, और घर के भीतर गरमी बहुत है । इसीलिए बरामदे में आये हैं । किसी भक्त ने एक

कीमती चटाई दी है। वही बरामदे मे बिछायी गयी है। श्रीरामकृष्ण को सर्वदा माँ का ध्यान लगा रहता है। लेटे हुए आप मणि से धीरे-धीरे बाते कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण—देखो, **ईश्वर के दर्शन होते हैं।** अमुक को दर्शन मिले है, परन्तु किसी से कहना मत। तुम्हे ईश्वर का रूप पसन्द है या निराकार चिन्ता।

मणि—इस समय तो निराकार-चिन्ता कुछ अच्छी लगती है, पर यह भी कुछ-कुछ समझ मे आया है कि वे ही इन अनेक रूपो मे विराजते है।

श्रीरामकृष्ण—देखो, मुझे गाडी पर बेलघरिया म मोती शील की झील को ले चलोगे? वहाँ चारा फेक दो, मछलियाँ उसे खाने लगेगी। अहा! मछलियो को खेलती हुई देखकर क्या आनन्द होता है! तुम्हे उद्दीपना होगी कि मानो सच्चिदानन्दरूपी सागर में आत्मारूपी मछली खेल रही है। उसी तरह लम्बे चौडे मैदान मे खडे होने से ईश्वरीय भाव आ जाता है, जैसे किसी हण्डी मे रखी हुई मछली तालाब को पहुँच गयी हो।

"उनके दर्शन के लिए **साधना** चाहिए। मुझे कठोर साधनाएँ करनी पडी। बिल्व वृक्ष के नीचे तरह-तरह की साधनाएँ कर चुका। वृक्ष के नीचे पडा रहता था,—यह कहते हुए कि माँ, दर्शन दो। रोते-रोते आँसुओ की झडी लग जाती थी।

मणि—जब आप ही इतनी साधनाएँ कर चुके तब दूसरे लोग क्या एक ही क्षण मे सब कर लेगे? मकान के चारो ओर उँगली फेर देने ही मे क्या दीवाल बन जायगी?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—अमृत कहता है, **एक आदमी के आग जलाने पर दस आदमी उसके ताप से लाभ उठाते हैं।** एक

बात और है,—नित्य को पहुँचकर लीला में रहना अच्छा है।

मणि—आपने तो कहा है कि लीला विलास के लिए है।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, लीला भी सत्य है। और देखो, जब यहाँ आओगे तब अपने साथ थोड़ा कुछ लेते आना। खुद नहीं कहना चाहिए, इससे अभिमान होता है। अधर सेन से भी कहता हूँ एक पैसे का कुछ लेकर आना। भवनाथ से कहता हूँ कि एक पैसे का पान लाना। भवनाथ की भक्ति कैसी है, देखी है तुमने? भवनाथ और नरेन्द्र मानो स्त्री और पुरुष हैं। भवनाथ नरेन्द्र का अनुगत है। नरेन्द्र को गाड़ी पर ले आना। कुछ खाने की चीज लाना। इससे बहुत भला होता है।

ज्ञानपथ और नास्तिकता

"ज्ञान और भक्ति—दोनो ही मार्ग हैं, भक्ति-मार्ग में आचार कुछ अधिक पालन करना पड़ता है। ज्ञान-मार्ग में यदि कोई अनाचार भी करे तो वह मिट जाता है। खूब आग जलाकर एक केले का पेड़ भी झोंक दो, तो वह भी भस्म हो जाता है।

"ज्ञानी का मार्ग विचार-मार्ग है। विचार करते-करते कभी-कभी नास्तिकपन भी आ सकता है। पर भगवान् को जानने के लिए भक्त की जब हार्दिक इच्छा होती है, तब नास्तिकता आने पर भी वह ईश्वरचिन्तन नहीं त्यागता। जिसके बाप-दादे किसानी करते आ रहे हैं, अतिवृष्टि और अनावृष्टि के कारण किसी साल फसल न होने पर भी वह खेती करता ही रहता है।"

श्रीरामकृष्ण लेटे-लेटे बातें कर रहे हैं। बीच में मणि से बोले, मेरा पैर थोड़ा दर्द कर रहा है, जरा हाथ फेर दो।

कृपासिन्धु गुरुदेव के कमल-चरणों की सेवा करते हुए, मणि उनके श्रीमुख से वे अपूर्व तत्त्व सुन रहे थे।

(२)

श्रीरामकृष्ण की समाधि । भक्तो के द्वारा श्रीचरण-पूजा

श्रीरामकृष्ण आज सन्ध्या-आरती के बाद दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर मे देवी की प्रतिमा के सम्मुख खडे होकर दर्शन करते और चमर लेकर कुछ देर डुलाते रहे ।

ग्रीष्म ऋतु है । ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया तिथि है । शुक्रवार, तारीख ८ जून १८८३ ई० । आज शाम को श्रीयुत राम केदार चटर्जी, और तारक श्रीरामकृष्ण के लिए फूल और मिठाई लिये कलकत्ते से गाडी पर आये है ।

केदार की उम्र कोई पचीस वर्ष की होगी । बडे भक्त हैं । ईश्वर की चर्चा सुनते ही उनके नेत्र अश्रुपूर्ण हो जाते है । पहले ब्राह्म-समाज मे आते-जाते थे । फिर कर्ताभजा, नवरसिक आदि अनेक सम्प्रदायो से मिलकर अन्त मे उन्होंने श्रीरामकृष्ण के चरणो म शरण ली है । सरकारी नौकरी म हिसाबनवीस का काम करते हैं । उनका घर काँचडापाडा के निकट हालीशहर गाँव मे है ।

तारक की उम्र २४ वर्ष की होगी । विवाह के कुछ दिन बाद उनकी स्त्री की मृत्यु हो गयी । उनका मकान बारासात गाँव मे है । उनके पिता एक उच्च कोटि के साधक थे, श्रीरामकृष्ण के दर्शन उन्होंने अनेक बार किये थे । तारक की माता की मृत्यु होने पर उनके पिता ने अपना दूसरा विवाह कर लिया था ।

तारक राम के मकान पर सर्वदा आते जाते रहते है । उनके और नित्यगोपाल के साथ वे प्राय श्रीरामकृष्णदेव के दर्शन करने के लिए आते है । इस समय भी किसी आफिस मे काम करते हैं । परन्तु सर्वदा विरक्ति का भाव है ।

श्रीरामकृष्ण ने काली-मन्दिर में निकलकर चबूतरे पर भूमिष्ठ हो माता को प्रणाम किया। उन्होंने देखा राम, मास्टर, केदार, तारक आदि भक्त वहाँ खड़े हैं।

तारक को देखकर आप बड़े प्रसन्न हुए और उनकी ठुड्डी छूकर प्यार करने लगे।

अब श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर अपने कमरे में जमीन पर बैठे हैं। उनके दोनों पैर फैले हैं। राम और केदार ने उन चरण-कमलों को पुष्पमालाओं से शोभित किया है। श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हैं।

केदार का भाव नवरसिक समाज का है। वे श्रीरामकृष्ण के चरणों के अँगूठों को पकड़े हुए हैं। उनकी धारणा है कि इससे शक्ति का सचार होगा। श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हो कह रहे हैं, 'माँ! अँगूठों को पकड़कर वह मेरा क्या कर सकेगा?'

केदार विनीत भाव से हाथ जोड़े बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केदार से भावावेश में)—कामिनी और काचन पर तुम्हारा मन खिचता है। मुँह से कहने से क्या होगा कि मेरा मन उधर नहीं है।

"आगे बढ़ चलो। चन्दन की लकड़ी के आगे और भी बहुत कुछ है, चाँदी की खान—सोने की खान—फिर हीरे और माणिक, थोड़ी सी उद्दीपना हुई है, इससे यह मत सोचो कि सब कुछ हो गया।"

श्रीरामकृष्ण फिर अपनी माता से बातें कर रहे हैं। कहते हैं 'माँ! इसे हटा दो।'

केदार का कण्ठ सूख गया है। भयभीत हो राम से कहते हैं, वे यह क्या कह रहे हैं?

राखाल को देखकर श्रीरामकृष्ण फिर भावाविष्ट हो रहे हैं। उन्हे पुकारकर कहते है, 'मैं यहाँ बहुत दिनो से आया हूँ। तू कब आया?'

क्या श्रीरामकृष्ण इशारे से कहते है कि वे भगवान् के अवतार हैं और राखाल उनके एक अन्तरग पार्षद!

परिच्छेद २२

मणिरामपुर तथा बेलघर के भक्तों के साथ

(१)

श्रीमुख-कथित चरितामृत

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में कभी खड़े होकर, कभी बैठकर भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। आज रविवार १० जून १८८३ ई०, ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी। दिन के दस बजे का समय होगा। राखाल, मास्टर, लाटू, किशोरी, रामलाल, हाजरा आदि अनेक व्यक्ति उपस्थित हैं।

श्रीरामकृष्ण स्वयं अपने चरित्र का वर्णन कर अपनी पूर्व कथा सुना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—उस अंचल में (कामारपुकुर में बचपन में) मुझे स्त्री-पुरुष सभी चाहते थे। सभी मेरा गाना सुनते थे, फिर मैं लोगों की नकल उतार सकता था—लोग मेरा नकल उतारना देखते थे और सुनते थे। उनके घर की बहू-बेटियाँ मेरे लिए खाने की चीजें रख देती थीं। कोई मुझ पर अविश्वास न करता था। सभी घर के लड़का जैसा मानते थे।

'परन्तु मैं सुख पर लट्टू था। अच्छा सुखी घर देखकर आया-जाया करता था। जिस घर पर दुःख-विपत्ति देखता था, वहाँ से भाग जाता था।

"लड़कों में किसी को भला देखने पर उससे प्रेम करता था। और किसी किसी के साथ गहरी मित्रता जोड़ता था, परन्तु अब वे घोर संसारी बन गये हैं। अब उनमें से कोई-कोई यहाँ पर

आते है, आकर कहते है, 'वाह गव ! पाठशाला में भी जैसा देखा यहा पर भी वैसा ही देख रहे है।

"पाठशाला म हिसाब देखकर सिर चकराता था, परन्तु चित्र अच्छा खीच सकता था और अच्छी मूर्तिया गढ सकता था।

सदावर्त रामायण और महाभारत से प्रेम

"जहाँ भी सदावर्त, धर्मशाला देखता था वही पर जाता था—जाकर बहुत देर तक खडा देखता रहता था।

"कही पर रामायण या भागवत की कथा होने पर बैठकर सुनता था, परन्तु यदि कोई मुँह-हाथ बनाकर पढता, तो उसकी नकल उतारता था और लोगो को सुनाता था।

"औरतो की चाल-चलन खूब समझ सकता था। उनकी बातें, स्वर आदि की नकल उतारता था।

"बदचलन औरतो को पहचान सकता था। बदचलन विधवा के सिर पर सीधी माग और बडी लगन से शरीर पर तेल की मालिश, लज्जा कम, बैठने का ढग ही दूसरा होता है।

"रहने दो विषयी लोगो की बाते !"

रामलाल को गाना गाने के लिए कह रहे है। रामलाल गा रहे है—(भावार्थ)—

(१) "रणागण में यह कौन बादल जैसा रगवाली नाच रही है, मानो रुधिर-सरोवर में नवीन नलिनी तैर रही हो।"

अब रामलाल रावण-वध के बाद मन्दोदरी के विलाप का गाना गा रहे है। (भावार्थ)—

(२) "हे कान्त ! अबला के प्राणप्रिय, यह तुमने क्या किया ! प्राणो का अन्त हुए बिना तो अब शान्ति नही मिलती !"

आखिर का गाना सुनते-सुनते श्रीरामकृष्ण आँसू बहा रहे हैं

और कह रहे हैं--"मैंने झाऊतल्ले में शौच जाते समय सुना था, नाव के मांझी नाव में वही गाना गा रहे हैं। वहाँ जब तक बैठा रहा केवल रो रहा था। लोग पकड़कर मुझे कमरे में लाये थे।"

गाना—(भावार्थ)—(३) 'सुना है राम तारक ब्रह्म हैं, जटाधारी राम मनुष्य नहीं हैं। हे पिताजी, क्या वंश का नाश करने के लिए उनकी सीता को चुराया है ?"

अक्रूर श्रीकृष्ण को रथ पर बैठाकर मथुरा ले जा रहे हैं। यह देख गोपियों ने रथचक्रों को जकड़कर पकड़ लिया है और उनमें से कोई-कोई रथचक्र के सामने लेट गयी हैं। वे अक्रूर पर दोषारोपण कर रही हैं। वे नहीं जानतीं कि श्रीकृष्ण अपनी ही इच्छा से जा रहे हैं।

गीत (भावार्थ)—(४) 'रथ-चक्र को न पकड़ो, न पकड़ो। क्या रथ चक्र से चलता है ? जिस चक्र के चक्री हरि हैं, उनके चक्र से जगत् चलता है।'

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—अहा, गोपियों का यह कैसा प्रेम ! श्रीमती राधिका ने अपने हाथ से श्रीकृष्ण का चित्र अंकित किया है, परन्तु पैर नहीं बनाया, कहीं वे वृन्दावन से मथुरा न भाग जायँ !

"मैं इन सब गानों को बचपन में खूब गाता था। एक-एक नाटक सारा का सारा गा सकता था। कोई कहता था कि मैं कालीय-दमन नाटक दल में था।"

एक भक्त नयी चद्दर ओढ़कर आये हैं। राखाल का बालक जैसा स्वभाव है—कैंची लाकर उनकी चद्दर के किनारे के सूतों को काटने जा रहा था। श्रीरामकृष्ण बोले, "क्यों काटता है ? रहने दे। शाल की तरह अच्छा दिखाई देता है। हाँ जी, इसका

क्या दाम है ?" उन दिनों विलायती चद्दरा का दाम कम था। एक भक्त ने कहा, "एक रुपया छ आना जोड़ी।" श्रीरामकृष्ण बोले, "क्या कहते हो ! जोड़ी ! एक रुपया छ आना जोड़ी !"

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण भक्त से कह रहे हैं, "जाओ, गंगास्नान कर लो ! अरे, इन्हें तेल दो तो थोड़ा !"

स्नान के बाद जब वे लौटे तो श्रीरामकृष्ण ने ताक पर से एक आम लेकर उन्हें दिया। कहा, 'यह आम इन्हें देता हूँ। तीन डिग्रियाँ पास है य ! अच्छा, तुम्हारे भाई अब कैसे हैं ?"

भक्त--हाँ, उनकी दवा ठीक हो रही है, असर ठीक हो रहा है, ऐसा ही चले तो ठीक है !

श्रीरामकृष्ण--उनके लिए किसी नौकरी की व्यवस्था कर सकते हो ? बुरा क्या है, तुम मुखिया बनोगे।

भक्त--स्वस्थ होने पर सभी सुविधाएँ हो जायँगी।

(२)

साधन-भजन करो और व्याकुल होओ

श्रीरामकृष्ण भोजन के उपरान्त छोटे तख्त पर जरा बैठे है--अभी विश्राम करने का समय नहीं हुआ था। भक्तों का समागम होने लगा। पहले मणिरामपुर से भक्तों का एक दल आकर उपस्थित हुआ। एक व्यक्ति पी डब्ल्यू डी में काम करते थे। इस समय पेन्शन पाते हैं। एक भक्त उन्हें लेकर आये हैं। धीरे-धीरे बेलघर से भक्तों का एक दल आया। श्री मणि मल्लिक आदि भक्तगण भी धीरे-धीरे आ पहुँचे। मणिरामपुर के भक्तों ने कहा, "आपके विश्राम में विघ्न हुआ।"

श्रीरामकृष्ण बोले, "नहीं, नहीं, यह तो रजोगुण की बातें हैं कि वे अब सोयेंगे।"

नाणत मणिरामपुर का नाम सुनकर श्रीरामकृष्ण को अपने बचपन के मित्र श्रीराम का स्मरण हुआ। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, श्रीराम की दूकान तुम्हारे वहीं पर है। श्रीराम मेरे साथ पाठशाला में पढ़ता था। थोड़े दिन हुए यहाँ पर आया था।"

मणिरामपुर के भक्तगण कह रहे हैं, "दया करके हमें जरा बता दीजिये कि किस उपाय से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है।'

श्रीरामकृष्ण--थोड़ा साधन-भजन करना होता है। 'दूध में मक्खन है' केवल कहने से ही नहीं मिलता, दूध से दही बनाकर मथन करने के बाद मक्खन उठाना पड़ता है, परन्तु बीच-बीच में जरा निर्जन में रहना चाहिए। * कुछ दिन निर्जन में रहकर भक्ति प्राप्त करके उसके बाद फिर कहीं भी रहो। पैर में जूता पहनकर काँटेदार जगत् में भी आसानी से जाया जा सकता है।

"मुख्य बात है विश्वास। जैसा भाव वैसा लाभ। मूल बात है विश्वास। विश्वास हो जाने पर फिर भय नहीं होता।"

मणिरामपुर के भक्त--महाराज, गुरु क्या आवश्यक ही हैं?

श्रीरामकृष्ण--अनेकों के लिए आवश्यक हैं,§ परन्तु गुरुवाक्य में विश्वास करना पड़ता है। गुरु को ईश्वर मानना पड़ता है। इसीलिए वैष्णव भक्त कहते हैं,--गुरु--कृष्ण--वैष्णव।

"उनका नाम सदा ही लेना चाहिए। कलि में नाम का माहात्म्य है। प्राण अन्नगत है, इसीलिए योग नहीं होता। उनका नाम लेकर ताली बजाने से पापरूपी पक्षी भाग जाते हैं।

"सत्संग सदा ही आवश्यक है। गंगाजी के जितने ही निकट

---

* योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।--गीता, ६।१०

§ आचार्यवान् पुरुषो वेद--छान्दोग्य, ६। ८।२

जाओगे, उतनी ही ठण्डी हवा पाओगे। आग के जितने ही निकट जाओगे उतनी ही गर्मी होगी।

"सुस्ती करने से कुछ नहीं होगा। जिनको सांसारिक विषय-भोग की इच्छा है, वे कहते हैं, होगा! कभी न कभी ईश्वर को प्राप्त कर लेंगे।'

'मैंने केशव सेन से कहा था, पुत्र को व्याकुल देखकर उसके पिता उसके बालिग होने के तीन वर्ष पहले ही उसका हिस्सा छोड़ देते हैं।

माँ भोजन बना रही है, गोदी का बच्चा सो रहा है। मा मुँह में चूसनी दे गयी है। जब चूसनी छोड़कर चीत्कार करके बच्चा रोता है, तब मा हंडी उतारकर बच्चे को गोदी में लेकर स्तनपान कराती है। ये सब बातें मैंने केशव सेन से कही थीं।

"कहते हैं, कलियुग में एक दिन एक रात भर रोने से ईश्वर का दर्शन होता है। मन में अभिमान करो और कहो, 'तुमने मुझे पैदा किया है—दर्शन देना ही होगा'!'

"गृहस्थी में रहो, अथवा कहीं भी रहो, ईश्वर मन को देखते हैं। विषय-बुद्धिवाला मन मानो भीगी दियासलाई है, चाहे जितना रगड़ो कभी नहीं जलेगी। एकलव्य ने मिट्टी के बने द्रोण अर्थात् अपने गुरु की मूर्ति को सामने रखकर बाण चलाना सीखा था।

"कदम बढ़ाओ,—लकड़हारे ने आगे बढ़कर देखा था चन्दन की लकड़ी, चाँदी की खान, सोने की खान, और आगे बढ़कर देखा हीरा-मणि!

"जो लोग अज्ञानी हैं, वे मानो मिट्टी की दीवालवाले कमरे के भीतर हैं। भीतर भी रोशनी नहीं है और बाहर की किसी चीज

को भी देख नहीं सकते। ज्ञान प्राप्त करके जो लोग संसार में रहते हैं वे मानो काँच के बने कमरे के भीतर हैं। भीतर रोशनी, बाहर भी रोशनी, भीतर की चीजों को भी देख सकते हैं और बाहर की चीजों को भी।

ब्रह्म और जगन्माता एक हैं

'एक के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। वे परब्रह्म जब तक 'मैं-पन' को रखते हैं, तब तक दिखाते हैं कि वे आद्याशक्ति के रूप में सृष्टि, स्थिति व प्रलय कर रहे हैं।

"जो ब्रह्म है, वही आद्याशक्ति है। एक राजा ने कहा था कि उसे एक ही बात में ज्ञान देना होगा। योगी ने कहा, 'अच्छा, तुम एक ही बात में ज्ञान पाओगे।' थोड़ी देर बाद राजा के यहाँ अकस्मात् एक जादूगर आ पहुँचा। राजा ने देखा वह आकर सिर्फ दो उँगलियों को घुमा रहा है और कह रहा है, 'राजा, यह देख, यह देख।' राजा विस्मित होकर देख रहा है। जादूगर एक उँगली घुमाता हुआ कह रहा है,—'राजा, यह देख, यह देख।' अर्थात् ब्रह्म और आद्याशक्ति पहले पहल दो समझे जाते हैं, परन्तु ब्रह्मज्ञान होने पर फिर दो नहीं रह जाते! अभेद! एक! अद्वितीय! अद्वैत!"

(३)

माया तथा मुक्ति

बेलघर से गोविन्द मुखोपाध्याय आदि भक्तगण आये हैं। श्रीरामकृष्ण जिस दिन उनके मकान पर पधारे थे, उस दिन गायक का "जागो, जागो जननि," यह गाना सुनकर समाधिस्थ हुए थे। गोविन्द उस गायक को भी लाये हैं। श्रीरामकृष्ण गायक को देख आनन्दित हुए हैं और कह रहे हैं, "तुम कुछ गाना

गाओ।" गायक गा रहे हैं,—(भावार्थ)—

(१) "किसी का दोष नहीं है माँ! मैं अपने ही खोदे हुए तालाब के जल में डूबकर मर रहा हूँ।"

(२) 'रे यम! मुझे न छूना, मेरी जात बिगड गयी है। यदि पूछना है कि मेरी जात कैसी बिगडी तो सुन,—इत्यादि।"

(३) "जागो, जागो, जननि! कितने ही दिनों में कुल-कुण्डलिनी मूलाधार में सो रही है। मा, अपने काम के लिए मस्तक में चलो, जहाँ पर सहस्र-दल पद्म में परम शिव विराजमान है, षट्चक्र को भेदकर हे चैतन्यरूपिणि! मन के दुःख को मिटा दो।'

श्रीरामकृष्ण—इस गीत में षट्चक्र-भेद की बात है। ईश्वर बाहर भी है, भीतर भी हैं। वे भीतर से मन में अनेक प्रकार की लहरें उत्पन्न कर रहे हैं। षट्चक्र का भेद होने पर माया का राज्य छोड, जीवात्मा परमात्मा के साथ एक हो जाता है। इसी का नाम है **ईश्वर-दर्शन**।

"माया के रास्ता न छोडने पर ईश्वर का दर्शन नहीं होता। राम, लक्ष्मण और सीता एक साथ जा रहे हैं। सबमें आगे राम, बीच में सीता और पीछे हैं लक्ष्मण। जिस प्रकार सीता के बीच में रहने से लक्ष्मण राम को नहीं देख सकते, उसी प्रकार बीच में माया के रहने से जीव ईश्वर का दर्शन नहीं कर सकता। (मणि मल्लिक के प्रति) परन्तु ईश्वर की कृपा होने पर माया दरवाजे से हट जाती है, जिस प्रकार दरवान लोग कहते हैं, साहब की आज्ञा हो तो उसे अन्दर जाने दूँ।' *

"दो मत हैं—वेदान्त मत और पुराण मत। वेदान्त मत में

* मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।—गीता, ७।१४

कहा है, यह संसार धोखे की टट्टी है अर्थात् जगत् भूल है, स्वप्न की तरह है, परन्तु पुराण मत या भक्ति-शास्त्र कहता है कि ईश्वर ही चौबीस तत्त्व बनकर विद्यमान है। भीतर-बाहर उन्हीं की पूजा करो।

"जब तक उन्होंने 'मैं'-पन को रखा है, तब तक सभी है। फिर स्वप्नवत् कहने का उपाय नहीं है। नीचे आग जल रही है इसी लिए बर्तन में दाल, भात और आलू सब उबल रहे हैं, कूद रहे हैं और मानो कह रहे हैं, 'मैं हूँ', 'मैं कूद रहा हूँ'। यह शरीर मानो बर्तन है, मन-बुद्धि जल है, इन्द्रियों के विषय मानो दाल भात और आलू है, 'अहं' मानो उनका अभिमान है कि मैं उबल रहा हूँ और सच्चिदानन्द अग्नि हैं।

इसीलिए भक्तिशास्त्र में इस संसार को 'मजे की कुटिया' कहा है। रामप्रसाद के गाने में है, 'यह संसार धोखे की टट्टी है।' इसीलिए एक ने जवाब दिया था, 'यह संसार मजे की कुटिया है।' काली का भक्त जीवन्मुक्त नित्यानन्दमय है।' भक्त देखता है, जो ईश्वर है, वे ही माया बने हैं। वे ही जीव जगत् बने हैं। भक्त ईश्वर-माया, जीव-जगत् सबको एक देखता है। कोई-कोई भक्त सभी को राममय देखते हैं। राम ही सब बने हैं। कोई राधाकृष्णमय देखते हैं। कृष्ण ही ये चौबीस तत्त्व बने हुए हैं, जिस प्रकार हरा चश्मा पहनने पर सभी कुछ हरा-हरा दिखायी देता है।

"भक्ति के मत में शक्ति के प्रकाश की न्यूनाधिकता होती है। राम ही सब कुछ बने हुए हैं, परन्तु कहीं पर अधिक शक्ति है और कहीं पर कम। अवतार में उनका एक प्रकार प्रकाश है और जीव में दूसरे प्रकार का। अवतार का भी देह और

है। माया के कारण ही शरीर धारणकर सीता के लिए राम रोये थे, परन्तु अवतार जान-बूझकर अपनी आँखों पर पट्टी बाँधते हैं, जैसे लडके चोर-चोर खेलते हैं और माँ के पुकारते ही खेल बन्द कर देते है। जीव की बात अलग है। जिस कपडे से आँखो पर पट्टी बँधी हुई है, वह कपडा पीछे से आठ गाँठो से बडी मजबूती से बँधा हुआ है। अष्ट पाश '* लज्जा, घृणा, भय, जाति, कुल, शील, शोक, जुगुप्सा (निन्दा)—ये आठ पाश हैं। जब तक गुरु खोल नही देते, तब तक कुछ नही होता।"

(४)

सच्चे भक्त के लक्षण; हठयोग तथा राजयोग

बेलघर का भक्त—आप हम पर कृपा कीजिये।

श्रीरामकृष्ण—सभी के भीतर वे विद्यमान है, परन्तु इलेक्ट्रिक कम्पनी मे अर्जी दो—तुम्हारे घर के साथ सयोग हो जायगा।

"परन्तु व्याकुल होकर प्रार्थना करनी होगी। कहावत है तीन प्रकार के प्रेम के आकर्षण एक साथ होने पर ईश्वर का दर्शन होता है,—सन्तान पर माता का प्रेम, सती स्त्री का स्वामी पर प्रेम और विषयी जीवो का विषय पर प्रेम।

"सच्चे भक्त के कुछ लक्षण हैं। वह गुरु का उपदेश सुनकर स्थिर हो जाता है, बेनिया के सगीत को अजगर साँप स्थिर होकर सुनता है, परन्तु नाग नहीं। और दूसरा लक्षण, सच्चे भक्त की धारणा-शक्ति होती है। केवल काँच पर चित्र खीचा जाता है। जैसा फोटोग्राफ। भक्ति है वह रासायनिक द्रव्य।

"एक लक्षण और है। सच्चा भक्त जितेन्द्रिय होता है, और

---

* घृणा लज्जा भय शका जुगुप्सा चेति पचमी। कुल शील तथा जातिरष्टौ पाशाः प्रकीर्तित ॥—कुलार्णवतन्त्र

कामजयी होता है। गोपियों में काम का संचार नहीं होता था।

"तुम लोग गृहस्थी में हो, रहो न, इससे साधन-भजन में और भी सुविधा है, मानो किले में से युद्ध करना। जिस समय शव-साधन करते हैं उस समय बीच-बीच में शव मुँह खोलकर डराता है। इसलिए भुना हुआ चांवल-चना रखना पडता है और उसके मुख में बीच-बीच म देना पडता है। शव के शान्त होने पर निश्चिन्त होकर जप कर सकोगे। इसलिए घरवालों को शान्त रखना चाहिए। उनके खाने-पीने की व्यवस्था कर देनी पडती है, तब साधन-भजन की सुविधा होती है।

'जिनका भोग अभी बाकी है, वे गृहस्थी मे रहकर ही ईश्वर का नाम लेंगे। निताई कहा करते थे, 'मागुर माछेर झोल, युवती नारीर कोल, बोल हरी बोल'!'—हरिनाम लेने मे मागुर मछली की रसदार तरकारी तथा युवती नारी तुम्हें मिलेगी।

"सच्चे त्यागी की बात अलग है। मधुमक्खी फूल के अतिरिक्त और किसी पर भी नही बैठेगी। चातक की दृष्टि में सभी जल निस्वाद हैं। वह दूसरे किसी भी जल को नही पीयेगा, केवल स्वाति नक्षत्र की वर्षा के लिए ही मुँह खोले रहेगा। सच्चा त्यागी अन्य कोई भी आनन्द नही लेगा, केवल ईश्वर का आनन्द। मधुमक्खी केवल फूल पर बैठती है। सच्चे त्यागी साधु मधुमक्खी की तरह होते हैं। गृही-भक्त मानो साधारण मक्खियाँ हैं। मिठाई पर भी बैठती हैं और फिर सडे घाव पर भी।

'तुम लोग इतना कष्ट करके यहाँ पर आये हो, तुम ईश्वर को ढूंढते फिर रहे हो, अधिकांश लोग बगीचा देखकर ही सन्तुष्ट रहते हैं, मालिक की खोज विरले ही लोग करते हैं। जगत् में सौन्दर्य को देख इसके मालिक को ढूंढना भूल जाते हैं।"

श्रीरामकृष्ण (गानेवाले को दिखाकर)—इन्होंने षट्चक्र का गाना गाया। वह सब योग की बातें हैं। हठयोग और राजयोग। हठयोगी कुछ शारीरिक कसरतें करता है, सिद्धियाँ प्राप्त करना, लम्बी उम्र प्राप्त करना तथा अष्ट-सिद्धि प्राप्त करना, ये सब उद्देश्य हैं। राजयोग का उद्देश्य है भक्ति, प्रेम, ज्ञान, वैराग्य। राजयोग ही अच्छा है।

"वेदान्त की सप्त भूमि और योगशास्त्र के षट्चक्र आपस में मिलते-जुलते हैं। वेद की प्रथम तीन भूमियाँ और योगशास्त्र के मूलाधार, स्वाधिष्ठान तथा मणिपुर चक्र इन तीन भूमियों में—गुह्य, लिंग तथा नाभि में मन का निवास है। जिस समय मन चौथी भूमि पर अर्थात् अनाहत पद्म पर उठता है, उस समय ऐसा दर्शन होता है कि जीवात्मा शिखा की तरह देदीप्यमान है और उसे ज्योति का दर्शन होता है। साधक कह उठता है—यह क्या! यह क्या!

"मन के पाँचवीं भूमि में उठने पर केवल ईश्वर की ही बात सुनने की इच्छा होती है। यहाँ पर विशुद्ध चक्र है। षष्ठ भूमि और आज्ञाचक्र एक ही हैं। वहाँ पर मन के जाने से ईश्वर का दर्शन होता है। परन्तु वह उसी प्रकार होता है जिस प्रकार लालटेन के भीतर रोशनी रहती है—छू नहीं सकते, क्योंकि बीच में काँच रहता है।

"जनक राजा पंचम भूमि पर से ब्रह्मज्ञान का उपदेश देते थे। वे कभी पंचम भूमि पर और कभी षष्ठ भूमि पर रहते थे।

"षट्चक्र भेद के बाद सप्तम भूमि है। मन वहाँ पर लीन हो जाता है, जीवात्मा परमात्मा, एक हो, समाधि हो जाती है। देहबुद्धि चली जाती है। बाह्यज्ञान नहीं रहता, अनेकत्व का बोध

नष्ट हो जाता है और विचार बन्द हो जाता है।

"त्रैलिंग स्वामी ने कहा था, विचार करते समय अनेकता तथा विभिन्नता का बोध होता है। समाधि के बाद अन्त में इक्कीस दिन में मृत्यु हो जाती है।

"परन्तु कुण्डलिनी न जानने पर चैतन्य प्राप्त नहीं होता।"

ईश्वर-दर्शन के लक्षण

'जिसने ईश्वर को प्राप्त किया है, उसके कुछ लक्षण हैं। वह बालक की तरह, उन्मत्त की तरह, जड की तरह, पिशाच की तरह बन जाता है और उसे सच्चा अनुभव होता है कि 'मैं यन्त्र हूँ और वे यन्त्री हैं। वे ही कर्ता हैं, और सभी अकर्ता हैं।' जिस प्रकार सिक्खों ने कहा था, पत्ता हिल रहा है, यह भी ईश्वर की इच्छा है। राम की इच्छा से ही सब कुछ हो रहा है,—यह ज्ञान जैसे जुलाहे ने कहा था, राम की इच्छा से ही कपडे का दाम एक रुपया छ आना है, राम की इच्छा से ही डकैती हुई, राम की इच्छा से ही डाकू पकडे गये। राम की इच्छा से ही पुलिसवाले मुझे ले गये और फिर राम की ही इच्छा से मुझे छोड दिया।"

सन्ध्या निकट थी, श्रीरामकृष्ण ने थोडा भी विश्राम नहीं किया। भक्तों के साथ लगातार हरिकथा हो रही है। अब मणिरामपुर और बेल्घर के तथा अन्य भक्तगण भूमिष्ठ होकर उन्हें प्रणाम कर देवालय में देवदर्शन के बाद अपने-अपने स्थानों को लौटने लगे।

परिच्छेद २३

गृहस्थाश्रम के सम्बन्ध में उपदेश

(१)

तीव्र वैराग्य । पाप-पुण्य । संन्यास

आज गगा-पूजा, ज्यष्ठ शुक्ल दशमी, शुक्रवार का दिन है, तारीख १५ जून, १८८३ ई० । भक्तगण श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर म आये हैं । गगा पूजा के उपलक्ष्य मे अधर और मास्टर को छुट्टी मिली है ।

राखाल के पिता और पिता के ससुर आये हैं । पिता ने दूसरी बार विवाह किया है । ससुर महाशय श्रीरामकृष्ण का नाम बहुत दिनो से सुनते आ रहे हैं, वे साधक पुरुष हैं, श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आये हैं । श्रीरामकृष्ण उन्हे रुक-रुककर देख रहे हैं । भक्तगण जमीन पर बैठ हैं ।

ससुर महाशय ने पूछा,—"महाराज, क्या गृहस्थाश्रम में भगवान् का लाभ हो सकता है ?"

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—क्यो नही हो सकता ? कीचड में रहनेवाली मछली की तरह रहो । वह कीचड में रहती है, पर उसके शरीर में कीचड नही लगता । और अ-सती स्त्री की तरह रहो जो घर का सारा कामकाज करती है, पर उसका मन अपने उपपति की ओर ही रहता है । ईश्वर से मन लगा-कर गृहस्थी का सब काम करो । परन्तु यह है बडा कठिन । मैंने ब्राह्मसमाजवालो से कहा था कि जिस घर में इमली का अचार और पानी का मटका है, यदि उसी घर में सन्निपात का रोगी भी रहे तो बीमारी किस तरह दूर हो ? फिर इमली की याद आते ही मुँह में पानी भर आता है । पुरुषो के लिए स्त्रियाँ

इमली के अचार की तरह है और विषय की तृष्णा तो सदा लगी ही है। यही पानी का मटका है। इस तृष्णा का अन्त नहीं है। सन्निपात का रोगी कहता है कि मैं एक मटका पानी पीऊँगा। बड़ा कठिन है। संसार में बहुत कठिनाइयाँ हैं। जिधर जाओ उधर ही कोई न कोई झंझट आ खड़ी हो जाती है, और निर्जन स्थान न होने के कारण भगवान् की चिन्ता नहीं होती। सोने को गलाकर गहना गढ़ाना है, तो यदि गलाते समय कोई दस बार बुलाये, तो सोना किस तरह गलेगा? चावल छाँटते समय अकेले बैठकर छाँटना होता है। हर बार चावल हाथ में लेकर देखना पड़ता है कि कैसा साफ हुआ। छाँटते समय यदि कोई दस बार बुलाये तो कैसे अच्छी तरह छाँटना हो सकता है?

एक भक्त—महाराज, फिर उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण—उपाय है। यदि तीव्र वैराग्य हो, तो हो सकता है। जिसे मिथ्या समझते हो उसे हठपूर्वक उसी समय त्याग दो। जिस समय मैं बहुत बीमार था, गंगाप्रसाद सेन के पास लोग मुझे ले गये। गंगाप्रसाद ने कहा, औषधि खानी पड़ेगी पर जल नहीं पी सकते। हाँ, अनार का रस पी सकते हो। सब लोगों ने सोचा कि बिना जल पिये मैं कैसे रह सकता हूँ। मैंने निश्चय किया कि अब जल न पीऊँगा। मैं परमहंस हूँ! मैं बतख थोड़े ही हूँ,—मैं तो राजहंस हूँ! दूध पिया करूँगा।

"कुछ काल निर्जन में रहना पड़ता है। खेल के समय पारा छू लेने पर फिर भय नहीं रहता। सोना हो जाने पर जहाँ जी चाहे रहो। निर्जन में रहकर यदि भक्ति मिली हो और भगवान् मिल चुके हों, तो फिर संसार में भी रह सकते हो। (गवाल के पिता के प्रति) इसीलिए तो लड़कों को यहाँ रहने के

लिए कहता हूँ, क्योकि यहाँ थोडे दिन रहने पर भगवान् में भक्ति होगी, उसके बाद सहज ही ससार मे जाकर रह सकेगे।"

एक भक्त--यदि ईश्वर ही सब कुछ करते हैं, तो फिर लोग भला और बुरा, पाप और पुण्य, यह सब क्यो कहते हैं ? पाप भी तो उन्ही की इच्छा से होता है।

राखाल के पिता के ससुर---यह उनकी इच्छा है, हम कैसे समझें। 'Thou great First Cause least understood' *

—Pope

श्रीरामकृष्ण--पाप और पुण्य है, पर वे स्वय निर्लिप्त हैं। वायु में सुगन्ध भी है और दुर्गन्ध भी, परन्तु वायु स्वय निर्लिप्त है। ईश्वर की सृष्टि भी ऐसी है, भला-बुरा, सत् असत्--दोनो हैं। जैसे पेडो मे कोई आम का पेड है, कोई कटहल का, कोई किसी और चीज का। देखो न, दुष्ट आदमियो की भी आवश्यकता है। जिस तालुके की प्रजा उद्दण्ड होती है, वहाँ एक दुष्ट आदमी भेजना पडता है, तब कही तालुके का ठीक शासन होता है।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो से)—बात यह है, ससार करने पर मन की शक्ति का अपव्यय होता है। इस अपव्यय की हानि तभी पूरी हो सकती है जब कोई सन्यास ले। पिता प्रथम जन्मदाता है, उसके बाद द्वितीय जन्म उपनयन के समय होता है। एक बार फिर जन्म होता है, सन्यास के समय। कामिनी और काचन--ये ही दो विघ्न हैं। स्त्री की आसक्ति पुरुष को ईश्वर के मार्ग से डिगा देती है। किस तरह पतन होता है, यह पुरुष नही जान सकता। किले के अन्दर जाते समय यह बिलकुल न

* "हे परमकारण ईश्वर, तू सबसे दुर्बोध है।"

जान सका कि टालू रास्ते से जा रहा हूँ। जब किले के अन्दर गाड़ी पहुँची तो मालूम हुआ कि कितने नीचे आ गया हूँ! स्त्रियाँ पुरुषों को कुछ नहीं समझने देतीं। कप्तान * कहता है, मेरी स्त्री ज्ञानी है! भूत जिस पर सवार होता है, वह नहीं जानता कि भूत सवार है, वह कहता है कि मैं आनन्द में हूँ। (सभी निस्तब्ध हैं)

श्रीरामकृष्ण—संसार में केवल काम का ही नहीं, क्रोध का भी भय है। कामना के मार्ग में रुकावट होने से ही क्रोध पैदा हो जाता है।

मास्टर—भोजन करते समय मेरी थाली से बिल्ली कुछ खाना उठा लेने को बढ़ती है, मैं कुछ नहीं बोल सकता।

श्रीरामकृष्ण—क्यों! एक बार मारते क्यों नहीं? उसमें क्या दोष है? गृहस्थ को फुफकारना चाहिए, पर विष न उगलना चाहिए। कभी अपने कामों से किसी को हानि नहीं पहुँचाना चाहिए, पर शत्रुओं के हाथ से बचने के लिए उसे क्रोध का आभास दिखलाना चाहिए, नहीं तो शत्रु आकर उसे हानि पहुँचायेंगे। पर त्यागी के लिए फुफकारने की भी आवश्यकता नहीं है।

एक भक्त—महाराज, संसार में रहकर भगवान् को पाना बड़ा ही कठिन देखता हूँ। कितने आदमी ऐसे हो सकते हैं? शायद ही कोई ऐसा देखने में आये।

श्रीरामकृष्ण—क्यों नहीं होगा? उधर (कामारपुकुर की ओर) सुना है कि एक डिप्टी है। बड़ा अच्छा आदमी है। प्रताप-सिंह उसका नाम है, दानशीलता, ईश्वर की भक्ति आदि बहुत

* श्रीयुत विश्वनाथ उपाध्याय।

से गुण उसमें हैं। मुझे लेने के लिए आदमी भेजा था। ऐसे लोग भी तो हैं।

(२)

साधना का प्रयोजन। गुरुवाक्य में विश्वास। व्यास का विश्वास। ज्ञानयोग और भक्तियोग

श्रीरामकृष्ण—साधना की बड़ी आवश्यकता है। फिर क्यों नहीं होगा? ठीक से यदि विश्वास हो, तो अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता। चाहिए गुरु के वचनों पर विश्वास।

"व्यासदेव यमुना के उस पार जायेंगे, इतने में वहाँ गोपियाँ आयीं। वे भी पार जायेंगी, पर नाव नहीं मिलती। गोपियों ने कहा, महाराज, अब क्या किया जाय? व्यासदेव ने कहा, 'अच्छा, *तुम लोगों को पार किये देता हूँ, पर मुझे बड़ी भूख लगी है,* तुम्हारे पास कुछ है?' गोपियों के पास दूध, दही, मक्खन आदि था, थोड़ा-थोड़ा सब उन्होंने खाया। गोपियों ने कहा, महाराज, अब पार जाने का क्या हुआ? व्यासदेव तब किनारे पर जाकर खड़े हुए और कहे, हे यमुने, यदि आज मैंने कुछ न खाया हो तो तुम्हारा जल दो भागों में बँट जाय! यह कहते ही जल अलग-अलग हो गया। गोपियाँ यह देखकर दंग रह गयीं, सोचने लगीं, इन्होंने अभी-अभी तो इतनी चीजें खायी हैं, फिर भी कहते हैं, यदि आज मैंने कुछ न खाया हो!

"यही दृढ़ विश्वास है। मैंने नहीं—हृदय में जो नारायण हैं उन्होंने खाया है।

"शंकराचार्य तो ब्रह्मज्ञानी थे, पर पहले उनमें भेदबुद्धि भी थी। वैसा विश्वास न था। चाण्डाल मांस बोझ लिए आ रहा था, वे गंगास्नान करके ही उठे थे कि चाण्डाल से स्पर्श हो

गया। कह उठे, अरे! तूने मुझे छू लिया! चाण्डाल ने कहा, महाराज, न आपने मुझे छुआ न मैंने आपको! शुद्ध आत्मा—न वह शरीर है, न पचभूत है, और न चौबीस तत्त्व है। तब शंकर को ज्ञान हुआ। जडभरत राजा रहुगण की पाल्की ले जाते समय जब आत्मज्ञान की बाते करने लगे, तब राजा ने पालकी से नीचे उतरकर कहा, आप कौन हैं? जडभरत ने कहा, नेति नेति—मैं शुद्ध आत्मा हूँ। उनका पक्का विश्वास था कि वे शुद्ध आत्मा हैं।

"सोऽहम्। मैं शुद्ध आत्मा हूँ—यह ज्ञानियो का मत है। भक्त कहते हैं, यह सब भगवान् का ऐश्वर्य है। धनी का ऐश्वर्य न होने से उसे कौन जान सकता है?

"पर यदि साधक की भक्ति देखकर ईश्वर कहेंगे कि जो मैं हूँ, वही तू भी है, तब दूसरी बात है। राजा बैठे हैं; उस समय नौकर यदि सिंहासन पर जाकर बैठ जाय और कहे, 'राजा, जो तुम हो, वही मैं भी हूँ,' तो लोग उसे पागल कहेंगे। पर यदि नौकर की सेवा से सन्तुष्ट हो राजा एक दिन यह कहे, 'आ जा, तू मेरे पास बैठ, इसमें कोई दोष नहीं; जो तू है वही मैं भी हूँ!' और तब यदि वह जाकर बैठे तो उसमें कोई दोष नहीं है। एक साधारण जीव का यह कहना कि सोऽहम्—मैं वही हूँ—अच्छा नहीं है। जल की ही तरंग होती है; तरंग का जल थोड़े ही होता है।

"बात यह है कि मन स्थिर न होने से योग नही होता, तुम चाहे जिस राह से चलो। **मन योगी के वश में रहता है, योगी मन के वश में नहीं।**

"मन स्थिर होने पर वायु स्थिर होती है—उससे कुम्भक होता है। वह कुम्भक भक्तियोग से भी होता है, भक्ति से वायु

स्थिर हो जाती है। 'मेरे निताई मस्त हाथी हैं!' 'मेरे निताई मस्त हाथी है!'—यह कहते-कहते जब भाव हो जाता है, तब वह मनुष्य पूरा वाक्य नही कह सकता, केवल 'हाथी है' 'हाथी है' कहता है। इसके बाद सिर्फ 'हा—' इतना ही। भाव से वायु स्थिर होती है, और उससे कुम्भक होता है।

"एक आदमी झाड़ू दे रहा था कि किसी ने आकर कहा, 'अजी, अमुक मर गया!' जो झाड़ू दे रहा था, उसका यदि वह अपना आदमी न हुआ, तो वह झाड़ू देता ही रहता है और बीच-बीच में कहता है, 'दुःख की बात है, वह आदमी मर गया! बडा अच्छा आदमी था।' इधर झाड़ू भी चल रहा है। परन्तु यदि कोई अपना हुआ तो झाड़ू उसके हाथ से छूट जाता है, और 'हाय!' कहकर वह बैठ जाता है। उस समय उसकी वायु स्थिर हो जाती है, कोई काम या विचार उससे फिर नही हो सकता। औरतों में नही देखा—यदि कोई निर्वाक् होकर कुछ देखे या सुने तो दूसरी औरतें उससे कहती हैं, 'क्यों क्या तुझे भाव हुआ है?' यहाँ पर भी वायु स्थिर हो गयी है, इसी से निर्वाक् होकर मुँह खोले रहती है।"

ज्ञानी के लक्षण। साधना-सिद्ध और नित्य सिद्ध

"सोऽहम् सोऽहम् कहने से ही नही होता। ज्ञानी के लक्षण हैं। नरेन्द्र *के नेत्र उभडे हुए हैं। उसके कपाल का लक्षण भी अच्छा है।

"फिर सब की एक सी हालत नही होती। जीव चार प्रकार के कहे गये हैं,—बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य। सभी को साधना करनी पडती है, यह बात भी नही है। नित्य-सिद्ध और

* स्वामी विवेकानन्दजी।

साधना-सिद्ध, दो तरह के साधक हैं। कोई अनेक साधनाएँ करने पर ईश्वर को पाता है, कोई जन्म से ही सिद्ध हैं, जैसे प्रह्लाद। 'होमा' नाम की चिड़िया आकाश में रहती है। वहीं वह अंडा देती है। अंडा आकाश से गिरता है और गिरते ही गिरते वह फूट जाता है, और उससे बच्चा निकलकर गिरता है। वह इतने ऊँचे पर से गिरता है कि गिरते ही गिरते उसके पंख निकल आते हैं। जब वह पृथ्वी के पास आ जाता है तब देखता है कि जमीन से टकराते ही वह चूरचूर हो जायगा। तब वह सीधे ऊपर उड़ जाता है--अपनी माँ के पास!

"प्रह्लाद आदि नित्य-सिद्ध भक्तों की साधना बाद में होती है। साधना के पहले ही उन्हें ईश्वर का लाभ होता है, जैसे लौकी, कुम्हड़े का पहले फल, और उसके बाद फूल होता है। (राखाल के पिता से) नीच वंश में भी यदि नित्य-सिद्ध जन्म ले तो वह वही होता है, दूसरा कुछ नहीं होता। चने के मैली जगह में गिरने पर भी चने का ही पेड़ होता है।

"ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है, किसी को कम। कहीं पर एक दिया जल रहा है, कहीं पर एक मशाल। विद्यासागर की बात से जान लिया कि उनकी बुद्धि की पहुँच कितनी दूर है। जब मैंने शक्ति-विशेष की बात कही, तब विद्यासागर ने कहा,—'महाराज, तो क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम?' मैंने भी कहा, 'फिर क्या? शक्ति की कमी-बेशी हुए बिना तुम्हारा इतना नाम क्यों है? तुम्हारी विद्या, तुम्हारी दया, यही सब सुनकर तो हम लोग आये हैं। तुम्हारे कोई दो सींग तो निकले नहीं हैं!' विद्यासागर की इतनी विद्या और इतना नाम होते हुए भी उन्होंने ऐसी कच्ची

बात कह दी। बात यह है कि जाल मे पहले-पहल बडी मछलियाँ पडती है, रोहू, कानल आदि। उसके बाद मछुआ पैर से कीचड़ को घोट देता है। तब तरह-तरह की छोटी-छोटी मछलियाँ निकल आती हैं, और तुरन्त जाल में फँस जाती हैं। ईश्वर को न जानने से थोडी ही देर मे छोटी-छोटी मछलियाँ (कच्ची बाते) निकल पडती हैं। केवल पण्डित होने से क्या होगा ?"

(३)

तान्त्रिक भक्त तथा ससार; निर्लिप्त को भी भय

श्रीरामकृष्ण आहार के बाद दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे मे थोडा विश्राम कर रहे हैं। अधर तथा मास्टर ने आकर प्रणाम किया। एक तान्त्रिक भक्त भी आये हैं। राखाल, हाजरा, रामलाल आदि आजकल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। आज रविवार १७ जून, १८८३ ई० ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो के प्रति)—गृहस्थाश्रम में होगा क्यो नही ? परन्तु बहुत कठिन है। जनक आदि ज्ञान प्राप्त करने के बाद गृहस्थाश्रम में आये थे। परन्तु फिर भी भय है। निष्काम गृहस्थ को भी भय है। भैरवी को देखकर जनक ने मुँह नीचा कर लिया। स्त्री के दर्शन से सकोच हुआ या। भैरवी ने कहा, 'जनक! मैं देखती हूँ कि तुम्हे अभी ज्ञान नही हुआ। तुममे अभी भी स्त्री-पुरुष-बुद्धि विद्यमान है।'

"कितना ही सयाना क्यो न हो, काजल की कोठरी में रहने पर शरीर पर कुछ न कुछ काला दाग लगेगा ही।

"मैने देखा है, गृहस्थ-भक्त जिस समय शुद्धवस्त्र पहनकर पूजा करते हैं उस समय उनका अच्छा भाव रहता है। यहाँ तक

कि जलपान करने तक वही भाव रहता है। उसके बाद अपनी वही मूर्ति, फिर से रज, तम।

"सत्त्व गुण से भक्ति होती है। किन्तु भक्ति का सत्त्व, भक्ति का रज, भक्ति का तम है। भक्ति का सत्त्व विशुद्ध है, इसकी प्राप्ति होने पर, ईश्वर को छोड़ और किसी में भी मन नहीं लगता। देह की रक्षा हो सके, केवल इतना ही शरीर की ओर ध्यान रहता है।

"परमहंस तीनों गुणों से अतीत होते हैं।[१] उनमें तीन गुण हैं और फिर नहीं भी हैं। ठीक बालक जैसा, किसी गुण के आधीन नहीं है। इसलिए परमहंस छोटे-छोटे बच्चों को अपने पास आने देते हैं, जिससे उनके स्वभाव को अपना सकें।

"परमहंस संचय नहीं कर सकते। यह अवस्था गृहस्थों के लिए नहीं है। उन्हें अपने घरवालों के लिए संचय करना पड़ता है।"

तान्त्रिक भक्त—क्या परमहंस को पाप-पुण्य का बोध रहता है?

श्रीरामकृष्ण—केशव सेन ने यह बात पूछी थी। मैंने कहा, और अधिक कहने पर तुम्हारा दल-बल नहीं रहेगा। केशव ने कहा, 'तो फिर रहने दीजिये, महाराज।'

"पाप-पुण्य क्या है, जानते हो? परमहंस अवस्था में अनुभव होता है कि वे ही सुबुद्धि देते हैं, वे ही कुबुद्धि देते हैं। फल क्या मीठे, कड़ुवे नहीं होते? किसी पेड़ में मीठा फल, किसी में कड़ुवा या खट्टा फल। उन्होंने मीठे आम का वृक्ष भी बनाया है

---

१ मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते॥—गीता, १४।२६

और फिर खट्टे फल का वृक्ष भी !"

तान्त्रिक भक्त—जी हाँ, पहाड पर गुलाब की खेती दिखायी देती है। जहाँ तक दृष्टि जाती है केवल गुलाब ही गुलाब का खेत !

श्रीरामकृष्ण—परमहंस देखता है, यह सब उनकी माया का ऐश्वर्य है, सत्-असत्, भला-बुरा, पाप-पुण्य, यह सब समझना बहुत दूर की बात है। उस अवस्था में दल-बल नही रहता।

तान्त्रिक भक्त—तो फिर कर्मफल है ?

श्रीरामकृष्ण—वह भी है। अच्छा कर्म करने पर सुफल और बुरा कर्म करने पर कुफल मिलता है। मिर्च खाने पर तीखा तो लगेगा ही ! यह सब उनकी लीला है, खेल है।

तान्त्रिक भक्त—हमारे लिए क्या उपाय है ? कर्म का फल तो है न ?

श्रीरामकृष्ण—होने दो, परन्तु उनके भक्तों की बात अलग है। (संगीत—भावार्थ)—"रे मन ! तुम खेती का काम नही जानते हो ! काली नाम का बेडा लगा लो, फसल नष्ट न होगी। वह तो मुक्तकेशी का पक्का बेडा है, उसके पास तो यम भी नहीं आता। गुरु का दिया हुआ बीज बोकर भक्ति का जल सींच देना। हे मन, यदि तुम अकेले न कर सको, तो रामप्रसाद को साथ ले लेना।"

फिर गा रहे हैं—(संगीत—भावार्थ)—

"यम के आने का रास्ता बन्द हो गया। मेरे मन का सन्देह मिट गया। मेरे घर के नौ दरवाजों पर चार शिव पहरेदार हैं। एक ही स्तम्भ पर घर है, जो तीन रस्सियों से बँधा हुआ है। श्रीनाथ सहस्रदल कमल पर अभय होकर बैठा है।"

"काशी में ब्राह्मण मरे या वेश्या—सभी शिव होंगे।

"जब हरिनाम से, रामनाम से आँखों में आँसू भर आते हैं, तब सन्ध्या कवच आदि की कुछ भी आवश्यकता नहीं रह जाती। कर्म का त्याग हो जाता है। कर्म का फल स्पर्श नहीं करता।"

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं, (संगीत—भावार्थ)—

"चिन्तन से भाव का उदय होता है। जैसा सोचो, वैसी ही प्राप्ति होती है,—विश्वास ही मूल बात है। यदि चित्त काली के चरण-रूपी अमृत-सरोवर में डूबा रहता है, तो पूजा-होम, यज्ञ आदि का कुछ भी महत्व नहीं है।"

श्रीरामकृष्ण फिर गा रहे हैं—(संगीत—भावार्थ)—

"जो त्रिसन्ध्या में काली का नाम लेता है, क्या वह सन्ध्या-पूजा को चाहता है? सन्ध्या उसकी खोज में फिरती रहती है, कभी उससे मिल नहीं पाती। यदि काली-काली कहते मेरा समय व्यतीत हो जाय, तो फिर गया, गंगा, प्रभास, काशी, काञ्ची आदि कौन चाहता है?"

"ईश्वर में मग्न हो जाने पर फिर असद्बुद्धि, पापबुद्धि नहीं रह जाती।"

तान्त्रिक भक्त—आपने ठीक कहा है 'विद्या का मैं' रहना है।

श्रीरामकृष्ण—'विद्या का मैं' 'भक्त का मैं' 'दास का मैं' 'भला मैं' रहता है। 'बदमाश मैं' चला जाता है। (हँसी)

तान्त्रिक भक्त—जी, महाराज, हमारे अनेक सन्देह मिट गये।

श्रीरामकृष्ण—आत्मा का साक्षात्कार होने पर सब सन्देह मिट जाते हैं।*

---

* भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे॥
—मुण्डकोपनिषद्, २।२।८

तान्त्रिक भक्त तथा भक्ति का तम । अष्टसिद्धि

"भक्ति का तम लाओ । कहो,—जब मैंने राम का नाम लिया, काली का नाम लिया, फिर भी क्या यह सम्भव है कि मेरा यह बन्धन, मेरा यह कर्मफल रहे ?"

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं—(संगीत—भावार्थ)—

"माँ, यदि मैं दुर्गा-दुर्गा कहता हुआ मरूँ, तो हे शंकरी, देखूँगा कि अन्त में इस दीन का तुम कैसे उद्धार नहीं करती ! माँ ! गो-ब्राह्मण की, भ्रूण की तथा नारी की हत्या सुरापान आदि पापों की, रत्तीभर परवाह न कर मैं ब्रह्मपद प्राप्त कर सकता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण फिर कहते हैं—विश्वास, विश्वास, विश्वास ! गुरु ने कह दिया है, राम ही सब कुछ बनकर विराजमान हैं। वही राम घट घट में लेटा है। कुत्ता रोटी खाता जा रहा है। भक्त कहता है, 'राम ! ठहरो, ठहरो, रोटी में घी लगा दूँ।' गुरुवाक्य में ऐसा विश्वास !

"भुक्कड़ों को विश्वास नहीं होता ! सदा ही सन्देह ! आत्मा का साक्षात्कार हुए बिना सन्देह दूर नहीं होते।

"शुद्ध भक्ति, जिसमें कोई कामना न हो, ऐसी भक्ति द्वारा उन्हें शीघ्र प्राप्त किया जा सकता है।

"अणिमा आदि सिद्धियाँ—ये सब वासनाएँ हैं। कृष्ण ने अर्जुन से कहा है,—'भाई, अणिमा आदि सिद्धियों में से एक के भी रहते ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती। शक्ति को थोड़ा बढ़ा भर सकती हैं वे।"

तान्त्रिक भक्त—महाराज, तान्त्रिक क्रिया आजकल सफल क्यों नहीं होती ?

श्रीरामकृष्ण—सर्वांगीण नहीं होती और भक्तिपूर्वक भी नहीं

करे जाती, इसीलिए सफल नही होती ।

अब श्रीरामकृष्ण उपदेश समाप्त कर रहे हैं। कह रहे हैं— "भक्ति ही सार है। सच्चे भक्त को कोई भय, कोई चिन्ता नहीं। माँ सब कुछ जानती है। बिल्ली चूहा पकड़ती है विशेष प्रकार से, परन्तु अपने बच्चे को पकड़ती है दूसरे प्रकार से ।"

परिच्छेद २४

पानीहाटी महोत्सव में

(१)

कीर्तनानन्द में

श्रीरामकृष्ण पानीहाटी के महोत्सव में बहुत लोगों से घिरे हुए सर्कीर्तन में नृत्य कर रहे हैं। दिन का एक बजा है। आज सोमवार, ज्येष्ठ शुक्ल त्रयोदशी तिथि है। तारीख १८ जून, १८८३।

सर्कीर्तन के बीच में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए चारों ओर लोग कतार बाँधकर खड़े हैं। आप प्रेम में मतवाले हो नाच रहे हैं। कोई-कोई सोच रहे हैं कि क्या श्रीगौरांग फिर प्रकट हुए हैं? चारों ओर हरि-ध्वनि सागर की तरंगों के समान उमड़ रही है। चारों ओर से लोग फूल बरसा रहे हैं और बतासे लुटा रहे हैं।

श्रीयुत नवद्वीप गोस्वामी सर्कीर्तन करते हुए राघव पण्डित के मन्दिर की ओर आ रहे थे कि एकाएक श्रीरामकृष्ण दौड़कर उनसे आ मिले और नाचने लगे।

यह राघव पण्डित का 'चूड़े का महोत्सव' है। शुक्लपक्ष की त्रयोदशी तिथि पर प्रतिवर्ष महोत्सव होता है। इस महोत्सव को पहले दास रघुनाथ ने किया था। उनके बाद राघव पण्डित प्रतिवर्ष करते थे। दास रघुनाथ से नित्यानन्द ने कहा था "अरे, तू घर से केवल भाग-भागकर आता है, और हमसे छिपाकर प्रेम का स्वाद लेता रहता है! आज तुझे दण्ड दूँगा, तू चूड़े का

महोत्सव करके भक्तों की सेवा कर।"

श्रीरामकृष्ण प्राय प्रतिवर्ष यहाँ आते हैं, आज भी यहाँ राम आदि भक्तों के साथ आनेवाले थे। राम सबेरे मास्टर के साथ कलकत्ते से दक्षिणेश्वर आये। श्रीरामकृष्ण से मिलकर वहीं उन्होंने प्रसाद पाया। राम कलकत्ते से जिस गाडी पर आये थे, उसी पर श्रीरामकृष्ण पानीहाटी आये। राखाल, मास्टर, राम, भवनाथ तथा और भी दो-एक भक्त उनके साथ थे।

गाडी मेगजीन रोड से होकर चानक के बडे रास्ते पर आयी। जाते-जाते श्रीरामकृष्ण बालक भक्तों से विनोद करने लगे।

पानीहाटी के महोत्सव-स्थल पर गाडी पहुँचते ही राम आदि भक्त यह देखकर विस्मित हुए कि श्रीरामकृष्ण, जो अभी गाडी में विनोद कर रहे थे, एकाएक अकेले ही उतरकर बडे वेग से दौड रहे हैं। बहुत ढूँढने पर उन्होंने देखा कि वे नवद्वीप गोस्वामी के संकीर्तन के दल में नृत्य कर रहे हैं और बीच-बीच में समाधिस्थ भी हो रहे हैं। कहीं वे गिर न पडें, इसलिए नवद्वीप गोस्वामी समाधि की दशा में उन्हें बडे यत्न से सँभाल रहे हैं। चारों ओर भक्तगण हरि-ध्वनि कर उनके चरणों पर फूल और बताशे चढा रहे हैं और उनके दर्शन पाने के लिए धक्कमधक्का कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण अर्ध-बाह्य दशा में नृत्य कर रहे हैं। फिर बाह्य दशा में आकर वे गा रहे हैं—

"हरि का नाम लेते ही जिनकी आँखों से आँसुओं की झडी लग जाती है, वे दोनों भाई आये हैं, जो स्वयं नाचकर जगत् को नचाते हैं, वे दोनों भाई आये हैं, जो स्वयं रोकर जगत् को रुलाते हैं, और जो मार खाकर भी प्रेम की याचना करते हैं, वे आये हैं!"

श्रीरामकृष्ण के साथ सब उन्मत्त हो नाच रहे हैं, और अनुभव कर रहे हैं कि गौराग और निताई हमारे सामने नाच रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे—'गौराग के प्रेम के हिलोरो से नवद्वीप डाँवाडोल हो रहा है।"

सकीर्तन की तरग राघव के मन्दिर की ओर बढ रही है। वहाँ परिक्रमा और नृत्य आदि करने के बाद वह तरगायित जनसघ श्रीराधाकृष्ण के मन्दिर की ओर बढ रहा है।

सकीर्तनकारो में से कुछ ही लोग श्रीराधाकृष्ण के मन्दिर में घुस पाये हैं। अधिकाश लोग दरवाजे से ही एक दूसरे को ठेलते हुए झाँक रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण श्रीराधाकृष्ण के आँगन मे फिर नाच रहे है। कीर्तनानन्द में बिलकुल मस्त हैं। बीच-बीच में समाधिस्थ हो रहे हैं और चारो ओर से फूल-बतासे चरणो पर पड रहे हैं। आँगन के भीतर बारम्बार हरि-ध्वनि हो रही है। वही ध्वनि सडक पर आते ही हजारो कण्ठो से उच्चारित होने लगी। गगा पर नावो से आने-जाने वाले लोग चकित होकर इस सागर-गर्जन के समान उठती हुई ध्वनि को सुनने लगे और वे भी स्वय 'हरिबोल' 'हरिबोल' कहने लगे।

पानीहाटी के महोत्सव में एकत्रित हजारो नर-नारी सोच रहे हैं कि इन महापुरुष के भीतर निश्चित ही श्रीगौराग का आविर्भाव हुआ है। दो-एक आदमी यह विचार कर रहे हैं कि शायद ये ही साक्षात् गौराग हो।

छोटे से आँगन मे बहुत से लोग एकत्रित हुए हैं। भक्तगण बडे यत्न से श्रीरामकृष्ण को बाहर लाये।

श्रीरामकृष्ण श्रीयुत मणि सेन की बैठक में आकर बैठे। इसी

सेन परिवारवालों से पानीहाटी में श्रीरामकृष्ण की सेवा होती है। वे ही प्रतिवर्ष महोत्सव का आयोजन करते हैं और श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण देते हैं।

श्रीरामकृष्ण के कुछ विश्राम करने के बाद मणि सेन और उनके गुरुदेव नवद्वीप गोस्वामी ने उनको अलग ले जाकर प्रसाद लाकर भोजन कराया। कुछ देर बाद राम, राखाल, मास्टर, भवनाथ आदि भक्त एक दूसरे कमरे में बिठाये गये। भक्त-वत्सल श्रीरामकृष्ण स्वयं खड़े हो आनन्द करते हुए उनको खिला रहे हैं।

(२)

श्रीगौरांग का महाभाव, प्रेम और तीन अवस्थाएँ। पाण्डित्य और शास्त्र

दोपहर का समय है। राखाल, राम आदि भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण मणि सेन की बैठक में विराजमान हैं। नवद्वीप गोस्वामी भोजन करके श्रीरामकृष्ण के पास आ बैठे हैं।

मणि सेन ने श्रीरामकृष्ण को गाड़ी का किराया देना चाहा। श्रीरामकृष्ण बैठक में एक कोच पर बैठे हैं, और कहते हैं, 'गाड़ी का किराया वे लोग (राम आदि) क्यों लेंगे? वे तो पैसा कमाते हैं।'

अब श्रीरामकृष्ण नवद्वीप गोस्वामी से ईश्वरी प्रसंग करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (नवद्वीप से)—भक्ति के परिपक्व होने पर भाव होता है, फिर महाभाव, फिर प्रेम, फिर वस्तु (ईश्वर) का लाभ होता है।

"गौरांग को महाभाव और प्रेम हुआ था।

"इस प्रेम के होने पर जगत् तो भूल ही जाता है, वल्कि अपना शरीर, जो इतना प्रिय है, उसकी भी सुधि नही रहती। गौराग को यह प्रेम हुआ था। समुद्र को देखते ही यमुना समझकर वे उसमें कूद पडे!

"जीवो को महाभाव या प्रेम नही होता, उनको भाव तक ही होता है। फिर गौराग को तीन अवस्थाएँ होती थी।"

नवद्वीप—जी हाँ। अन्तर्दशा, अर्ध-वाह्य दशा और वाह्य दशा।

श्रीरामकृष्ण—अन्तर्दशा मे वे समाधिस्थ रहते थे, अर्ध-वाह्य दशा मे केवल नृत्य कर सकते थे, और वाह्य दशा मे नामसकीर्तन करते थे।

नवद्वीप ने अपने लडके को लाकर श्रीरामकृष्ण से परिचित करा दिया। वे तरुण है—शास्त्र का अध्ययन करते है। उन्होने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

नवद्वीप—यह घर में शास्त्र पढता है। इस देश मे वेद एक प्रकार से अप्राप्य ही थे। मैक्समूलर ने उन्हे छपवाया, इसी से तो लोग अव उनको पढ सकते है।

श्रीरामकृष्ण—अधिक शास्त्र पढने से और भी हानि होती है।

"शास्त्र का सार जान लेना चाहिए। फिर ग्रन्थ की क्या आवश्यकता है?

"शास्त्र का सार जान लेने पर डुबकी लगानी चाहिए—ईश्वर का लाभ करने के लिए।

"मुझे माँ ने वतला दिया है कि वेदान्त का सार यही है 'ब्रह्म सत्य और जगत् मिथ्या।' गीता का सार क्या है? दस वार 'गीता' शब्द कहने से जो हो वही—अर्थात् त्यागी, त्यागी।

नवद्वीप—ठीक 'त्यागी' नही बनना, 'तागी' होता है। फिर उसका भी धातु-घटित अर्थ वही है।

श्रीरामकृष्ण—गीता का सार यही है कि हे जीव, सब त्यागकर भगवान् का लाभ करने के लिए साधना करो।

नवद्वीप—त्याग की ओर तो मन नही जाता ?

श्रीरामकृष्ण—तुम लोग गोस्वामी हो, तुम्हारे यहाँ देवसेवा होती है,—तुम्हारे ससार त्याग करने पर काम नही चलेगा। ऐसा करने से देवसेवा कौन करेगा ? तुम लोग मन से त्याग करना।

"ईश्वर ही ने लोकशिक्षा के लिए तुम लोगो को ससार में रखा है। तुम हजार सकल्प करो, त्याग नही कर सकोगे। उन्होने तुम्हे ऐसी प्रकृति दी है कि तुम्हे ससार में ससार का काम-काज करना ही पडेगा।

"श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा—'युद्ध नही करूँगा'—तुम यह क्या कह रहे हो ? इच्छा करने ही से तुम युद्ध से निवृत्त न हो सकोगे। तुम्हारी प्रकृति तुमसे युद्ध करायेगी।"

श्रीकृष्ण अर्जुन से बातें कर रहे हैं—यह कहते ही श्रीरामकृष्ण फिर समाधिस्थ हो रहे हैं। बात की बात में सब अग स्थिर हो गये। आँखें एकटक हो गयी। साँस चल रही थी कि नहीं—जान नही पडता था।

नवद्वीप गोस्वामी, उनके लडके और भक्तगण निर्वाक् हो यह दृश्य देख रहे हैं।

कुछ प्रकृतिस्थ हो श्रीरामकृष्ण नवद्वीप से कहते हैं—

"योग और भोग। तुम लोग गोस्वामी वश के हो, तुम लोगों के लिए दोनो हैं।

"अब केवल प्रार्थना—हार्दिक **प्रार्थना** करो कि हे ईश्वर, तुम्हारी इस भुवन-मोहिनी माया के ऐश्वर्य को मैं नहीं चाहता,—मैं तुम्हें चाहता हूँ।

'ईश्वर तो सब प्राणियों में है। फिर भक्त किसे कहते हैं ? जो ईश्वर में रहता है—जिसका मन, प्राण, अन्तरात्मा—सब कुछ उसमें लीन हो गया है।"

अब श्रीरामकृष्ण सहज दशा में आ गये हैं। नवद्वीप से कहते हैं—

"मुझे यह जो अवस्था होती है (समाधि अवस्था), इसे कोई-कोई रोग कहते हैं। इस पर मेरा कहना यह है कि जिसके चैतन्य से जगत् चैतन्यमय है उसकी चिन्ता कर कोई अचैतन्य कैसे हो सकता है ?"

श्रीयुत मणि सेन अभ्यागत ब्राह्मणों और वैष्णवों को विदा कर रहे हैं—उनकी मर्यादा के अनुसार किसी को एक रुपया, किसी को दो रुपये विदाई देते हैं। श्रीरामकृष्ण को पाँच रुपये देने आये। आप बोले,—'मुझे रुपये न लेने चाहिए।' तो भी मणि सेन नहीं मानते। तब श्रीरामकृष्ण ने कहा, यदि रुपये दोगे तो तुम्हें तुम्हारे गुरु की शपथ है। मणि सेन इतने पर भी देने आये। तब श्रीरामकृष्ण ने अधीर होकर मास्टर से कहा,—'क्यों जी, लेना चाहिए ?' मास्टर ने बड़ी आपत्ति से कहा, 'कभी नहीं।'

श्रीयुत मणि सेन के घरवालों ने तब आम और मिठाई खरीदने के नाम पर राखाल के हाथ में रुपये दिये।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—मैंने गुरु की शपथ दी है—मैं अब मुक्त हूँ। राखाल ने रुपये लिए हैं—अब वह जाने !

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ गाड़ी पर बैठ दक्षिणेश्वर लौट जायेंगे।

निराकार ध्यान और श्रीरामकृष्ण

मार्ग में मोती झील का मन्दिर है। श्रीरामकृष्ण बहुत दिनों से मास्टर से कहते आये हैं—एक साथ आकर इस मन्दिर की झील को देखेंगे—यह सिखलाने के लिए कि निराकार ध्यान कैसे करना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण को खूब सर्दी हुई है, तथापि भक्तों के साथ मन्दिर देखने के लिए गाड़ी से उतरे।

मन्दिर में श्रीगौरांग की पूजा होती है। अभी सन्ध्या होने में कुछ देर है।

श्रीरामकृष्ण ने भक्तों के साथ गौरांग-मूर्ति के सम्मुख भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया।

अब मन्दिर के पूर्व की ओर जो झील है, उसके घाट पर आकर पानी की लहरों और मछलियों को देख रहे हैं। कोई मछलियों की हिंसा नहीं करता। कुछ चारा फेंकने पर बड़ी-बड़ी मछलियों के झुण्ड सामने आकर खाने लगते हैं—फिर निर्भय होकर आनन्द से पानी में घूमती-फिरती हैं।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कहते हैं—"यह देखो कैसी मछलियाँ हैं! चिदानन्द-सागर में इन मछलियों की तरह आनन्द से विचरण करो।"

(३)

आत्मदर्शन का उपाय। नित्य लीला योग

श्रीरामकृष्ण ने आज कलकत्ते में बलराम के मकान पर शुभागमन किया है। मास्टर पास बैठे हैं, राखाल भी हैं। श्रीरामकृष्ण

भावमग्न हुए हैं। आज ज्येष्ठ कृष्ण पचमी, सोमवार, २५ जून १८८३ ई०। समय दिन के पाँच बजे का होगा।

श्रीरामकृष्ण (भाव के आवेश में)—देखो, अन्तर से पुकारने पर अपने स्वरूप को देखा जाता है, परन्तु विषयभोग की वासना जितनी रहती है, उतनी ही बाधा होती है।

मास्टर—जी, आप जैसा कहते हैं, डुबकी लगाना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण (आनन्दित होकर)—बहुत ठीक।

सभी चुप हैं, श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—देखो, सभी को आत्म-दर्शन हो सकता है।

मास्टर—जी, परन्तु ईश्वर कर्ता हैं, वे अपनी इच्छानुसार भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रकट हो रहे हैं। किसी को चैतन्य दे रहे हैं, किसी को अज्ञानी बनाकर रखा है।

श्रीरामकृष्ण—नहीं, उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करनी पड़ती है। आन्तरिक होने पर वे प्रार्थना अवश्य सुनेंगे।

एक भक्त—जी हाँ, 'मैं' है, इसलिए प्रार्थना करनी होगी।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर के प्रति)—लीला के सहारे नित्य में जाना होता है—जिस प्रकार सीढ़ी पकड़-पकड़ कर छत पर चढ़ना होता है। नित्य-दर्शन के बाद नित्य से लीला में आकर रहना होता है, भक्तों के साथ भक्ति लेकर। यही मेरा परिपक्व मत है।

"उनके अनेक रूप, अनेक लीलाएँ है। ईश्वर-लीला, देव-लीला, नर-लीला, जगत्-लीला। वे मानव बनकर, अवतार होकर युग-युग में आते हैं,—प्रेम-भक्ति सिखाने के लिए। देखो न चैतन्यदेव को। अवतार द्वारा ही उनके प्रेम तथा भक्ति का

आस्वादन किया जा सकता है। उनकी अनन्त लीलाएँ हैं—परन्तु मुझे आवश्यकता है प्रेम तथा भक्ति की। मुझे तो सिर्फ दूध चाहिए। गाय के स्तनों से ही दूध आता है। अवतार गाय के स्तन हैं।"

क्या श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं कि वे अवतीर्ण हुए हैं, उनका दर्शन करने से ही ईश्वर का दर्शन होता है? चैतन्यदेव का उल्लेख कर क्या श्रीरामकृष्ण अपनी ओर सकेत कर रहे हैं?

जे. एस मिल और श्रीरामकृष्ण; मानव की सीमाबद्धता

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर बैठे हैं। ज्येष्ठ मास, १८८३ ई०, खूब गर्मी पड रही है। थोड़ी देर बाद सायंकाल होगा। बरफ आदि लेकर मास्टर आये हैं और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर उनके चरणों के पास शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—मणि मल्लिक की पोती का स्वामी आया था। उन्होंने किसी पुस्तक में * पढ़ा है, ईश्वर वैसे ज्ञानी, सर्वज्ञ नहीं जान पड़ते। नहीं तो इतना दुःख क्यों? और यह जो जीव की मौत होती है, उन्हें एक बार में मार डालना ही अच्छा होता है, धीरे-धीरे अनेक कष्ट देकर मारना क्यों? जिसने पुस्तक लिखी है, उसने कहा है कि यदि वह होता तो इससे बढ़िया सृष्टि कर सकता था!

मास्टर विस्मित होकर श्रीरामकृष्ण की बातें सुन रहे हैं और बड़े आनन्द से बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं—

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—उन्हें क्या समझा जा सकता है जी? मैं भी कभी उन्हें अच्छा मानता हूँ और कभी बुरा।

* John Stuart Mill's Autobiography

अपनी महामाया के भीतर हमें रखा है । कभी वह होश में लाते हैं, तो कभी बेहोश कर देते हैं । एक बार अज्ञान दूर हो जाता है, दूसरी बार फिर आकर घेर लेता है । तालाब का जल काई से ढँका हुआ है । पत्थर फेंकने पर कुछ जल दिखायी देता है, फिर थोड़ी देर बाद काई नाचते-नाचते आकर उस जल को भी ढक लेती है ।

"जब तक देहबुद्धि है, तभी तक सुख-दु:ख, जन्म मृत्यु, रोग-शोक हैं । ये सब देह के हैं, आत्मा के नहीं । देह की मृत्यु के बाद सम्भव है वे अच्छे स्थान पर ले जायें—जिस प्रकार प्रसव-वेदना के बाद सन्तान की प्राप्ति ! आत्मज्ञान होने पर सुख-दु:ख, जन्म-मृत्यु स्वप्न जैसे लगते हैं ।

"हम क्या समझेंगे ? क्या एक सेर के लोटे में दस सेर दूध आ सकता है ? नमक का पुतला समुद्र नापने जाकर फिर खबर नहीं देता । गलकर उसी में मिल जाता है ।"

सन्ध्या हुई, मन्दिरों में आरती हो रही है । श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में छोटे तख्त पर बैठकर जगज्जननी का चिन्तन कर रहे हैं । राखाल, लाटू, रामलाल, किशोरी गुप्त आदि भक्तगण उपस्थित हैं । मास्टर आज रात को ठहरेंगे । कमरे के उत्तर की ओर एक छोटे बरामदे में श्रीरामकृष्ण एक भक्त के साथ एकान्त में बातें कर हैं । कह रहे हैं, 'भोर में तथा उत्तर-रात्रि में ध्यान करना ठीक है और प्रति दिन सन्ध्या के बाद ।' किस प्रकार ध्यान करना चाहिए, साकार ध्यान, अरूप ध्यान, यह सब बता रहे हैं ।

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण पश्चिम के गोल बरामदे में बैठ गये । रात के नौ बजे का समय होगा । मास्टर पास बैठे हैं,

राखाल आदि बीच-बीच मे कमरे के भीतर आ-जा रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—देखो, यहाँ पर जो लोग आयेंगे, सभी का सन्देह मिट जायगा, क्या कहते हो ?

मास्टर—जी हाँ ।

उसी समय गंगा में काफी दूरी पर माँझी अपनी नाव खेता हुआ गाना गा रहा है । संगीत की वह ध्वनि मधुर अनाहत ध्वनि की तरह अनन्त आकाश के बीच में से होकर मानो गंगा के विशाल वक्ष को स्पर्श करती हुई श्रीरामकृष्ण के कानों में प्रविष्ट हुई । श्रीरामकृष्ण उसी समय भावाविष्ट हो गये । सारे शरीर के रोंगटे खड़े हो उठे । श्रीरामकृष्ण मास्टर का हाथ पकड़कर कह रहे हैं, "देखो, देखो, मेरे रोंगटे खड़े हो रहे हैं । मेरे शरीर पर हाथ रखकर देखो ।" प्रेम से आविष्ट उनके उस रोंगटेवाले शरीर को छूकर वे विस्मित हो गये । उपनिषद् में कहा गया है कि वे विश्व में आकाश में "ओतप्रोत" होकर विद्यमान हैं । क्या वे ही शब्द के रूप में श्रीरामकृष्ण को स्पर्श कर रहे हैं, क्या यही शब्दब्रह्म है ?*

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर वार्तालाप कर रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण—जो लोग यहाँ पर आते हैं, उनका शुभ संस्कार है, क्या कहते हो ?

मास्टर—जी, हाँ ।

श्रीरामकृष्ण—अधर का कैसा संस्कार था ।

मास्टर—इसमें क्या कहना है ।

---

* 'एतस्मिन् नु खलु अक्षरे गार्गि आकाश ओतश्च प्रोतश्च ।'
—बृहदारण्यक, ३-८-११ ।

शब्दः खे पौरुषं नृषु ।—गीता, ७।८

श्रीरामकृष्ण—सरल होने पर ईश्वर शीघ्र प्राप्त होते हैं। फिर दो पथ हैं,—सत् और असत्, सत् पथ से जाना चाहिए।

मास्टर—जी हाँ, धागे में यदि रेशा निकला हो तो वह सुई के भीतर नहीं जा सकता।

श्रीरामकृष्ण—कौर के साथ मुँह में केश चले जाने पर सब का सब थूककर फेंक देना पड़ता है।

मास्टर—परन्तु आप जैसे कहते हैं, जिन्होंने ईश्वर का दर्शन किया है, असत्-संग उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता, प्रखर अग्नि में केले का पेड़ तक जल जाता है।

- - - - -

परिच्छेद २५

कीर्तनानन्द में

(१)

अधर के मकान पर चण्डी का सगीत

एक दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण कलकत्ते के वेनेटोला में अधर के मकान पर पधारे हैं। आषाढ शुक्ल दशमी, १४ जुलाई १८८३, शनिवार। अधर श्रीरामकृष्ण को राजनारायण का चण्डी-सगीत सुनायगे। राखाल, मास्टर आदि साथ हैं। मन्दिर के बरामदे मे गाना हो रहा है। राजनारायण गाने लगे—

(सगीत—भावार्थ)

"अभय पद में प्राणो को सौप दिया है, फिर मुझे यम का क्या भय है? आत्मारूपी सिर की शिखा में काली नामक महा-मन्त्र बाँध लिया है। मै इस ससाररूपी बाजार में अपने शरीर को बेचकर श्रीदुर्गानाम खरीद लाया हूँ। काली-नामरूपी कल्प-तरु को हृदय में बो दिया हूँ। अब यम के आने पर हृदय खोल-कर दिखाऊँगा, इसलिए बैठा हूँ। देह में छ दुष्ट हैं, उन्हे भगा दिया है। मै जय दुर्गा, श्रीदुर्गा कहकर रवाना होने के लिए बैठा हूँ।"

श्रीरामकृष्ण थोडा सुनकर भावाविष्ट हो खडे हो गये और मण्डली के साथ सम्मिलित होकर गाना गा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण पद जोड रहे हैं,—"ओ माँ, रखो माँ!" पद जोडते-जोडते एकदम समाधिस्थ! बाह्यज्ञानशून्य, निस्पन्द होकर खडे हैं। फिर गायक गा रहे हैं,—

(संगीत—भावार्थ)

"वह किसकी कामिनी रणागण को आलोकित कर रही है, मानो इसकी देह-कान्ति के सामने जलधर बादल हार मानता है और दाँतों की ज्योति ही मानो बिजली की चमक है ?"

श्रीरामकृष्ण फिर समाधिस्थ हुए ।

गाना समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण अधर के बैठकघर म जाकर भक्तों के साथ बैठ गये । ईश्वरीय चर्चा हो रही है। इस प्रकार भी वार्तालाप हो रहा है कि कोई-कोई भक्त मानो 'अन्त सार फल्गु नदी है, ऊपर भाव का कोई प्रकाश नहीं !'

(२)

भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर से गाडी पर कलकत्ते की ओर जा रहे हैं—साथ में रामलाल और दो-एक भक्त हैं। फाटक से निकलते ही उन्होंने देखा कि मणि चार फजली आम लिए हुए पैदल आ रहे हैं। मणि को देखकर गाडी को रोकने के लिए कहा। मणि ने गाडी पर सिर टेककर प्रणाम किया।

आज शनिवार, २१ जुलाई, १८८३ ई० आषाढ कृष्ण प्रतिपदा, दिन के चार बजे हैं। श्रीरामकृष्ण अधर के मकान जायेंगे, उसके बाद यदु मल्लिक के घर, और फिर स्व० खेलात घोष के यहाँ जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से हँसते हुए)—तुम भी आओ न, हम अधर के यहाँ जा रहे हैं।

मणि 'जैसी आपकी आज्ञा' कहकर गाडी पर बैठ गये।

मणि अँग्रेजी पढे-लिखे हैं, इसी से संस्कार नहीं मानते थे, पर कुछ दिन हुए श्रीरामकृष्ण के पास यह स्वीकार कर गये थे

कि अधर के संस्कार थे, इसी से वे उनकी इतनी भक्ति करते हैं। घर लौटकर विचार करने पर मास्टर ने देखा कि संस्कार के बारे में अभी तक उनको पूर्ण विश्वास नहीं हुआ। यही कहने के लिए आज श्रीरामकृष्ण से मिलने आये। श्रीरामकृष्ण बातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, अधर को तुम कैसा समझते हो?

मणि—उनका बहुत अनुराग है।

श्रीरामकृष्ण—अधर भी तुम्हारी बड़ी प्रशंसा करता है।

मणि कुछ देर तक चुप रहे, फिर पूर्वजन्म के संस्कार की बात उठाई।

'ईश्वर के कार्य समझना असम्भव है'

मणि—मुझे 'पूर्वजन्म' और संस्कार' आदि पर उतना विश्वास नहीं है, क्या इससे मेरी भक्ति में कोई बाधा आयेगी?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर की सृष्टि में सब कुछ हो सकता है—यह विश्वास ही पर्याप्त है। मैं जो सोचता हूँ वही सत्य है, और सबका मत मिथ्या है—ऐसा विचार मन में न आने देना। बाकी ईश्वर ही समझा देंगे।

"ईश्वर के कार्यों को मनुष्य क्या समझेगा? कार्य अनन्त हैं। इसलिए मैं इनको समझने का थोड़ा भी प्रयत्न नहीं करता। मैंने सुन रखा है कि उनकी सृष्टि में सब कुछ हो सकता है। इसीलिए इन सब बातों की चिन्ता न कर केवल ईश्वर ही की चिन्ता करता हूँ। हनुमान से पूछा गया था, आज कौनसी तिथि है, हनुमान ने कहा था—मैं तिथि, नक्षत्र आदि नहीं जानता, केवल एक राम की चिन्ता करता हूँ।

"ईश्वर के कार्य क्या समझ में आ सकते हैं? वे तो पास ही

है—पर यह समझना कितना कठिन है! बलराम कृष्ण को भगवान् नहीं जानते थे।"

मणि—जी हाँ। आपने भीष्मदेव की बात जैसी कही थी।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, हाँ! क्या कहा था, कहो तो।

मणि—भीष्मदेव शरशय्या पर पडे रो रहे थे। पाण्डवों ने श्रीकृष्ण से कहा, भाई, यह कैसा आश्चर्य है! पितामह इतने ज्ञानी होकर भी मृत्यु का विचार कर रो रहे हैं? श्रीकृष्ण ने कहा, उनसे पूछो न, क्यों रोते हैं। भीष्मदेव बोले, मैं यह विचार कर रोता हूँ कि भगवान् के कार्य को कुछ भी न समझ सका। हे कृष्ण, तुम इन पाण्डवों के साथ फिरते हो, पग-पग पर इनकी रक्षा करते हो, फिर भी इनकी विपद् का अन्त नहीं।

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर ने अपनी माया से सब कुछ ढक रखा है—कुछ जानने नहीं देता। **कामिनी और कांचन ही माया है।** इस माया को हटाकर जो ईश्वर के दर्शन करता है, वही उसे देख पाता है। एक आदमी को समझाते समय ईश्वर ने एक चमत्कार दिखलाया। अचानक सामने देखा देश (कामारपुकुर) का एक तालाब, और एक आदमी ने काई हटाकर उससे जल पी लिया। जल स्फटिक की तरह साफ था। इससे यह सूचित हुआ कि वह **सच्चिदानन्द** मायारूपी काई से ढका हुआ है,—जो काई हटाकर जल पीता है वही पाता है।

"सुनो, तुमसे बडी गूढ बातें कहता हूँ। झाऊओं के तले बैठे हुए देखा कि चोर दरवाजे का सा एक दरवाजा सामने है। कोठरी के अन्दर क्या है, यह तो मुझे मालूम नहीं पडा। मैं एक नहन्नी से छेद करने लगा, पर कर न सका। मैं छेदता रहा, पर वह बार बार भर जाता था। परन्तु पीछे से एक बार इतना

बड़ा छेद बना ! ”

यह कहकर श्रीरामकृष्ण चुप रहे । फिर बोलने लगे— ये सब बड़ी ऊँची बातें हैं । वह देखो, कोई मानो मेरा मुँह दबा देता है ।

“ईश्वर के चैतन्य से जगत् चैतन्यमय है । कभी-कभी देखता हूँ कि छोटी-छोटी मछलियों में वही चैतन्य घूम-फिर रहा है ।”

गाड़ी दरमाहट्टा के निकट पहुँची । श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं ।

“कभी-कभी देखता हूँ कि वर्षा में जिस प्रकार पृथ्वी जल से ओतप्रोत रहती है, उसी प्रकार इस चैतन्य से जगत् ओतप्रोत है ।

“इतना सब दिखलाई तो पड़ता है, पर मुझे अभिमान नहीं होता ।”

मणि (सहास्य)—आपका अभिमान कैसा ?

श्रीरामकृष्ण—शपथ खाकर कहता हूँ, थोड़ा भी अभिमान नहीं होता ।

मणि—ग्रीस देश में सुकरात नाम के एक आदमी थे । यह देववाणी हुई थी कि सब लोगों में वे ही ज्ञानी हैं । उन्हें आश्चर्य हुआ । बहुत देर तक निर्जन में चिन्ता करने पर उन्हें भेद मालूम हुआ । तब उन्होंने अपने मित्रों से कहा, केवल मुझे ही मालूम हुआ है कि मैं कुछ नहीं जानता, पर दूसरे सब लोग कहते हैं कि हमें खूब ज्ञान हुआ है । परन्तु वास्तव में सभी अनजान हैं ।

श्रीरामकृष्ण—मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि मैं जानता ही क्या हूँ कि इतने लोग यहाँ आते हैं ! वैष्णवचरण बड़ा पण्डित था । वह कहता था कि तुम जो कुछ कहते हो सब शास्त्रों में पाया जाता है । तो फिर तुम्हारे पास क्यों आता हूँ ? तुम्हारे मुँह से

यही सब सुनने के लिए।

मणि—आपकी सब बातें शास्त्र से मिलती हैं। नवद्वीप गोस्वामी भी उस दिन पानीहाटी मे यही बात कहते थे। आपने कहा था न—'गीता' 'गीता' बार-बार कहने मे 'त्यागी' 'त्यागी' हो जाता है। आपकी इसी बात पर।

श्रीरामकृष्ण—मेरे साथ क्या दूसरो का कुछ मिलना-जुलता है। किसी पण्डित या साधु का ?

मणि—आपको ईश्वर ने स्वय अपने हाथो से बनाया है। और दूसरों को मशीन में डालकर। जैसे नियम के अनुसार सृष्टि होती है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य, रामलाल आदि से)—अरे, कहता क्या है।

श्रीरामकृष्ण की हँसी रुकती ही नही। अन्त मे उन्होने कहा—शपथ खाता हूँ, मुझे इससे तनिक भी अभिमान नही होता।

मणि—विद्या से एक लाभ होता है। उससे यह मालूम हो जाता है कि मैं कुछ नहीं जानता, और मैं कुछ नही हूँ।

श्रीरामकृष्ण—ठीक है, ठीक है। मैं कुछ नही हूँ! मैं कुछ नही हूँ! अच्छा, अँग्रेजी ज्योतिष पर तुम्हे विश्वास है?

मणि—उन लोगो के नियम के अनुसार नये आविष्कार हो सकते हैं, युरेनस (Uranus) ग्रह की अनियमित चाल देखकर उन्होने दुर्बीन से पता लगाकर देखा कि एक नया ग्रह (Neptune) चमक रहा है। और उससे ग्रहण की गणना भी हो सकती है।

श्रीरामकृष्ण—हां, होती है।

गाडी चल रही है—प्राय अधर के मकान के पास आ गयी है। श्रीरामकृष्ण मणि से कहते हैं—सत्य में रहना, तभी ईश्वर मिलेंगे।

मणि—एक और बात आपने नवद्वीप गोस्वामी से कही थी—'हे ईश्वर, मैं तुझे ही चाहता हूँ। देखना, अपनी भुवन-मोहिनी माया के ऐश्वर्य से मुझे मुग्ध न करना। मैं तुझे ही चाहता हूँ।'

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह दिल से कहना होगा।

परिच्छेद २६

ज्ञानयोग और निर्वाण मत

(१)

पण्डित पद्मलोचन । विद्यासागर

आषाढ की कृष्णा तृतीया तिथि है, २२ जुलाई, १८८३ ई० आज रविवार है। भक्त लोग अवसर पाकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए फिर आये है। अधर, राखाल और मास्टर कलकत्ते से एक गाडी पर दिन के एक-दो बजे दक्षिणेश्वर पहुँचे। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद थोडी देर आराम कर चुके हैं। कमरे में मणि मल्लिक आदि भी भक्त बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण अपने छोटे तख्त पर उत्तर की ओर मुँह किये बैठे हैं। भक्त लोग जमीन पर—कोई चटाई और कोई आसन पर—बैठे है। पास ही, पश्चिम की ओर गगा दक्षिणवाहिनी हुई हैं। वर्षा ऋतु के कारण स्रोत बडा प्रबल था, मानो गगा सागर-सगम पर पहुँचने के लिए बडी व्यग्र हो, केवल राह में क्षण भर के लिए महापुरुष के ध्यान-मन्दिर के दर्शन और स्पर्श करती हुई जा रही थी।

श्रीयुत मणि मल्लिक पुराने ब्राह्मभक्त हैं। उनकी उम्र साठ-पैसठ वर्ष की है। कुछ दिन हुए वे वाराणसी गये थे। आज श्रीरामकृष्ण से मिलने आये हैं और उनसे वाराणसी-दर्शन का वर्णन कर रहे हैं।

मणि मल्लिक—एक और साधु को देखा। वे कहते हैं कि इन्द्रिय-सयम के बिना कुछ नही होगा। सिर्फ ईश्वर की रट

लगाने से क्या हो सकता है ?

श्रीरामकृष्ण—इन लोगों का मत यह है कि पहले साधना चाहिए—शम, दम, तितिक्षा चाहिए। ये निर्वाण के लिए चेष्टा कर रहे हैं। ये वेदान्ती हैं, सदैव विचार करते हैं, 'ब्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या।' बड़ा कठिन मार्ग है। यदि जगत् मिथ्या हुआ तो तुम भी मिथ्या हुए। जो कह रहे हैं वे स्वयं मिथ्या हैं, उनकी बातें भी स्वप्नवत् हैं। बड़ी दूर की बात है।

"एक दृष्टान्त देकर समझाता हूँ। जैसे कपूर जलाने पर कुछ भी शेष नहीं रहता, मगर लकड़ी जलाने पर राख बाकी रह जाती है। अन्तिम विचार के बाद समाधि होती है। तब 'मैं' 'तुम' 'जगत्' इन सबका कोई पता ही नहीं रहता।

"पद्मलोचन बड़ा ज्ञानी था, इधर मैं तो 'माँ-माँ' कहकर प्रार्थना करता था, तो भी मुझे खूब मानता था। वह बर्दवान राज का सभापण्डित था। कलकत्ते में आया था—कामारहाटी के पास एक बाग में रहता था। पण्डित को देखने की मेरी इच्छा हुई। मैंने हृदय को यह जानने के लिए भेजा कि पण्डित को अभिमान है या नहीं। सुना कि अभिमान नहीं है। मुझसे उसकी भेंट हुई। वह तो उतना ज्ञानी और पण्डित था, परन्तु मेरे मुँह से रामप्रसाद के गाने सुनकर रो पड़ा! बातें करके ऐसा सुख मुझे कहीं और नहीं मिला। उसने मुझसे कहा, 'भक्तों का संग करने की कामना त्याग दो, नहीं तो तरह-तरह के लोग हैं, वे तुमको गिरा देंगे।' वैष्णवचरण के गुरु उत्सवानन्द से उसने पत्र-व्यवहार करके विचार किया था, फिर मुझसे कहा, आप भी जरा सुनिये। एक सभा में विचार हुआ था,—शिव बड़े हैं या ब्रह्मा ? अन्त में पण्डितों ने पद्मलोचन से पूछा।

पद्मलोचन ऐसा सरल था कि उसने कहा, 'मेरे चौदह पुरखों में से किसी ने न तो शिव को देखा और न ब्रह्मा को ही।' 'कामिनी-कांचन का त्याग' सुनकर एक दिन उसने मुझसे कहा, 'उन सबका त्याग क्यों कर रहे हो ? यह रुपया है, वह मिट्टी है,—यह भेदबुद्धि तो अज्ञान से पैदा होती है।' मैं क्या कह सकता था—बोला, 'क्या मालूम, पर मुझे रुपया-पैसा आदि रुचता ही नहीं।'

"एक पण्डित को बड़ा अभिमान था। वह ईश्वर का रूप नहीं मानता था। परन्तु ईश्वर का कार्य कौन समझे ? वे आद्या-शक्ति के रूप में उसके सामने प्रकट हुए। पण्डित बड़ी देर तक बेहोश रहा। जरा होश सँभालने पर लगातार 'का, का, का' (अर्थात्, काली) की रट लगाता रहा।

भक्त—महाराज, आपने विद्यासागर को देखा है ? कैसा देखा ?

श्रीरामकृष्ण—विद्यासागर के पाण्डित्य है, दया है, परन्तु अन्तर्दृष्टि नहीं है। भीतर सोना दबा पड़ा है, यदि इसकी खबर उसे होती तो इतना बाहरी काम जो वह कर रहा है, वह सब घट जाता और अन्त में एकदम त्याग हो जाता। भीतर, हृदय में ईश्वर है यह बात जानने पर उन्हीं के ध्यान और चिन्तन में मन लग जाता। किसी-किसी को बहुत दिन तक निष्काम कर्म करते-करते अन्त में वैराग्य होता है और मन उधर मुड़ जाता है—ईश्वर से लग जाता है।

"जैसा काम ईश्वर विद्यासागर कर रहा है वह बहुत अच्छा है। दया बहुत अच्छी है। दया और माया में बड़ा अन्तर है। दया अच्छी है, माया अच्छी नहीं। माया का अर्थ आत्मीयों से प्रेम है—अपनी स्त्री, पुत्र, भाई, बहिन, भतीजा, भानजा, माँ,

बाप इन्ही से । दया—सब प्राणियो से समान प्रेम है ।"

(२)

ब्रह्म त्रिगुणातीत । 'मुंह से नहीं बताया जा सकता'

मास्टर—क्या दया भी एक बन्धन है ?

श्रीरामकृष्ण—वह तो बहुत दूर की बात ठहरी । दया सतोगुण से होती है । सतोगुण से पालन, रजोगुण से सृष्टि और तमोगुण से सहार होता है, परन्तु ब्रह्म, सत्त्व, रज, तम इन तीनो गुणो से परे है—प्रकृति से परे है ।

"जहाँ यथार्थ तत्त्व है वहाँ तक गुणो की पहुँच नही । जैसे चोर-डाकू किसी ठीक जगह पर नही जा सकते, वे डरते हैं कि कही पकडे न जायँ । सत्त्व, रज, तम ये तीनो गुण डाकू हैं । एक कहानी सुनाता हूँ ।

"एक आदमी जगल की राह से जा रहा था कि तीन डाकुओ ने उसे पकडा । उन्होने उसका सब कुछ छीन लिया । एक डाकू ने कहा, 'इसे जीवित रखने से क्या लाभ ?' यह कहकर वह तलवार से उसे काटने आया । तब दूसरे डाकू ने कहा, 'नही जी, काटने से क्या होगा ? इसके हाथ-पैर बांधकर यही छोड दो ।' वैसा करके डाकू उसे वही छोडकर चले गये । थोडी देर बाद उनमें से एक लौट आया और कहा, 'ओह ! तुम्हे चोट लगी ? आओ, मै तुम्हारा बन्धन खोल देता हूँ ।' उसे मुक्त कर डाकू ने कहा, 'आओ मेरे साथ, तुम्हे सडक पर पहुँचा दूँ ।' बडी देर में सडक पर पहुँचकर उसने कहा, 'इस रास्ते से चले जाओ, वह तुम्हारा मकान दिखता है ।' तब उस आदमी ने डाकू से कहा, 'भाई, आपने बडा उपकार किया, अब आप भी चलिये मेरे मकान तक, आइये ।' डाकू ने कहा, 'नही, मै वहाँ नही आ

सकना, पुलिस को खबर लग जायगी।'

"यह ससार ही जगल है। इसमे सत्त्व, रज, तम ये तीन डाकू रहते हैं—वे जीवो का तत्वज्ञान छीन लेते हैं। तमोगुण मारना चाहता है, रजोगुण ससार में फँसाता है, पर सतोगुण रज और तम से बचाता है। सत्त्वगुण का आश्रय मिलने पर काम, क्रोध आदि तमोगुणो मे रक्षा होती है। फिर सतोगुण जीवो का ससार-बन्धन तोड देता है, पर सतोगुण भी डाकू है—वह तत्त्वज्ञान नही दे सकता। हाँ, वह जीव को उस परमधाम मे जाने की राह तक पहुँचा देता है और कहता है, 'वह देखा, तुम्हारा मकान वह दीख रहा है।' जहाँ ब्रह्मज्ञान है, वहाँ से सतोगुण भी बहुत दूर है।

"ब्रह्म क्या है, यह मुँह से नही बताया जा सकता। जिसे उसका पता लगता है वह फिर खबर नही दे सकता। लोग कहते हैं कि कालेपानी में जाने पर जहाज फिर नहीं लौटता।

"चार मित्रो ने घूमते-फिरते ऊँची दीवार से घिरी एक जगह देखी। भीतर क्या है यह देखने के लिए सभी बहुत ललचाये। एक दीवार पर चढ गया। झाँककर उसने जो देखा तो दग रह गया, और 'हा हा हा हा' कहते हुए भीतर कूद पडा! फिर कोई खबर नही दी। इस तरह जो कोई चढा वही 'हा हा हा हा' कहते हुए कूद गया! फिर खबर कौन दे?

"जड-भरत, दत्तात्रेय—ये ब्रह्मदर्शन के बाद फिर खबर नही दे सके। ब्रह्मज्ञान के उपरान्त, समाधि होने से फिर 'अहं' नहीं रहता। इसीलिए रामप्रसाद ने कहा है, 'यदि अकेले सम्भव न हो तो मन, रामप्रसाद को साथ ले।' मन की लय होनी चाहिए, फिर 'रामप्रसाद' की, अर्थात् अहं-तत्त्व की भी लय होनी चाहिए।

तब कहीं वह ब्रह्मज्ञान मिल सकता है।"

एक भक्त—महाराज, क्या शुकदेव को ज्ञान नहीं हुआ था ?

श्रीरामकृष्ण—कितने कहते हैं कि शुकदेव ने ब्रह्म-समुद्र को देखा और छुआ ही भर था, उसमें पैठकर गोता नहीं लगाया। इसीलिए लौटकर उतना उपदेश दे सके। कोई कहता है, ब्रह्म-ज्ञान के बाद वे लौट आये थे—लोकशिक्षा देने के लिए। परीक्षित को भागवत सुनाना था और कितनी ही लोकशिक्षा देनी थी—इसीलिए ईश्वर ने उनके सम्पूर्ण अहं-तत्त्व का लय नहीं किया। एकमात्र 'विद्या का अहं' रख छोड़ा था।

केशव को शिक्षा। 'दल (साम्प्रदायिकता) अच्छा नहीं'

एक भक्त—क्या ब्रह्मज्ञान होने के बाद सम्प्रदाय आदि चलाया जा सकता है ?

श्रीरामकृष्ण—केशव सेन से ब्रह्मज्ञान की चर्चा हो रही थी। केशव ने कहा, आगे कहिये। मैंने कहा, और आगे कहने से सम्प्रदाय आदि नहीं रहेगा। इस पर केशव ने कहा, तो फिर रहने दीजिये। (सब हँसे) तो भी मैंने कहा, 'मैं' और 'मेरा'—यह कहना अज्ञान है। 'मैं कर्ता हूँ, और यह स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति, मान, प्रतिष्ठा—यह सब मेरा है' यह विचार बिना अज्ञान के नहीं होता। तब केशव ने कहा, महाराज, 'अहं' को त्याग देने से तो फिर कुछ रहता ही नहीं। मैंने कहा, केशव, मैं तुमसे पूरा 'अहं' त्यागने को नहीं कहता हूँ, तुम 'कच्चा अहं' छोड़ दो, 'मैं कर्ता हूँ,' 'यह स्त्री और पुत्र मेरा है', 'मैं गुरु हूँ'—इस तरह का अभिमान 'कच्चा अहं' है—इसी को छोड़ दो। इसे छोड़कर 'पक्का अहं' बनाये रखो। 'मैं ईश्वर का दास हूँ, उनका भक्त हूँ; मैं अकर्ता हूँ और वे ही कर्ता हैं'—ऐसा सोचते रहो।

एक भक्त—क्या 'पक्का अहं' सम्प्रदाय बना सकता है ?

श्रीरामकृष्ण—मैंने केशव सेन से कहा, 'मैं सम्प्रदाय का नेता हूँ, मैंने सम्प्रदाय बनाया है, मैं लोगों को शिक्षा दे रहा हूँ'—इस तरह का अभिमान 'कच्चा अहं' है। किसी मत का प्रचार करना बड़ा कठिन काम है। वह ईश्वर की आज्ञा बिना नहीं हो सकता। ईश्वर का आदेश होना चाहिए। शुकदेव को भागवत की कथा सुनाने के लिए आदेश मिला था। यदि ईश्वर का साक्षात्कार होने के बाद किसी को आदेश मिले और तब यदि वह प्रचार का बीड़ा उठाये—लोगों को शिक्षा दे, तो कोई हानि नहीं। उसका अहं 'कच्चा अहं' नहीं, 'पक्का अहं' है।

"मैंने केशव से कहा था, 'कच्चा अहं' छोड़ दो। 'दास-अहं' 'भक्त का अहं'—इसमें कोई दोष नहीं। तुम सम्प्रदाय की चिन्ता कर रहे हो, पर तुम्हारे सम्प्रदाय से लोग अलग होते जा रहे हैं। केशव ने कहा, अमुक व्यक्ति तीन वर्ष हमारे सम्प्रदाय में रहकर फिर दूसरे सम्प्रदाय में चला गया और जाते समय उलटे गालियाँ दे गया। मैंने कहा, तुम लक्षणों का विचार क्यों नहीं करते ? क्या किसी को चेला बना लेने से ही काम हो जाता है !

"केशव से मैंने और भी कहा था कि तुम आद्याशक्ति को मानो। ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं—जो ब्रह्म है वे ही शक्ति हैं। जब तक 'मैं देह हूँ,' यह बोध रहता है, तब तक दो अलग-अलग प्रतीत होते हैं। कहने के समय दो आ ही जाते हैं। केशव ने काली (शक्ति) को मान लिया था।

"एक दिन केशव अपने शिष्यों के साथ आया। मैंने कहा, मैं तुम्हारा व्याख्यान सुनूँगा। उसने चाँदनी में बैठकर व्याख्यान दिया। फिर घाट पर आकर बहुत कुछ बातचीत की। मैंने कहा,

जो भगवान् हैं वे ही दूसरे रूप में भक्त हैं, फिर वे ही एक दूसरे रूप में भागवत हैं। तुम लोग कहो, भागवत-भक्त-भगवान्। केशव ने और साथ ही भक्तों ने भी कहा, भागवत-भक्त-भगवान्। फिर जब मैंने कहा, 'कहो, गुरु-कृष्ण-वैष्णव,' तब केशव ने कहा, महाराज, अभी इतनी दूर बढ़ना ठीक नहीं। लोग मुझे कट्टर कहेंगे।

त्रिगुणातीत होना बड़ा कठिन है। ईश्वर-लाभ किये बिना यह सम्भव नहीं। जीव माया के राज्य में रहता है। यही माया ईश्वर को जानने नहीं देती। इसी माया ने मनुष्य को अज्ञानी बना रखा है। हृदय एक बछड़ा लाया था। एक दिन मैंने देखा कि उसे उसने बाग में बाँध दिया है, चारा चुगाने के लिए। मैंने पूछा, 'हृदय, तू प्रति-दिन उसे वहाँ क्यों बाँधता है?' हृदय ने कहा, 'मामा, बछड़े को घर भेजूँगा। बड़ा होने पर वह हल में जोता जायगा।' ज्योंही उसने यह कहा, मैं मूर्छित हो गिर पड़ा! सोचा, कैसा माया का खेल है! कहाँ तो कामारपुकुर-सिहोड़ और कहाँ कलकत्ता! यह बछड़ा उतना रास्ता चला जायगा, वहाँ बढ़ता रहेगा, फिर कितने दिन बाद हल खींचेगा! इसी का नाम संसार है—इसी का नाम माया है।

"बड़ी देर बाद मेरी मूर्छा टूटी थी।"

(२)

समाधि में

श्रीरामकृष्ण प्रायः रात दिन समाधिस्थ रहते हैं—उनका बाहरी ज्ञान नहीं के बराबर होता है, केवल बीच बीच में भक्तों के साथ ईश्वरीय प्रसंग और संकीर्तन करते हैं। करीब तीन-चार बजे मास्टर ने देखा कि वे अपने छोटे तख्त पर बैठे हैं—भावा-

विष्ट हैं। थोडी देर बाद जगन्माता मे बातें करते है।

माता मे वार्तालाप करते हुए एकवार उन्होंने कहा, 'माँ, उसे एक कला भर भक्ति क्यो दी ?' थोडी देर चुप रहने के बाद फिर कहने हैं, 'माँ, समझ गया, एक कला ही पर्याप्त होगी। इसी मे तेरा काम हो जायगा—जीवशिक्षण होगा।' !

क्या श्रीरामकृष्ण इसी तरह अपने अन्तरग भक्तो मे शक्ति-सचार कर रहे हैं ? क्या यह सब तैयारी इसीलिए हो रही है कि आगे चलकर वे जीवो को शिक्षा दगे ?

मास्टर को छोड कमरे म राखाल भी बैठे हुए हैं। श्रीराम-कृष्ण अब भी भावमग्न है, राखाल से कहते हैं, 'तू नाराज हो गया था ? मैंने तुझे क्यो नाराज किया, इसका कारण है, दवा अपना ठीक असर करेगी समझकर। पेट में तिल्ली अधिक बढ जाने पर मदार के पत्ते आदि लगाने पडते है।

कुछ देर बाद कहते हैं, हाजरा को देखा, शुष्क काष्ठवत् है। तब यहाँ रहता क्यों है ? इसका कारण है, जटिला कुटिला* के रहने से लीला की पुष्टि होती है।

(मास्टर के प्रति) "ईश्वर का रूप मानना पडता है। जगद्धात्री रूप का अर्थ जानते हो ? जो जगत् को धारण किये हैं—उनके धारण न करने से, उनके पालन न करने से जगत् नष्टभ्रष्ट हो जाय। मनरूपी हाथी को जो वश में कर सकता है, उसी के हृदय में जगद्धात्री उदय होती हैं।"

राखाल—मन मतवाला हाथी है।

श्रीरामकृष्ण—सिंहवाहिनी का सिंह इसीलिए हाथी को दबाये हुए है।

---

* श्रीराधा की सास और ननद—आयान घोप की माता और बहिन।

सन्ध्या समय मन्दिर में आरती हो रही है। श्रीरामकृष्ण भी अपने कमरे में ईश्वर का नाम ले रहे हैं। घर में धूनी दी गयी। श्रीरामकृष्ण हाथ जोड़कर छोटे तख्त पर बैठे हैं—माता का चिन्तन कर रहे हैं। बेल्घरिया के गोविन्द मुकर्जी और उनके कई मित्रों ने आकर उनको प्रणाम किया और जमीन पर बैठे। मास्टर और राखाल भी बैठे हैं।

बाहर चाँद निकला हुआ है। जगत् चुपचाप हँस रहा है। घर के भीतर सब लोग चुपचाप बैठ श्रीरामकृष्ण की शान्त मूर्ति देख रहे हैं। आप भावमग्न हैं। कुछ देर बाद बातें कीं। अब भी भावाविष्ट हैं।

श्यामा रूप। उत्तम भक्त। विचार पथ

श्रीरामकृष्ण (भावमग्न)—तुम लोगों को कोई शंका हो, तो पूछो। मैं समाधान करता हूँ।

गोविन्द तथा अन्यान्य भक्त लोग सोचने लगे।

गोविन्द—महाराज, श्यामा रूप क्यों हुआ?

श्रीरामकृष्ण—वह तो सिर्फ दूर से वैसा दिखता है। पास जाने पर कोई रंग ही नहीं! तालाब का पानी दूर से काला दिखता है। पास जाकर हाथ से उठाकर देखो, कोई रंग नहीं। आकाश दूर से नीले रंग का दिखता है। पास के आकाश को देखो, कोई रंग नहीं। ईश्वर के जितने ही समीप जाओगे उतनी ही धारणा होगी कि उनका नाम रूप नहीं। कुछ दूर हट आने से फिर वही 'मेरी श्यामा माता'। जैसे घासफूल का रंग।

"श्यामा पुरुष है या प्रकृति? किसी भक्त ने पूजा की थी। कोई दर्शन करने आया तो उसने देवी के गले में जनेऊ देखकर कहा, 'तुमने माता के गले में जनेऊ पहनाया है!' भक्त ने कहा,

'भाई, तुम्हीं ने माता को पहचाना है। मैं अब तक नहीं पहचान सका कि वे पुरुष हैं या प्रकृति! इसीलिए जनेऊ पहना दिया था।'

"जो श्यामा हैं वे ही ब्रह्म हैं। जिनका रूप है वे ही रूपहीन भी हैं। जो सगुण हैं वे ही निर्गुण हैं। ब्रह्म ही शक्ति है और शक्ति ही ब्रह्म। दोनों में कोई भेद नहीं। एक सच्चिदानन्दमय है और दूसरी सच्चिदानन्दमयी।"

गोविन्द—योगमाया क्यों कहते हैं?

श्रीरामकृष्ण—योगमाया अर्थात् पुरुष प्रकृति का योग। जो कुछ देखते हो वह सब पुरुष प्रकृति का योग है। शिवकाली की मूर्ति में शिव के ऊपर काली खड़ी हैं। शिव शव की भाँति पड़े हैं, काली शिव की ओर देख रही हैं,—यह सब पुरुष प्रकृति का योग है। पुरुष क्रियाहीन है, इसीलिए शिव शव हो रहे हैं। पुरुष के योग से प्रकृति सब काम करती है—सृष्टि, स्थिति, प्रलय करती है। राधाकृष्ण की युगल मूर्ति का भी यही अभिप्राय है। इसी योग के लिए वक्रभाव है। और यही योग दिखाने के लिए श्रीकृष्ण की नाक में मुक्ता और श्रीमती की नाक में नीलम है। श्रीमती का रंग गोरा, मुक्ता जैसा उज्ज्वल है। श्रीकृष्ण का रंग सांवला है। इसीलिए श्रीमती नीलम धारण करती है, फिर श्रीकृष्ण के वस्त्र पीले और श्रीमती के नीले हैं।

"उत्तम भक्त कौन है? जो ब्रह्मज्ञान के बाद देखता है कि ईश्वर ही जीव, जगत् और चौबीस तत्त्व हुए हैं। पहले 'नेति नेति' (यह नहीं, यह नहीं) करके विचार करते हुए छत पर पहुँचना पड़ता है। फिर वही आदमी देखता है कि छत जिन चीजों—ईंट, चूने और सुरखी—से बनी है, सीढ़ी भी उन्हीं से

बनी है। तब वह देखता है कि ब्रह्म ही जीव, जगत् और सब कुछ हैं।

'केवल शुष्क विचार! राम, राम, मैं उस पर थूकता हूँ। (वे जमीन पर थूकते हैं)

"क्यों विचार कर शुष्क बना रहूँगा! जब तक 'मैं' और 'तुम' है, तब तक प्रार्थना है कि ईश्वर के चरणकमलों में शुद्धा-भक्ति बनी रहे।

(गोविन्द से) "कभी कहता हूँ, तुम्हीं 'मैं' हो और 'मैं' ही 'तुम' हूँ। फिर कभी 'तुम्ही तुम हो'—ऐसा हो जाता है। उस समय अपने अहं को ढूँढ नहीं पाता।

"शक्ति का ही अवतार होता है। एक मत से राम और कृष्ण चिदानन्द समुद्र की दो लहरें हैं।

"अद्वैतज्ञान के बाद चैतन्य होता है। तब मनुष्य देखता है कि ईश्वर ही चैतन्य-रूप से सब प्राणियों में है। चैतन्य-लाभ के बाद आनन्द होता है—'अद्वैत-चैतन्य-नित्यानन्द'।*

(मास्टर से) "और तुमसे कहता हूँ—ईश्वर के रूप पर अविश्वास मत करना। यह विश्वास करना कि ईश्वर के रूप हैं, फिर जो रूप तुम्हें पसन्द हो उसी का ध्यान करना।

(गोविन्द से) "बात यह है कि जब तक भोग-वासना बनी रहती है, तब तक ईश्वर को जानने या उनके दर्शन करने के लिए प्राण व्याकुल नहीं होते। बच्चा खेल में मग्न रहता है। मिठाई देकर बहलाओ तो थोड़ी सी खा लेगा। जब उसे न खेल

---

* पन्द्रहवीं शताब्दी में नदिया में तीन महापुरुष भी इन्हीं नामों के हुए थे। उनमें श्रीचैतन्य भगवान् के अवतार समझे जाते हैं। शेष दो उनके पार्षद थे।

अच्छा लगना है न मिठाई, तब वह कहता है, माँ के पास जाऊँगा। फिर वह मिठाई नहीं माँगता। अगर कोई आदमी जिसे उसने न कभी देखा है और न पहचानता है, आकर कहे, 'आ, तुझे माँ के पास ले चलूं,' तो वह उसके साथ चला जायगा। जो कोई उसे गोद में बिठाकर ले जायगा, वह उसी के साथ जायगा।

"संसार के भोग समाप्त हो जाने के बाद ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होते हैं। उस समय केवल एक चिन्ता रहती है कि किस तरह उन्हें पाऊँ। उस समय जो जैसा बताता है, मनुष्य वैसा ही करने लगता है।"

परिच्छेद २७

ज्ञानयोग तथा भक्तियोग

(१)

ईश्वरदर्शन की बात। जीवन का उद्देश्य

फिर एक दिन १८ अगस्त १८८३ ई० शनिवार को तीसरे पहर श्रीरामकृष्ण बलराम के घर आये हैं। वे अवतार-तत्त्व समझा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—अवतार लोक-शिक्षा के लिए भक्ति और भक्त लेकर रहते हैं। मानो छत पर चढ़कर सीढ़ी से आते-जाते रहना। जब तक ज्ञान नहीं होता, जब तक सभी वासनाएँ नष्ट नहीं होतीं, तब तक दूसरे लोग छत पर चढ़ने के लिए भक्तिपथ पर रहेंगे। सब वासनाएँ मिट जाने पर ही छत पर उठा जाता है। दूकानदार का हिसाब जब तक नहीं मिलता, तब तक वह नहीं सोता। खाते का हिसाब ठीक करके ही सोता है!

(मास्टर के प्रति) "मनुष्य तभी सफल होगा जब वह डुबकी लगायेगा। ऐसे मनुष्य के लिए सफलता निश्चित है।

"अच्छा, केशव सेन, शिवनाथ,—ये लोग जो उपासना करते हैं, वह तुम्हें कैसी लगती है?"

मास्टर—जी, आपका कहना ठीक ही है,—वे बगीचे का ही वर्णन करते हैं, परन्तु बगीचे के मालिक का दर्शन करने की बात बहुत कम कहते हैं। प्रायः बगीचे के वर्णन से ही प्रारम्भ और उसी में समाप्ति हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण—ठीक। बगीचे के मालिक की खोज करना और उनसे बातचीत करना, यही काम है। ईश्वर का दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है।*

बलराम के घर से अब अधर के घर पधारे हैं। सायंकाल के बाद अधर के बैठकघर में नाम-संकीर्तन और नृत्य कर रहे हैं, वैष्णवचरण कीर्तनकार गाना गा रहे हैं। अधर, मास्टर, राखाल आदि उपस्थित हैं।

कीर्तन के बाद श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर होकर बैठे हैं, रामलाल से कह रहे हैं, "यहां § का जल श्रावण मास का जल नहीं है। श्रावण मास का जल काफी तेजी के साथ आता है और फिर निकल जाता है। यहाँ पर पाताल से निकले हुए शिव हैं, स्थापित किये हुए शिव नहीं हैं। तू क्रोध में दक्षिणेश्वर से चला आया, मैंने माँ से कहा,—'माँ, इसके अपराध पर ध्यान न देना।'"

क्या श्रीरामकृष्ण अवतार हैं? पाताल से निकले हुए शिव हैं?

फिर भाव विभोर होकर अधर से कह रहे हैं—'भैय्या, तुमने जो नाम लिया था, उसी का ध्यान करो।' ऐसा कहकर अधर की जिह्वा अपनी उँगली से छूकर उस पर न जाने क्या लिख दिया। क्या यही अधर की दीक्षा हुई?

(७)

वेदान्तवादियोंका मत। माया अथवा दया?

आज रविवार का दिन है। श्रावण कृष्ण प्रतिपदा, १९

---

* आत्मा वा अरे द्रष्टव्य श्रोतव्यो, मन्तव्यो निदिध्यासितव्य
—बृहदारण्यक, २।४।५

§ हृदय को लक्षित कर।

अगस्त, १८८३ ई०। श्रीरामकृष्ण देवी का प्रसाद पाने के बाद कुछ आराम कर रहे थे। विश्राम के बाद—अभी दोपहर का समय ही है—वे अपने कमरे में तख्त पर बैठे हुए हैं। इसी समय मास्टर ने आकर उन्हें प्रणाम किया। थोड़ी देर बाद उनके साथ वेदान्त-सम्बन्धी बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—देखो, अष्टावक्र-संहिता में आत्मज्ञान की बातें हैं। आत्मज्ञानी कहते हैं, 'सोऽहम्' अर्थात् मैं ही वह परमात्मा हूँ। यह वेदान्तवादी संन्यासियों का मत है। सांसारिक व्यक्तियों के लिए यह मत ठीक नहीं है। सब कुछ किया जाता है, फिर भी 'मैं ही वह निष्क्रिय परमात्मा हूँ' यह कैसे हो सकता है? वेदान्तवादी कहते हैं कि आत्मा निर्लिप्त है। सुख-दुःख, पाप-पुण्य—ये सब आत्मा का कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते,—परन्तु देहाभिमानी व्यक्तियों को कष्ट दे सकते हैं। धुँआ दीवार को मैला करता है, पर आकाश का कुछ नहीं कर सकता। कृष्णकिशोर ज्ञानियों की तरह कहा करता था कि मैं 'ख' अर्थात् आकाशवत् हूँ। वह परम भक्त था, उसके मुँह से यह बात भले ही शोभा दे, पर सबके मुँह से यह शोभा नहीं देती।

"पर 'मैं मुक्त हूँ' यह अभिमान बड़ा ही अच्छा है। 'मैं मुक्त हूँ' कहते रहने से कहनेवाला मुक्त हो जाता है। और 'मैं बद्ध हूँ' कहते रहने से कहनेवाला बद्ध ही रह जाता है। जो केवल यह कहता है कि 'मैं पापी हूँ' वही सचमुच गिरता है। कहते यही रहना चाहिए—मैंने उसका नाम लिया है, अब मेरे पाप कहाँ? मेरा बन्धन कैसा?

"देखो, मेरा चित्त बडा अप्रसन्न हो रहा है। हृदय * ने चिट्ठी लिखी है कि वह बहुत बीमार है। यह क्या है—माया या दया?"

मास्टर भी क्या कहे—मौन रह गय।

श्रीरामकृष्ण—माया किसे कहते है, पता है? माता-पिता, भाई-बहिन, स्त्री-पुत्र, भांजे-भांजी, भतीजे-भतीजी आदि आत्मीय जनो के प्रति प्रेम—यही माया है। और प्राणिमात्र से प्रेम का नाम दया है। मुझे यह क्या हुई—माया या दया? हृदय ने मेरे लिए बहुत कुछ किया था—बडी सेवा की थी—अपने हाथो मेरा मैला तक साफ किया था, पर अन्त मे उसने उतना ही कष्ट भी दिया था। वह इतना अधिक कष्ट देता था, कि एक बार मैं बाँध पर चढकर गगा मे डूबकर देहत्याग करने तक को तैयार हो गया था। पर फिर भी उसने मेरा बहुत कुछ किया था। इस समय यदि उसे कुछ रुपये मिल जाते, तो मेरा चित्त स्थिर हो जाता। पर मैं किस बाबू से कहूँ? कौन कहता फिरे?

(३)

'मृण्मयी आधार में चिन्मयी देवी'

विष्णुपुर में मृण्मयी का दर्शन। भक्त का सुख दु:ख

लगभग दो या तीन बजे होगे। इसी समय भक्तवीर अधर

---

* हृदय श्रीरामकृष्णदेव के भांजे थे और १८८१ ई० तक कालीमन्दिर में रहकर लगभग २३ वर्ष तक इनकी सेवा की थी। उनका जन्मस्थान हुगली जिले के अन्तर्गत सिहोड़ ग्राम में था। श्रीरामकृष्ण का जन्मस्थान कामारपुकुर, यहां से दो कोस दूर है। ६२ वर्ष की अवस्था में हृदय का देहावसान हुआ।

सेन तथा बलराम आ पहुँचे और भूमिष्ठ हो प्रणाम कर बैठ गये। उन्होंने पूछा, 'आपकी तबीयत कैसी है?" श्रीरामकृष्ण ने कहा, "हाँ, शरीर तो अच्छा ही है, पर मेरे मन में थोडी व्यथा हो रही है।" इस अवसर पर हृदय की नौकरी के सम्बन्ध में कोई बात ही नहीं उठायी। बडेबाजार (कलकत्ता) के मल्लिक-घराने की सिंहवाहिनी देवी की चर्चा छिडी।

श्रीरामकृष्ण——मैं भी सिंहवाहिनी के दर्शन करने गया था। चाषाधोबीपाडा (एक मुहल्ला) के एक मल्लिक-घराने के यहाँ देवी विराजमान थीं। मकान टूटा-फूटा था, क्योंकि मालिक गरीब हो गये थे। कहीं कबूतर की विष्ठा पडी थी, कहीं काई जम गयी थी, और कहीं छत से सुरखी और रेत ही झर-झर कर गिर रही थी। दूसरे मल्लिक-घराने वालों के मकान में जो श्री देखी वह श्री इसमें नहीं थी।

(मास्टर से) "अच्छा, इसका क्या अर्थ है, बतलाओ तो सही।"

मास्टर चुप्पी साधे बैठे रहे।

श्रीरामकृष्ण— बात यह है कि जिसके कर्म का जैसा भोग है, उसे वैसा ही भोगना पडता है। संस्कार, प्रारब्ध आदि बातें माननी ही पडती हैं।

"उस टूटे-फूटे मकान में भी मैंने देखा कि सिंहवाहिनी का चेहरा जगमगा रहा है। आविर्भाव मानना ही पडता है। मैं एक बार विष्णुपुर गया था। वहाँ राजा साहब के अच्छे-अच्छे मन्दिर आदि हैं। वहाँ मृण्मयी नाम की भगवती की एक मूर्ति भी है। मन्दिर के पास ही कृष्णबाँध, लालबाँध नाम के बडे-बडे तालाब हैं। तालाब में मुझे मसाले की गंध मिली! भला ऐसा

क्यो हुआ ? मुझे तो मालूम भी नही था कि स्त्रियाँ जब मृण्मयी देवी के दर्शन के लिए जाती है तो उन्हे वे मसाला चटाती हैं ! तालाब के पास मेरी भाव-समाधि हो गयी । उस समय तक विग्रह नही देखा था—भावावेश म मुझे मृण्मयी देवी क दर्शन हुए—कटि तक ।"

इसी बीच मे दूसरे भक्त आ जुटे और काबुल के विद्रोह तथा लड़ाई की बाते होने लगी । किसी एक ने कहा कि याकूब खाँ (काबुल के अमीर) राजसिंहासन से उतार दिये गये है । श्रीरामकृष्णदेव को सम्बोधन करके उन्होने कहा कि याकूब खाँ भी ईश्वर का एक बडा भक्त है ।

श्रीरामकृष्ण—बात यह है कि सुख-दु ख देह के धर्म है । कवि-कंकण-चण्डी में लिखा है कि कालूवीर को कैद की सजा हुई थी, और उसकी छाती पर पत्थर रखा गया था । कालूवीर भगवती का वरपुत्र था फिर भी उसे यह दु ख भोगना पडा । देह धारण करने से ही सुख-दु ख का भोग करना पडता है ।

"श्रीमन्त भी तो बडा भक्त था । उसकी माँ खुल्लना को भगवती कितना अधिक चाहती थी, पर देखो, श्रीमन्त पर कितनी विपत्ति पडी ! यहाँ तक कि वह श्मशान में काट डालने के लिए ले जाया गया ।

"एक लकडहारा परम भक्त था । उसे भगवती के साक्षात् दर्शन हुए, उन्होने उसे खूब चाहा और उस पर अत्यन्त कृपा की, परन्तु इतने पर भी उसका लकडहारे का काम नही छूटा ! उसे पहले की तरह लकडी काटकर ही रोटी कमानी पडी । कारागार में देवकी को चतुर्भुज शंख-चक्र-गदाधारी भगवान् के दर्शन हुए, पर तो भी उनका कारावास नही छूटा ।

मास्टर—केवल कारावास ही क्यों ? शरीर ही तो सारे अनर्थ का मूल है। उसी को छूट जाना चाहिए था।

श्रीरामकृष्ण—बात यह है कि प्रारब्ध कर्मों का भोग होता ही है। जब तक देह है, तब तक देह-धारण करना ही पड़ेगा। एक काने आदमी ने गंगा-स्नान किया। उसके सारे पाप तो छूट गये, पर कानापन दूर नहीं हुआ! (सभी हँसे) उसे अपना पूर्वजन्म का फल भोगना था, वही वह भोगता रहा।

मास्टर—जो बाण एक बार छोड़ा जा चुका उस पर फिर किसी तरह का अधिकार नहीं रहता।

श्रीरामकृष्ण—देह का सुख-दुःख चाहे जो कुछ हो, पर भक्त को ज्ञान-भक्ति का ऐश्वर्य रहता है। वह ऐश्वर्य कभी नष्ट नहीं होता। देखो, पाण्डवों पर कितनी विपत्ति पड़ी, पर इतने पर भी उनका चैतन्य एक बार भी नष्ट नहीं हुआ। उनकी तरह ज्ञानी, उनकी तरह भक्त कहाँ मिल सकते हैं ?

(४)

कप्तान और नरेन्द्र का आगमन। 'समाधि' में

इसी समय नरेन्द्र और विश्वनाथ उपाध्याय आये। विश्वनाथ नेपाल राजा के वकील थे—राज-प्रतिनिधि थे। श्रीरामकृष्ण इन्हें कप्तान कहा करते थे। नरेन्द्र की आयु लगभग इक्कीस वर्ष की थी—इस समय वे बी ए में पढ़ते हैं। बीच-बीच में विशेषतः रविवार को दर्शन के लिए आ जाते हैं।

जब वे प्रणाम करके बैठ गये तो श्रीरामकृष्णदेव ने नरेन्द्र से गाना गाने के लिए कहा। घर की पश्चिम ओर एक तम्बूरा लटका हुआ था। यन्त्रों का सुर मिलाया जाने लगा। सब लोग एकाग्र होकर गवैये की ओर देखने लगे कि कब गाना आरम्भ

होता है।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र से)--देख, यह अब वैसा नहीं बजता।

कप्तान--यह पूर्ण होकर बैठा है, इसी से इसमें शब्द नहीं होता! (सब हँसे) पूर्ण कुम्भ है!

श्रीरामकृष्ण (कप्तान से)--पर नारदादि कैसे बोले?

कप्तान--उन्होंने दूसरों के दुःख से कातर होकर उपदेश दिये थे।

श्रीरामकृष्ण--हाँ, नारद, शुकदेव आदि समाधि के बाद नीचे उतर आये थे। दया के कारण दूसरों के हित की दृष्टि से उन्होंने उपदेश दिये थे।

नरेन्द्र ने गाना शुरू किया। गाने का आशय इस प्रकार था--

"सत्य शिव सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर में चमक रहा है। उसे देख-देखकर हम उस रूप के समुद्र में डूब जायेंगे। (वह दिन कब होगा?) हे नाथ, जब अनन्त ज्ञान के रूप में तुम हमारे हृदय में प्रवेश करोगे, तब हमारा अस्थिर मन निर्वाक् होकर तुम्हारे चरणों में शरण लेगा। आनन्द और अमृतत्व के रूप में जब तुम हमारे हृदयाकाश में उदित होगे, तब चन्द्रोदय में जैसे चकोर उमंग से खेलता फिरता है, वैसे हम भी, नाथ, तुम्हारे प्रकाशित होने पर आनन्द मनायेंगे।" इत्यादि।

'आनन्द और अमृतत्व के रूप में' ये शब्द सुनते ही श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि में मग्न हो गये। आप हाथ बाँधे पूर्व की ओर मुँह किये बैठे हैं। देह सरल और निश्चल है। आनन्दमयी के रूप-समुद्र में आप डूब गये हैं। बाह्यज्ञान बिल्कुल नहीं है। साँस बड़े कष्ट से चल रही है। नेत्र पलकहीन हैं। आप चित्रवत् बैठे हैं। मानो इस राज्य को छोड़ कहीं और गये हुए हैं।

(५)
सच्चिदानन्द लाभ का उपाय। ज्ञानी और भक्त में अन्तर। ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं

समाधि टूटी। इसी बीच में नरेन्द्र उन्हें समाधिस्थ देखकर कमरे से बाहर पूर्व वाले बरामदे में चले गये हैं। वहाँ हाजरा महाशय एक कम्बल के आसन पर हरिनाम की माला हाथ में लिये बैठे हैं। नरेन्द्र उनसे बातें कर रहे हैं। इधर कमरा दर्शकों से भरा है। समाधि-भंग के बाद श्रीरामकृष्ण ने भक्तों की ओर दृष्टि डाली तो देखा कि नरेन्द्र वहाँ नहीं हैं। तम्बूरा सूना पड़ा था। सब भक्त उनकी ओर उत्सुक होकर देख रहे थे।

श्रीरामकृष्ण--आग लगा गया है, अब चाहे वह रहे या न रहे।

(कप्तान आदि से)--"चिदानन्द का आरोप करो तो तुम्हें और भी आनन्द मिलेगा। चिदानन्द तो है ही, केवल आवरण और विक्षेप है, अर्थात् वह ढक गया है और उसकी जगह दूसरी चीज का आभास हो रहा है। **विषय पर आसक्ति जितनी घटेगी, उतनी ही ईश्वर पर रुचि बढ़ेगी।**

कप्तान--कलकत्ते के घर की ओर जितना ही बढ़ोगे, वाराणसी से उतनी ही दूर होते जाओगे।

श्रीरामकृष्ण--श्रीमती (राधिका) कृष्ण की ओर जितना बढ़ती थीं उतनी ही कृष्ण की देहगन्ध उन्हें मिलती जाती थी। मनुष्य जितना ही ईश्वर के पास जाता है उतनी ही उनकी उन पर भाव-भक्ति होती जाती है। नदी जितनी ही समुद्र के समीप होती है उतना ही उसमें ज्वार-भाटा होता है। भक्त कभी हँसता, कभी रोता है; कभी नाचता और कभी गाता है। भक्त ईश्वर के

साथ मौज करना चाहता है—वह कभी तैरता है, कभी डूबता है और कभी फिर ऊपर आता है—जैसे बर्फ का टुकडा पानी में कभी ऊपर और कभी नीचे आता-जाना रहता है। (हँसी)

"ज्ञानी ब्रह्म को जानना चाहता है। भक्त के लिए भगवान्—सर्वशक्तिमान्, षडैश्वर्यपूर्ण भगवान् हैं। परन्तु वास्तव में ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं। जो सच्चिदानन्दमय हैं, वे ही सच्चिदानन्दमयी है। जैसे मणि और उसकी ज्योति। मणि की ज्योति कहने से ही मणि का बोध होता है और मणि कहने से ही उसकी ज्योति का। बिना मणि को सोचे उसकी ज्योति की धारणा नहीं हो सकती, वैसे ही बिना मणि की ज्योति को सोचे मणि को भी। एक ही सच्चिदानन्द का शक्ति के भेद से उपाधिभेद होता है। इसलिए उनके विविध रूप होते हैं।

"'तारा, वह तो तुम्हीं हो।' जहाँ कहीं कार्य (सृष्टि, स्थिति, प्रलय) हैं वहीं शक्ति है, परन्तु जल स्थिर रहने पर भी जल है और हिलोरे, बुलबुले आदि होने पर भी जल ही है। सच्चिदानन्द ही आद्याशक्ति हैं—जो सृष्टि, स्थिति, प्रलय करती हैं। जैसे कप्तान जब कोई काम नहीं करते तब भी वही हैं, जब पूजा करते हैं तब भी वही है, और जब वे लाट साहब के पास जाते हैं तब भी वही हैं, केवल उपाधि का भेद है।"

कप्तान—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—मैंने यही बात केशव सेन से कही थी।

कप्तान—केशव सेन भ्रष्टाचार, स्वेच्छाचार हैं, वे बाबू है, साधु नहीं।

श्रीरामकृष्ण—(भक्तों से)—कप्तान मुझे केशव सेन के यहाँ जाने को मना करता है।

कप्तान—महाराज, आप तो जायेंगे ही, तो उस पर मुझे क्या करना है।

श्रीरामकृष्ण (नाराज होकर)—तुम लाट साहब के पास रुपये के लिए जा सकते हो, तो क्या मैं केशव सेन के पास नहीं जा सकता? वह तो ईश्वर-चिन्तन करता है, हरि का नाम लेता है। इधर तुम्हीं तो कहते हो, 'ईश्वर ही अपनी माया से जीव और जगत् हुए हैं।'

(६)

ज्ञानयोग और भक्तियोग का समन्वय

यह कहकर श्रीरामकृष्ण एकाएक कमरे से उत्तर-पूर्व वाले बरामदे में चले गये। मास्टर भी साथ गये। कप्तान और अन्य भक्त कमरे में ही बैठे उनकी प्रतीक्षा करने लगे।

बरामदे में नरेन्द्र हाजरा से बातें कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण जानते थे कि हाजरा को शुष्क ज्ञान-विचार बड़ा प्यारा है। वे कहा करते थे—'जगत् स्वप्नवत् है, पूजा और चढ़ावा आदि सब मन का भ्रम है, केवल अपने यथार्थ रूप की चिन्ता करना ही हमारा लक्ष्य है, और मैं ही वह परमात्मा हूँ—सोऽहम्।'

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—तुम लोगों की क्या बातचीत हो रही है?

नरेन्द्र (हँसते हुए)—कितनी लम्बी बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—किन्तु **शुद्ध ज्ञान और शुद्धा** भक्ति एक ही है। शुद्ध ज्ञान जहाँ ले जाता है वहीं शुद्धा भक्ति भी ले जाती है। भक्ति का मार्ग बड़ा सरल है।

नरेन्द्र—ज्ञान-विचार में और प्रयोजन नहीं। माँ, अब मुझे पागल बना दो! (मास्टर से) देखिये हॅमिल्टन (Hamilton)

की एक किताब में मैंने पढ़ा—'A learned ignorance is the end of Philosophy and beginning of Religion

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—इसका अर्थ क्या है ?

नरेन्द्र—दर्शनशास्त्रों का पठन समाप्त होने पर मनुष्य पण्डितमूर्ख बनता है, और तब धर्म का आरम्भ होता है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—थेंक यू, थेंक यू (Thank you, Thank you धन्यवाद, धन्यवाद)। (सब लोग हँसे)

(७)

सन्ध्याकाल में हरिध्वनी। नरेन्द्र के अनेक गुण

थोड़ी देर में सन्ध्या होते देखकर अधिकांश लोग अपने-अपने घर लौटे। नरेन्द्र ने भी विदा ली।

मन्दिर मे सन्ध्या-आरती का प्रबन्ध होने लगा। श्रीरामकृष्ण भी पश्चिम वाले बरामदे से थोड़ी देर के लिए गंगा-दर्शन करने लगे। सन्ध्या होते ही मन्दिरों मे आरती होने लगी। देर में चाँद निकला। चारों ओर चाँदनी फैल गयी।

शाम होते ही श्रीरामकृष्ण जगन्माता को प्रणाम करके तालियाँ बजाते हुए हरिध्वनि करने लगे। कमरे मे बहुत से देव-देवियों की तस्वीरें थी—जैसे ध्रुव और प्रह्लाद की, राजाराम की, काली‌माता की, राधाकृष्ण की—उन्होने सभी देवताओं को उनके नाम ले-लेकर प्रणाम किया। फिर कहा, ब्रह्म-आत्मा-भगवान्, भागवत-भक्त-भगवान्, ब्रह्म-शक्ति, शक्ति-ब्रह्म, वेद-पुराण-तन्त्र, गीता-गायत्री, मै शरणागत हूँ, नाह नाह (मैं नहीं, मैं नहीं), तू ही, तू ही, मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो, इत्यादि।

नामोच्चारण के बाद श्रीरामकृष्ण हाथ जोड़कर जगन्माता का चिन्तन करने लगे। सन्ध्या समय दो-चार भक्त बगीचे मे

गंगा के किनारे टहल रहे थे । आरती के बाद वे एक-एक करके श्रीरामकृष्ण के कमरे में इकट्ठे होने लगे ।

श्रीरामकृष्ण तख्त पर बैठे हैं । मास्टर, अधर, किशोरी आदि नीचे, उनके सामने बैठे हैं ।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से)—नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल ये सब नित्य-सिद्ध और ईश्वर-कोटि के हैं । इनकी जो शिक्षा होती है वह बिना प्रयोजन के ही होती है । तुम देखते नहीं, नरेन्द्र किसी की परवाह नहीं करता ? मेरे साथ वह कप्तान की गाड़ी पर जा रहा था । कप्तान ने उसे अच्छी जगह पर बैठने को कहा,—परन्तु उसने उस तरफ देखा तक नहीं । वह मेरा ही मुँह नहीं ताकता फिर जितना जानता है उतना प्रकट नहीं करता—कहीं मैं लोगों से कहता न फिरूँ कि नरेन्द्र इतना विद्वान् है । उसमें माया मोह नहीं है—मानो कोई बन्धन ही नहीं है । बड़ा अच्छा आधार है । एक ही आधार में बहुत से गुण रखता है—गाने-बजाने, लिखने-पढ़ने सब में बहुत प्रवीण है । इधर जितेन्द्रिय भी है—कहता है, विवाह नहीं करूँगा ! नरेन्द्र और भवनाथ इन दोनों में बड़ा मेल है—जैसा स्वामी-स्त्री में होता है । नरेन्द्र यहाँ ज्यादा नहीं आता । यह अच्छा है । ज्यादा आने से मैं विह्वल हो जाता हूँ ।

(८)

ब्रह्मदर्शन के लक्षण

श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे मसहरी के भीतर ध्यान कर रहे हैं । रात के सात-आठ बजे होंगे । मास्टर और उनके एक मित्र हरि बाबू जमीन पर बैठे हैं । आज सोमवार, तारीख २० अगस्त, १८८३ ई० है ।

आजकल हाजरा महाशय यहाँ रहते हैं। राखाल भी प्रायः रहा करते हैं—और कभी-कभी अधर यहाँ रहते हैं। नरेन्द्र, भवनाथ, अधर, बलराम, राम, मनमोहन, मास्टर आदि प्रायः प्रति सप्ताह आया करते हैं।

हृदय ने श्रीरामकृष्ण की बड़ी सेवा की थी। वे घर पर बीमार हैं, यह सुनकर श्रीरामकृष्ण बहुत चिन्तित हुए हैं। इसीलिए एक भक्त ने राम चटर्जी के हाथ आज दस रुपये भेजे हैं—हृदय को भेजने के लिए। देने के समय श्रीरामकृष्ण वहाँ उपस्थित नहीं थे। वही भक्त एक लोटा भी लाये हैं। श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था, यहाँ के लिए एक लोटा लाना, भक्त लोग जल पीयेंगे।

मास्टर के मित्र हरि बाबू को लगभग ग्यारह वर्ष हुए, पत्नीवियोग हुआ है। फिर उन्होंने विवाह नहीं किया। उनके माता-पिता, भाई-बहिन, सभी हैं। उन पर उनका बड़ा स्नेह है, और उनकी सेवा वे करते हैं। उनकी आयु २८-२९ होगी। भक्तों के आते ही श्रीरामकृष्ण मसहरी से बाहर आये। मास्टर आदि ने उनको भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। मसहरी उठा दी गयी। आप छोटे तख्त पर बैठकर बातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—मसहरी के भीतर ध्यान कर रहा था। फिर सोचा कि यह तो केवल एक रूप की कल्पना ही है, इसीलिए फिर अच्छा न लगा। अच्छा होता यदि ईश्वर बिजली की चमक की तरह अपने आपको झट से प्रकट करते। फिर मैंने सोचा, कौन ध्यान करनेवाला है, और ध्यान करूँ ही किसका?

मास्टर—जी हाँ। आपने कह दिया है कि ईश्वर ही जीव

और जगत् आदि सब कुछ हुए हैं। जो ध्यान कर रहा है वह भी तो ईश्वर ही है।

श्रीरामकृष्ण--फिर बिना ईश्वर के कराये तो कुछ होनेवाला नही। वे अगर ध्यान करायें, तो ध्यान होगा। इसमें तुम्हारा क्या मत है?

मास्टर—जी, आप के भीतर 'अहं' का भाव नही है, इसीलिए ऐसा प्रतीत हो रहा है। जहाँ 'अहं' नही रहता वहाँ ऐसा ही हुआ करता है।

श्रीरामकृष्ण--पर 'मै दास हूँ, सेवक हूँ'—इतना अहंभाव रहना अच्छा है। जहाँ यह बोध रहता है कि मै ही सब कुछ कर रहा हूँ वहाँ मै दास हूँ और तुम प्रभु हो'--यह भाव बहुत अच्छा है। जब सभी कुछ किया जा रहा है, तो सेव्य-सेवक भाव से रहना ही अच्छा है।

मास्टर सदा परब्रह्म के स्वरूप की चिन्ता करते हैं। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उनको लक्ष्य करके फिर कह रहे हैं—

"ब्रह्म आकाश की तरह हैं। उनमें कोई विकार नही है। जैसे आग का कोई रंग नही है। पर हाँ अपनी शक्ति के द्वारा वे विविध आकार के हुए हैं। सत्त्व, रज, तम--ये तीन गुण शक्ति ही के गुण हैं। आग में यदि सफेद रंग डाल दो, तो वह सफेद दिखेगी। यदि लाल रंग डाल दो, तो वह लाल दिखेगी। यदि काला रंग डाल दो, तो वह काली दिखेगी। ब्रह्म सत्त्व, रज और तम--इन तीनो गुणों से परे हैं। वे यथार्थ में क्या हैं, यह मुँह से नही कहा जा सकता। वे वाक्य से परे हैं। 'नेति नेति' (ब्रह्म यह नही, वह नही) करके विचार करते हुए जो बाकी रह जाता है, और जहाँ आनन्द है, वही ब्रह्म है।

"एक लडकी का पति आया है। वह अपने बरावरी के लडको के साथ बाहरवाले कमरे मे बैठा है। इधर वह लडकी और उसकी सहेलियाँ खिडकी से उसे देख रही हैं। सहेलियाँ उसके पति को नहीं पहचानती। वे उस लडकी से पूछ रही हैं—क्या वह तेरा पति है? लडकी मुसकराकर कहती है—नही! एक दूसरे नवयुवक को दिखलाकर वे पूछती हैं—क्या वह तेरा पति है? वह फिर कहती है—नही। एक तीसरे लडके को दिखाकर वे फिर पूछती हैं—क्या वह तेरा पति है? वह फिर कहती है—नहीं। अन्त में उसके पति की ओर इशारा करके उन्होंने पूछा—क्या वह तेरा पति है? तब उसने 'हाँ' या 'नहीं' कुछ नहीं कहा, केवल मुसकराई और चुप्पी साध ली। तब सहेलियों ने समझा कि वही इसका पति है। जहाँ ठीक ब्रह्मज्ञान होता है, वहाँ सब चुप हो जाते हैं।"

सत्सग। गृहस्थ के कर्तव्य

(मास्टर से)—"अच्छा, मैं बकता क्यो हूँ?"

मास्टर—जैसा आपने कहा कि पके हुए घी में अगर कच्ची पूडी छोड दी जाय, तो फिर आवाज होने लगती है। आप बोलते हैं भक्तो का चैतन्य कराने के लिए।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से हाजरा महाशय की चर्चा करते हुए कहते हैं—

"अच्छे मनुष्य का स्वभाव कैसा है, मालूम है? वह किसी को दुःख नहीं देता—किसी को झमेले में नहीं डालता। किसी-किसी का ऐसा स्वभाव है कि कहीं न्यौता खाने गया हो तो शायद कह दिया—मै अलग बैठूंगा! ईश्वर पर यथार्थ भक्ति रहने से ताल के विरुद्ध पैर नहीं पडते—मनुष्य किसी को

झूठमूठ कष्ट नही देता ।

"दुष्ट लोगों का सग करना अच्छा नही । उनसे अलग रहना पडता है । अपने को उनसे बचाकर चलना पडता है । (मास्टर से) तुम्हारा क्या मत है ?"

मास्टर—जी, दुष्टो के सग रहने से मन बहुत गिर जाता है । हाँ, जैसा आपने कहा, वीरो की बात दूसरी है ।

श्रीरामकृष्ण—कैसे ?

मास्टर—थोडी ही आग में लकडी डाल दो तो वह बुझ जाती है । पर धधकती हुई आग में केले का पेड भी झोक देने से आग का कुछ नही बिगडता । वह पेड ही जलकर भस्म हो जाता है ।

श्रीरामकृष्ण मास्टर के मित्र हरि बाबू की बात पूछ रहे हैं ।

मास्टर—ये आपके दर्शन करने आये हैं । ये बहुत दिनो से विपत्नीक हैं ।

श्रीरामकृष्ण (हरि बाबू से)—तुम क्या काम करते हो ?

मास्टर ने उनकी ओर से कहा—ऐसा कुछ नही करते, अपने माता-पिता, भाई-बहिन आदि की बडी सेवा करते हैं ।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—यह क्या है ! तुम तो 'कुम्हडा काटनेवाले जेठजी' बने ! तुम न ससारी हुए, न तो हरि भक्त । यह अच्छा नही । किसी-किसी परिवार में एक पुरुष होता है, जो रात-दिन लडके-लडकियो से घिरा रहता है । वह बाहरवाले कमरे में बैठकर खाली तम्बाकू पिया करता है । निकम्मा ही बैठा रहता है । हाँ, कभी-कभी अन्दर जाकर कुम्हडा काट देता है ! स्त्रियों के लिए कुम्हड़ा काटना मना है । इसीलिए वे

लडको से कहती हैं, 'जेठजी को यहाँ बुला लाओ, वे कुम्हडा काट देंगे ।' तब वह कुम्हडे के दो टुकडे कर देता है । बस, यही तक मर्द का व्यवहार है । इसीलिए उसका नाम 'कुम्हडा काटने-वाले जेठजी' पडा है ।

"तुम यह भी करो, वह भी करो । ईश्वर के चरणकमलो में मन रखकर ससार का काम-काज करो । और जब अकेले रहोगे, तब भक्तिशास्त्र पढोगे—जैसे श्रीमद्भागवत, या चैतन्य-चरितामृत आदि ।"

रात के लगभग दस बजे हैं । अभी काली-मन्दिर बन्द नही हुआ है । मास्टर ने जाकर पहले राधाकान्त के मन्दिर में और फिर काली माता के मन्दिर में प्रणाम किया । चाँद निकला था । श्रावण की कृष्ण द्वितीया थी । आँगन और मन्दिरो के शीर्ष बडे सुन्दर दिखते थे ।

श्रीरामकृष्ण के कमरे में लौटकर मास्टर ने देखा कि वे भोजन करने बैठे हैं । वे दक्षिण की ओर मुँह करके बैठे । थोडा सूजी का पायस और एक-दो पतली पूडियाँ—बस यही भोजन था । थोडी देर बाद मास्टर और उनके मित्र ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके विदा ली । वे उसी दिन कलकत्ते लौटना चाहते थे ।

(९)

समाधिमग्न श्रीरामकृष्ण तथा जगन्माता के साथ उनका वार्तालाप

एक दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के दक्षिणपूर्व वाले बरामदे की सीढी पर बैठे हैं । साथ में राखाल, मास्टर

तथा हाजरा हैं। श्रीरामकृष्ण हँसी-हँसी में बचपन की अनेक बातें कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हैं। सायकाल हुआ। अपने कमरे में छोटे तख्त पर बैठे जगन्माता के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। कह रहे हैं, "माँ, तू इतना कष्ट क्यों उठाती है? माँ, क्या मैं वहाँ पर जाऊँ? यदि तू ले जायगी तो जाऊँगा।"

श्रीरामकृष्ण का किसी भक्त के घर पर जाना तय हुआ था। क्या वे इसीलिए जगन्माता की आज्ञा के लिए इस प्रकार कह रहे हैं?

जगन्माता के साथ श्रीरामकृष्ण फिर वार्तालाप कर रहे हैं। सम्भव है अब किसी अन्तरग भक्त के लिए वे प्रार्थना कर रहे हैं। कह रहे हैं,—"माँ, उसे शुद्ध बना दो। अच्छा माँ, उसे एक कला क्यों दी?"

श्रीरामकृष्ण अब चुप हैं। फिर कह रहे हैं, "ओफ्! समझा। इसी से तेरा काम होगा।" सोलह कलाओं में से एक कला शक्ति द्वारा तेरा काम अर्थात् लोकशिक्षा होगी,—क्या श्रीराम-कृष्ण यही बात कह रहे हैं?

अब भाव-विभोर स्थिति में मास्टर आदि से आद्याशक्ति तथा अवतार-तत्त्व के सम्बन्ध में कह रहे हैं।

"जो ब्रह्म है, वही शक्ति है। उन्हें ही माँ कहकर पुकारता हूँ।"

"जब वे निष्क्रिय रहते हैं तब उन्हें ब्रह्म कहते हैं, और जब वे सृष्टि, स्थिति, सहार कार्य करते हैं, तब उन्हें शक्ति कहते हैं। जिस प्रकार स्थिर जल और हिलना-डुलना जल। शक्ति की लीला से ही अवतार होते हैं। अवतार प्रेम-भक्ति सिखाने

आते हैं। अवतार मानो गाय का स्तन है। दूध स्तन से ही मिलता है। मनुष्य रूप में वे अवतीर्ण होते हैं।"

कोई-कोई भक्त सोच रहे हैं, क्या श्रीरामकृष्ण अवतारी पुरुष हैं, जैसे श्रीकृष्ण, चैतन्यदेव, ईसा ?

परिच्छेद २८

गुरु-शिष्य संवाद—गुह्य कथा

(१)

ब्रह्मज्ञान और अभेद बुद्धि। अवतार क्यों होते हैं

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में उस छोटे तख्त पर बैठे मणि से गुह्य बातें कर रहे हैं। मणि जमीन पर बैठे हैं। आज शुक्रवार, ७ सितम्बर १८८३ ई० है। भाद्र की शुक्ला षष्ठी तिथि है। रात के लगभग साढे सात बजे हैं।

श्रीरामकृष्ण—उस दिन कलकत्ते गया। गाडी पर जाते-जाते देखा, सभी निम्न-दृष्टि हैं। सभी को अपने पेट की चिन्ता लगी हुई थी। सभी अपना पेट पालने के लिए दौड रहे थे। सभी का मन कामिनी-काचन पर था। हाँ, दो-एक को देखा कि वे ऊर्ध्व-दृष्टि हैं—ईश्वर की ओर उनका मन है।

मणि—आजकल पेट की चिन्ता और भी बढ गयी है। अंग्रेजों का अनुकरण करने में लगे हुए लोगों का मन विलास की ओर मुड गया है। इसीलिए अभावों की वृद्धि हुई है।

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर के विषय में उनका कैसा मत है?

मणि—वे निराकारवादी हैं।

श्रीरामकृष्ण—हमारे यहाँ भी वह मत है।

थोडी देर तक दोनों चुप रहे। अब श्रीरामकृष्ण अपनी ब्रह्म-ज्ञानदशा का वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—मैंने एक दिन देखा कि एक ही चैतन्य सर्वत्र है—कहीं भेद नहीं है। पहले (ईश्वर ने) दिखाया कि बहुत से

मनुष्य और जानवर हैं—उनमें बाबू लोग हैं, अँग्रेज और मुसलमान हैं, मैं स्वयं हूँ, मेहतर है, कुत्ता है, फिर एक दाढीवाला मुसलमान है—उसके हाथ में एक छोटी थाली है, जिसमे भात है। उस छोटी थाली का भात वह सबके मुँह में थोडा-थोडा दे गया। मैने भी थोडासा चखा।

"एक दूसरे दिन दिखाया कि विष्ठा-मूत्र, अन्न-व्यजन, तरह्-तरह् की खाने की चीजे पडी हुई हैं। एकाएक भीतर मे जीवात्मा ने निकलकर आग की लौ की तरह् सब चीजो को चखा,—मानो जीभ हिलाते हुए सभी चीजो का एक बार स्वाद ले लिया, विष्ठा, मूत्र, सब कुछ चखा। इससे (ईश्वर ने) दिखा दिया कि सब एक है—अभेद है।

"फिर एक बार दिखाया कि यहाँ के * अनेक भक्त हैं—पार्षद—अपने जन। ज्योही आरती का शख और घटा बज उठता, मैं कोठी की छत पर चढकर व्याकुल हो चिल्लाकर कहता, 'अरे, तुम लोग कौन कहाँ हो? आओ, तुम्हे देखने के लिए मेरे प्राण छटपटा रहे हैं।'

"अच्छा, मेरे इन दर्शनो के बारे में तुम्हे क्या मालूम होता है?"

मणि—आप ईश्वर के विलास का स्थान हैं। मैने यही

---

* गुरुभाव से श्रीरामकृष्ण अपने लिए 'मैं' या 'हम' शब्द का प्रयोग साधारण दशा में कदाचित् करते थे। किसी और ढग से वह भाव वे सूचित करते थे। जैसे—'मेरे पास' न कहकर 'यहाँ' कहते थे। 'मेरा' न कहकर 'यहाँ का' अथवा अपना शरीर दिखाकर 'इसका' कहते थे। हाँ, जगन्माता के सन्तान-भाव से वे 'मैं' या 'हम' शब्द का व्यवहार करते थे। भावावस्था में गुरुभाव के अर्थ में भी इन शब्दों का प्रयोग वे करते थे।

समझा है कि आप यन्त्र हैं और वे यन्त्री (चलाने वाले) हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, हाजरा कहता है कि ईश्वर के दर्शन के बाद षडैश्वर्य मिलते हैं।

मणि—जो शुद्धा भक्ति चाहते हैं वे ईश्वर के ऐश्वर्य की इच्छा नहीं करते।

श्रीरामकृष्ण—शायद हाजरा पूर्वजन्म में गरीब था, इसीलिए उसे ऐश्वर्य देखने की उतनी तीव्र इच्छा है।

हाल में हाजरा ने कहा है—'क्या मैं रसोइया ब्राह्मणों से बातचीत करता हूँ!' फिर कहता है—'मैं खजाची से कहकर तुम्हें वे सब चीजें दिला दूंगा!' (मणि का उच्च हास्य)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—वह ये सब बातें कहता रहता है और मैं चुप रह जाता हूँ।

मणि—आप तो बहुत बार कह चुके हैं कि शुद्ध भक्त ऐश्वर्य देखना नहीं चाहता। वह ईश्वर को गोपाल-रूप में देखना चाहता है। पहले ईश्वर चुम्बक-पत्थर और भक्त सुई होते हैं,. फिर तो भक्त ही चुम्बक पत्थर और ईश्वर सुई बन जाते हैं। अर्थात् भक्त के पास ईश्वर छोटे हो जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण—जैसे ठीक उदय के समय का सूर्य। अनायास ही देखा जा सकता है, वह आँखों को झुलसाता नहीं, बल्कि उनको तृप्त कर देता है। भक्त के लिए भगवान् का भाव कोमल हो जाता है—वे अपना ऐश्वर्य छोड भक्त के पास आ जाते हैं।

फिर दोनों चुप रहे।

मणि—मैं सोचता हूँ, क्यों ये दर्शन सत्य नहीं होंगे? यदि ये मिथ्या हुए तो यह संसार और भी मिथ्या ठहरा, क्योंकि देखने का साधन, मन तो एक ही है। फिर वे दर्शन शुद्ध मन में होते

हैं और सासारिक पदार्थ इसी अशुद्ध मन से देखे जाते हैं ।

श्रीरामकृष्ण—इस वार देखता हूँ कि तुम्हे खूब अनित्य का बोध हुआ है । अच्छा, कहो, हाजरा कैसा है ?

मणि—वह है एक तरह का आदमी । (श्रीरामकृष्ण हँसे)

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, मुझसे तथा किसी और से कुछ मिलना-जुलना है ?

मणि—जी नहीं ।

श्रीरामकृष्ण—किसी परमहस से ?

मणि—जी नहीं । आपकी तुलना नहीं है ।

श्रीरामकृष्ण—तुमने 'अनचीन्हा पेड' सुना है ?

मणि—जी नहीं ।

श्रीरामकृष्ण—वह है एक प्रकार का पेड जिसे कोई देखकर पहचान नहीं सकता ।

मणि—जी, आपको भी पहचानना कठिन है । आपको जो जितना समझेगा वह उतना ही उन्नत होगा ।

(२)

सच्ची चालाकी कौनसी है ?

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिरवाले अपने कमरे में प्रसन्नतापूर्वक बैठे हुए भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं । आपका भोजन हो चुका है, दिन के एक या दो बजे होंगे ।

आज रविवार है, ९ सितम्बर, १८८३, भादो की शुक्ला सप्तमी । कमरे में राखाल, मास्टर और रतन आकर बैठे । श्रीयुत रामलाल, राम चटर्जी और हाजरा भी एक-एक करके आये और उन्होंने आसन ग्रहण किया । रतन श्रीयुत यदु मल्लिक के बगीचे के सरक्षक और परिदर्शक हैं । श्रीरामकृष्ण की भक्ति

करते हैं, कभी-कभी उनके दर्शन कर जाया करते हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हीं से बातचीत कर रहे हैं। रतन कह रहे हैं, यदु मल्लिक के कलकत्ते वाले मकान में 'नीलकण्ठ' का नाटक होगा।

रतन—आपको जाना होगा। उन लोगों ने कहला भेजा है, अमुक दिन नाटक होगा।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा है, मेरी भी जाने की इच्छा है। अहा! नीलकण्ठ कैसे भक्तिपूर्वक गाता है!

एक भक्त—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—गाना गाते हुए वह आँसुओं से तर हो जाता है। (रतन से) सोचता हूँ, रात को वहीं रह जाऊँगा।

रतन—अच्छा तो है।

राम चटर्जी आदि ने खड़ाऊ की चोरीवाली बात पूछी।

रतन—यदु बाबू के गृहदेवता की खड़ाऊ चोरी गयी है। इसके कारण घर में बड़ा हो-हल्ला मचा हुआ है। थाली चलायी जायगी (एक तरह का टोना)। सब बैठे रहेंगे, जिसने लिया है, उसकी ओर थाली चली जायगी!

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए)—किस तरह थाली चलती है?—अपने आप चलती है?

रतन—नहीं, हाथ में दबायी हुई रहती है।

भक्त—हाथ ही की कोई कारीगरी होगी—हाथ की चालाकी।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—जिस चालाकी से लोग ईश्वर को पाते हैं, वही चालाकी चालाकी है।

(३)

तान्त्रिक साधना और श्रीरामकृष्ण का सन्तान-भाव

बातचीत हो रही है, इसी समय कुछ बंगाली सज्जन कमरे

में आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उन्होंने आसन ग्रहण किया। उनमें एक व्यक्ति श्रीरामकृष्ण के पहले के परिचित मित्र हैं। ये लोग तन्त्र के मत से साधना करते हैं—पंच-मकार साधन। श्रीरामकृष्ण अन्तर्यामी हैं, उनका सम्पूर्ण भाव समझ गये। उनमें एक आदमी धर्म के नाम से पापाचरण भी करता है, यह बात श्रीरामकृष्ण सुन चुके हैं। उसने किसी बड़े आदमी के भाई की विधवा के साथ अवैध प्रेम कर लिया है और धर्म का नाम लेकर उसके साथ पंच-मकार की साधना करता है, यह भी श्रीरामकृष्ण सुन चुके हैं।

श्रीरामकृष्ण का सन्तान-भाव है। वे हरएक नारी को माता समझते हैं—वेश्या को भी, और स्त्रियों को भगवती का एक एक रूप समझते हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—अचलानन्द कहाँ है? (मास्टर आदि से) अचलानन्द और उसके शिष्यों का और ही भाव है। मेरा सन्तान-भाव है।

आये हुए बाबू लोग चुपचाप बैठे हुए है, कुछ बोलते नहीं।

श्रीरामकृष्ण—मेरा सन्तान-भाव है। अचलानन्द यहाँ आकर कभी-कभी रहता था। खूब शराब पीता था। मेरा सन्तान-भाव है, यह सुनकर अन्त में उसने हठ पकड़ा। कहने लगा—'स्त्री को लेकर वीरभाव की साधना तुम क्यों नहीं मानोगे? शिव की रेख भी नहीं मानोगे? शिव-तन्त्र में लिखा है। उसमें सब भावों की साधना है, वीरभाव की भी है।'

"मैंने कहा,—मैं क्या जानूँ जी। मुझे वह सब अच्छा नहीं लगता—मेरा सन्तान-भाव है।

"अचलानन्द अपने बच्चों की खबर नहीं लेता था। मुझसे

चहता था, 'बच्चों को ईश्वर देखेंगे,—यह सब ईश्वर की इच्छा है।' मैं सुनकर चुप हो जाता था। बात यह है कि लड़कों की देख-रेख कौन करे? लड़के-वाले, घर-द्वार यह सब छोड़ा तो इससे रुपये कमाने का साधन भी तो निकालना चाहिए, क्योंकि, लोग सोचेंगे, इसने तो सब कुछ त्याग कर दिया है, और इस तरह बहुत सा धन देने लगेंगे।

'मुकदमा जीतूँगा, खूब धन होगा, मुकदमा जिता दूँगा, जायदाद दिला दूँगा, क्या इसीलिए साधना है? ये सब बड़ी ही नीच प्रकृति की बातें हैं।

"रुपये से भोजन-पान होता है, रहने की जगह होती है, देवताओं की सेवा होती है, साधुओं का सत्कार होता है, सामने कोई गरीब आ गया तो उसका उपकार हो जाता है, ये सब सदुपयोग रुपये से होते हैं, परन्तु रुपये ऐश्वर्य का भोग करने के लिए नहीं हैं, न देह-सुख के लिए हैं, न लोक-सम्मान के लिए।

"विभूतियों के लिए लोग तन्त्र के मत से पंच-मकार की साधना करते हैं। परन्तु उनकी बुद्धि कितनी हीन है! कृष्ण ने अर्जुन से कहा है—'भाई! अष्ट सिद्धियों में किसी एक के रहने पर तुम्हारी शक्ति तो बढ़ सकती है, परन्तु तुम मुझे न पाओगे।' विभूति के रहते माया दूर नहीं होती। माया से फिर अहंकार होता है।

"शरीर, रुपया, यह सब अनित्य है। इसके लिए इतना हठ क्यों? हठयोगियों की दशा देखो न? शरीर किसी तरह दीर्घायु हो, बस इसी ओर ध्यान लगा रहता है। ईश्वर की ओर लक्ष्य नहीं है। नेति-धौति, बस पेट साफ कर रहे हैं! नल लगाकर दूध ग्रहण कर रहे हैं।

"एक सोनार था। उसकी जीभ उलटकर तालू पर चढ गयी थी। तब जड-समाधि की तरह उसकी अवस्था हो गयी।—फिर वह हिलता-डुलता न था। बहुत दिनो तक उसी अवस्था में रहा। लोग आकर उसकी पूजा करते थे। कई साल बाद एकाएक उसकी जीभ सीधी हो गयी। तब उसे पहले की तरह चेतना हो गयी। फिर वही सोनार का काम करने लगा! (सब हँसते हैं)

"वे सब शरीर के कर्म हैं। उससे प्राय ईश्वर के साथ कोई सम्बन्ध नही रहता। शालग्राम का भाई—(उसका लडका बनलोचन का व्यवसाय करता था)—बयासी तरह के आसन जानता था। वह योग-समाधि की भी बहुत सी बाते कहता था। परन्तु भीतर ही भीतर उसका कामिनी और कांचन में मन था। दीवान मदन भट्ट की कितनी हजार रुपयो की एक नोट पडी थी, रुपयों की लालच से वह निगल गया। बाद मे फिर किसी तरह निकाल लेना। परन्तु नोट उससे वसूल हो गयी। अन्त में तीन साल के लिए वह जेल भेजा गया! मै सरल भाव से सोचता था, शायद उसकी आध्यात्मिक उन्नति बहुत हो चुकी है, सच कहता हूँ—राम-दुहाई।

श्रीरामकृष्ण तथा कामिनी-कांचन

"यहाँ सीती का महेन्द्र पाल पाँच रुपये दे गया था, रामलाल के पास। उसके चले जाने के बाद रामलाल ने मुझसे कहा। मैंने पूछा, क्यो दिया, रामलाल ने कहा, यहाँ के खर्च के लिए दिया है। तब याद आया, दूधवाले को कुछ देना है, हो न हो, इन्ही रुपयो से कुछ दे दिया जाय। परन्तु यह क्या आश्चर्य! मैं रात को सोया हुआ था, एकाएक छाती के भीतर बिल्ली को

तरह जैसे कोई खरोचने लगा। तब रामलाल के पास जाकर मैंने कहा, किसे दिया है?—तेरी चाची को? रामलाल ने कहा, नहीं, आपके लिए। तब मैंने कहा, नहीं, रुपये जाकर अभी वापस दे आ, नहीं तो मुझे शान्ति न होगी।

"रामलाल सुबह को उठकर जब रुपये वापस दे आया, तब तबीयत ठीक हुई।

"उस देश की भगवतिया तेलिन कर्ता-भजा दल की है। वे सब औरत लेकर साधना किया करते हैं। एक पुरुष के हुए बिना स्त्री की साधना होगी ही नहीं। उस पुरुष को 'रागकृष्ण' कहते हैं। तीन बार स्त्री से पूछा जाता है, तूने कृष्ण को पाया? वह स्त्री तीनों बार कहती है, पाया।

"भगवतिया शूद्र है, तेलिन है, परन्तु सब उसके पास जाकर उसके पैरों की धूल लेते थे, उसे नमस्कार करते थे। तब जमींदार को इस पर बड़ा क्रोध आ गया। मैं उसे दिखाता हूँ तमाशा, यह कहकर उसने उसके पास एक बदमाश भेज दिया। उससे वह फँस गयी और उसके लड़का हुआ।

"एक दिन बड़ा आदमी आया था। मुझसे कहा, महाराज, इस मुकदमे में ऐसा कर दीजिये कि मैं जीत जाऊँ। आपका नाम सुनकर आया हूँ। मैंने कहा, भाई, वह मैं नहीं हूँ। तुम्हारी भूल हुई। वह अचलानन्द है।

"ईश्वर पर जिसकी सच्ची भक्ति है, वह शरीर, रुपया आदि की थोड़ी भी परवाह नहीं करता। वह सोचता है, देह-सुख के लिए, लोक-सम्मान के लिए, रुपयों के लिए, क्या जप और तप करूँ? ये सब अनित्य हैं, चार दिन के लिए हैं।"

आये हुए सब बाबू लोग उठे। नमस्कार करके कहा, तो

हम चले। वे चले गये। श्रीरामकृष्ण मुसकरा रहे हैं और मास्टर से कह रहे हैं—"चोर धर्म की बात नहीं सुनते।" (सब हँसते हैं)

(४)

विश्वास चाहिए

श्रीरामकृष्ण (मणि से सहास्य)—अच्छा, नरेन्द्र कैसा है ?

मणि—जी, बहुत अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण—देखो, उसकी जैसी विद्या है, वैसी ही बुद्धि भी है। और गाना-बजाना भी जानता है। इधर जितेन्द्रिय भी है, कहता है, विवाह न करूँगा।

मणि—आपने कहा है, जो पाप-पाप सोचता रहता है, वह पापी हो जाता है, फिर वह उठ नहीं सकता। मैं ईश्वर की सन्तान हूँ, यह विश्वास यदि हुआ तो बहुत शीघ्रता से उन्नति होती है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, विश्वास चाहिए।

"कृष्णकिशोर का कैसा विश्वास है! कहता था, 'मैं एक बार उनका नाम ले चुका, अब पाप कहाँ रह गया? मैं शुद्ध और निर्मल हो गया हूँ।' हलधारी ने कहा था, 'अजामिल फिर नारायण की तपस्या करने गया था, तपस्या न करने पर भी क्या उनकी कृपा होती है?—केवल एक बार नारायण कहने से क्या होगा?' यह बात सुनकर कृष्णकिशोर को इतना क्रोध आया कि बगीचे में फूल तोडने आया था—उसने हलधारी की ओर फिर एक दृष्टि भी नहीं फेरी।

"हलधारी का बाप बडा भक्त था। स्नान करते हुए कमर भर पानी में जब वह मन्त्र पढ़ता था,—'रक्तवर्ण चतुर्मुखम्'

और जब वह ध्यान करता था, तब आँखो से अनर्गल प्रेमाश्रु वह चलते थे ।

"एक दिन एँडेदा के घाट पर एक साधु आया । बात हुई, हम लोग भी देखने जायँगे । हलधारी ने कहा, उस पचभूतो के गिलाफ को देखकर क्या होगा ? इसके बाद कृष्णकिशोर ने यह बात सुनकर कहा, क्या, साधु के दर्शन से क्या होगा ? ऐसी बात भी तुम्हारे मुँह से निकली ! जो लोग कृष्ण का नाम लेते है या राम नाम का जप करते हैं, उनकी चिन्मय देह होती है और वे सब चिन्मय देखते हैं---'चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम !' उसने कहा था, एक बार कृष्ण या राम का नाम लेने पर सौ बार के सन्ध्या करने का फल होता है । जब उसके एक लडके की मृत्यु होने लगी तब मरते समय राम का नाम लेकर उसने देह छोडी थी । कृष्णकिशोर कहता था, उसने राम का नाम लिया है, उसे अब क्या चिन्ता है ? परन्तु कभी-कभी रो पडता था । पुत्र का शोक !

"वृन्दावन में प्यास लगी थी । मोची से उसने कहा, तू शिव का नाम ले । उसने शिव का नाम लेकर पानी भर दिया—उस तरह का आचारी ब्राह्मण होकर भी उसने वह पानी पी लिया ! कितना बडा विश्वास है !

"विश्वास नहीं है, और पूजा, जप, सन्ध्यादि कर्म करता है, इसमें कुछ नहीं होगा ! क्यों जी ?"

मास्टर—जी हाँ ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—गगा के घाट में नहाने के लिए लोग आते हैं । मैंने देखा है, उस समय दुनिया भर की बाते करते हैं । किसी की विधवा बुआ कह रही हैं---"बहू, मेरे बिना

रहे दुर्गा-पूजा नही होती । मैं न रहूँ तो 'श्री' मूर्ति भी सुडौल न हो ! घर में काम-काज हुआ तो सब काम मुझ ही करना पडता है, नही तो अधूरा रह जाय । फूल-शय्या का बन्दोबस्त, कत्थे के बगीचे की तैयारी (ये सब बगाल के विवाह के लोकाचार हैं), सब मैं ही करती हूँ ।"

मणि—जी, इनका भी क्या दोष—क्या लेकर रहे !

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—छत पर ठाकुरजी के रहने का घर बनाया है । नारायण की पूजा होती है । पूजा का नैवेद्य, चन्दन यह सब तैयार किया जा रहा है, परन्तु ईश्वर की बात कही एक भी नही होती । क्या पकाना चाहिए,—आज बाजार में कोई अच्छी चीज नही मिली,—कल अमुक व्यजन अच्छा बना था, वह लडका मेरा चचेरा भाई है,—क्या रे तेरी वह नौकरी है न? —और मैं अब कैसी हूँ !—मेरा हरि चल बसा ! बस यही सब बात होनी हैं !

"देखो भला, ठाकुरजी की पूजा के समय ये सब दुनिया भर की बात !"

मणि—जी, अधिक सख्या ऐसे ही लोगों की है । आप जैसा कहते हैं, ईश्वर पर जिसका अनुराग है, उसे अधिक दिनो तक पूजा और सन्ध्या थोडे ही करनी पडती है ?

(५)

चिन्मय रूप । ज्ञान और विज्ञान । 'ईश्वर ही वस्तु है'

श्रीरामकृष्ण एकान्त में मणि के साथ वातचीत कर रहे हैं ।

मणि—अच्छा, वही अगर सब कुछ हुए है, तो इस तरह के अनेक भाव क्यो दीख पडते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—विभु के स्वरूप से वे सर्वभूतो में है, परन्तु

शक्ति की विशेषता है। कहीं तो उनकी विद्या-शक्ति है और कहीं अविद्याशक्ति, कहीं ज्यादा है और कहीं कम शक्ति। देखो न, आदमियों के भीतर ठग-चोर भी हैं और बाघ जैसे भयानक प्रकृति वाले भी हैं। मैं कहता हूँ, ठग-नारायण हैं, बाघ-नारायण हैं।

मणि (सहास्य)—जी, उन्हें तो दूर ही से नमस्कार किया जाता है। बाघ-नारायण के पास जाकर अगर कोई उन्हें भर बाँह भेंटने लगे, तब तो वे उसे कलेवा ही कर जायें।

श्रीरामकृष्ण—वे और उनकी शक्ति,—ब्रह्म और शक्ति—इसके सिवाय और कुछ नहीं है। नारद ने रामचन्द्रजी से स्तव करते हुए कहा—हे राम, शिव तुम्हीं हो, सीता भगवती हैं, तुम ब्रह्मा हो, सीता ब्रह्माणी हैं, तुम इन्द्र हो, सीता इन्द्राणी हैं, तुम नारायण हो, सीता लक्ष्मी, पुरुषवाचक जो कुछ है, सब तुम्हीं हो, स्त्री-वाचक जो कुछ है, सब सीता।

मणि—और चिन्मय रूप ?

श्रीरामकृष्ण कुछ देर विचार करने लगे। फिर धीमे स्वर में कहा, "ठीक किस तरह बताऊँ—जैसे पानी का . । ये सब बातें साधना करने पर समझ में आती हैं।

"रूप पर विश्वास करना। जब ब्रह्मज्ञान होता है, अभेदता तब होती है। ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। अग्नि को सोचने पर साथ ही उसकी दाहिका शक्ति को भी सोचना पड़ता है, जैसे दूध और दूध की धवलता, जल और उसकी हिम-शक्ति।

"परन्तु ब्रह्मज्ञान के बाद भी अवस्था है। ज्ञान के बाद विज्ञान है। जिसे ज्ञान है, जिसे बोध हो गया, उसमें अज्ञान भी है। शत पुत्रों के शोक से वशिष्ठ को भी रोना पड़ा था। लक्ष्मण के पूछने

पर राम ने कहा, भाई, ज्ञान और अज्ञान के पार जाओ, जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है । पैर में अगर काँटा चुभ जाय, तो एक दूसरा काँटा लेकर वह निकाल दिया जाता है, फिर उसके साथ दूसरा काँटा भी फेंक दिया जाता है ।

मणि—क्या अज्ञान और ज्ञान दोनों फेंक दिये जाते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, **इसीलिए विज्ञान की आवश्यकता है ।**

"देखो न, जिसे उजाले का ज्ञान है, उसे अँधेरे का भी है, जिसे सुख का बोध है, उसे दुःख का भी है, जिसे पुण्य का विचार है, उसे पाप का भी है, जिसे भले का स्मरण है, उसे बुरे का भी है, जिसे शुचिता का अनुभव है, उसे अशुचिता का भी है, जिसे 'अहं' का ध्यान है, उसे 'तुम' का भी है !

"विज्ञान—अर्थात् उन्हें विशेष रूप से जानना । लकड़ी में आग है, इस बोध—इस विश्वास का नाम है **ज्ञान**, और उस आग से खाना पकाना, खाना खाकर हृष्ट-पुष्ट होना, इसका नाम है **विज्ञान** । ईश्वर हैं, इसका एक आभास मात्र जिसे मिला है, उसके उस आभास का नाम है **ज्ञान** और उनके साथ वार्तालाप, उन्हें लेकर आनन्द करना—चाहे जिस भाव से हो, दास्य या सख्य या वात्सल्य या मधुर से—इसका नाम है **विज्ञान** । जीव और यह प्रपंच वे ही हुए हैं, इसके दर्शन करने का नाम है **विज्ञान** । एक विशेष मत के अनुसार कहा जाता है कि दर्शन हो नहीं सकते, कौन किसके दर्शन करे ? वह तो अपने ही स्वरूप के दर्शन करता है । काले पानी में जहाज जब चला जाता है, तब लौट नहीं सकता, लौटकर खबर नहीं दे सकता ।"

मणि—जैसा आप कहते हैं, मानूमेण्ट के ऊपर चढ जाने पर फिर नीचे की खबर नहीं रहती कि गाड़ी, घोड़े, मेम, साहब,

घरद्वार, दूकानें, आफिस कहाँ हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, आजकल कालीमन्दिर में नहीं जाया करता, कुछ अपराध तो न होगा ?—नरेन्द्र कहता था, ये अब भी काली-मन्दिर जाया करते हैं ?

मणि—जी, आपकी नयी-नयी अवस्थाएँ हुआ करती हैं! आपका भला अपराध क्या है!

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, हृदय के लिए उन लोगों ने सेन से कहा था,—'हृदय बहुत बीमार है, उसके लिए आप दो धोतियाँ और दो कपडे लेते आइयेगा, हम लोग उसके पास भेज देंगे।' सेन बस दो ही रुपये लाया! यह भला क्या है? इतना धन है और यह दान! कहो जी—

मणि—जी मेरी समझ में तो यह आता है कि जिसे ईश्वर की जिज्ञासा है—ज्ञानलाभ जिसका उद्देश्य है, वह कभी ऐसा नहीं कर सकता, उसका दान कभी इस तरह का नहीं हो सकता।

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु।

परिच्छेद २९

ईशान आदि भक्तों के संग में

(१)

बालक का विश्वास; अछूत जाति और शंकराचार्य, साधु का हृदय

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ते में अधर के मकान पर शुभागमन किया है। श्रीरामकृष्ण अधर के बैठक-घर मे बैठे हैं। दिन के तीसरे पहर का समय है। राखाल, अधर, मास्टर, ईशान आदि तथा अनेक पडोसी भी उपस्थित हैं।

श्री ईशानचन्द्र मुखोपाध्याय को श्रीरामकृष्ण प्यार करते थे। वे अकाउण्टेण्ट जनरल के आफिस में सुपरिण्टेण्डेन्ट थे। पेन्शन लेने के बाद वे दान-ध्यान, धर्म-कर्म करते रहते थे और बीच-बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते थे।

मछुआ बाजार स्ट्रीट में उनके मकान पर श्रीरामकृष्ण ने एक दिन आकर नरेन्द्र आदि भक्तो के साथ आहार किया था और लगभग पूरे दिन रहे थे। उस उपलक्ष्य में ईशान ने अनेक लोगो को भी आमन्त्रित किया था।

श्री नरेन्द्र आनेवाले थे, परन्तु आ न सके। ईशान पेन्शन लेने के बाद श्रीरामकृष्ण के पास दक्षिणेश्वर में सर्वदा जाया करते हैं, और भाटपाडा में गंगातट पर निर्जन में बीच-बीच में ईश्वरचिन्तन करते हैं। हाल ही में भाटपाड़ा में गायत्री का पुरश्चरण करने की इच्छा थी।

आज शनिवार, २२ सितम्बर १८८३ ई० है।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—अपनी वह कहानी कहो तो—बालक ने पत्र भेजा था।

ईशान (हँसकर)—एक बालक ने सुना कि ईश्वर ने हमें पैदा किया है। इसलिए उसने अपनी प्रार्थना जताने के लिए ईश्वर के नाम पर एक पत्र लिखकर लेटर बक्स में डाल दिया था : पता लिखा था—स्वर्ग ! (सभी हँसे)

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए)—देखा ! इसी बालक की तरह विश्वास चाहिए। * तब होता है। (ईशान के प्रति) और वह कर्मत्याग की कहानी सुनाओ तो।

ईशान—भगवान् की प्राप्ति होने पर सन्ध्या आदि कर्मों का त्याग हो जाता है। गंगा के तट पर सभी सन्ध्योपासना कर रहे हैं, एक व्यक्ति नहीं कर रहा है। उससे पूछने पर उसने कहा, "मुझे अशौच हुआ है, सन्ध्योपासना § करने की मनाई है। मृताशौच तथा जन्माशौच, दोनों ही हुए हैं। आकांक्षारूपी माता की मृत्यु हुई है, और आत्माराम का जन्म हुआ है।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा वह कहानी सुनाना,—जिसमें कहा है कि आत्मज्ञान होने पर जातिभेद नहीं रह जाता।

ईशान—वाराणसी में गंगा-स्नान करके शंकराचार्य घाट की

---

* "The kingdom of heaven is revealed unto babes but is hidden from the wise and the prudent."—Bible

§ मृता मोहमयी माता जातो बोधमयः सुतः।
सूतकद्वय संप्राप्तौ कथ सन्ध्यामुपास्महे।
हृदाकाशे चिदादित्यः सदा भासति भासति।
नास्तमेति न चोदेति कथं सन्ध्यामुपास्महे॥
—मैत्रेयी उपनिषद, द्वितीय अध्याय

सीढी पर चढ रहे थे—उस समय कुत्ता पालने वाले चाण्डाल को सामने बिलकुल पास ही देखकर बोले, "यह क्या, तूने मुझे छू लिया।" चाण्डाल बोला, "महाराज, तुमने भी मुझे नही छुआ और मैंने भी तुम्हे नही छुआ। आत्मा सभी के अन्तर्यामी और निर्लिप्त हैं, शराव में पडा हुआ सूर्य का प्रतिविम्ब और गगा-जल में पडा हुआ सूर्य का प्रतिविम्ब, क्या इन दोनो मे भेद है ?

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—और उस समन्वय की कथा कैसी है ? सभी मतो से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है।

ईशान (हँसकर)—हरि और हर मे एक ही धातु 'हृ' है, केवल प्रत्यय का भेद है। जो हरि हैं, वही हर हैं। विश्वास भर रहना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—अच्छा वह कहानी—साधु का हृदय सबसे बडा है।

ईशान (हँसकर)—सबसे बडी है पृथ्वी, उससे बडा है समुद्र, उससे बड़ा है आकाश। परन्तु भगवान् विष्णु ने एक पैर से स्वर्ग, मृत्यु, पाताल—त्रिभुवन सब पर अधिकार कर लिया था। पर उस विष्णु का पद साधु के हृदय में है। इसलिए साधु का हृदय सबसे बडा है।

इन सब बातो को सुनकर भक्तगण आनन्दित हो रहे हैं।

आद्या शक्ति की उपासना से ही ब्रह्म की उपासना—
ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं

ईशान भाटपाडा में गायत्री का पुरश्चरण करेंगे। गायत्री ब्रह्म-मन्त्र है। विषय-बुद्धि बिलकुल लुप्त हुए बिना ब्रह्मज्ञान नही होता, परन्तु कलियुग में अन्नगत प्राण है—विषय-बुद्धि छूटती नही। रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्श,—मन सदा इन विषयो को

लेकर रहता है। इसलिए श्रीरामकृष्ण कहते हैं, 'कलि में वेद का मत नही चलता।' जो ब्रह्म हैं, वे ही शक्ति हैं। शक्ति की उपासना करने से ही ब्रह्म की उपासना होती है। जिस समय वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते हैं, उस समय उन्हे शक्ति कहते हैं। दो अलग-अलग नहीं—एक ही हैं।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—क्यो 'नेति-नेति' करके भटक रहे हो। ब्रह्म के सम्बन्ध में कुछ भी नही कहा जा सकता है। केवल कहा जा सकता है, 'अस्ति मात्रम्', * केवल राम.।'

"हम जो कुछ देख रहे हैं, सोच रहे हैं, सभी उस आद्याशक्ति का, उस चित्शक्ति का ही ऐश्वर्य है—सृजन, पालन, संहार, जीव, जगत्—फिर ध्यान, ध्याता, भक्ति, प्रेम,—सब उन्ही का ऐश्वर्य है।

"परन्तु ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं। लंका से लौटने के बाद हनुमान ने राम की स्तुति की थी। कहा था, 'हे राम, तुम्ही परब्रह्म हो और सीता तुम्हारी शक्ति हैं, परन्तु तुम दोनो अभिन्न हो, जिस प्रकार सर्प और उसकी टेढी गति,—सांप जैसी गति की चिन्ता करने में सांप की चिन्ता करनी होगी, और सांप को सोचने में सांप की गति का भी चिन्तन हो जाता है। दूध का चिन्तन करने में दूध के रंग स्मरण अपने आप ही आ जाता है—धवलत्व, दूध की तरह सफेद अर्थात् धवलत्व सोचने में दूध का स्मरण लाना पडता है। जल की शीतलता का चिन्तन करते ही जल का स्मरण आता ही है और फिर जल के चिन्तन के साथ

* नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा।
अस्तीत्येवोपलब्धस्य तत्त्वभावः प्रसीदति।
—कठोपनिषद्

ही जल की शीतलता का भी चिन्तन करना पडता है ।

"इस आद्या-शक्ति या महामाया ने ब्रह्म को छिपा रखा है । आवरण हट जाते ही 'मैं जो था, वही बन गया ।' 'मैं ही तुम, तुम ही मैं हूँ ।'

"जब तक आवरण है, तब तक वेदान्तवादी का 'सोऽहम् अर्थात् मैं ही परब्रह्म हूँ'—यह बात नही चलती । जल की ही तरग है, तरग का जल नही कहलाता । जब तक आवरण है, तब तक माँ-माँ कहकर पुकारना अच्छा है । तुम माँ हो, मैं तुम्हारी सन्तान हूँ । तुम प्रभु हो, मैं तुम्हारा दास हूँ । **सेव्य-सेवक भाव अच्छा है** । इसी दासभाव से फिर सभी भाव आते हैं—शान्त, सख्य आदि । मालिक यदि नौकर से प्यार करता है, तो उसे बुलाकर कहता है, 'आ, मेरे पास बैठ, तू जो है, मैं भी वही हूँ,' परन्तु नौकर यदि अपनी इच्छा से मालिक के पास बैठने जाय तो क्या मालिक नाराज न होगे ?

अवतार-लीला । वेद, पुराण एव तन्त्रों का समन्वय

"अवतार-लीला—ये सब चित् शक्ति के ऐश्वर्य हैं । जो ब्रह्म हैं, वे ही फिर राम, कृष्ण तथा शिव हैं ।"

ईशान—हरि और हर, एक ही धातु है, केवल प्रत्यय का भेद है । (सभी हँस पडे)

श्रीरामकृष्ण—हाँ, एक के अतिरिक्त दो कुछ भी नहीं हैं । वेद में कहा है—**ॐ सच्चिदानन्द ब्रह्म**; पुराण मे कहा है—**ॐ सच्चिदानन्द कृष्ण**; और तन्त्र मे कहा है—**ॐ सच्चिदानन्द शिव** ।

"उस चित् शक्ति ने महामाया के रूप में सभी को अज्ञानी बना रखा है । अध्यात्म रामायण में है, राम का दर्शन करने के

लिए जितने ऋषि आये थे सभी एक बात कहते थे,—हे राम, अपनी भुवनमोहिनी माया द्वारा मुग्ध न करो।

ईशान—यह माया क्या है?

श्रीरामकृष्ण—जो कुछ देखते हो, सुनते हो, सोचते हो, सभी माया है। * एक बात में कहना हो तो, कामिनी-काचन ही माया का आवरण है।

"पान खाना, तम्बाकू पीना, तेल मालिश करना—इनमें दोष नहीं है, केवल इन्हीं का त्याग करने से क्या होगा? कामिनी-काचन के त्याग की आवश्यकता है। वही त्याग है। गृहस्थ लोग बीच-बीच में निर्जन स्थान में जाकर साधन-भजन कर भक्ति प्राप्त करके मन से त्याग करें। संन्यासी बाहर भीतर दोनों ओर से त्याग करें।

"केशव सेन से मैंने कहा था—'जिस कमरे में जल का घड़ा और इमली का अचार है, उसी कमरे में यदि सन्निपात का रोगी रहे तो भला वह कैसे अच्छा हो सकता है? बीच-बीच में निर्जन स्थान में जाना ही चाहिए।

एक भक्त—महाराज, नवविधान ब्राह्म-समाज किस प्रकार है—मानो खिचड़ी जैसा!

श्रीरामकृष्ण—कोई-कोई कहते हैं आधुनिक। मैं सोचता हूँ, क्या ब्राह्म-समाजवालों का ईश्वर दूसरा है? कहते हैं नवविधान, नया विधान होगा। जिस प्रकार छः दर्शन हैं, षड्दर्शन, उसी प्रकार एक और कुछ होगा।

"परन्तु निराकारवादियों की भूल क्या है जानते हो? भूल यह है कि वे कहते हैं, 'ईश्वर निराकार हैं, और बाकी सारे

---

* अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः—गीता, ५।१५

मत गलत हैं।'

"मैं जानता हूँ, वे साकार निराकार दोनो ही हैं, और भी कितने कुछ बन सकते हैं। वे सब कुछ बन सकते हैं।"

अछूतों म ईश्वर

(ईश्वर के प्रति) "वही चित् शक्ति, वही महामाया चौबीस तत्त्व बनी हुई है। मैं ध्यान कर रहा था, ध्यान करते-करते मन चला गया रसके के घर में। रसके मेहतर। मन से कहा, 'अरे, रह, वही पर रह।' माँ ने दिखा दिया, उसके घर मे जो सभी लोग घूम रहे हैं, वे बाहर का आवरण मात्र हैं, भीतर वही एक कुलकुण्डलिनी, एक षड्चक्र!

"वह आद्या शक्ति स्त्री है या पुरुष? मैंने उस देश (कामारपुकर) में देखा, लाहाओं के घर पर कालीपूजा हो रही है। माँ को जनेऊ दिया है। एक व्यक्ति ने पूछा, 'माँ को जनेऊ क्यों है?' जिसके घर में पूजा है उसने कहा, 'भाई, तूने माँ को ठीक पहचाना है, परन्तु मैं तो कुछ भी नही जानता कि माँ पुरुष है या स्त्री!'

"इस प्रकार कहा जाता है कि महामाया शिव को निगल गयी। माँ के भीतर षट्चक्र का ज्ञान होने पर शिव माँ के जाघ में से निकल आये। उस समय शिवतन्त्र बनाया गया।

"उस चित् शक्ति के, उस महामाया के शरणागत होना चाहिए।"

ईशान—आप कृपा कीजिये।

श्रीरामकृष्ण—सरल भाव से कहो, 'हे ईश्वर, दर्शन दो' और रोओ, और कहो, 'हे ईश्वर, कामिनी-काचन से मन को हटा दो।'

"और डुबकी लगाओ। ऊपर-ऊपर बहने से या तैरने से क्या रत्न मिलता है? डुबकी लगानी पड़ती है।

"गुरु से पता लेना चाहिए। एक व्यक्ति बाणलिंग शिव की खोज कर रहा था। किसी ने कह दिया, 'अमुक नदी के किनारे जाओ, वहाँ पर एक वृक्ष देखोगे, उस वृक्ष के पास एक भँवर है, वहाँ पर डुबकी लगानी होगी, तब बाणलिंग शिव मिलेगा। इसीलिए गुरु से पता जान लेना चाहिए।'

ईशान—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—सच्चिदानन्द ही गुरु के रूप में आते हैं। मनुष्य-गुरु से यदि कोई दीक्षा लेता है, तो उन्हें मनुष्य मानने से कुछ नहीं होगा। उन्हें साक्षात् ईश्वर मानना होगा, तब मन्त्र पर *विश्वास होगा। विश्वास होने पर ही सब कुछ हो जायगा। शूद्र* एकलव्य ने मिट्टी के द्रोणाचार्य बनाकर वन में बाण चलाना सीखा था। मिट्टी के द्रोण की पूजा करता था,—साक्षात् द्रोणाचार्य मानकर। इससे ही वह धनुर्विद्या में सिद्ध हो गया।

"और तुम ब्राह्मण-पण्डितों को लेकर विशेष झमेला न किया करो। उन्हें चिन्ता है दो पैसे पाने की।

"मैंने देखा है, ब्राह्मण स्वस्त्ययन करने आया है, समझता नहीं है, चण्डीपाठ कर रहा है या और कुछ कर रहा है। आधे पन्ने वैसे ही उलट जाते हैं। (सभी हँस पड़े)

"अपनी हत्या नाखून काटने की एक छोटी नहरनी से भी हो सकती है। दूसरे को मारने के लिए ढाल तलवार चाहिए। —शास्त्रग्रन्थादि का यही हेतु है।

"बहुत से शास्त्रों की भी कोई आवश्यकता नहीं है। यदि विवेक न हो तो केवल पाण्डित्य से कुछ नहीं होता, षट्शास्त्र

पढ़कर भी कुछ नहीं होता। निर्जन में, एकान्त में, गुप्त रूप से रो-रोकर उन्हें पुकारो, वे ही सब कुछ कर देंगे।"

श्रीरामकृष्ण ने सुना है, ईशान भाटपाड़ा में पुरश्चरण करने के लिए गंगा के तट पर कुटिया बना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (उत्सुक भाव से ईशान के प्रति)—हाँ जी, क्या कुटिया बन गयी ? क्या जानते हो, ये सब काम लोगों से जितने छिपे रहें, उतना ही अच्छा है। जो लोग सतोगुणी हैं, वे ध्यान करते हैं मन में, कोने में, वन में, कभी तो मच्छरदानी के भीतर ही बैठे ध्यान करते हैं।

हाजरा महाशय को ईशान बीच-बीच में भाटपाड़ा ले जाते हैं, हाजरा महाशय छूत धर्मी की तरह आचरण करते हैं। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें वैसा करने से मना किया था।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—और देखो, अधिक छूत धर्म ठीक नहीं। एक साधु को बड़ी प्यास लगी थी, भिश्ती जल लेकर जा रहा था, साधु को जल देना चाहा। साधु ने कहा, 'क्या तुम्हारी मशक साफ है ?' भिश्ती बोला, 'महाराज, मेरी मशक खूब साफ है, परन्तु आपकी मशक के भीतर मल-मूत्र आदि अनेक प्रकार के मैल हैं। इसलिए कहता हूँ, मेरी मशक से जल पीजिये, इससे दोष न लगेगा।' आपकी मशक अर्थात् आपकी देह, आपका पेट।

"और उनके नाम पर विश्वास रखो। तो फिर तीर्थ आदि की भी आवश्यकता न होगी।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर होकर गाना गा रहे हैं।

(गाना-भावार्थ)

"यदि काली-काली कहकर समय व्यतीत होना हो तो गया,

गंगा प्रभास, काशी, कांची आदि कौन चाहता है ? जो तीनों समय काली का नाम लेता है, वह क्या पूजा-सन्ध्या चाहता है ? सन्ध्या उसकी खोज में रहकर कभी पता नहीं पाती । काली नाम के इतने गुण हैं कि कौन उसका पार पा सकता है, जिसके गुणों को देवाधिदेव महादेव पंचमुखों से गाते हैं । दया, व्रत, दान आदि और किसी में भी मन नहीं जाता, मदन का यज्ञ-याग ब्रह्ममयी के पादपद्म में है ।"

ईशान सब सुनकर चुप होकर बैठे है ।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—और भी सन्देह हो तो पूछ लो ।

ईशान—जी आपने जो कहा है—विश्वास !

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ठीक विश्वास के द्वारा ही उन्हें प्राप्त किया जा सकता है । और ईश्वर विषयक सब बातों पर विश्वास करने पर और भी शीघ्र प्रगति होती है । गौ यदि चुन-चुन कर खाती है तो दूध कम देती है, सभी प्रकार के घास पत्ते खाने पर अधिक दूध देती है ।

"रामकृष्ण बनर्जी ने एक कहानी सुनायी थी कि एक व्यक्ति को आदेश हुआ कि इस भेड में ही तू अपना इष्ट जानना । उसने इसी पर विश्वास किया । सर्व भूतों में वे ही विराजमान हैं ।

"गुरु ने भक्त से कह दिया कि राम ही घट-घट में विराजमान हैं । भक्त का उसी समय विश्वास हो गया ! जब देखा एक कुत्ता मुँह में रोटी लेकर भाग रहा है, तो भक्त घी का पात्र हाथ में लेकर पीछे पीछे दौड़ रहा है और कह रहा है, राम, थोडा ठहरो, रोटी में घी तो लगा दूँ ।

"अहा ! कृष्णकिशोर का क्या ही विश्वास है ! कहा करता

था, 'ॐकृष्ण ॐराम' इस मन्त्र का उच्चारण करने पर करोडो सन्ध्या-वन्दन का फल होता है।

"फिर मुझे कृष्णकिशोर कान में कहा करता था, 'कहना नहीं किसी से, मुझे सन्ध्या-पूजा अच्छी नहीं लगती।'

"मुझे भी वैसा ही होता है। माँ दिखा देती हैं कि वे ही सब कुछ बनी हुई हैं। शौच के बाद मैदान से आ रहा हूँ पचवटी की ओर, देखता हूँ, साथ-साथ एक कुत्ता आ रहा है, तब पचवटी के पास आकर थोडी देर के लिए खडा रहता हूँ, सोचता हूँ शायद माँ इसके द्वारा कुछ कहलावे!

"इसलिए तुमने जो कहा, ठीक है कि विश्वास से ही सब कुछ मिलता है।"

ईशान—परन्तु हम तो गृहस्थाश्रम में हैं।

श्रीरामकृष्ण—क्या हानि है, उनकी कृपा होने पर असम्भव भी सम्भव हो जाता है। रामप्रसाद ने गाना गाया था, यह समार धोखे की टट्टी है। उसका उत्तर किसी दूसरे ने एक दूसरे गाने में दिया है,—

(सगीत—भावार्थ)

"यह ससार आनन्द की कुटिया है, मैं खाता पीता और आनन्द करता हूँ। जनक राजा बडे तेजस्वी थे, उन्हे किस बात की कमी थी, वे तो दोनो ओर दूध की कटोरियाँ रखकर आनन्द से दूध पीते थे।"

"परन्तु पहले निर्जन में गुप्त रूप से साधन-भजन करके ईश्वर को प्राप्त करने के बाद ससार में रहने से मनुष्य 'जनक राजा' बन सकता है। नहीं तो कैसे होगा?

"देखो न, कार्तिक, गणेश, लक्ष्मी, सरस्वती सभी विद्यमान हैं, परन्तु शिव कभी समाधिस्थ, तो कभी 'राम राम' कहते हुए नृत्य कर रहे हैं।"

परिच्छेद ३०

राम आदि भक्तों के संग में

(१)

नरेन्द्र के लिए श्रीरामकृष्ण की चिन्ता

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर मे भक्तो के साथ बैठे है। राखाल, मास्टर, राम, हाजरा आदि भक्तगण उपस्थित हैं। हाजरा महाशय बाहर के बरामदे मे बैठे हैं। आज रविवार, २३ सितम्बर, १८८३, भाद्रपदी कृष्णा सप्तमी है।

नित्यगोपाल, तारक आदि भक्तगण राम के घर पर रहते हैं। उन्होने उन्हे आदर-सत्कार के साथ रखा है।

राखाल बीच-बीच मे श्री अधर सेन के मकान पर जाया करते हैं। नित्यगोपाल सदा ही भाव में विभोर रहते हैं। तारक की भी स्थिति अन्तर्मुखी है। आजकल वे लोगो से विशेष वार्तालाप नही करते।

श्रीरामकृष्ण अब नरेन्द्र की बात कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण (एक भक्त के प्रति)—आजकल नरेन्द्र तुम्हे भी नही चाहता। (मास्टर के प्रति) अधर के घर पर नरेन्द्र नही आया ?

"एक साथ ही नरेन्द्र में कितने गुण हैं। गाने-बजाने मे, लिखने-पढने में, सभी मे प्रवीण है। उस दिन यहाँ से कप्तान की गाडी से जा रहा था। गाडी में कप्तान भी बैठे थे। उन्होने उससे अपने पास बैठने के लिए कितना कहा। पर नरेन्द्र अलग ही जाकर बैठा, कप्तान की ओर ताक कर देखा तक नही।

"केवल पाण्डित्य से क्या होगा ? साधन-भजन चाहिए, ईन्देश का गौरी पण्डित विद्वान् था और साधक भी। शक्ति-साधक। माँ के नाम में कभी-कभी पागल हो जाता था। बीच-बीच में कह उठता था, 'हा रे रे रे, निरालम्बे लम्बोदर जननि क यामि शरणम्।' उस समय सब पण्डित निष्प्रभ हो जाते थे। मैं भी भावाविष्ट हो जाता था।

"एक कर्ताभजा सम्प्रदाय के पण्डित ने निराकार की व्याख्या करते हुए कहा, 'निराकार अर्थात् नीर का आकार!' यह व्याख्या सुनकर गौरी बहुत क्रुद्ध हुआ।

"पहले पहल कट्टर शाक्त था, तुलसी का पत्ता दो लकड़ियों के सहारे उठाता था—छूता न था! (सभी हँसे) इसके बाद घर गया। घर से लौट आने के पश्चात् फिर वैसा नहीं करता था।

"मैंने काली-मन्दिर के सामने एक तुलसी का पौधा लगाया था। पर कुछ समय में वह सूख गया। कहते हैं, जहाँ पर बकरों की बलि होती है, वहाँ पर तुलसी नहीं रहती।

"गौरी सभी बातों की व्याख्या करता था। रावण के दस सिरों के बारे में कहता था, दस इन्द्रियाँ! तमोगुण को कुम्भकर्ण, रजोगुण को रावण और सतोगुण को विभीषण कहता था। इसी-लिए विभीषण ने राम प्राप्त किया था।"

श्रीरामकृष्ण मध्याह्न के भोजन के बाद थोड़ी देर विश्राम कर रहे हैं। कलकत्ते से राम, तारक (शिवानन्द) आदि भक्तगण आकर उपस्थित हुए। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर वे जमीन पर बैठ गये। मास्टर भी जमीन पर बैठे हैं। राम कह रहे हैं, '—प लोग मृदंग बजाना सीख रहे हैं।"

श्रीरामकृष्ण (राम के प्रति)—नित्यगोपाल ने भी कुछ सीखा है ?

राम—जी नही, वह कुछ ऐसा ही मामूली बजा सकता है।

श्रीरामकृष्ण—और तारक ?

राम—वह अच्छा बजा सकेगा।

श्रीरामकृष्ण—ठीक है, तो फिर वह अपना मुँह उतना नीचा किये न रहेगा। लेकिन किसी दूसरी ओर मन लगा देने पर फिर ईश्वर पर उतना नहीं रह जाता।

राम—मैं समझता हूँ, मैं जो सीख रहा हूँ, केवल संकीर्तन के लिए।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—सुना है तुमने गाना सीखा है ?

मास्टर (हँसकर)—जी नहीं, यों ही अँ आँ करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—तुम वह गाना जानते हो ? जानते हो तो गाओ न। 'आर काज नही ज्ञानविचारे, दे माँ पागल करे।'

"देखो, यही मेरा असली भाव है।"

हाजरा महाशय कभी-कभी किसी के सम्बन्ध में घृणा प्रकट करते थे।

श्रीरामकृष्ण (राम आदि भक्तों के प्रति)—कामारपुकुर में किसी मकान पर मैं अक्सर जाया करता था। उस घर के लड़के मेरी ही बराबरी के थे, वे लड़के उस दिन यहाँ आये थे और दो-तीन दिन रहे भी। हाजरा की तरह उनकी माँ सबसे घृणा करती थीं। अन्त मे उसके पैर में न जाने क्या हो गया। पैर सड़ने लगा। कमरे में सड़ने से इतनी दुर्गन्ध हुई कि लोग अन्दर तक नहीं जा सकते थे।

"इस बात की चर्चा मैंने हाजरा से भी की और उसे चेतावनी

दे दी कि किसी से घृणा-द्वेष न करो।"

दिन के चार बजे का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण मुंह-हाथ धोने के लिए झाऊतल्ला की ओर गये। उनके कमरे के दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में दरी बिछायी गयी। श्रीरामकृष्ण लौटकर उस पर बैठे। राम आदि उपस्थित हैं। श्री अधर सेन जाति के सुनार हैं। उनके घर पर राखाल ने अन्नग्रहण कर लिया। इसलिए रामबाबू ने कुछ कहा है। अधर परम भक्त हैं। यही बात हो रही थी।

एक भक्त हँसी-हँसी में सुनारों में से किसी-किसी के स्वभाव का वर्णन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं—स्वयं कोई राय प्रकट नहीं कर रहे हैं।

(२)

श्रीरामकृष्ण की कर्म-त्याग की स्थिति। मातृभाव से साधना

सायंकाल हुआ। आंगन में उत्तर पश्चिम के कोने में श्रीरामकृष्ण खड़े हैं, वे समाधिस्थ हैं।

काफी देर बाद उनका मन बाह्य जगत् में लौटा। श्रीरामकृष्ण की कैसी अद्भुत स्थिति है। आजकल प्रायः समाधिमग्न रहते हैं। थोड़े से ही उद्दीपन से बाह्यज्ञान-शून्य हो जाते हैं। जब भक्तगण आते हैं, तब थोड़ा वार्तालाप करते हैं; अन्यथा सदा ही अन्तर्मुख रहते हैं। अब पूजा, जप आदि नहीं कर सकते।

समाधि भंग होने के बाद खड़े-खड़े ही जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं। कह रहे हैं, "माँ! पूजा गयी, जप गया। देखना माँ! कहीं जड़ न बना डालना। सेव्य-सेवक भाव में रखो, जिससे बात कर सकूं, तुम्हारा नाम-संकीर्तन और गान

कर सकूँ। और शरीर में थोड़ा बल दो माँ! जहाँ पर तुम्हारी कथा होती हो, जहाँ पर तुम्हारे भक्तगण हों, उन सब स्थानों में जा सकूँ।"

श्रीरामकृष्ण ने आज प्रातःकाल काली-मन्दिर में जाकर जगन्माता के श्रीचरणकमलों पर पुष्पांजलि अर्पण की है। वे फिर जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "माँ! आज सवेरे तुम्हारे चरणों में दो फूल चढ़ाये। सोचा, अच्छा हुआ, परन्तु फिर बाहर की पूजा की ओर मन जा रहा है। तो माँ, फिर ऐसा क्यों हुआ? फिर जड़ की तरह क्यों बना डाल रही हो?'

भाद्रपदकृष्णा सप्तमी। अभी तक चन्द्रमा का उदय नहीं हुआ। रात्रि तमसाच्छन्न है। श्रीरामकृष्ण अभी भावाविष्ट हैं, इसी स्थिति में अपने कमरे के छोटे तख्त पर बैठे। फिर जगन्माता के साथ बात कर रहे हैं।

अब सम्भवतः भक्तों के सम्बन्ध में माँ से कुछ कह रहे हैं। ईशान मुखोपाध्याय की बात कह रहे हैं। ईशान ने कहा था, 'मैं भाटपाड़ा में जाकर गायत्री का पुरश्चरण करूँगा।' श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था कि **कलियुग में वेद मत नहीं चलता।** अन्नगत प्राण है, आयु कम है, देहबुद्धि, विषयबुद्धि सम्पूर्ण नष्ट नहीं होती। इसीलिए ईशान को मातृभाव से तन्त्र मत के अनुसार साधना करने का उपदेश दिया था, और ईशान से कहा था, 'जो ब्रह्म हैं, वही माँ, वही आद्या-शक्ति हैं।'

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर कह रहे हैं, "फिर गायत्री का पुरश्चरण! इस छत पर से उस छत पर कूदना। किसने उससे ऐसी बात कही है? अपने ही मन से कर रहा है। अच्छा, वह

पुरश्चरण करेगा।"

(मास्टर के प्रति) "अच्छा, मुझे यह सब क्या वायु के विकार से होता है अथवा भाव से ?"

मास्टर विस्मित होकर देख रहे हैं कि श्रीरामकृष्ण जगन्माता के साथ इस प्रकार बातचीत कर रहे हैं। वे विस्मित होकर देख रहे हैं, ईश्वर हमारे अति निकट, बाहर तथा भीतर हैं। अत्यन्त निकट हुए बिना श्रीरामकृष्ण धीरे-धीरे उनके साथ बातचीत कैसे कर रहे हैं ?

परिच्छेद ३१

मास्टर तथा ब्राह्म भक्त के प्रति उपदेश

(१)

पण्डित और साधु में अन्तर। कलियुग में नारदीय भक्ति

आज बुधवार, भाद्रपद की कृष्णा दशमी, २६ सितम्बर, १८८३। बुधवार को भक्तों का समागम कम होता है, क्योंकि सब अपने काम में लगे रहते हैं। प्राय रविवार को समय मिलने पर भक्तगण श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आते हैं। मास्टर को स्कूल से आज डेढ़ बजे छुट्टी मिल गयी है। तीन बजे वे दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण के पास पहुँचे। इस समय श्रीरामकृष्ण के पास प्राय राखाल और लाटू रहते हैं। आज दो घण्टे पहले किशोरी आये हुए हैं। कमरे के भीतर श्रीरामकृष्ण छोटे तख्त पर बैठे हुए हैं। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने कुशल-प्रश्न पूछकर नरेन्द्र की बात चलायी।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—क्यों जी, क्या नरेन्द्र से भेंट हुई थी? नरेन्द्र ने कहा है वे अब काली-मन्दिर जाया करते हैं। जब ठीक ज्ञान हो जायगा तब फिर काली-मन्दिर उन्हें न जाना होगा।

"कभी-कभी वह यहाँ आता है, इसलिए उसके घरवाले बहुत नाराज हैं। उस दिन यहाँ गाडी पर चढकर आया था। गाडी का किराया सुरेन्द्र ने दिया था। इस पर नरेन्द्र की बुआ सुरेन्द्र के यहाँ लड़ने गयी थी।"

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र की बात कहते हुए उठे। बातचीत करते

हुए उत्तर-पूर्व वाले बरामदे में जाकर खडे हुए। वहाँ हाजरा, किशोरी, राखाल आदि भक्तगण हैं। तीसरे पहर का समय है।

श्रीरामकृष्ण—वाह, तुम तो आज खूब आ गये, क्यो, स्कूल नही है क्या ?

मास्टर—आज डेढ बजे छुट्टी हो गयी थी।

श्रीरामकृष्ण—इतनी जल्दी क्यो ?

मास्टर—विद्यासागर स्कूल देखने गये थे। स्कूल विद्यासागर का है, इसीलिए उनके आने पर लडको को आनन्द मनाने के लिए छुट्टी दी जाती है।

श्रीरामकृष्ण—विद्यासागर सच बात क्यो नही कहता ?

"सत्य बोलता रहे और परायी स्त्री को माता जाने, इन दो बातो से अगर राम न मिले, तो तुलसीदास कहते हैं, मेरी बातो को झूठ समझो। सत्यनिष्ठ रहने से ही ईश्वर मिलते हैं। विद्यासागर ने उस दिन कहा था यहाँ आने के लिए, परन्तु फिर न आया।

"पण्डित और साधु में बडा अन्तर है। जो केवल पण्डित है, उसका मन कामिनी-कांचन पर है। साधु का मन श्रीभगवान् के पादपद्मो में रहता है। पण्डित कहता कुछ है और करता कुछ है। साधु की बात जाने दो। जिनका मन ईश्वर के चरणारविन्दो में लगा रहता है, उनके कर्म और उनकी बाते और ही होती हैं। काशी में मैंने एक नानकपन्थी लडका-साधु देखा था। उसकी आयु तुम्हारे इतनी होगी। मुझे 'प्रेमी साधु' कहता था। काशी में उसका मठ है। एक दिन मुझे वहाँ न्योता देकर ले गया। महन्त को देखा जैसे एक गृहिणी। उससे मैंने पूछा, उपाय क्या है ? उसने कहा, कलियुग में नारदीय भक्ति चाहिए। पाठ कर

रहा था, पाठ के समाप्त होने पर कहा—'जले विष्णु स्थले विष्णुर्विष्णु पर्वतमस्तके। सर्व विष्णुमय जगत्।' सबके अन्त में कहा, शान्ति! शान्ति! प्रशान्ति!

"एक दिन उसने गीता पाठ किया। हठ और दृढता भी ऐसी कि विषयी आदमियो की ओर होकर न पढता था। मेरी ओर होकर उसने पढा। मथुर बाबू भी थे। उनकी ओर पीठ फेरकर पढने लगा। उसी नानकपन्थी साधु ने कहा था, उपाय है नारदीय भक्ति।"

मास्टर—वे साधु क्या वेदान्तवादी नही है?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वे लोग वेदान्तवादी है। परन्तु भक्तिमार्ग भी मानते हैं। बात यह है कि अब कलिकाल में वेद मत नही चलता। एक ने कहा था, मै गायत्री का पुरश्चरण करूँगा। मैने कहा, 'क्यो?—कलि के लिए तो तन्त्रोक्त मत है। क्या तन्त्रोक्त मत से पुरश्चरण नही होता?'

"वैदिक कर्म बडा कठिन है। तिस पर फिर दासत्व करना। ऐसा भी लिखा है कि बारह साल या इसी तरह कुछ दिन दासता करते रहने पर मनुष्य दास ही बन जाता है। इतने दिनो तक जिनकी दासता की, उन्ही की सत्ता उसमें आ जाती है। उनका रज, तम, जीवहिंसा, विलास, ये सब आ जाते हैं—उनकी सेवा करते हुए। केवल दासता ही नही, ऊपर से पेन्शन भी खाता है!

"एक वेदान्ती साधु आया था। मेघ देखकर नाचता था। आँधी और पानी देखकर उसे बडा आनन्द मिलता था। उसके ध्यान के समय अगर कोई उसके पास जाता था तो वह बहुत नाराज होता था। एक दिन मै गया। जाने पर वह बहुत ही

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह ठीक है।

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर के सामने आये। माता को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। मणि ने भी प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर के सामने बरामदे मे बिना किसी आसन के काली माँ की ओर मुँह किये बैठे हुए हैं। केवल लाल धारीदार धोती पहने हैं। उसका कुछ हिस्सा पीठ पर पडा है और कुछ कन्धे पर। पीछे नाटमन्दिर का एक खम्भा है। पास ही मणि बैठे हैं।

मणि—यही अगर हुआ तो देह-धारण की फिर क्या आवश्यकता है? देख तो यह रहा हूँ कि कुछ कर्मो का भोग करने के लिए ही देह धारण करना होता है। वह क्या कर रहा है वही जाने। बीच में हम लोग पिस रहे है।

श्रीरामकृष्ण—चना अगर विष्ठा पर पड जाय तो भी उससे चने का ही पेड निकलता है।

मणि—फिर भी अष्ट-बन्धन तो हैं ही।

श्रीरामकृष्ण—अष्ट-बन्धन नही, अष्ट पाश। हैं तो इससे क्या? उनकी कृपा होने पर एक क्षण में अष्ट पाश छूट सकते हैं, जिस तरह कि हजार साल के अँधेरे कमरे में दीपक ले जाने पर एक क्षण में अँधेरा दूर हो जाता है। थोडा थोडा करके नहीं जाता। एक तमाशा करके तुमने देखा है? कितनी ही गाँठ लगी रस्सी का एक छोर एक आदमी हाथ से पकडे रहता है। उसने हिलाया नही कि सब ग्रथियाँ एक साथ खुल गयी। परन्तु दूसरा आदमी चाहे लाख उपाय करे, उसे खोल नहीं सकता। श्रीगुरु की कृपा से सब ग्रथियाँ एक क्षण में ही खुल जाती हैं।

"अच्छा, केशव सेन इतना बदल कैसे गया?—बताओ तो। यहाँ परन्तु खूब आता था। यहाँ से नमस्कार करना सीखा था।

एक दिन मैंने कहा, साधुओं को इस तरह से नमस्कार न करना चाहिए। एक दिन ईशान के साथ में गाडी पर कलकत्ता जा रहा था। उससे केशव सेन की कुछ बाते सुनी। हरीश अच्छा कहता है—यहां से सब चेक पास करा लेने होंगे, तब बैंक में रुपये मिलेंगे।" (सब हँसते हैं)

मणि निर्वाक् रहकर सब बाते सुन रहे हैं, उन्होने समझा, गुरु के रूप मे सच्चिदानन्द स्वय चेक पास करते हैं।

श्रीरामकृष्ण—विचार न करना। उन्हे कौन जान सकता है? न्यागटा कहता था, मैंने सुन रखा है, उन्ही के एक अश से यह ब्रह्माण्ड बना है।

"हाजरा मे बडी विचार-बुद्धि है, वह हिसाब करता है, इतने मे ससार हुआ और इतना बाकी रह गया। उसका हिसाब सुनकर मेरा माथा ठनकने लगता है। **मैं जानता हूँ, मै कुछ नहीं जानता।** कभी तो उन्हे अच्छा सोचता हूँ और कभी उन्हे बुरा मानता हूँ। उनका मै कितना अश समझूंगा?"

मणि—जी हाँ, कोई उन्हे समझ थोडे ही सकता है? जिसकी जैसी बुद्धि है, उतनी ही से वह सोचता है, मैं सब कुछ समझ गया। आप जैसा कहते हैं, एक चीटी चीनी के पहाड के पास गयी थी, उसका जब एक ही दाने से पेट भर गया तब उसने कहा, अब की बार आऊँगी तो पहाड-का-पहाड उठा ले जाऊँगी!

क्या ईश्वर को जान सकते हैं? उपाय—शरणागति

श्रीरामकृष्ण—उन्हे कौन जान सकता है? मैं जानने की चेष्टा भी नहीं करता। मैं केवल माँ कहकर पुकारता हूँ। माँ चाहे जो करें उनकी इच्छा होगी तो वे समझायेंगी और न इच्छा होगी तो न समझायेंगी। इससे क्या है? मेरा स्वभाव बिल्ली के

बच्चे की तरह है। बिल्ली का बच्चा केवल मिउँ-मिउँ करके पुकारता है। इसके बाद उसकी माँ जहाँ रखती है वहीं रहता है। कभी कण्डौरे में रखती है और कभी बाबू साहब के बिस्तरे पर। छोटा बच्चा बस माँ को ही चाहता है। माता का कितना ऐश्वर्य है, वह नहीं जानता। जानना भी नहीं चाहता। वह जानता है, मेरे माँ है। मुझे क्या चिन्ता है ? नौकरानी का लड़का भी जानता है, मेरे माँ है। बाबू के लड़के के साथ अगर लड़ाई हो जाती है तो वह कहता है, मैं अपनी माँ से कह दूंगा। मेरे माँ हैं कि नहीं ? मेरा भी सन्तान-भाव है।

श्रीरामकृष्ण अपने को दिखाकर, अपनी छाती में हाथ लगाकर, मणि से कहते हैं—"अच्छा, इसमें कुछ है—तुम क्या कहते हो ?"

वे निर्वाक् भाव से श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं।

(३)

साकार-निराकार। कर्तव्य बुद्धि

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में काली-मन्दिर के सामने चबूतरे पर बैठे हैं। काली-प्रतिमा में जगन्माता के दर्शन कर रहे हैं। पास ही मास्टर आदि भक्तगण बैठे हैं। आज २६ सितम्बर १८८३ ई० है। समय, दिन का तीसरा प्रहर।

थोड़ी देर पहले श्रीरामकृष्ण ने कहा है, "ईश्वर के सम्बन्ध में अनुमान आदि लगाना व्यर्थ है। उनका ऐश्वर्य अनन्त है। बेचारा मनुष्य मुँह से क्या प्रकट कर सकेगा ! एक चींटी ने चीनी के पहाड़ के पास जाकर चीनी का एक कण खाया। उसका पेट भर गया। तब वह सोचने लगी, 'अब की बार आऊँगी तो पूरे पहाड़ को अपने बिल में उठा ले जाऊँगी !'

"उन्हें क्या समझा जा सकता है ? इसीलिए मेरा बिल्ली के बच्चे का सा भाव है। माँ जहाँ भी रख दे, मै कुछ नही जानता। छोटे बच्चे नही जानते, माँ का कितना ऐश्वर्य है।"

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर के चबूतरे पर बैठे स्तुति कर रहे हैं,—"ओ माँ ! ओ माँ ओंकार-रूपिणि ! माँ ! ये लोग कितना सब वर्णन करते है, माँ !—कुछ समझ नही सकता ! कुछ नही जानता हूँ, माँ ! शरणागत ! शरणागत ! केवल यही करो माँ ! जिससे तुम्हारे श्रीचरणकमलो में शुद्धा भक्ति हो ! अब और अपनी भुवन-मोहिनी माया मे मोहित न करो माँ ! शरणागत ! शरणागत !"

मन्दिर में आरती हो गयी। श्रीरामकृष्ण कमरे मे छोटे तख्त पर बैठे हैं। महेन्द्र जमीन पर बैठे हैं।

महेन्द्र पहले श्री केशव सेन के ब्राह्मसमाज में हमेशा जाया करते थे। श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के बाद फिर वहाँ नही जाते हैं। वे यह देखकर बडे विस्मित हुए है कि श्रीरामकृष्ण सदा जगन्माता के साथ वार्तालाप करते हैं और उनकी सर्व-धर्म-समन्वय की बात सुनकर तथा ईश्वर के लिए उनकी व्याकुलता को देखकर वे मुग्ध हो गये है।

महेन्द्र लगभग दो वर्ष से श्रीरामकृष्ण के पास आया-जाया करते हैं और उनका दर्शन तथा कृपा प्राप्त कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें तथा अन्य भक्तो से सदा ही कहते हैं, "ईश्वर निराकार और फिर साकार भी है। भक्त के लिए वे देह धारण करते हैं।" जो लोग निराकारवादी हैं उनसे वे कहते हैं, "तुम्हारा जो विश्वास है उसे ही रखो। परन्तु यह जान लेना कि उनके लिए सभी कुछ सम्भव है। साकार और निराकार ही क्या, वे

और भी बहुत कुछ बन सकते हैं।"

श्रीरामकृष्ण (महेन्द्र के प्रति)—तुमने तो एक को पकड़ लिया है—निराकार।

महेन्द्र—जी हां, परन्तु जैसा कि आप कहते हैं, सभी सम्भव है। साकार भी सम्भव है।

श्रीरामकृष्ण—बहुत अच्छा, और यह भी जानो कि वे चैतन्य रूप में चराचर विश्व में व्याप्त हैं।

महेन्द्र—मैं समझता हूँ कि वे चेतन के भी चेतयिता हैं।

श्रीरामकृष्ण—अब उसी भाव में रहो। खींचतान करके भाव बदलने की आवश्यकता नहीं है। धीरे-धीरे जान सकोगे कि वह चेतनता उन्हीं की चेतनता है। वे ही चैतन्यस्वरूप हैं।

'अच्छा, तुम्हारा धन-दौलत पर मोह है?"

महेन्द्र—जी नहीं! परन्तु हां इतना अवश्य सोचता हूँ कि निश्चिन्त होने के लिए—निश्चिन्त होकर भगवान् का चिन्तन करने के लिए धन की आवश्यकता होती है।

श्रीरामकृष्ण—वह तो होगी ही!

महेन्द्र—क्या यह लोभ है? मैं तो ऐसा नहीं समझता।

श्रीरामकृष्ण—हां, ठीक है। नहीं तो तुम्हारे बच्चों को कौन देखेगा?

"यदि तुम्हारा 'अकर्ता-ज्ञान' हो जाय तो फिर तुम्हारे लड़कों का क्या होगा?"

महेन्द्र—सुना है, कर्तव्य का बोध रहते ज्ञान नहीं होता। कर्तव्य मानो प्रखर झुलसानेवाला सूर्य है।

श्रीरामकृष्ण—अब उसी भाव में रहो। इसके बाद जब यह कर्तव्य-बुद्धि स्वयं ही चली जायगी तब फिर दूसरी बात।

सभी थोडी देर चुप रहे।

महेन्द्र--केवल थोडा ही ज्ञान-लाभ होने से तो ससार और भी कष्टप्रद है। यह तो ऐसा होता है मानो होश सहित मृत्यु। जैसे--हैजा!

श्रीरामकृष्ण--राम! राम!!

सम्भवत इस कथन से महेन्द्र का तात्पर्य यह है कि मृत्यु के समय होश रहने पर यन्त्रणा का अधिक अनुभव होता है, जैसे हैजे में होता है। थोडे ज्ञानवाले का सासारिक जीवन बडा दु खमय होता है, क्योंकि वह यह समझ गया है कि ससार भ्रमात्मक है। सम्भव है इसलिए श्रीरामकृष्ण 'राम! राम!' कर रहे हैं!

महेन्द्र--और दूसरी श्रेणी के लोग वे है जो पूर्ण अज्ञानी हैं, मानो मियादी बुखार से पीडित है। वे मृत्यु के समय बेहोश रहते हैं और इससे उन्हे मृत्यु के समय किसी प्रकार की यन्त्रणा नही होती।

श्रीरामकृष्ण--देखो न, घन रहने से भी क्या! जयगोपाल सेन कितने धनी हैं परन्तु हैं दु खी, लडके उन्हे उतना नही मानते।

महेन्द्र--ससार में क्या केवल निर्धनता ही दु ख है? इसके अतिरिक्त छ रिपु और भी है और फिर उनके ऊपर रोग-शोक।

श्रीरामकृष्ण--फिर मान-मर्यादा, लोकमान्य बनने की इच्छा। "अच्छा--मेरा क्या भाव है?"

महेन्द्र--नीद खुल जाने पर मनुष्य का जो भाव होता है वही। उसे स्वय का होश आ जाता है। ईश्वर के साथ सदा योग।

श्रीरामकृष्ण--तुम मुझे स्वप्न मे देखते हो?

महेन्द्र—हाँ, कई बार।

श्रीरामकृष्ण—कैसा ? कुछ उपदेश देते देखते हो ?

महेन्द्र चुप रह गये।

श्रीरामकृष्ण—जब-जब मैं तुम्हें शिक्षा दूँ तो यही समझो कि स्वयं सच्चिदानन्द ही यह कार्य कर रहे हैं।

इसके बाद महेन्द्र ने स्वप्न में जो कुछ देखा था सभी वह सुनाया। श्रीरामकृष्ण ने मन लगाकर सभी सुना।

श्रीरामकृष्ण (महेन्द्र के प्रति)—यह सब बहुत अच्छा है। तुम और तर्क-विचार न लाओ। तुम लोग शाक्त हो!

परिच्छेद ३२

दुर्गापूजा-महोत्सव में श्रीरामकृष्ण

(१)

जगन्माता के साथ वार्तालाप

श्री अधर के मकान पर नवमी-पूजा के दिन मन्दिर में श्रीरामकृष्ण खडे है। सन्ध्या के बाद श्रीदुर्गामाई की आरती देख रहे है। अधर के घर पर दुर्गापूजा का महोत्सव है। इसलिए वे श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रित करके लाये है।

आज बुधवार है। १० अक्टूबर १८८३ ई०। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ पधारे है। उनमें बलराम के पिता तथा अधर के मित्र स्कूल इन्स्पेक्टर शारदा बाबू भी आये है। अधर ने पूजा के उपलक्ष्य मे पडोसी तथा आत्मीय जनो को भी निमन्त्रण दिया है। वे भी आये है।

श्रीरामकृष्ण सन्ध्या की आरती देखकर भावविभोर होकर मन्दिर में खड है। भावाविष्ट होकर माँ को गाना सुना रहे हैं।

अधर गृही भक्त हैं। और भी अनेक गृही भक्त उपस्थित है। वे सब त्रितापो से तापित है। सम्भव है इसीलिए श्रीरामकृष्ण सभी के मगल के लिए जगन्माता की स्तुति कर रहे है।

(सगीत—भावार्थ) "हे तारिणि ! मुझे तारो। अब की वार शीघ्र तारो। हे माँ, जीवगण यम से भयभीत हो गये है। हे जगज्जननि ! ससार को पालने वाली ! लोगो को मोहने वाली जगज्जननी ! तुमने यशोदा की कोख में जन्म लेकर हरि की लीला में सहायता की थी, तुम वृन्दावन मे राधा बन व्रज-

वल्लभ के साथ विहार करती हो। रास रचकर रसमयी तुमने रासलीला का प्रकाश किया। हे माँ, तुम गिरिजा हो, गोपतनया हो, गोविन्द की मनमोहिनी हो, तुम सद्गति देनेवाली गंगा हो। हे शिवे! हे सनातनि! सदानन्दमयी सर्वस्वरूपिणि! हे निर्गुणे, हे सगुणे! हे सदाशिव की प्रिये! तुम्हारी महिमा को कौन जानता है!"

श्रीरामकृष्ण अधर के मकान के दुमजले पर बैठक-घर में बैठे हैं। घर पर अनेक आमन्त्रित व्यक्ति आये हैं।

बलराम के पिता और शारदा बाबू आदि पास बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण अभी भी भावविभोर हैं। आमन्त्रित व्यक्तियों को सम्बोधित कर कह रहे हैं, "मैंने भोजन कर लिया है। तुम लोग भी प्रसाद पाओ।"

अधर की पूजा और नैवेद्य को माँ ने ग्रहण किया है। क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण जगन्माता के आवेश में आकर कह रहे हैं, "मैंने खा लिया है। अब तुम लोग भी प्रसाद पाओ।"

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर जगन्माता से कह रहे हैं, "माँ! मैं खाऊँ? या तुम खाओगी? माँ, कारणानन्दरूपिणी।"

क्या श्रीरामकृष्ण जगन्माता को और अपने को एक ही देख रहे हैं? जो माँ हैं, क्या वही स्वयं लोक शिक्षा के लिए पुत्र के रूप में अवतीर्ण हुई हैं? क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण भाव के आवेश में कह रहे हैं, मैंने खाया है?

इसी प्रकार भाव के आवेश में देह के बीच षट्-चक्र और उनमें माँ को देख रहे हैं। इसलिए फिर भावविभोर होकर गाना गा रहे हैं।

(संगीत—भावार्थ)

"सोचते क्या हो ? सोचते-सोचते प्राणों पर आ बीती। जिसके नाम से काल नष्ट होता है, जिसके चरणों के नीचे महाकाल है, उसका काला रूप क्यों हुआ ? काले रूप अनेक हैं, पर यह बड़ा आश्चर्यजनक काला रंग है जिसे हृदय के बीच में रखने पर हृदयरूपी पद्म आलोकित हो जाता है। रूप में काली है, नाम में काली है, काले से भी अधिक काली है। जिसने इस रूप को देखा है, वह भूल गया है। उसे दूसरा रूप अच्छा नहीं लगता। प्रसाद आश्चर्य के साथ कहता है कि ऐसी लड़की कहाँ थी, जिसे बिना देखे, केवल कान से जिसका नाम सुनकर ही मन जाकर उससे लिप्त हो गया।"

अभया की शरण में जाने से सभी भय दूर हो जाते हैं, सम्भव है इसीलिए वे भक्तों को अभय दान दे रहे हैं और गाना गा रहे हैं।

फिर संगीत—"मैंने अभय पद में प्राणों को सौंप दिया है" इत्यादि।

श्री शारदाबाबू पुत्रशोक से व्यथित हैं। इसलिए उनके मित्र अधर उन्हें श्रीरामकृष्ण के पास लाये हैं। वे गौरांग के भक्त हैं। उन्हें देखकर श्रीरामकृष्ण में श्रीगौरांग का उद्दीपन हुआ है। श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं—

संगीत—"मेरा अंग क्यों गौर हुआ ?" इत्यादि।

अब श्रीगौरांग के भाव में आविष्ट हो गाना गा रहे हैं। कह रहे हैं, शारदा बाबू यह गाना बहुत चाहते हैं।

(संगीत—भावार्थ)

'भावनिधि गौरांग का भाव होगा नहीं तो क्या ? भाव में

हँसते हैं, रोते हैं, नाचते हैं, गाते हैं। वन देखकर वृन्दावन समझते हैं। गंगा देख उसे यमुना मान लेते हैं। (गौरांग) सिसक-सिसक कर रो रहे हैं। यद्यपि वे बाहर गौर हैं तथापि भगवान् श्रीकृष्ण की श्यामता से भीतर नितान्त श्याम हैं।"

(संगीत—भावार्थ)

"माँ! पड़ोसी लोग हल्ला मचाते हैं। मुझे गौर-कलंकिनी कहते हैं। क्या यह कहने की बात है, कहाँ कहूँगी। ओ प्यारी सखि, लज्जा से मरी जाती हूँ। एक दिन श्रीवास के मकान में कीर्तन की धूम मची हुई थी, गौर रूपी चन्द्रमा श्रीवास के आँगन पर लोटपोट हो रहा था, मैं एक कोने में खड़ी थी। एक ओर छिपी हुई थी। मैं बेहोश हो गयी। श्रीवास की धर्मपत्नी मुझे होश में लायी। गौर नगर-कीर्तन कर रहे थे, चाण्डाल, यवन आदि भी गौर के साथ थे। वे 'हरि बोल' 'हरि बोल' कहते हुए नदिया के बाजारों में से चले जा रहे थे। मैंने उनके साथ जाकर दो लाल चरणों का दर्शन किया था। एक दिन गंगा-तट पर घाट में गौरांग प्रभु खड़े थे। मानो चन्द्र और सूर्य दोनों ही गौर के अंग में प्रकट हुये थे। गौर के रूप को देखकर शाक्त और शैव भूल गये। एकाएक मेरा घड़ा गिर पड़ा! दुष्ट ननदिया ने देख लिया था।"

बलराम के पिता वैष्णव हैं; सम्भव है इसीलिए अब श्रीरामकृष्ण गोपियों के दिव्य प्रेम का गाना गा रहे हैं।

(संगीत—भावार्थ)

"सखि! श्याम को पा न सकी, तो फिर किस सुख से घर पर रहूँ। यदि श्याम मेरे सिर के केश होते तो हे सखि, मैं उनमें फूल पिरोकर यत्न के साथ वेणी बाँध लेती। श्याम यदि मेरे हाथ के

कगन होते, तो सदा बाँहो में लगे रहते । सखि, मैं कगन हिला-कर, बाँह हिलाकर चली जाती । हे सखि ! मै श्यामरूपी कगन को हाथ में पहनकर सडको पर से भी चली जाती । जिस समय श्याम अपनी बासुरी बजाता है, तो मै यमुना म जल लेने आती हूँ । मै भटकी हुई हरिणी की तरह इधर-उधर ताकती रह जाती हूँ ।"

(२)

सर्व-धर्म-समन्वय और श्रीरामकृष्ण

बलराम के पिता की उडीसा प्रान्त मे भद्रक आदि कई स्थानो मे जमीदारी है और वृन्दावन, पुरी, भद्रक आदि अनेक स्थानो मे उनकी देव-सेवा और अतिथि-शालाये भी हैं । वे वृद्धावस्था मे श्रीवृन्दावन में भगवान् श्यामसुन्दर के कुज मे उनकी सेवा में लगे रहते थे ।

बलराम के पिताजी पुराने मत के वैष्णव हैं । अनेक वैष्णव भक्त शाक्त, शैव और वेदान्तवादियों के साथ सहानुभूति नही रखते हैं, कोई-कोई उनसे द्वेष भी करते हैं । परन्तु श्रीरामकृष्ण इस प्रकार की सकीर्णता पसन्द नही करते । उनका कहना है कि व्याकुलता रहने पर सभी पथो तथा सभी मतो से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है । अनेक वैष्णव भक्त बाहर से तो जप-जाप, पूजा पाठ आदि करते हैं, परन्तु भगवान् को प्राप्त करने के लिए उनमें व्याकुलता नही है । सम्भव है इसलिए श्रीरामकृष्ण बलराम के पिताजी को उपदेश दे रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—सोचा, क्यो एकागी बनूँ ? मैंने भी वृन्दावन में वैष्णव वैरागी की दीक्षा ली थी तथा उनका भेष ग्रहण किया था । उस भाव में तीन दिन रहा । फिर

दक्षिणेश्वर मे राम-मन्त्र लिया था। लम्बा तिलक, गले में कण्ठी; फिर थोडे दिनों के बाद सब कुछ हटा दिया।

"एक आदमी के पास एक बर्तन था। लोग उसके पास कपडा रगवाने के लिए जाते थे। बर्तन में रग तैयार है। परन्तु जिसे जिस रग की आवश्यकता होती, उस बर्तन में कपडा डालने से उसी रग का हो जाता था। यह देखकर एक व्यक्ति विस्मित होकर रगवाले से कह रहा है, अभी तुम्हारे बर्तन में जो रग है वही रग मुझे दो।"

क्या इस उदाहरण द्वारा श्रीरामकृष्ण यही कह रहे हैं कि सभी धर्मो से लोग उनके पास आयेंगे और आत्मज्ञान प्राप्त करेंगे?

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, "एक वृक्ष पर एक गिरगिट था। एक व्यक्ति ने देखा हरा, दूसरे ने देखा काला और तीसरे ने पीला, इस प्रकार अनेक व्यक्ति अलग-अलग रग देख गये। बाद में वे आपस में कह रहे हैं, वह जानवर हरे रग का है। दूसरा कह रहा है, नहीं, लाल रग का, कोई कहता है पीला, और इस प्रकार आपस में सब झगड रहे हैं। उस समय वृक्ष के नीचे एक व्यक्ति बैठा था, सब मिलकर उसके पास गये। उसने कहा, "मैं इस वृक्ष के नीचे रातदिन रहता हूँ, मैं जानता हूँ, यह गिरगिट है। क्षण-क्षण में रग बदलता है, और फिर कभी-कभी इसका कोई रग नहीं रहता।"

क्या श्रीरामकृष्ण यही कह रहे हैं कि ईश्वर सगुण है, वह भिन्न-भिन्न रूप धारण करता है? और फिर निर्गुण है, कोई रूप नहीं, वाक्य मन से परे है? और वे स्वय भक्तियोग, ज्ञान-योग आदि सभी पथों से ईश्वर के माधुर्य का रस पीते हैं?

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता के प्रति)—और अधिक

पुस्तकें न पढो, परन्तु भक्तिशास्त्र का अध्ययन करो, जैसे श्री चैतन्यचरितामृत।

राधाकृष्ण-लीला का अर्थ। रस और रसिक

"असल बात यह है कि उनसे प्रेम करना चाहिए, उनके माधुर्य का आस्वादन करना चाहिए। वे रस है, रसिक भक्त उस रस का पान करते है। वे पद्म है और भक्त भौरा, भक्त पद्म का मधु पीता है।

'भक्त जिस प्रकार भगवान् के विना नही रह सकता, भगवान् भी भक्त के बिना नही रह सकते! उस समय भक्त रस बन जाते है और भगवान् बनते है रसिक, भक्त बनता है पद्म और भगवान् बनते है भौंरा! वे अपने माधुर्य का आस्वादन करने के लिए दो बने है, इसीलिए राधाकृष्ण-लीला हुई।

"तीर्थ, गले में माला, नियम, ये सब पहले-पहल करने पडते है। वस्तु की प्राप्ति हो जाने पर, भगवान् का दर्शन हो जाने पर बाहर का आडम्बर धीरे-धीरे कम होता जाता है। उस समय उनका नाम लेकर रहना और स्मरण-मनन।

"सोलह रुपयो के पैसे अनेक होते है, परन्तु जब रुपये इकट्ठे किये जाते है, तो उतने अधिक नही दीखते। फिर उनके बदले में जब गिन्नि * बनायी तो कितना कम हो गया! फिर उसे बदलकर यदि हीरा लाओ तो लोगो को पता तक नही लगता।"

गले मे माला, नियम आदि न रहने से वैष्णवगण आक्षेप करते है, क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण कह रहे है कि ईश्वर-दर्शन के बाद माला, दीक्षा आदि का बन्धन उतना नही रह जाता। वस्तु प्राप्त होने पर बाहर का काम कम हो जाता है।

---

* उस समय एक गिन्नी का मूल्य सोलह रुपये था।

"कर्ताभजा सम्प्रदायवाले कहते हैं कि भक्त चार प्रकार के होते हैं। प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्ध का सिद्ध। प्रवर्तक तिलक लगाते हैं, गले में माला धारण करते हैं और नियम पालन करते हैं। साधक—इनका उतना बाहर का आडम्बर नहीं रहता। उदाहरणार्थ, बाउल। सिद्ध—जिसका स्थिर विश्वास है कि ईश्वर है। सिद्ध के सिद्ध जैसे चैतन्यदेव ने ईश्वर का दर्शन किया है और सदा उनसे वार्तालाप करते हैं। साईं के बाद और कुछ नहीं रह जाता।

"साधक भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं। सात्त्विक साधना गुप्त रूप से होती है। इस प्रकार का साधक साधन-भजन को छिपाता है। देखने से साधारण लोगों की तरह जान पड़ता है। मच्छर-दानी के भीतर बैठा ध्यान करता है।

'राजसिक साधक बाहर का आडम्बर रखता है, गले में जपमाला, भेष, गेरुआ वस्त्र, रेशमी वस्त्र, सोने के दाने वाली जपमाला, मानो साइनबोर्ड लगा कर बैठना!"

वैष्णव भक्तों की वेदान्तमत पर अथवा शाक्तमत पर उतनी श्रद्धा नहीं है। श्रीरामकृष्ण बलराम के पिता को इस प्रकार के संकीर्ण भाव को त्यागने का उपदेश कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता आदि के प्रति)—जो भी धर्म हो, जो भी मत हो, सभी उसी एक ईश्वर को पुकार रहे हैं। इसलिए किसी धर्म अथवा मत के प्रति अश्रद्धा या घृणा नहीं करनी चाहिए। वेद उन्हें ही कह रहे हैं, सच्चिदानन्द ब्रह्म, भागवत आदि पुराण उन्हें ही कह रहे हैं, सच्चिदानन्द कृष्ण, और तन्त्र कह रहे हैं, सच्चिदानन्द शिव। वही एक सच्चिदानन्द है।

"वैष्णवो के अनेक सम्प्रदाय है । वेद जिन्हे ब्रह्म कहते है, वैष्णवो का एक दल उन्हे अलख-निरजन कहता है । अलख अर्थात् जिन्हे लक्ष्य नही किया जा सकता, इन्द्रियो द्वारा देखा नही जाता । वे कहते है, राधा और कृष्ण अलख के दो बुलबुले हैं ।

"वेदान्त मत मे अवतार नही है । वेदान्तवादी कहते है, राम, कृष्ण,—ये सच्चिदानन्दरूपी समुद्र की दो लहरे हैं ।

" एक के अतिरिक्त दो तो नही है, चाहे जिस नाम से कोई ईश्वर को पुकारे उसके पास वह अवश्य ही पहुँचेगा । व्याकुलता रहनी चाहिए ।"

श्रीरामकृष्ण भाव मे विभोर होकर भक्तो से ये सब बाते कह रहे है । अब प्रकृतिस्थ हुए है और कह रहे है, "तुम बलराम के पिता हो ?"

सभी थोडी देर चुपचाप बैठे है, बलराम के वृद्ध पिता चुपचाप हरिनाम की माला जप रहे है ।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि के प्रति)—अच्छा, ये लोग इतना जप करते हैं, इतना तीर्थ करते हैं, फिर भी इनकी प्रगति क्यो नही होती ? मानो अठारह मास का इनका एक वर्ष होता है ।

"हरीश से कहा, 'यदि व्याकुलता न रहे, तो फिर वाराणसी जाने की क्या आवश्यकता ? व्याकुलता रहने पर यही पर वाराणसी है ।'

"इतना तीर्थ, इतना जप करते हैं, फिर भी कुछ क्यों नही होता ? व्याकुलता नही है । व्याकुल होकर उन्हे पुकारने पर वे दर्शन देते है ।

"नाटक के प्रारम्भ में रंगभूमि पर बड़ी गड़बड़ी मची रहती है। उस समय श्रीकृष्ण का दर्शन नहीं होता। उसके बाद नारद ऋषि जिस समय व्याकुल होकर वृन्दावन में आकर वीणा बजाते हुए पुकारते हैं और कहते हैं, 'प्राण हे गोविन्द मम जीवन'— उस समय कृष्ण और ठहर नहीं सकते, गोपालों के साथ सामने आ जाते हैं।"

परिच्छेद ३३

दक्षिणेश्वर में कार्तिकी पूर्णिमा

(१)

श्रीरामकृष्ण की अद्भुत स्थिति

आज मगलवार, १६ अक्टूबर १८८३ ई० । बलराम के पिता दूसरे भक्तो के साथ उपस्थित है। बलराम के पिता परम वैष्णव है। हाथ में हरि नाम की माला रहती है, सदा जप करते रहते हैं।

कट्टर वैष्णवगण अन्य सम्प्रदाय के लोगों को उतना पसन्द नही करते। बलराम के पिता बीच-बीच मे श्रीरामकृष्ण का दर्शन कर रहे हैं, उनका वैष्णवो का सा भाव नही है।

श्रीरामकृष्ण—जिनका उदार भाव है वे सभी देवताओ को मानते हैं,—कृष्ण, काली, शिव, राम आदि।

बलराम के पिता—हाँ, जिस प्रकार एक पति, अलग-अलग पोशाक में।

श्रीरामकृष्ण—परन्तु निष्ठाभक्ति एक चीज है। गोपियाँ जब मथुरा मे गयी तो पगडी पहने हुए कृष्ण को देखकर उन्होंने घूँघट काढ लिया और कहा, 'यह कौन है! हमारे पीत वस्त्र-धारी, मोहन चूडा वाले श्रीकृष्ण कहाँ है ?'

'हनुमान की भी निष्ठाभक्ति है। द्वापर युग मे द्वारका मे जब आये तो कृष्ण ने रुक्मिणी से कहा, 'हनुमान रामरूप न देखने से सन्तुष्ट न होगा।' इसलिए रामरूप मे उन्हे दर्शन दिया!

"कौन जाने भाई, मेरी यही एक स्थिति है। मै केवल नित्य

से लीला में उतर आता हूँ और फिर लीला से नित्य में चला जाता हूँ।

'नित्य में पहुँचने का नाम है ब्रह्मज्ञान। बड़ा कठिन है। विषयबुद्धि एकदम नष्ट हुए बिना कुछ नहीं होता। हिमालय के घर जब भगवती ने जन्म लिया तो पिता को अनेक रूपों में दर्शन दिया। हिमालय ने उनसे कहा, 'मैं ब्रह्मदर्शन की इच्छा करता हूँ।' तब भगवती ने कहा, 'पिताजी, यदि वैसी इच्छा हो तो सत्संग करना पड़ेगा। संसार से अलग होकर बीच-बीच में निर्जन में साधुसंग कीजिये।'

'उसी एक से ही अनेक हुए हैं—नित्य से ही लीला है। एक ऐसी अवस्था है जिसमें 'अनेक' का बोध नहीं रहता और न 'एक' का ही, क्योंकि 'एक' के रहते ही 'अनेक' आ जाता है। वे तो उपमाओं से रहित हैं—उपमा देकर समझाने का उपाय नहीं है। अन्धकार और प्रकाश के मध्य में हैं। हम जिस प्रकाश को देखते हैं, ब्रह्म वह प्रकाश नहीं है—वह ब्रह्म जड़आलोक नहीं है।*

'फिर जब वे मेरे मन की अवस्था को बदल देते हैं—उस समय लीला में मन को उतार लाते हैं—तब देखता हूँ ईश्वर, माया, जीव, जगत्—वे सब कुछ बने हुए हैं।

"फिर कभी वे दिखाते हैं कि उन्होंने इन सब जीव-जगत् को बनाया है—जैसे मालिक और उसका बगीचा।

"वे कर्ता हैं और उन्हीं का यह सब जीव-जगत् है, इसी का नाम है ज्ञान। और 'मैं करने वाला हूँ,' 'मैं गुरु हूँ,' 'मैं पिता हूँ,'

---

* यह ब्रह्म जड़-आलोक नहीं है—"तत् ज्योतिषां ज्योतिः" "तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्यत् आत्मविदो विदुः"—मुण्डक उपनिषद्, २।२।९

इसी का नाम है अज्ञान, फिर मेरे है ये सब घर-द्वार, परिवार, धन, जन आदि---इसी का नाम है अज्ञान ।"

वलराम के पिता---जी हाँ ।

श्रीरामकृष्ण---जब तक यह बुद्धि नही होती कि केवल ईश्वर ही कर्ता है तव तक लौट-लौट कर आना ही होगा, वारम्वार जन्म लेना पडेगा । फिर जव यह ज्ञान हो जायगा तव जन्म नही होगा ।

"जब तक 'तू ही, तू ही' न करोगे तव तक छुटकारा नही । आना-जाना, पुनर्जन्म होगा ही---मुक्ति न होगी । और 'मेरा मेरा' कहने से ही क्या होगा ? बाबू का मुनीम कहता है, 'यह हमारा बगीचा है, हमारी खाट, हमारी कुरसी ।' परन्तु बाबू जब उसे नौकरी से निकाल देते हैं तो अपनी आम की लकडी की छोटी सी सन्दूकची तक ले जाने का उसे अधिकार नही रहता ।

" 'मै और मेरा' ने सत्य को छिपा रखा है---जानने नही देता ।

अद्वैत ज्ञान तथा चैतन्य दर्शन

"अद्वैत का ज्ञान हुए विना चैतन्य का दर्शन नही होता । चैतन्य का दर्शन होने पर तव नित्यानन्द होता है । परमहस स्थिति में यही नित्यानन्द है ।

"वेदान्त मत में अवतार नही है । इस मत मे चैतन्यदेव अद्वैत के एक बुलबुला हैं ।

"चैतन्य का दर्शन कैसा ? दियासलाई जलाने से अन्धेरे कमरे मे जिस प्रकार एकाएक रोशनी हो जाती है ।

"भक्ति मत में अवतार मानते हैं । कर्ताभजा सम्प्रदाय की एक स्त्री मेरी स्थिति को देखकर कह गयी, 'बाबा, भीतर वस्तु-

प्राप्ति हुई है, उतना नाचना-कूदना नहीं, अंगूर के फल को रुई पर यत्न से रखना होता है। पेट में बच्चा होने पर सास अपनी बहू का धीरे-धीरे काम बन्द करा देती है। भगवान् के दर्शन का लक्षण है, धीरे-धीरे कर्मत्याग होना। यह मनुष्य (श्रीरामकृष्ण) 'नर-रत्न' है।'

"मेरे खाते समय वह कहती थीं, 'बाबा, तुम खा रहे हो या किसी को खिला रहे हो' ?

"'अहं' ज्ञान ने ही आवरण बनाकर रखा है। नरेन्द्र ने कहा था, 'यह 'मैं' जितना जायेगा, 'उनका मैं' उतना ही आयेगा।' केदार कहता है, घटे के भीतर जितनी ही अधिक मिट्टी रहेगी, अन्दर उतना ही जल कम रहेगा।

"कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, 'भाई, अष्ट सिद्धियों में से एक भी सिद्धि के रहते तक मुझे न पाओगे। उनसे थोड़ी सी शक्ति अवश्य मिल जाती है, पर बस केवल इतना ही। गुटिकासिद्धि, झाड-फूंक, दवा देना इत्यादि में लोगों का कुछ थोड़ा बहुत उपकार भर हो जाता है, क्यों है न यही ?

"इसीलिए माँ से मैंने केवल शुद्धा भक्ति माँगी थी; सिद्धि नहीं माँगी।"

बलराम के पिता, वेणीपाल, मास्टर, मणि मल्लिक आदि से यह बात कहते-कहते श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। बाह्य ज्ञान-शून्य होकर चित्र की तरह बैठे हैं।

समाधि भंग हो जाने के बाद श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे हैं—

(संगीत—भावार्थ)

"सखि ! जिसके लिए पागल बनी उसे कहाँ पा सकी ?"

अब उन्होंने रामलाल से गाना गाने के लिए कहा, वे गा

रहे हैं। पहले ही गौराग का सन्यास—

(सगीत—भावार्थ)

"केशव भारती की कुटिया में मैंने क्या देखा—असाधारण ज्योतिवाली श्रीगौराग की मूर्ति जिसकी दोनो आँखो से शत धाराओ से प्रेमवारि बह रहा है। गौर पागल हाथी की तरह प्रेम के आवेग मे आकर नाचते हैं, गाते हैं, कभी भूमि पर लेटते हैं, आँसू बह रहे हैं। वे रोते हैं और हरिनाम उच्चारण करते हैं, उनका सिह जैसा उच्च स्वर आकाश को भी भेद रहा है। फिर वे दाँतो में तिनका लेकर हाथ जोडकर द्वार-द्वार पर दास्य-भाव द्वारा मुक्ति की प्रार्थना कर रहे हैं।"

चैतन्य देव के इस 'पागल' प्रेमोन्माद-स्थिति के वर्णन के बाद श्रीरामकृष्ण के कहने पर रामलाल फिर गोपियो की उन्माद स्थिति का गाना गा रहे हैं—

(सगीत—भावार्थ)

"रथचक्र को न पकडो, न पकडो, क्या रथ चक्र से चलता है? उस चक्र के चक्री हरि है, जिनके चक्र से जगत् चलता है।"

(सगीत—भावार्थ)

"श्याम रूपी चन्द्र का दर्शन कर नवीन बादल की कहाँ गिनती है? हाथ में बसरी होने पर इसी अपने रूप से जगत् को आलोकित कर रहा है।"

(२)

अछूतो की समस्या—अस्पृश्य जाति की हरिनाम से शुद्धि

हरिभक्ति होने पर फिर जाति का विचार नही रहता। श्रीरामकृष्ण मणि मल्लिक से कह रहे हैं,—"तुम तुलसीदास की वह कहानी कहो तो।"

मणि मल्लिक—चातक की प्यास से छाती फटी जाती है—गंगा, यमुना, सरयू आदि कितनी नदियाँ और तालाब हैं, परन्तु वह कोई भी जल नहीं पीयेगा, केवल स्वाति नक्षत्र की वर्षा के जल के लिए ही मुँह खोले रहता है।

श्रीरामकृष्ण—अर्थात् उनके चरणकमलों में भक्ति ही सार है, शेष सब मिथ्या।

मणि मल्लिक—तुलसीदास की एक और बात—स्पर्शमणि से लगते ही, अष्ट धातु सोना बन जाती है। उसी प्रकार सभी जातियाँ—चमार, चाण्डाल तक हरिनाम लेने पर शुद्ध हो जाती हैं। और वैसे तो 'बिना हरिनाम चार जात चमार'।

श्रीरामकृष्ण—जिस चमड़े की खाल छूनी भी नहीं चाहिए, उसी को पका लेने के बाद फिर देव-मन्दिर में भी ले जाते हैं।

"ईश्वर के नाम से मनुष्य पवित्र होता है। इसीलिए नाम-कीर्तन का अभ्यास करना चाहिए। मैंने यदु मल्लिक की माँ से कहा था, 'जब मृत्यु आयेगी, तब इस संसार की चिन्ता उत्पन्न होगी। परिवार, लड़के-लड़कियों की चिन्ता—मृत्युपत्र की चिन्ता—यही सब बातें आयेंगी, भगवान् की चिन्ता न आयेगी। उपाय है उनके नाम का जप करना, नाम-कीर्तन का अभ्यास करना। यदि अभ्यास रहा, तो मृत्यु के समय में उन्हीं का नाम मुँह में आयेगा। बिल्ली जब चिड़िया को पकड़ती है, उस समय चिड़िया की 'च्याँ, च्याँ' बोली ही निकलेगी। उस समय वह 'राम-राम, हरेकृष्ण' न बोलेगी।

"मृत्यु-समय के लिए तैयार होना अच्छा है। अन्तिम दिनों में निर्जन में जाकर केवल ईश्वर का चिन्तन तथा उनका नाम जपना। हाथी को नहला कर यदि हाथीखाने में ले जाया जाय

तो फिर वह अपनी देह में मिट्टी-कीचड नही लगा सकता।"

वलराम के पिता, मणि मल्लिक, वेणीपाल ये अव वृद्ध हो गये हैं, क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण उनके कल्याण के लिए ये सब उपदेश दे रहे हैं ?

श्रीरामकृष्ण फिर भक्तो को सम्बोधित करके वातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—एकान्त मे उनका चिन्तन और नाम स्मरण करने के लिए क्यो कहता हूँ ? ससार मे रातदिन रहने पर अशान्ति होती है। देखो न, एक गज जमीन के लिए भाई-भाई में मारकाट होती है।

"सिक्खो का कहना है कि जमीन, स्त्री और धन—इन्ही तीनो के लिए इतनी गडवड तथा अशान्ति होती है।

"तुम लोग ससार मे हो तो इसमें भय क्या है ? राम ने ससार छोडने की बात कही, तो दशरथ चिन्तित होकर वशिष्ठ की शरण मे गये। वशिष्ठ ने राम से कहा, 'राम, तुम क्यो ससार को छोडोगे ? मेरे साथ विचार करो, क्या ससार ईश्वर से अलग है ? क्या छोडोगे और क्या ग्रहण करोगे ? उनके अतिरिक्त और कुछ नही है। वे ईश्वर, माया, जीव, जगत् सभी रूप में प्रकट हो रहे हैं।"

वलराम के पिता—वडा कठिन है।

श्रीरामकृष्ण—साधना के समय यह ससार धोखे की टट्टी है, फिर ज्ञान प्राप्त करने के बाद, उनके दर्शन के बाद, वही ससार —"आनन्द की कुटिया" है।

अवतार पुरुष में ईश्वर का दर्शन। अवतार चैतन्यदेव

"वैष्णव ग्रन्थ में कहा है, 'विश्वास से कृष्ण मिलते हैं, तर्क से बहुत दूर होते हैं।' केवल विश्वास!

"कृष्णकिशोर का क्या ही विश्वास है! वृन्दावन में कुएँ से एक नीच जाति के पुरुष ने जल निकाला, उससे कहा, 'बोल शिव', उसके शिवनाम कहते ही उन्होंने जल पी लिया। वह कहता था, 'ईश्वर का नाम ले लिया है, तो फिर धन आदि खर्च करके प्रायश्चित्त करने में क्या रखा है? कैसी विडम्बना है!'

"कृष्णकिशोर यह देखकर आश्चर्यचकित हो गया कि लोग अपने शारीरिक रोगों से छुटकारा पाने के लिए भगवान् की तुलसीदल से पूजा कर रहे हैं। साधु-दर्शन की बात पर हलधारी ने कहा था, 'अब और क्या देखने जाऊँ--पचभूतों का पिंजरा!' कृष्णकिशोर ने क्रुद्ध होकर कहा, 'ऐसी बात हलधारी ने कही है! क्या वह नहीं जानता कि साधुओं की देह चिन्मय होती है!'

"काली-बाड़ी के घाट पर हमसे कहा था, तुम लोग आशीर्वाद दो कि राम राम कहते मेरे दिन कट जायँ!

"मैं कृष्णकिशोर के मकान पर जब जाता हूँ, तब मुझे देखते ही वह नाचने लगता है!

"श्रीरामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा था, 'भाई, जहाँ पर शुद्धा भक्ति देखोगे, जानो कि वहीं पर मैं हूँ।'

"जैसे चैतन्य देव, प्रेम से हँसते हैं, रोते हैं, नाचते हैं, गाते हैं। चैतन्यदेव अवतार--उनके रूप में ईश्वर अवतीर्ण हुए हैं।"

श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे हैं--

(संगीत--भावार्थ)

"भावनिधि श्री गौरांग का भाव तो होगा ही रे! वे भाव-विभोर होकर हँसते हैं, रोते हैं, नाचते हैं, गाते हैं! (सिसक-सिसक कर रोते हैं)"

(३)

चित्तशुद्धि के बाद ईश्वर-दर्शन

बलराम के पिता, मणि मल्लिक, वेणीपाल आदि विदा ले रहे हैं।

सायंकाल के बाद कसारीपाडा की हरिसभा के भक्तगण आये हैं।

उनके साथ श्रीरामकृष्ण मतवाले हाथी की तरह नृत्य कर रहे हैं। नृत्य के बाद भावविभोर होकर कह रहे हैं, "मैं कुछ दूर अपने आप ही जाऊँगा।'

किशोरी भावावस्था में चरण-सेवा करने जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने किसी को छूने नहीं दिया।

सन्ध्या के बाद ईशान आये हैं। श्रीरामकृष्ण बैठे हैं भावविभोर। थोडी देर बाद ईशान के साथ बात कर रहे हैं, ईशान की इच्छा है, गायत्री का पुरश्चरण करेंगे।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति)—तुम्हारे मन में जो है, वैसा ही करो, मन में और सन्देह तो नहीं रहा ?

ईशान—मैंने एक प्रकार प्रायश्चित्त की तरह संकल्प किया था।

श्रीरामकृष्ण—इस पथ में (तन्त्र-मार्ग में) क्या यह नहीं होता ? जो ब्रह्म है, वही शक्ति काली है। 'मैंने काली-ब्रह्म का मर्म जानकर धर्माधर्म सब छोड दिया है।'

ईशान—चण्डी-स्तोत्र में है, ब्रह्म ही आद्या शक्ति हैं। ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं।

श्रीरामकृष्ण—यह मुँह से कहने से ही नहीं होगा। जब धारणा होगी तब ठीक होगा।

"साधना के बाद चित्तशुद्धि होने पर यथार्थ ज्ञान होगा कि वे ही कर्ता हैं। वे ही मन-प्राण-बुद्धिरूप हैं। मैं केवल यन्त्ररूप हूँ! 'तुम कीचड़ में हाथी को फँसा देते हो, लंगड़े से पहाड़ लँघवाते हो!'

"चित्तशुद्धि होने पर समझ में आयेगा, पुरश्चरण आदि कर्म वे ही करवाते हैं। 'उनका काम वे ही करते हैं। लोग कहते हैं, मैं करता हूँ।'

"उनका दर्शन होने पर सभी सन्देह मिट जाते हैं। उस समय अनुकूल हवा बहती है। अनुकूल हवा बहने पर जिस प्रकार नाव का माँझी पाल उठाकर पतवार पकड़कर बैठा रहता है और तम्बाकू पीता है, उसी प्रकार भक्त निश्चिन्त हो जाता है।"

ईशान के चले जाने पर श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ एकान्त में बात कर रहे हैं; पूछ रहे हैं, "नरेन्द्र, राखाल, अधर, हाजरा, ये लोग तुम्हें कैसे लगते हैं, सरल हैं या नहीं? और मैं तुम्हें कैसा लगता हूँ?" मास्टर कह रहे हैं, "आप सरल हैं पर फिर भी गम्भीर! आपको समझना बहुत कठिन है!" श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।

परिच्छेद ३४

ब्राह्म भक्तों के प्रति उपदेश

(१)

सत्य की महिमा । समाधि में

कार्तिक की कृष्णा एकादशी है, २६ नवम्बर, १८८३। सिन्दूरिया-पट्टी के श्रीयुत मणिलाल मल्लिक के मकान में ब्राह्म-समाज का अधिवेशन हुआ करता है। मकान चितपुर रास्ते पर है। समाज का अधिवेशन राजपथ के पास ही दुमजले के सभा-गृह में हुआ करता है। आज समाज की वार्षिकी है, इसीलिए मणिलाल महोत्सव मना रहे हैं।

उपासनागृह आज आनन्दपूर्ण है, बाहर और भीतर हरे-हरे पल्लवों, नाना प्रकार के फूलों और पुष्पमालाओं से सुशोभित हो रहा है। शाम के पहले से ही ब्राह्म-भक्तगण आने लगे हैं। उन्हें आज एक विशेष उत्साह है—वहाँ आज श्रीरामकृष्णदेव का शुभागमन होगा। केशव, विजय, शिवनाथ आदि ब्राह्मसमाज के भक्त नेताओं को श्रीरामकृष्णदेव बहुत प्यार करते थे। यही कारण है कि ब्राह्मभक्तों के वे इतने प्यारे हो गये थे। वे भगवत्प्रेम में मस्त रहते हैं, उनका प्रेम, उनका प्राजल विश्वास, ईश्वर के साथ बालक की तरह उनकी बातचीत, ईश्वर के लिए व्याकुल होकर रोना, माता मानकर स्त्री-जाति की पूजा, उनका विषयप्रसंग-वर्जन, तैल-धारावत् सदा ही ईश्वर-प्रसंग करते रहना, उनका सर्वधर्म-समन्वय और अन्य धर्मों के प्रति लेशमात्र भी द्वेष-भाव का न रहना, भगवद्भक्तों के लिए उनका रोना, इन

सब कारणों से ब्राह्मभक्तों का चित्त उनकी ओर आकर्षित हो चुका था, इसीलिए आज कितने ही भक्त बहुत दूर से उनके दर्शन के लिए आये हुए हैं।

उपासना के पूर्व श्रीरामकृष्ण विजयकृष्ण गोस्वामी और दूसरे भक्तों के साथ प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं। समाजगृह में दीप जल चुका है, अब शीघ्र ही उपासना शुरू होगी।

श्रीरामकृष्ण बोले, "क्योंजी, क्या शिवनाथ न आयेगा ?" एक ब्राह्म भक्त ने कहा, "जी नहीं, आज उनको कई काम हैं, आ न सकेंगे।"

श्रीरामकृष्ण—शिवनाथ को देखने से मुझे बड़ा आनन्द होता है। मानो भक्तिरस में डूबा हुआ है। और जिसे बहुत लोग मानते-जानते हैं उसमें ईश्वर की कुछ शक्ति अवश्य रहती है। परन्तु शिवनाथ में एक बहुत बड़ा दोष है—उसकी बात का कोई निश्चय नहीं रहता। मुझसे उसने कहा था, एक बार वहाँ (दक्षिणेश्वर, जहाँ श्रीरामकृष्ण रहते थे) जायेंगे, परन्तु फिर नहीं आया और न कोई खबर ही भेजी, यह अच्छा नहीं है। एक यह भी कहा है कि **सत्य बोलना कलिकाल की तपस्या है**। दृढ़ता के साथ सत्य को पकड़े रहने से ईश्वर-लाभ होता है। सत्य की दृढ़ता के न रहने से क्रमश: सब नष्ट हो जाता है। यही सोचकर मैं अगर कह डालता हूँ, मुझे शौच को जाना है, और शौच को जाने की आवश्यकता फिर न भी रहे, तो भी एक बार गड़ुवा लेकर झाऊतल्ले की ओर जाता हूँ। यही भय लगा रहता है कि कहीं सत्य की दृढ़ता न खो जाय। इस अवस्था के बाद हाथ में फूल लेकर माँ से मैंने कहा था, 'माँ, यह लो तुम अपना ज्ञान,

यह लो अपना अज्ञान, मुझे शुद्धा भक्ति दो माँ, यह लो अपना भला, यह लो अपना बुरा, मुझे शुद्धा भक्ति दो माँ, यह लो अपना पुण्य, यह लो अपना पाप, मुझे शुद्धा भक्ति दो।' जब यह सब मैंने कहा था, तब यह बात नही कह सका कि माँ, यह लो अपना सत्य, यह लो अपना असत्य। माँ को सब कुछ तो दे सका, परन्तु सत्य न दे सका।

ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना होने लगी। आचार्यजी वेदी पर बैठ गये। उद्बोधन-मन्त्र के बाद आचार्यजी परब्रह्म को लक्ष्य करके वेदोक्त महामन्त्रों का उच्चारण करने लगे। ब्राह्म-भक्तगण स्वर मिलाकर पुराने आर्यऋषियो के मुँह से निकले हुए, उनकी पवित्र रसनाओं द्वारा उच्चारित नामों का कीर्तन करने लगे, कहने लगे—"सत्य ज्ञानमनन्त ब्रह्म, आनन्द-रूपममृत यद्विभाति, शान्त शिवमद्वैतम्, शुद्धमपापविद्धम्।" प्रणव-सयुक्त यह ध्वनि भक्तो के हृदयाकाश में प्रतिध्वनित होने लगी। अनेको के अन्तस्तल मे वासना का निर्वाण-सा हो गया। चित्त बहुत कुछ स्थिर और ध्यानोन्मुख होने लगा। सब की आँखें मुँदी हुई हैं,—थोडी देर के लिए सब कोई वेदोक्त सगुण ब्रह्म का चिन्तन करने लगे।

श्रीरामकृष्णदेव भावमग्न हैं। नि स्पन्द, स्थिरदृष्टि, निर्वाक्, चित्रपुत्तलिका की तरह बैठे हुए हैं। आत्मा पक्षी न जाने कहाँ आनन्दपूर्वक विहार कर रहा है, शरीर शून्य मन्दिर-सा पडा हुआ है।

समाधि के कुछ समय बाद श्रीरामकृष्णदेव आँखे खोलकर चारो ओर देख रहे हैं। देखा, सभी के सभी मनुष्य आँखें बन्द किये हुए हैं। तब श्रीरामकृष्णदेव 'ब्रह्म' 'ब्रह्म' कहकर एकाएक

खड़े हो गये। उपासना के बाद ब्राह्मभक्त-मण्डली खोल और करताल लेकर संकीर्तन करने लगी। प्रेम और आनन्द में मग्न होकर श्रीरामकृष्ण भी उनके साथ मिल गये और नृत्य करने लगे। सब लोग मुग्ध होकर वह नृत्य देख रहे हैं। विजय और दूसरे भक्त भी उन्हें घेरकर नाच रहे हैं। कितने लोग तो यह दृश्य देखकर ही कीर्तन का आनन्द लेते हुए संसार को भूल गये —नामामृत पीकर थोड़ी देर के लिए विषय का आनन्द भूल गये—विषयसुख का स्वाद कटु जान पड़ने लगा।

कीर्तन हो जाने पर सबने आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण क्या कहते हैं, यह सुनने के लिए सब लोग उन्हें घेरकर बैठे।

(२)

गृहस्थों के प्रति उपदेश

ब्राह्म भक्त-मण्डली को सम्बोधित करके श्रीरामकृष्ण ने कहा—"निर्लिप्त होकर संसार में रहना कठिन है। प्रताप ने कहा था, महाराज, हमारा वह मत है जो राजर्षि जनक का था; जनक निर्लिप्त होकर संसार में रहते थे, वैसा ही हम लोग भी करेंगे।" मैंने कहा—सोचने ही से क्या कोई जनक हो सकता है? राजर्षि जनक को कितनी तपस्या करने के बाद ज्ञान-लाभ हुआ था! नत मस्तक और ऊर्ध्वपद होकर तपस्या में कितना काल व्यतीत करने के बाद वे संसार में लौटे थे!

"परन्तु क्या संसारियों के लिए उपाय नहीं है?—हाँ, अवश्य है। कुछ दिन एकान्त में साधना करनी पड़ती है, तब भक्ति होती है, तब ज्ञान होता है, इसके बाद जाकर संसार में रहो, फिर कोई दोष नहीं। जब निर्जन में साधना करोगे, उस समय संसार से बिल्कुल अलग रहो; स्त्री, पुत्र, कन्या, माता, पिता,

भाई, बहिन, आत्मीय, कुटुम्ब कोई भी पास न रहे; निर्जन में साधना करते समय सोचो, हमारे कोई नहीं है, ईश्वर ही हमारे सर्वस्व हैं। और रोकर उनके पास ज्ञान और भक्ति की प्रार्थना करो।

"यदि कहो, कितने दिन ससार छोडकर निर्जन में रहे ? तो इसके लिए यदि एक दिन भी इस तरह कर सको तो वह भी अच्छा, तीन दिन रहो तो और अच्छा है, अथवा बारह दिन, महीने भर, तीन महीने, साल भर,—जो जितने दिन रह सके। ज्ञान-भक्ति प्राप्त करके ससार मे रहने से फिर अधिक भय नहीं रहता।

"हाथो में तेल लगाकर कटहल काटने से फिर हाथो मे उसका दूध नही चिपकता। छुई-छुऔवल खेलो तो पार छू लेने से फिर डर नही रहता। एक बार पारस पत्थर को छूकर सोना बन जाओ, फिर हजार वर्ष के बाद भी जब मिट्टी से निकाले जाओगे, तो सोना का सोना ही रहोगे।

"मन दूध की तरह है। उसी मन को अगर ससार-रूपी जल में रखो तो दूध पानी से मिल जायगा, इसीलिए दूध को निर्जन में दही बनाकर उससे मक्खन निकाला जाता है। जब निर्जन में साधना करके मन-रूपी दूध से ज्ञान-भक्ति-रूपी मक्खन निकाला गया, तब वह मक्खन अनायास ही ससार-रूपी पानी में रखा जा सकता है। वह मक्खन कभी ससार-रूपी जल से मिल नहीं सकता—ससार-जल पर निर्लिप्त होकर उतराता रहता है।"

(२)

श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी की निर्जन में साधना

श्रीयुत विजय अभी-अभी गया से लौटे हैं। वहाँ बहुत दिनो

तक निर्जन में रहकर वे साधुओं से मिलते रहे थे। इस समय उन्होंने भगवा धारण कर लिया है। उनकी अवस्था बडी ही सुन्दर है, जान पडता है, सदा ही अन्तर्मुख रहते हैं। श्रीरामकृष्णदेव के पास सिर झुकाये हुए हैं, जैसे मग्न होकर कुछ सोचते हों।

विजय को देखते ही श्रीरामकृष्णदेव ने कहा, "विजय, तुमने घर ढूँढ लिया ?"

"देखो, दो साधु विचरण करते हुए एक शहर में आ पहुँचे। आश्चर्यचकित होकर उनमें से एक शहर, बाजार, दूकानें और इमारतें देख रहा था, इसी समय दूसरे से उसकी भेंट हो गयी। तब दूसरे साधु ने कहा, तुम शहर देख रहे हो, तुम्हारा डेरा-डण्डा कहाँ है ? पहले साधु ने कहा, मैं पहले घर की खोज करके, डेरा-डण्डा रख, ताला लगाकर, निश्चिन्त होकर निकला हूँ, अब शहर का रंग-ढंग देख रहा हूँ, इसीलिए तुमसे मैं पूछ रहा हूँ, क्या तुमने घर ढूँढ लिया ? (मास्टर आदि से) देखो, इतने दिनों तक विजय का फवारा दबा हुआ था, अब खुल गया है।

(विजय से) "देखो, शिवनाथ बडी उलझन में है। अखबार में लिखना पडता है, और भी बहुत से काम उसे करने पड़ते हैं। विषय-कर्म ही से अशान्ति होती है, कितनी भावनाएँ आ इकट्ठी होती हैं।

"श्रीमद्भागवत में है, अवधूत ने चौबीस गुरुओं में चील को भी एक गुरु बनाया था। एक जगह धीवर मछली मार रहे थे, एक चील एक मछली ले गयी, परन्तु मछली को देखकर एक हजार कौवे उसके पीछे लग गये, और साथ ही काँव-काँव करके बड़ा हल्ला मचाना शुरु कर दिया। मछली को लेकर चील जिस

तरफ जाती, कौवे भी उसके पीछे-पीछे उसी तरफ जाते, जब वह उत्तर की तरफ गयी तब वे भी उसी ओर गये। इस तरह पूर्व-पश्चिम की ओर चील चक्कर काटने लगी। अन्त में, घबराहट के मारे उसके चक्कर लगाते समय मछली उससे छूटकर जमीन पर गिर पड़ी। चील तब निश्चिन्त होकर एक पेड़ की डाल पर जा बैठी। बैठी हुई सोचने लगी, कुल बखेड़े की जड़ यही मछली थी। अब वह मेरे पास नहीं है, इसीलिए मैं निश्चिन्त हूँ।

"अवधूत ने चील से यह शिक्षा प्राप्त की कि जब तक मछली साथ रहेगी अर्थात् वासना रहेगी, तब तक कर्म भी रहेगा, और कर्म के कारण भावना, चिन्ता और अशान्ति भी रहेगी। वासना का त्याग होने से ही कर्मों का क्षय हो जाता है और शान्ति मिलती है।

"परन्तु निष्काम कर्म अच्छा है। उससे अशान्ति नहीं होती। परन्तु वासना कहाँ से निकल पड़ती है, यह समझ में नहीं आता। यदि पहले की साधना अधिक हो तो उसके बल से कोई-कोई निष्काम कर्म कर सकते हैं। ईश्वर-दर्शन के बाद निष्काम कर्म अनायास ही किये जा सकते हैं। ईश्वर-दर्शन के बाद प्राय. कर्म छूट जाते हैं। दो-एक मनुष्य (नारदादि) लोक शिक्षा के लिए कर्म करते हैं।

संन्यासी को संचय न करना चाहिए। प्रेम का फलस्वरूप कर्मत्याग

"अवधूत की एक आचार्या और थी—मधुमक्खी। मधुमक्खी बड़े परिश्रम से कितने ही दिनों में मधु-सचय करती है, परन्तु उस मधु का भोग वह स्वयं नहीं कर पाती। छत्ता कोई दूसरा ही आकर तोड़ ले जाता है। मधुमक्खी से अवधूत को यह शिक्षा

मिली कि सचय न करना चाहिए। माधु-सत सोलहो आने ईश्वर पर अवलम्बित रहते हैं। उन्हे सचय न करना चाहिए।

"यह ससारियो के लिए नहीं है। ससारी को ससार का भरणपोषण करना पडता है। इसीलिए उन्हे सचय की आवश्यकता होती है। पक्षी और सत सचयी नहीं होते, परन्तु चिडियाँ बच्चे देने पर सचय करती हैं—चोंच में दबाकर बच्चे के लिए खाना ले आती हैं।

"देखो विजय, साधु के साथ अगर बोरिया-बधना रहे—कपड़े की पन्द्रह गिरहवाली गठरी रहे तो उस पर विश्वास न करना। मैंने बटतल्ले में ऐसे साधु देखे थे। दो-तीन बैठे हुए थ, कोई दाल के ककड चुन रहा था, कोई कपडा सी रहा था और कोई बडे आदमी के घर के भण्डारे की गप्प लडा रहा था, 'अरे उस बाबू ने लाखो रुपये खर्च किये, साधुओं को खूब खिलाया—पूडी, जलेबी, पेडा, बरफी, मालपुआ, बहुत सी चीजें तैयार करायी'।" (सब हँसते हैं)

विजय—जी हाँ, गया में इस तरह के साधु मुझे भी देखने को मिले हैं। गया के साधु लोटावाले होते हैं। (सब हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति)—ईश्वर पर जब प्रेम हो जाता है तब कर्म आप ही आप छूट जाते हैं। ईश्वर जिनसे कर्म कराते हैं, वे करते रहें। अब तुम्हारा समय हो गया है; अब तुम कहो, 'मन! तू देख और मैं देखूं, कोई दूसरा जैसे न देखे।'

यह कहकर श्रीरामकृष्ण उस अतुलनीय कठ से माधुरी बरसाते हुए गाने लगे—(गीत का आशय यह है)—

"आदरणीय श्यामा माँ को यत्नपूर्वक हृदय में धारण करो। मन! तू देख और मैं देखूं, कोई दूसरा जैसे न देखने पाये। कामादि

को धोखा देकर, मन ! आ, निर्जन में उसे देखें, साथ रसना को भी रखेंगे ताकि वह 'माँ-माँ' कहकर पुकारती रहे ! कुमन्त्रणाएँ देनेवाली जितनी कुरुचियाँ हैं उन्हे पास भी न फटकने देना। ज्ञान-नयन को पहरेदार रखो, वह सतर्क रहे।"

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति)—भगवान् की शरण में जाकर अब लज्जा, भय, यह सब छोडो। मैं अगर भगवत्कीर्तन में नाचूँ, तो लोग मुझे क्या कहेंगे, यह सब भाव छोडो।

"लज्जा, घृणा और भय, इन तीनो में किसी के रहते ईश्वर नहीं मिलते। लज्जा, घृणा, भय, जाति-अभिमान, गुप्त रखने की इच्छा, ये सब पाश हैं। इन सबके चले जाने से जीव की मुक्ति होती है।

"पाशो में जो बँधा हुआ है वह जीव है और उनसे जो मुक्त है वह शिव है। भगवत्प्रेम दुर्लभ वस्तु है। पहले पहल, पति के प्रति पत्नी की जैसी निष्ठा होती है वैसी ही जब ईश्वर के प्रति होगी तभी भक्ति होती है। शुद्धा भक्ति का होना बडा कठिन है। भक्ति द्वारा मन और प्राण ईश्वर में लय हो जाते हैं।

"इसके बाद भाव होता है। भाव में मनुष्य निर्वाक् हो जाता है। वायु स्थिर हो जाती है। कुम्भक आप ही आप होता है; जैसे बन्दूक दागते समय गोली चलानेवाला मनुष्य निर्वाक् हो जाता है और उसकी वायु स्थिर हो जाती है।

"प्रेम का होना बडी दूर की बात है। प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था। ईश्वर पर जब प्रेम होता है, तब बाहर की चीजें भूल जाती हैं। ससार भूल जाता है। अपना शरीर जो इतना प्यारा है, वह भी भूल जाता है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्णदेव फिर गाने लगें—(गीत का

आशय नीचे दिया जाता है)—

"नही मालूम, कब वह दिन होगा जब राम-नाम कहते हुए मेरी आँखो से धारा बह चलेगी, ससार-वासना दूर हो जायगी, शरीर पुलकित हो जायगा।"

(४)

भाव, कुम्भक तथा ईश्वरदर्शन

ऐसी बातचीत हो रही है, ठीक इसी समय कई और निमन्त्रित ब्राह्म भक्त आकर उपस्थित हो गये। उनमें कुछ तो पण्डित थे और कुछ उच्च पदाधिकारी राजकर्मचारी। उनमें एक श्रीयुत रजनीनाथ राय भी थे।

श्रीरामकृष्ण कहते हैं, "भाव के होने पर वायु स्थिर हो जाती है। अर्जुन ने जब लक्ष्य-भेद किया, तब उनकी दृष्टि मछली की आँख पर ही थी—किसी दूसरी ओर नही। यहाँ तक कि आँख के सिवाय कोई दूसरा अग उन्हे दीख ही नही पडा। ऐसी अवस्था में वायु स्थिर होती है, कुम्भक होता है।

"ईश्वर-दर्शन का एक लक्षण यह है कि भीतर से महावायु घरघराती हुई सिर की ओर जाती है, तब समाधि होती है, भगवान् के दर्शन होते हैं।

"जो पण्डित मात्र हैं किन्तु ईश्वर पर जिनकी भक्ति नही है उनकी बाते उलझनदार होती हैं। सामाध्यायी नाम के एक पण्डित ने कहा था, 'ईश्वर नीरस है, तुम लोग अपनी भक्ति और प्रेम के द्वारा उसे सरस कर लो।' जिन्हे वेदो ने 'रसस्वरूप' कहा है, उन्हे नीरस बतलाता है! इससे ज्ञान होता है कि वह मनुष्य नही जानता ईश्वर कौनसी वस्तु है। उसकी बाते इसीलिए इतनी उलझनदार हैं।

"एक ने कहा था, मेरे मामा के यहाँ घोडो की एक बडी गोशाला है ! उसकी इस बात से समझना चाहिए कि घोडा एक भी नही है, क्योकि घोडे कभी गोशाला में नही रहते। (सब हँसते हैं)

"किसी को ऐश्वर्य का—वैभव, सम्मान, पद आदि का अहकार होता है। यह सब दो दिन के लिए है। साथ कुछ भी न जायगा। एक गीत मे है—(गीत का आशय)—

"ऐ मन सोच ले, कोई किसी का नही है। तू इस ससार मे वृथा ही मारा-मारा फिरता है। मायाजाल में फँसकर दक्षिणा-काली को भूल न जाना। जिसके लिए तू इतना सोचता है, क्या वह तेरे साथ भी जायगा ? तेरी वही प्रेयसी, जब तू मर जायगा तब तेरी लाश से अमगल की शका करके घर मे पानी का छिड-काव करेगी। यह सोचना कि मुझे लोग मालिक कहते है, सिर्फ दो ही दिन के लिए है। जब कालाकाल के मालिक आ जाते हैं तब पहले के वही मालिक श्मशानघाट में फेंक दिये जाते हैं।"

"और धन का अहकार भी न करना चाहिए। अगर कहो, मैं धनी हूँ, तो धनी भी एक-एक से बढकर है। सन्ध्या के बाद जब जुगनू उडता है, तब वह सोचता है, इस ससार को प्रकाश मैं दे रहा हूँ। परन्तु तारे ज्यो ही उगते हैं कि उसका अहकार चला जाता है। तब तारे सोचने लगे, हमी लोग ससार को प्रकाश देते हैं। कुछ देर बाद चन्द्रोदय हुआ। तब तारे लज्जा से म्लान हो गये। चन्द्रदेव सोचने लगे, मेरे ही आलोक से ससार हँस रहा है, ससार को प्रकाश मैं देता हूँ, देखते ही देखते सूर्य उगे, चन्द्र मलिन होकर ऐसे छिपे कि फिर दीख भी न पडे।

"धनी मनुष्य अगर यह सब सोचे तो धन का अहकार न हो।"

उत्सव के कारण मणिलाल ने खान-पान का बहुत बड़ा आयोजन किया था। उन्होंने यत्नपूर्वक श्रीरामकृष्ण और समवेत भक्तमण्डली को भोजन कराया। जब सब लोग घर लौटे, तब रात बहुत हो गयी थी, परन्तु किसी को कोई कष्ट नहीं हुआ।

परिच्छेद ३५

केशव सेन के मकान पर

(१)

कमल-कुटीर में श्रीरामकृष्ण और श्री केशवचन्द्र सेन

कार्तिक की कृष्ण चतुर्दशी, २८ नवम्बर १८८३, दिन बुधवार है। आज एक भक्त * कमल-कुटीर (Lily Cottage) के पूर्व-वाले रास्ते पर टहल रहे हैं, जैसे व्याकुल हो किसी की प्रतीक्षा कर रहे हों।

कमल-कुटीर के उत्तर की तरफ मंगलवाड़ी है। वहाँ बहुत से ब्राह्म भक्त रहते हैं। केशव भी वहीं रहते हैं। उनकी पीड़ा बढ़ गयी है। कितने ही लोग कहते हैं, अब की बार शायद वे न बचेंगे।

श्रीरामकृष्ण केशव को बहुत प्यार करते हैं, आज इन्हें देखने के लिए आनेवाले हैं। वे दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर से आ रहे हैं। इसीलिए भक्त उनकी बाट जोह रहे हैं।

कमल-कुटीर सर्क्यूलर रोड के पश्चिम ओर है। इसीलिए भक्त महोदय रास्ते में ही टहल रहे हैं। वे दो बजे दिन से प्रतीक्षा कर रहे हैं। कितने ही लोग जाते हैं, वे उन्हें देख भर लेते हैं।

शाम हो आयी, पाँच बज गये। इसी समय श्रीरामकृष्ण की गाड़ी भी आ पहुँची। साथ लाटू तथा दो-एक भक्त और भी थे। और राखाल भी आये हैं।

केशव के घर के आदमी आकर श्रीरामकृष्ण को अपने साथ

---

* ग्रन्थकार स्वयं

ऊपर ले गये। बैठकखाने के दक्षिण-ओर-वाले बरामदे में एक पलग पडा हुआ था। उसी पर श्रीरामकृष्ण को उन्होंने बैठाया।

(२)

समाधिस्थ श्रीरामकृष्ण। जगन्माता का दर्शन तथा उनके साथ वार्तालाप

श्रीरामकृष्ण बडी देर से बैठे हुए हैं। आप केशव को देखने के लिए अधीर हो रहे हैं। केशव के शिष्यगण विनीत भाव से कह रहे हैं कि वे अभी विश्राम कर रहे हैं, थोडी ही देर में आनेवाले हैं।

केशव की पीडा इतनी बढी हुई है कि दशा सकटापन्न हो रही है। इसीलिए उनकी शिष्यमण्डली और घरवाले इतनी सावधानी से काम कर रहे हैं। परन्तु श्रीरामकृष्ण केशव को देखने के लिए उत्तरोत्तर अधीर हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केशव के शिष्यों से)—क्यों जी, उनके आने की क्या आवश्यकता है ? मैं ही क्यों न भीतर चला जाऊँ ?

प्रसन्न (विनयपूर्वक)—अब वे थोडी ही देर में आते हैं।

श्रीरामकृष्ण—जाओ, तुम्हीं लोग ऐसा कर रहे हो। मैं भीतर जाता हूँ।

प्रसन्न श्रीरामकृष्ण को बातों में बहलाने के इरादे से केशव की बातें कह रहे हैं।

प्रसन्न—उनकी अवस्था एक दूसरे ही प्रकार की हो गयी है। आपकी ही तरह माँ के साथ बातचीत करते हैं। माँ जो कुछ कहती हैं, उसे सुनकर कभी हँसते हैं और कभी रोते हैं।

केशव जगन्माता के साथ बातचीत करते हैं, हँसते हैं, रोते हैं, यह सुनते ही श्रीरामकृष्ण भावावेश में आ गये। देखते ही देखते

समाधिस्थ हो गये ।

श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हैं । जाड़े का समय है, हरी बनात का कुर्ता पहने हुए हैं । ऊपर से एक ओर शाल डाले हुए हैं । उन्नत देह, दृष्टि स्थिर हो रही है । बिलकुल ही मग्न हैं । बड़ी देर तक यह अवस्था रही । समाधि छूटती ही नही ।

सन्ध्या हो आयी, श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हो गये । पास के बैठकखाने में दीप जलाया जा चुका है । श्रीरामकृष्ण को उसी घर में बिठाने की चेष्टा की जा रही है ।

बड़ी कठिनाई से लोग बैठकखाने के घर मे उन्हे ले गये ।

कमरे में बहुत सी चीजें हैं—कोच, टेबिल, कुर्सी, गैसबत्ती आदि। श्रीरामकृष्ण को लोगों ने एक कोच पर ले जाकर बैठाया ।

कोच पर बैठते ही श्रीरामकृष्ण फिर बाह्य-ज्ञान-रहित भावाविष्ट हो गये ।

कोच पर दृष्टि डालकर आवेश में मानो कुछ कह रहे हैं, —"पहले इन सब चीजों की आवश्यकता थी, अब क्या आवश्यकता है ?" (राखाल को देखकर) "राखाल, तू भी आया है ?"

कहते ही कहते फिर न जाने क्या देख रहे हैं । कहते हैं— "यह लो माँ आ गयीं । और अब बनारसी साड़ी पहनकर क्या दिखलाती हो माँ ! गोलमाल न करो, बैठो—बैठो भी ।"

श्रीरामकृष्ण पर महाभाव का नशा चढ़ा हुआ है । घर में प्रकाश भर रहा है । ब्राह्म भक्त चारो ओर से घेरे हुए हैं । लाटू, राखाल, मास्टर आदि पास बैठे हुए हैं । श्रीरामकृष्ण भावावस्था में आप ही आप कह रहे हैं—

"देह और आत्मा । देह बनी है और बिगड़ भी जायगी; आत्मा अमर है । जैसे सुपारी—पकी सुपारी छिलके से अलग

रहती है, कच्ची अवस्था में फल और छिलके को अलग-अलग करना बडा कठिन है। उनके दर्शन करने पर, उन्हें प्राप्त करने पर देहबुद्धि दूर हो जाती है। तब समझ में आ जाता है कि आत्मा पृथक् है और देह भी।"

केशव कमरे में आ रहे हैं। पूर्व ओर के द्वार से आ रहे हैं। जिन लोगो ने उन्हे ब्राह्मसमाज-मन्दिर में अथवा टाउन-हाल में देखा था, वे उनकी अस्थि-चर्मावशिष्ट मूर्ति देखकर चकित हो गये। केशव खडे नही हो सकते, दीवार के सहारे आगे बढ रहे हैं। बहुत कष्ट करके कोच के सामने आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण इतने ही में कोच से उतरकर नीचे बैठे। केशव श्रीरामकृष्ण के दर्शन पाकर भूमिष्ठ हो बडी देर तक उन्हे प्रणाम करते रहे। प्रणाम करके उठकर बैठ गये। श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश में हैं। आप ही आप कुछ कह रहे हैं। श्रीरामकृष्ण माता के साथ बातचीत कर रहे हैं।

(३)

ब्रह्म और शक्ति अभेद। नरलीला। सिद्ध और साधक में भेद

अब केशव ने उच्च स्वर से कहा, मैं आया—मैं आया। यह कहकर उन्होने श्रीरामकृष्ण का बाँया हाथ पकड लिया और उसी हाथ पर अपना हाथ फेरने लगे। श्रीरामकृष्ण भावावेश में पूरे मतवाले हो गये हैं; आप ही आप कितनी ही बाते कर रहे हैं। भक्तगण निर्वाक् होकर सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—जब तक उपाधि है, तभी तक अनेक प्रकार के बोध हो सकते हैं, जैसे केशव, प्रसन्न, अमृत—ये सब। पूर्ण ज्ञान होने पर एकमात्र चैतन्य का ही बोध होता है।

"पूर्ण ज्ञान होने पर मनुष्य देखता है, यह जीव-प्रपच, ये चौबीसो तत्त्व एकमात्र वे ही बन गये हैं।

"परन्तु शक्ति की विशेषता पायी जाती है। यह सच है कि सब कुछ वे ही बने हैं, परन्तु कही तो उनकी शक्ति का प्रकाश अधिक है और कही कम।

'विद्यासागर ने कहा था, क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति और किसी को कम शक्ति दी है ? मैंने कहा, अगर ऐसा न होता तो एक आदमी पचास आदमियो को हराता कैसे ?—और तुम्हे ही फिर क्यो हम लोग देखने आते ?

"वे जिस आधार मे अपनी लीला का विकास दिखलाते हैं, वहाँ शक्ति की विशेषता रहती है।

"जमीदार सब जगह पर रहते हैं। परन्तु उन्हे लोग किसी खास बैठकखाने में अक्सर बैठते हुए देखते है। ईश्वर का बैठक-खाना भक्तो का हृदय है। वहाँ अपनी लीला दिखाना उन्हे अधिक पसन्द है। वहाँ उनकी विशेष शक्ति अवतीर्ण होती है।

"इसका लक्षण क्या है ? जहाँ कार्य की अधिकता है वहाँ शक्ति का विशेष प्रकाश है।

"यह **आद्याशक्ति** और **परब्रह्म** दोनो अभेद हैं। एक को छोड दूसरे का चिन्तन नही किया जा सकता। जैसे ज्योति और मणि। मणि को छोड मणि को ज्योति के बारे में सोचा नही जा सकता और न ज्योति को अलग करके मणि के बारे में ही सोचा जा सकता है—जैसे सर्प और उसकी वक्र गति। न सर्प को छोड़ उसकी तिर्यग्गति सोची जा सकती है और न तिर्यग्गति को छोड सर्प की।

"आद्याशक्ति ने ही इस जीव-प्रपच, इस चतुर्विंशति तत्त्व का

स्वरूप धारण किया है—अनुलोम और विलोम। राखाल, नरेन्द्र तथा और-और लडकों के लिए क्यों मैं इतना सोच-विचार किया करता हूँ? हाजरा ने कहा, तुम उन लोगों के लिए इतना सोचते क्यों हो, ईश्वर-चिन्तन फिर कब करोगे? (केशव तथा दूसरों का मुसकराना)

"तब मुझे बडी चिन्ता हुई। मैंने कहा, माँ यह क्या हुआ! हाजरा कहता है, उन लोगों के लिए क्यों सोचते रहते हो? फिर मैंने भोलानाथ से पूछा। उसने कहा, इसका उदाहरण महाभारत में है। समाधिस्थ मनुष्य समाधि से उतरकर ठहरे कहाँ? वह इसीलिए सतोगुणी मनुष्यों को लेकर रहता है। महाभारत का यह उदाहरण जब मिला तब जी में जी आया! (सब हँसते हैं)

"हाजरा का दोष नहीं है। साधक-अवस्था में सम्पूर्ण मन 'नेति' 'नेति' करके उन्हें दे देना पडता है। सिद्ध अवस्था की बात दूसरी है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर अनुलोम और विलोम एक से प्रतीत होते हैं। मट्ठा अलग करने पर जब-जब मक्खन मिलता है तब जान पडता है कि मट्ठे का ही मक्खन है और मक्खन का ही मट्ठा। तब ठीक-ठीक समझ में आता है कि सब कुछ वे ही हुए हैं। कहीं उनका अधिक प्रकाश है, कहीं कम।

"भाव-समुद्र के उमडने पर स्थल में भी एक बाँस पानी जाता है। पहले नदी से होकर समुद्र में जाते समय बहुत कुछ चक्कर लगाकर जाना पडता है, और जब बाढ आती है तब सूखी जमीन पर भी एक बाँस पानी हो जाता है। तब नाव सीधे चलाकर लोग जगह पर पहुँच जाते हैं। फिर चक्कर मारकर नहीं जाना पड़ता। इसी तरह धान कट जाने पर मेड में चक्कर काटकर

नहीं आना पडता। सीधे एक रास्ते से निकल जाओ।

"उन्हे प्राप्त कर लेने पर फिर सभी वस्तुओं में उनके दर्शन होते हैं। मनुष्य के भीतर उनका अधिक प्रकाश है। मनुष्यों में, सतोगुणी भक्तो में उनका और अधिक प्रकाश रहता है--जिनमे कामिनी और कांचन के भोग की बिलकुल ही इच्छा नहीं रहती। (सब स्तब्ध है) समाधिस्थ मनुष्य जब उतरता है तब भला वह कहाँ ठहरे ?--किस पर अपना मन रमाये ? कामिनी और कांचन का त्याग करने वाले सतोगुणी शुद्ध भक्तो की आवश्यकता उन्हे इसीलिए होती है। नहीं तो फिर वे क्या लेकर रहे ?

"जो ब्रह्म हैं, वे ही आद्याशक्ति भी है। जब वे निष्क्रिय है तब उन्हे ब्रह्म कहते हैं, पुरुष कहते है। जब सृष्टि, स्थिति, प्रलय ये सब करते हैं तब उन्हे शक्ति कहते हैं--प्रकृति कहते है। **पुरुष और प्रकृति**। जो पुरुष हैं, वे ही प्रकृति भी है। आनन्दमय और आनन्दमयी।

"जिसे पुरुष-ज्ञान है, उसे स्त्री-ज्ञान भी है। जिसे पिता का बोध है उसे माता का भी बोध है। (केशव हँसते हैं)

"जिसे अँधेरे का ज्ञान है, उसे उजाले का भी ज्ञान है। जिसे सुख का ज्ञान है, उसे दु ख का भी। यह बात समझे ?"

केशव (सहास्य)--जी हां, समझा।

श्रीरामकृष्ण--माँ! कौन सी माँ ? जगत् की माँ--जिन्होंने जगत् की सृष्टि की, जो उसका पालन कर रही हैं, जो अपनी सन्तानों की सदा रक्षा करती हैं, और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष--जो, जो कुछ चाहता है, उसे वही देती हैं। जो उनकी यथार्थ सन्तान है, उसे वे छोड़कर नहीं रह सकती। उसकी माता ही सब कुछ जानती हैं। वह तो बस खाता है, खेलता है, और घूमता

है। इसके सिवाय वह और कुछ नहीं जानता।

केशव—जी हाँ।

(४)

ब्राह्मसमाज और ईश्वर का ऐश्वर्य-वर्णन।

त्रिगुणातीत भक्त

वार्तालाप करते हुए श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हो गये हैं। केशव के साथ हँसते हुए बातचीत कर रहे हैं। कमरे भर के लोग एकाग्र चित्त से उनकी सब बातें सुनते और उन्हें देखते हैं। निर्वाक् इसलिए हैं कि 'तुम कैसे हो' आदि व्यावहारिक बातें तो होतीं ही नहीं, केवल भगवत्-प्रसंग छिड़ा हुआ है।

श्रीरामकृष्ण (केशव से)—ब्राह्म भक्त इतनी महिमा क्यों गाया करते हैं? 'हे ईश्वर, तुमने चन्द्र की सृष्टि की, सूर्य को पैदा किया, नक्षत्र बनाये'—इन सब बातों की क्या आवश्यकता है? बहुत से लोग बगीचे की प्रशंसा करते हैं, पर मालिक से कितने लोग मिलना चाहते हैं? बगीचा बड़ा है या मालिक?

"शराब पी चुकने पर कलवार की दूकान में कितने मन शराब है, इसकी जाँच-पड़ताल से हमारा क्या काम? हमारा तो मतलब एक ही बोतल से निकल जाता है।

"नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) को देखकर मैंने कभी नहीं पूछा, तेरे पिता का क्या नाम है? तेरे पिता की कितनी कोठियाँ हैं?

"कारण जानते हो? मनुष्य स्वयं ऐश्वर्य का आदर करता है, इसलिए वह समझता है कि ईश्वर भी उसका आदर करते हैं। सोचता है, उनके ऐश्वर्य की प्रशंसा करने पर वे प्रसन्न होंगे। शम्भु ने कहा था, अब तो इस समय यही आशीर्वाद दीजिये जिससे यह ऐश्वर्य उनके पाद-पद्मों में अर्पित करके मरूँ। मैंने

कहा, यह तुम्हारे लिए ही ऐश्वर्य है, उन्हें तुम क्या दे सकते हो ! उनके लिए यह सब काठ और मिट्टी के बराबर है ।

"जब विष्णुघर के कुल गहने चुरा लिए गये तब मैं और मथुरबाबू, दोनों श्रीठाकुरजी को देखने के लिए गये । मथुरबाबू ने कहा, चलो महाराज, तुममें कोई शक्ति नहीं है । तुम्हारी देह से कुल गहने निकाल लिए गये और तुम कुछ न कर सके ! मैंने उनसे कहा, यह तुम्हारी कैसी बात है ! तुम जिनके सामने गहने-गहने चिल्लाते हो, उनके लिए ये सब मिट्टी के ढेले हैं । लक्ष्मी जिनकी शक्ति हैं, क्या वे तुम्हारे चोरी गये इन कुछ रुपयों के लिए परेशान होंगे ! ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए ।

"क्या ईश्वर ऐश्वर्य के भी वश हैं ? वे तो भक्ति के वश हैं। जानते हो, वे क्या चाहते हैं ? वे रुपया नहीं चाहते—भाव, प्रेम, भक्ति, विवेक, वैराग्य, यह सब चाहते हैं ।

"जिसका जैसा भाव होता है, वह ईश्वर को वैसा ही देखता है। जो तमोगुणी भक्त है, वह देखता है कि माँ बकरा खाती है, वह बकरे की बलि भी देता है । रजोगुणी भक्त नाना प्रकार के व्यंजन और अन्न-पकवान चढ़ाता है । सतोगुणी भक्त की पूजा में आडम्बर नहीं होता। उसकी पूजा लोग समझ भी नहीं पाते। फूल नहीं मिलते तो वह विल्वपत्र और गंगाजल से ही पूजा कर देता है । थोड़े से चावलों या दो बताशों का ही भोग लगा देता है । कभी-कभी खीर पकाकर ही ठाकुरजी को निवेदित कर देता है ।

"एक और है—त्रिगुणातीत भक्त । उसका स्वभाव बालकों जैसा होता है । ईश्वर का नाम लेना ही उसकी पूजा है । वह बस उनका नाम ही जपता रहता है ।"

(५)

केशव के साथ वार्तालाप। ईश्वर के अस्पताल में आत्मा की रोगचिकित्सा

श्रीरामकृष्ण (केशव के प्रति सहास्य)—तुम्हे बीमारी हुई इसका अर्थ है। शरीर के भीतर कितने ही भावों का उदयास्त हो चुका है। इसीलिए ऐसा हुआ है। जब भाव होता है, तब कुछ समझ में नही आता, बहुत दिनो के बाद शरीर पर झोका लगता है। मैंने देखा है, बड़ा जहाज जब गगा से चला जाता है, तब कुछ भी मालूम नही होता, परन्तु थोड़ी ही देर बाद देखा कि किनारो पर लहरें जोरो से थपेडे जमा रही हैं, और पानी में उथल-पुथल मच जाती है। कभी-कभी तो किनारो का कुछ अश भी धँसकर पानी मे गिर जाता है।

"किसी कुटिया में घुसकर हाथी उसे हिला-डुलाकर तहस-नहस कर देता है। भावरूपी हाथी जब देह-रूपी घर में घुसता है, तो उसे डाँवाडोल कर देता है।

"इससे क्या होता है, जानते हो? आग लगने पर कुछ चीजों को वह जलाकर खाक कर देती है; एक महा ऊधम मचा देती है। ज्ञानाग्नि पहले काम, क्रोध आदि रिपुओं को जलाती है, फिर अहंबुद्धि को। इसके बाद एक बहुत बडी उथल-पुथल मचा देती है।

"तुम सोचते हो कि बस, सब मामला तय है। परन्तु जब तक रोग की कुछ कसर रहेगी, तब तक वे तुम्हे नही छोड़ सकते। अगर तुम अस्पताल में नाम लिखाओगे तो फिर तुम्हे चले आने का अधिकार नही है। जब तक रोग में कोई त्रुटि पायी जायगी, तब तक डाक्टर साहब तुम्हे आने नही देंगे। तुमने नाम क्यों

लिखाया ?' (सब हँसते हैं)

केशव अस्पताल की बात सुनकर बार-बार हँस रहे हैं। हँसी रोक नहीं सकते, रह रहकर फिर हँस रहे हैं। श्रीरामकृष्ण पुन. वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (केशव से)—हृदू (श्रीरामकृष्ण का भानजा) कहता था, न तो मैंने ऐसा भाव देखा है, और न ऐसा रोग! उस समय मैं बहुत बीमार था। क्षण-क्षण में दस्त होते थे और बहुत अधिक मात्रा में। सिर पर जान पडता था दो लाख चीटियाँ काट रही हैं। परन्तु ईश्वरीय प्रसग दिन-रात जारी रहता था! नाटागढ का राम कविराज देखने के लिए आया। उसने देखा कि मैं बैठा हुआ विचार कर रहा था। तब उसने कहा, 'क्या यह पागल है ? दो हाड लेकर विचार कर रहा है!'

(केशव से) "उनकी इच्छा। माँ, सब तुम्हारी ही इच्छा है।

"**ऐ तारा, तुम इच्छामयी हो, सब तुम्हारी ही इच्छा है।** मा, कर्म तुम्हारे हैं, करती भी तुम्ही हो, परन्तु मनुष्य कहते है, मैं करता हूँ।"

"सर्दी लगाने के उद्देश्य से माली बसरा-गुलाब को छाँटकर उसकी जड खोल देता है। सर्दी लगने से पेड अच्छी तरह उगता है। शायद इसीलिए वह तुम्हारी जड खोल रही है। (श्रीरामकृष्ण और केशव हँसते हैं) जान पडता है, अगली बार एक बडी घटना होनेवाली है।

"जब कभी तुम बीमार पड जाते हो तब मुझे बडी घबराहट होती है। पहली बार भी जब तुम बीमार पडे थे, तब रात के पिछले पहर में रोया करता था। कहता था, माँ, केशव को अगर कुछ हो गया तो फिर किससे बातचीत करूँगा! तब कलकत्ता

आने पर मैंने सिद्धेश्वरी को नारियल और चीनी चढ़ायी थी। माँ के पास मनौती मानी थी जिससे बीमारी अच्छी हो जाय।"

केशव पर श्रीरामकृष्ण के इस अकृत्रिम स्नेह और उनके लिए उनकी व्याकुलता की बात सुनकर लोग निर्वाक् हैं।

श्रीरामकृष्ण—परन्तु इस बार उतना नहीं हुआ। मैं सच कहूँगा। हाँ, दो-तीन दिन कुछ थोडा कलेजा मसोसा करता था।

केशव जिस पूर्ववाले द्वार से बैठकखाने में आये थे, उसी द्वार के पास केशव की पूजनीय माता खडी हैं। वहीं से उमानाथ जरा ऊँचे स्वर में श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं—माँ आपको प्रणाम कर रही हैं।

श्रीरामकृष्ण हँसने लगे। उमानाथ कहते हैं—माँ कह रही हैं, ऐसा आशीर्वाद दीजिये जिससे केशव की बीमारी अच्छी हो जाय। श्रीरामकृष्ण ने कहा, सुभाषिणी माँ ? आनन्दमयी को पुकारो, दु ख वही दूर कर सकती हैं। श्रीरामकृष्ण केशव से कहने लगे—

"घर के भीतर इतना न रहा करो। पुत्र-कन्याओं के बीच में रहने से और डूबोगे, ईश्वरीय चर्चा होने पर और अच्छे रहोगे।"

गम्भीर भाव से ये बातें कहकर श्रीरामकृष्ण फिर बालक की तरह हँसने लगे। केशव से कह रहे हैं, देखूँ, तुम्हारा हाथ देखूँ। बालक की तरह हाथ लेकर मानो तौल रहे हैं। अन्त में कहने लगे, नहीं, तुम्हारा हाथ हल्का है, खलों का हाथ भारी होता है। (लोग हँसते हैं)

उमानाथ दरवाजे से फिर कहने लगे, माँ कह रही हैं—केशव को आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर स्वरों में)—मेरी क्या शक्ति है !

वे ही आशीर्वाद देंगी । 'माँ, अपना काम तुम करती हो, लोग कहते हैं, मै कर रहा हूँ ।'

"ईश्वर दो बार हँसते हैं । एक बार उस समय हँसते हैं जब दो भाई जमीन बाँटते है, और रस्सी से नापकर कहते है, 'इस ओर की मेरी है और उस ओर की तुम्हारी ।' ईश्वर यह सोचकर हँसते हैं कि ससार तो है मेरा और ये लोग थोड़ी सी मिट्टी लेकर इस ओर की मेरी, उस ओर की तुम्हारी कर रहे हैं ।

"फिर ईश्वर एक बार और हँसते है । बच्चे की बीमारी बढ़ी हुई हैं । उसकी माँ रो रही है । वैद्य आकर कह रहा है, डरने की क्या बात है, माँ ! मै अच्छा कर दूँगा । वैद्य नही जानता कि ईश्वर यदि मारना चाहे तो किसकी शक्ति है जो अच्छा कर सके ?" (सब सन्न हो रहे)

ठीक इसी समय केशव बड़ी देर तक खाँसते रहे । खाँसने की आवाज से सबको कष्ट हो रहा है । बड़ी देर तक बहुत कुछ कष्ट झेलते रहने के बाद खाँसी कुछ बन्द हुई । केशव से अब और नही रहा जाता । श्रीरामकृष्ण को उन्होने भूमिष्ठ हो प्रणाम किया । प्रणाम करके बड़े कष्ट से दीवार टेक-टेककर उसी द्वार से अपने कमरे में फिर चले गये ।

(६)

ब्राह्म समाज और वेदोल्लिखित देवता । गुरुपन नीच बुद्धि

श्रीरामकृष्ण कुछ मिष्टान्न ग्रहण करके जायेंगे । केशव के बड़े लड़के उनके पास आकर बैठे ।

अमृत ने कहा, "यह केशव का बड़ा लड़का है । आप आशीर्वाद दीजिये । यह क्या ! सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दीजिये ।"

श्रीरामकृष्ण ने कहा, मुझे आशीर्वाद न देना चाहिए। यह कहकर मुसकराते हुए बच्चे की देह पर हाथ फेरने लगे।

अमृत (हँसते हुए)—अच्छा, तो देह पर हाथ फेरिये। (सब हँसते हैं)

श्रीरामकृष्ण अमृत आदि ब्राह्म भक्तों से केशव की बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (अमृत आदि से)—बीमारी अच्छी हो—ये सब बात मैं नहीं कह सकता। यह शक्ति मैं माँ से चाहता भी नहीं। मैं माँ से यही कहता हूँ, माँ, मुझे शुद्धाभक्ति दो।

"ये (केशव) क्या कुछ कम आदमी हैं? जो लोग रुपये चाहते हैं, वे भी इन्हें मानते हैं और साधु भी। दयानन्द को देखा, वे बगीचे में ठहरे हुए थे। 'केशव सेन—केशव सेन' कहकर छटपटा रहे थे कि कब केशव आये। उस दिन शायद केशव के वहाँ जाने की बात थी।

"दयानन्द बंगला भाषा को कहते थे—'गौडाण्ड भाषा।'

"ये (केशव) शायद होम और देवता नहीं मानते थे। इसीलिए वे कहते थे, ईश्वर ने इतनी चीजें तो तैयार कीं, और देवता नहीं तैयार कर सके?"

श्रीरामकृष्ण केशव के शिष्यों में केशव की प्रशंसा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—केशव की हीनबुद्धि नहीं है। इन्होंने बहुतों से कहा है, 'जो कुछ सन्देह हो, वहाँ (श्रीरामकृष्ण के पास) जाकर पूछ लो।' मेरा भी यही स्वभाव है। मैं कहता हूँ, ये कोटि गुण और बढ़ें। मैं मान लेकर क्या करूँगा?

"ये बड़े आदमी हैं। जो लोग धन चाहते हैं, वे भी इन्हें मानते हैं और साधु भी मानते हैं।"

श्रीरामकृष्ण कुछ मिष्टान्न ग्रहण करके अब गाडी पर चढने-वाले हैं। ब्राह्म भक्त उन्हे चढाने के लिए जा रहे हैं।

जीने से उतरते समय श्रीरामकृष्ण न देखा, नीचे उजाला नही है। तब अमृत आदि भक्तो से उन्होने कहा, इन सब स्थानो में अच्छा प्रकाश चाहिए, नही तो गरीबी आ धरती है। ऐसा अब फिर कभी न हो।

श्रीरामकृष्ण एक-दो भक्तो को साथ लेकर उसी रात को काली-मन्दिर चले गये।

परिच्छेद ३६

गृहस्थाश्रम और श्रीरामकृष्ण

(१)

श्रीयुत जयगोपाल सेन के घर में शुभागमन

२८ नवम्बर, १८८३, दिन का तीसरा पहर, ४-५ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण केशव सेन के कमल-कुटीर नामक मकान में गये थे। केशव बीमार हैं, शीघ्र ही मृत्युलोक छोड़नेवाले हैं। केशव को देखकर रात में सात बजे के बाद माथाघसा गली में श्रीयुत जयगोपाल के घर पर कई भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण आये हुए हैं।

भक्तगण न जाने क्या विचार कर रहे हैं। वे सोच रहे हैं, श्रीरामकृष्ण दिनरात ईश्वर-प्रेम में मस्त रहते हैं। विवाह तो किया है, परन्तु धर्मपत्नी से सांसारिक कोई सम्बन्ध नहीं रखते; बल्कि उन पर भक्ति रखते हैं, उनकी पूजा करते हैं, उनके साथ केवल ईश्वरीय प्रसंग किया करते हैं, सदा भगवद्गीत गाते, परमात्मा की पूजा करते तथा ध्यान करते हैं, किसी से कोई मायिक सम्बन्ध रखते ही नहीं। ईश्वर ही यथार्थ वस्तु हैं और शेष सब उनके लिए असार पदार्थ। रुपया, धातुद्रव्य, लोटा, कटोरा यह कुछ छू भी नहीं सकते। स्त्रियों को भी नहीं छू सकते। अगर कभी छू लेते हैं तो जहां छू जाता है वहां सींगी मछली के कांटे के चुभ जाने के समान पीड़ा होने लगती है। रुपया या सोना अगर हाथ पर रख दिया जाता है तो कलाई मुरक जाती है, उनकी अवस्था विकृत हो जाती है, सांस रुक जाती है। जब वह

धातु हटा ली जाती है, तब वे अपनी सच्ची अवस्था को प्राप्त होते हैं—तब उनकी साँस फिर चलने लगती है।

भक्तगण इसी प्रकार की कल्पनाएँ कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण जयगोपाल के बैठकखाने में भक्तो के साथ बैठे हुए हैं, सामने जयगोपाल, उनके आत्मीय तथा पडोसी आदि हैं। एक पडोसी वार्तालाप करने के लिए पहले ही से तैयार थे। वही अग्रणी होकर कुछ पूछने लगे। जयगोपाल के भाई वैकुण्ठ भी हैं।

वैकुण्ठ—हम ससारी मनुष्य हैं, हमारे लिए कुछ कहिये।

श्रीरामकृष्ण—उन्हे जानकर,—एक हाथ उनके पैरो पर रखकर दूसरे हाथ से ससार का काम करो।

वैकुण्ठ—महाराज, ससार क्या मिथ्या है ?

श्रीरामकृष्ण—जब तक उनका ज्ञान नही होता, तब तक सब मिथ्या है। तब मनुष्य उन्हे भूलकर 'मेरा-मेरा' करता रहता है—माया में फँसकर, कामिनी-काचन में मुग्ध होकर और भी डूब जाता है। माया में मनुष्य ऐसा अज्ञानी हो जाता है कि भागने का रास्ता रहने पर भी नही भाग सकता। एक गाना है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गीत का मर्म —

"महामाया की कैसी विचित्र माया है। कैसे भ्रम में उन्होने डाल रखा है! उनकी माया में ब्रह्मा और विष्णु भी अचेत हो रहे हैं, तो जीव बेचारा भला क्या जान सकता है? मछली जाल में पकडी जाती है, परन्तु आने-जाने की राह रहने पर भी वह उससे भाग नही सकती। रेशम के कीडे रेशम की गोटियाँ बनाते हैं; वे चाहे तो उसे काटकर उससे निकल सकते है, परन्तु महामाया के प्रभाव से वे इस तरह बद्ध है कि अपनी बनायी हुई गोटियो में ही अपनी जान दे देते हैं।

"तुम लोग तो स्वय भी देख रहे हो कि ससार अनित्य है। देखो न, कितने आदमी आये और गये। कितने पैदा हुए और कितनों ने देह छोडी। ससार अभी-अभी तो है और थोडी ही देर में नही! अनित्य! जिन्हे लेकर इतना 'मेरा' 'मेरा' कर रहे हो, आँखें बन्द करते ही कही कुछ नहीं है। है कोई नहीं, फिर भी नाती की बाँह पकडे बैठे हैं—उसके लिए वाराणसी नही जा सकते! कहते हैं—मेरे लाल का क्या होगा? आने जाने की राह है, फिर भी मछली भाग नही सकती। रेशम के कीडे अपनी बनायी गोटियो में ही अपनी जान दे देते हैं। इस प्रकार का ससार मिथ्या है, अनित्य है।"

पडोसी—महाराज, एक हाथ ईश्वर में और दूसरा ससार में क्यों रखें? अगर ससार अनित्य है, तो एक हाथ भी ससार में क्यो रखें?

श्रीरामकृष्ण—उन्हें जानकर ससार में रहने से ससार अनित्य नही रह जाता। एक गाना सुनो। (गीत का मर्म)

"ऐ मन, तू खेती का काम नही जानता। ऐसी मनुष्यदेहरूपी जमीन पडी ही रह गयी! अगर तू काश्तकारी करता तो इसमें सोना फल सकता था। पहले तू उसमें काली-नाम का घेरा लगा दे, इस तरह फसल नष्ट न हो सकेगी। वह मुक्तकेशी का बडा ही दृढ घेरा है, उसके पास यम की भी हिम्मत नही जो कदम बढा सके। आज या शताब्दी भर के बाद यह जमीन बेदखल हो जायगी, क्या यह तू नही जानता? अतएव अब तू लगन लगाकर उसे जोत कर फसल क्यो नही तैयार कर लेता? गुरु-प्रदत्त बीज डालकर भक्तिवारि से खेत सींचता जा। अगर तू अकेला यह काम न कर सके तो रामप्रसाद को भी अपने साथ ले ले।"

(२)

गृहस्थाश्रम में ईश्वरलाभ । उपाय

श्रीरामकृष्ण--गाना सुना ? काली नाम का घेरा लगा दो, इससे फसल नष्ट न होगी । ईश्वर की शरण में जाओ । वह मुक्तकेशी माँ का बडा ही मजबूत अहाता है, उसके अन्दर यमराज पैर नही बढा सकते । बडा ही मजबूत अहाता है । उन्हे अगर प्राप्त कर सको तो फिर ससार असार न प्रतीत होगा । जिसने उन्हे जान लिया है, वह देखता है, जीव जगत् सब वही बने हैं । बच्चों को खिलाओगे तो यह जान पडेगा कि गोपाल को खिला रहे हो । पिता और माता को ईश्वर और जगन्माता देखोगे और उनकी सेवा करोगे । उन्हे जानकर ससार मे रहने से व्याही हुई स्त्री से फिर सासारिक सम्बन्ध न रह जायगा । दोनो ही भक्त हो जायेंगे, केवल ईश्वरीय बातचीत करेंगे, ईश्वरीय प्रसग लेकर रहेंगे तथा भक्तो की सेवा करेंगे । सर्वभूतों में वे है, अतएव दोनों उन्ही की सेवा करते रहेंगे ।

पडोसी--महाराज, ऐसे स्त्री-पुरुष दीख क्यो नही पडते ?

श्रीरामकृष्ण--दीख पडते हैं, परन्तु बहुत कम । विषयी मनुष्य उन्हे पहचान नही पाते परन्तु ऐसा तभी होता है, जब दोनो ही भले हो । जब दोनो ही ईश्वर-प्रेम-प्राप्त हो तभी हो सकता है । इसके लिए परमात्मा की विशेष कृपा चाहिए, नही तो सदा ही अनमेल रहता है । एक को अलग हो जाना पडता है । अगर मेल न हुआ तो बडा कष्ट होता है । स्त्री दिन-रात कोसती रहती है--'बाबूजी ने क्यो यहाँ मेरा विवाह किया ? न मुझे ही कुछ खाने को मिला, न बच्चो को ही--न मुझे ही कुछ पहनने को मिला, न बच्चो को ही मै कुछ पहना सकी । एक

गहना भी तो नही है ! तुमने मुझे क्या सुख में रखा है ? आँखें मूँदकर ईश्वर-ईश्वर कर रहे हैं । यह सब पागलपन छोडो ।'

भक्त—ये सब बाधाएँ तो हैं ही, ऊपर से कभी-कभी यह भी होता है कि लडके कहना ही नही मानते । इस पर और भी कितनी ही आपदाएँ है । महाराज, तो फिर उपाय क्या है ?

श्रीरामकृष्ण—ससार में रहकर साधना करना बडा कठिन है । बडी बाधाएँ हैं । ये सब तुम्हें बतलाने की जरूरत नही है—रोग, शोक, दारिद्र्य, उस पर पत्नी से अनबन, लडके अबाध्य, मूर्ख और गँवार ।

"परन्तु उपाय है । कभी-कभी एकान्त में जाकर उनसे प्रार्थना करनी पडती है, उन्हे पाने के लिए चेष्टा करनी पडती है ।"

पडोसी—घर से निकल जाना होगा ।

श्रीरामकृष्ण—बिलकुल नही । जब अवकाश हो तब निर्जन में जाकर एक-दो दिन रहो—परन्तु ससार में कोई सम्बन्ध न रहे, जिससे, किसी विषयी मनुष्य के साथ किसी सासारिक विषय की चर्चा न करनी पडे । या तो निर्जन में रहो या सत्सग करो ।

पडोसी—सत्सग के लिए साधु-महात्मा की पहचान कैसे हो ?

श्रीरामकृष्ण—जिनका मन, जिनका जीवन, जिनकी अन्तरात्मा ईश्वर में लीन हो गयी है वही महात्मा है । जिन्होने कामिनी और काचन का त्याग कर दिया है, वही महात्मा है । जो महात्मा हैं, वे स्त्रियो को ससार की दृष्टि से नहीं देखते । यदि स्त्रियो के पास वे कभी जाते हैं तो उन्हें मातृवत् देखते हैं और उनकी पूजा करते हैं । साधु-महात्मा सदा ईश्वर का ही चिन्तन करते हैं । ईश्वरीय प्रसग के सिवाय और कोई बात उनके मुँह से नहीं निकलती । और सर्वभूतो में ईश्वर का ही वास है, यह जानकर

वे सबकी सेवा करते हैं। सक्षेप में यही साधुओं के लक्षण हैं।

पडोसी—क्या बराबर एकान्त में रहना होगा ?

श्रीरामकृष्ण—फुटपाथ के पेड तुमने देखे है ? जब तक वे पौधे रहते हैं तब तक चारो ओर से उन्हे घेर रखना पडता है। नहीं तो बकरे और चौपाये उन्हे चर जाते हैं। जब पेड मोटे हो जाते हैं तब उन्हे घेरने की जरूरत नही रहती। तब हाथी बाँध देने पर भी पेड नही टूट सकता। तैयार पेड अगर बना ले सको तो फिर क्या चिन्ता है—क्या भय है ? विवेक लाभ करने की चेष्टा पहले करो। तेल लगाकर कटहल काटो। उससे दूध नही चिपक सकता।

पडोसी—विवेक किसे कहते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—ईश्वर सत् है और सब असत्—इस विचार का नाम विवेक है। सत् का अर्थ नित्य, और असत्य अनित्य है। जिसे विवेक हो गया है, वह जानता है, ईश्वर ही वस्तु हैं, और सब अवस्तु है। विवेक के उदय होने पर ईश्वर को जानने की इच्छा होती है। असत् को प्यार करने पर—जैसे देह-सुख, लोकसम्मान, धन, इन्हे प्यार करने पर—सत्स्वरूप ईश्वर को जानने की इच्छा नही होती। सत्-असत् विचार के आने पर ईश्वर की ढूँढ-तलाश की ओर मन जाता है।

"सुनो, यह एक गाना सुनो। (गीत का आशय नीचे दिया जाता है)

"मन ! आ, घूमने चलेगा ? काली-कल्पतरु के नीचे, ऐ मन, चारो फल तुझे पडे हुए मिलेंगे। प्रवृत्ति और निवृत्ति उसकी स्त्रियाँ हैं; इनमें से निवृत्ति को अपने साथ लेना। उसके आत्मज विवेक से तत्त्व की बातें पूछ लेना। शुचि-अशुचि को लेकर दिव्य घर में तू कब सोयेगा ? उन दोनो सौतो में जब प्रीति होगी,

तभी तू श्यामा माँ को पायेगा। तेरे पिता-माता ये जो अहंकार और अविद्या हैं, इन्हें दूर कर देना। अगर कभी मोहगर्त में तू खिंचकर गिर जाय तो धैर्य का खूँटा पकड़े रहना। धर्माधर्म-रूपी दोनों बकरों को एक तुच्छ खूँटे में बाँध रखना। अगर ये निषेध न मानें तो ज्ञान खड्ग लेकर इनकी बलि दे देना। पहली पत्नी की सन्तान को दूर से समझा देना। अगर यह तेरे प्रबोध-वाक्यों पर ध्यान न दे तो उसे ज्ञान-सिन्धु में डुबा देना। प्रसाद कहता है, इस तरह का जब तू बन जायगा, तभी तू काल के पास उत्तर दे सकता है और ऐ प्यारे, तभी तू सच्चा मन बन सकेगा।"

श्रीरामकृष्ण—मन में निवृत्ति के आने पर विवेक होता है। विवेक के होने पर ही तत्त्व की बात हृदय में पैदा होती है। तभी काली-कल्पतरु के नीचे घूमने के लिए मन जाना चाहता है। उसी पेड़ के नीचे जाने पर, ईश्वर के पास जाने पर, चारों फल—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—पड़े हुए मिलेंगे, अनायास मिल जायेंगे। उन्हें पा जाने पर, धर्म, अर्थ, काम, जो कुछ संसारियों को चाहिए, वह भी मिलता है—अगर कोई चाहे।

पड़ोसी—तो फिर संसार को माया क्यों कहते हैं ?

विशिष्टाद्वैतवाद और श्रीरामकृष्ण। 'मामेकं शरणं व्रज'

श्रीरामकृष्ण—जब तक ईश्वर नहीं मिलते तब तक 'नेति'-'नेति' करके त्याग करना पड़ता है, उन्हें जिन लोगों ने पा लिया है, वे जानते हैं कि वे ही सब कुछ हुए हैं। तब बोध हो जाता है—ईश्वर ही माया और जीव-जगत् हैं। जीव-जगत् भी वही हैं। अगर किसी बेल का खोपड़ा, गूदा और बीज अलग कर दिये जायँ, और कोई कहे, देखो तो जरा बेल तौल में कितना था, तो क्या तुम खोपड़ा और बीज अलग करके सिर्फ गूदा तौल पर रखोगे

या तौलते समय खोपडा और बीज भी साथ ले लोगे ? एक साथ लेने पर ही तुम कह सकोगे, बेल तौल में कितना था। खोपडा मानो ससार है, और बीज मानो जीव। विचार के समय तुमने जीव और ससार को अनात्मा कहा था, अवस्तु कहा था। विचार करते समय गूदा ही सार, तथा खोपडा और बीज असार जान पडे थे। विचार हो जाने पर, सब मिलकर एक जान पडता है। और यह भासित होता है कि जिस सत्ता का गूदा है, उसी से बेल का खोपडा और गूदा भी तैयार हुआ है। बेल को समझने चलो तो सब कुछ समझ में आ जाता है।

"अनुलोम और विलोम। मट्ठे ही का मक्खन है, और मक्खन ही का मट्ठा। अगर मट्ठा तैयार हो गया हो तो मक्खन भी हो गया है। यदि मक्खन हो गया हो तो मट्ठा भी हो गया है। आत्मा अगर रहे तो अनात्मा भी है।

"जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्ही की है। जिनकी लीला है, उन्ही की नित्यता भी है। जो ईश्वर के रूप से प्रकट होते हैं, वही जीव-जगत् भी हुए हैं। जिसने जान लिया है, वही देखता है कि वही सब कुछ हुए हैं। बाप, माँ, बच्चा, पडोसी, जीव-जन्तु, भला-बुरा, शुद्ध-अशुद्ध सब कुछ।"

पाप बोध

पडोसी—तो पाप-पुण्य नही है ?

श्रीरामकृष्ण—है भी और नही भी है। वे यदि अहं-तत्त्व रख देते हैं तो भेदबुद्धि भी रख देते है, पाप-पुण्य का ज्ञान भी रख देते हैं। वे एक-दो मनुष्यो का अहकार बिलकुल पोछ डालते है—वे पाप-पुण्य, भले-बुरे के परे चले जाते है। ईश्वर-दर्शन जब तक नही होता तब तक भेदबुद्धि और भले-बुरे का ज्ञान रहता ही है,

तुम मुँह से कह सकते हो—'हमारे लिए पाप और पुण्य बराबर हैं, वे जैसा कराते हैं वैसा ही करता हूँ, परन्तु हृदय से यही जानते हो कि यह सब एक कहावत मात्र है। बुरा काम करने से छाती धड़कने लगेगी। ईश्वर-दर्शन के बाद भी अगर उनकी इच्छा होती है तो वे 'दास मैं' रख देते हैं। उस अवस्था में भक्त कहता है, मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो। ईश्वरीय प्रसग, ईश्वरीय कर्म, ये सब उस भक्त को रुचिकर होते हैं, ईश्वर-विमुख मनुष्य उसे अच्छा नही लगता। उसको ईश्वरीय कर्मों के सिवा दूसरे कार्य नही सुहाते। इतने ही से बात सिद्ध हो जाती है कि ऐसे भक्तो में भी वे भेद-बुद्धि रख छोडते हैं।

पडोसी—महाराज, आप कहते हैं ईश्वर को जानकर ससार करो। क्या उन्हे कोई जान सकता है?

श्रीरामकृष्ण—उन्ह इन्द्रियो द्वारा अथवा इस मन के द्वारा कोई जान नही सकता। जिस मन में विषय-वासना नही उस शुद्ध मन के द्वारा ही मनुष्य उन्हे जान सकता है।

पडोसी—ईश्वर को कौन जान सकता है?

श्रीरामकृष्ण—ठीक-ठीक उन्हें कौन जान सकता है? हमारे लिए जितना जानने की जरुरत है, उतना होने ही से हो गया। हमें कुएँ भर पानी की क्या जरुरत है? हमारे लिए तो लोटा भर पानी पर्याप्त है। एक चीटी चीनी के पहाड के पास गयी थी। सब पहाड लेकर भला क्या करेगी? उसके छकने के लिए तो दो-एक दाने ही बहुत हैं।

पडोसी—हमें जैसा विकार है, इससे लोटा भर पानी से क्या होता है? इच्छा होती है, ईश्वर को सोल्हो आने समझ ले।

श्रीरामकृष्ण—यह ठीक है, परन्तु विकार की दवा भी तो है।

पड़ोसी--महाराज, वह कौन सी दवा है ?

श्रीरामकृष्ण--साधुओं का संग, उनका नाम-गुण-कीर्तन, उनसे सर्वदा प्रार्थना करना। मैंने कहा था--माँ, मैं ज्ञान नहीं चाहता; यह लो अपना ज्ञान और यह लो अपना अज्ञान; माँ ! मुझे अपने चरण-कमलों में केवल शुद्धा भक्ति दो। मैं और कुछ नहीं चाहता।

"जैसा रोग होता है, उसकी दवा भी वैसी ही होती है। गीता में उन्होंने कहा है, 'हे अर्जुन, तुम मेरी शरण लो, तुम्हें मैं सब तरह के पापों से मुक्त कर दूँगा।' उनकी शरण में जाओ। वे सुबुद्धि देंगे, वे सब भार ले लेंगे। तब सब तरह के विकार दूर हट जायेंगे। इस बुद्धि से क्या कोई उन्हें समझ सकता है ? सेर भर के लोटे में क्या कभी चार सेर दूध रह सकता है? और बिना उनके समझाये क्या उन्हें कोई समझ सकता है ? इसीलिए कहता हूँ, उनकी शरण में जाओ--उनकी जो इच्छा हो, वे करें। वे इच्छामय हैं। मनुष्य की क्या शक्ति है ?"

परिच्छेद ३७

भक्तियोग तथा समाधितत्त्व

(१)

भक्तियोग, समाधितत्त्व और महाप्रभु की अवस्थाएँ। हठयोग और राजयोग

९ दिसम्बर १८८३, रविवार, अगहन शुक्ला दशमी, दिन के दो बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण अपने घर के उसी छोटे तख्त पर बैठे हुए भक्तों के साथ भगवच्चर्चा कर रहे हैं। अधर, मनमोहन, ठनठनिया के शिवचन्द्र, राखाल, मास्टर, हरीश आदि कितने ही भक्त बैठे हुए हैं। हाजरा भी उस समय वहीं रहते थे। श्रीरामकृष्ण महाप्रभु की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति)—चैतन्यदेव की तीन अवस्थाएँ होती थीं। बाह्य-दशा,—तब, स्थूल और सूक्ष्म में उनका मन रहता था। अर्धबाह्य-दशा,—तब कारण-शरीर में—कारणानन्द में चला जाता था। अन्तर्दशा,—तब महाकारण में मन लीन हो जाता था।

"वेदान्त के पंचकोष के साथ इसका यथार्थ मेल है। स्थूल-शरीर अर्थात् अन्नमय और प्राणमय कोष। सूक्ष्म-शरीर अर्थात् मनोमय और विज्ञानमय कोष। कारण-शरीर अर्थात् आनन्दमय कोष—महाकारण पंचकोषों से परे है। महाकारण में जब मन लीन होता था तब वे समाधि-मग्न हो जाते थे। इसी का नाम निर्विकल्प अथवा जड-समाधि है।

"चैतन्यदेव की जब बाह्य-दशा होती थी तब वे नामकीर्तन

करते थे। अर्धबाह्य दशा में भक्तों के साथ नृत्य करते थे। अन्तर्दशा में समाधिस्थ हो जाते थे।

"श्रीचैतन्य भक्ति के अवतार थे। वे जीवों को भक्ति की शिक्षा देने के लिए आये थे। उन पर भक्ति हुई तो सब कुछ हो गया। फिर हठयोग की कोई आवश्यकता नही।"

एक भक्त—जी, हठयोग कैसा है?

श्रीरामकृष्ण—हठयोग में शरीर की ओर मन ज्यादा देना पड़ता है। अन्तर-प्रक्षालन के लिए हठयोगी बाँस की नली पर गुदा-स्थापन करता है। लिंग के द्वारा दूध-घी खींचता रहता है। जिह्वा-सिद्धि का अभ्यास करता है। आसन साधकर कभी-कभी शून्य पर चढ़ जाता है। ये सब कार्य वायु के है। तमाशा दिखाते हुए किसी ने तालु के अन्दर जीभ घुसेड़ दी थी। बस, उसका शरीर स्थिर हो गया, लोगों ने सोचा, यह मर गया। कितने ही वर्ष वह मिट्टी के नीचे पड़ा रहा। कालान्तर में वह कब्र धस गयी। तब एकाएक उसे चेत हुआ। चेतना के होते ही वह चिल्ला उठा—यह देखो कलाबाजी! यह देखो गिरहबाजी! (सब हँसते हैं) यह सब साँस की करामात है।

"वेदान्तवादी हठयोग नहीं मानते।

"हठयोग और राजयोग। राजयोग में मन के द्वारा योग होता है। भक्ति के द्वारा भी योग होता है! यही योग अच्छा है। हठयोग अच्छा नही, क्योंकि कलि में प्राण अन्न के अधीन है।"

(२)

श्रीरामकृष्ण की तपस्या। श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त और भविष्यत् महातीर्थ। मूर्तिदर्शन

श्रीरामकृष्ण नहबतखाने की बगलवाली राह पर खड़े हुए देख

रहे हैं—मणि नहबतखाने के बरामदे में एक ओर बैठे हुए घेरे की आड में किसी गहन चिन्ता में डूबे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर गये थे। मुँह धोकर वहीं जाकर खडे हुए।

श्रीरामकृष्ण—क्यो जी, यहाँ बैठे हुए हो! तुम्हारा काम जल्दी होगा। कुछ ही दिन करने से कोई कहेगा—'यही है—यही है।'

चौंककर वे श्रीरामकृष्ण की ओर ताकते रह गये। अभी तक आसन भी नही छोडा।

श्रीरामकृष्ण—तुम्हारा समय हो आया है। जब तक अण्डो के फोडने का समय नहीं होता, तब तक चिडिया अण्डे नहीं फोडती। जो मार्ग तुम्हे बतलाया गया है, वही तुम्हारे लिए ठीक है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने फिर से मार्ग बतला दिया।

"यह नही कि सभी को तपस्या अधिक करनी पडे। परन्तु मुझे तो बडा ही कष्ट उठाना पडा था। मिट्टी के टीले पर सिर रखकर पडा रहता था। न जाने कहाँ दिन पार हो जाता था। केवल माँ-माँ कहकर पुकारता था और रोता था।"

मणि श्रीरामकृष्ण के पास लगभग दो साल से आ रहे हैं। वे अंग्रेजी पढ़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कभी-कभी उन्हें इगलिशमैन कहकर पुकारते थे। उन्होने कालेज में अध्ययन किया है। विवाह भी किया है।

केशव और दूसरे पण्डितो के व्याख्यान सुनने और अंग्रेजी दर्शन और विज्ञान पढने में उनका खूब जी लगता है। परन्तु जब से वे श्रीरामकृष्ण के पास आये, तब से यूरोपीय पण्डितों के ग्रन्थ और अंग्रेजी अथवा दूसरी भाषाओं के व्याख्यान उन्हें अलोने

जान पडने लगे। अब दिन-रात केवल श्रीरामकृष्ण को देखते और उन्ही की बाते सुनना चाहते है।

आजकल श्रीरामकृष्ण की एक बात वे सदा सोचते रहते हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा है, साधना करने से मनुष्य ईश्वर को देख सकता है। उन्होने यह भी कहा है, ईश्वर-दर्शन ही मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है।

श्रीरामकृष्ण—कुछ दिन करने से ही कोई कहेगा—यही है, यही है। तुम एकादशी का व्रत करना। तुम लोग अपने आदमी हो, आत्मीय हो। नही तो तुम इतना क्यो आओगे? कीर्तन सुनते-सुनते राखाल को मैंने देखा था, वह व्रज-मण्डल के भीतर था। नरेन्द्र का स्थान बहुत ऊँचा है। और हीरानन्द। उसका कैसा बालको का-सा भाव है। उसका भाव कैसा मधुर है! उसे भी देखने को जी चाहता है।

"मैंने श्रीगौराग के सागोपागो को देखा था, भाव में नही, इन्ही आँखो से! पहले ऐसी अवस्था थी कि सादी दृष्टि से सब दर्शन होते थे! अब भाव में होते हैं।

"सादी दृष्टि से श्रीगौराग के सब सागोपागो को देखा था। उसमें शायद तुम्हे भी देखा था। और शायद बलराम को भी।

"किसी को देखकर झट उठकर क्यो खडा हो जाता हूँ, जानते हो? आत्मीयो को दीर्घकाल के बाद देखने से ऐसा ही होता है।

"माँ से रो-रोकर कहता था, माँ, भक्तो के लिए मेरा जी निकल रहा है। उन्हे शीघ्र मेरे पास ला दे। जो कुछ मैं सोचता था, वही होता था।

"पचवटी में मैंने तुलसी-कानन बनाया था, जप-ध्यान करने

के लिए। बडी इच्छा हुई कि चारो ओर से बास की कमानियो का घेरा लगा दूँ। इसके बाद ही देखा, ज्वार में बहकर कुछ कमानियो का गट्ठा और कुछ रस्सी ठीक पचवटी के सामने आकर लग गयी है। ठाकुरबाड़ी में एक कहार रहता था। आनन्द मे नाचते हुए उसने आकर यह खबर सुनायी।

"जब यह अवस्था हुई तब और पूजा न कर सका। कहा, माँ, मुझे कौन देखेगा? माँ, मुझमें ऐसी शक्ति नही है कि अपना भार खुद ले सकूँ। और तुम्हारी बात सुनने को जी चाहता है, भक्तो को खिलाने की इच्छा होती है, सामने पड जाने पर किसी को कुछ देने की भी इच्छा होती है। माँ, यह सब किस तरह होगा? माँ, तुम एक बडा आदमी मेरी सहायता के लिए भेज दो। इसीलिए तो मथुरबाबू ने इतनी सेवा की!

"और भी कहा था, माँ, मेरे तो अब सन्तान होगी नहीं, परन्तु इच्छा होती है कि एक शुद्ध भक्त बालक सदा मेरे साथ रहे। इसी तरह का एक बालक मुझे दो। इसीलिए तो राखाल आया। जो-जो आत्मीय हैं, उनमें कोई अश है और कोई कला।"

श्रीरामकृष्ण फिर पचवटी की ओर जा रहे हैं। मास्टर साथ हैं। श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक उनसे वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)—देखो, मैने एक दिन काली-मन्दिर से पचवटी तक एक अद्भुत मूर्ति देखी! इस पर तुम्हारा विश्वास होता है?

मास्टर आश्चर्य में आकर निर्वाक् हो रहे।

वे पचवटी की शाखा से दो-चार पत्ते तोडकर अपनी जेब में रख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—यह डाल गिर गयी है, देखते हो? मैं इसके

नीचे बैठता था।

मास्टर—मैं इसकी एक छोटी सी डाल तोड ले गया हूँ। उसे घर में रख दिया है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—क्यो ?

मास्टर—देखने से आनन्द होता है। **सब समाप्त हो जाने पर यही जगह महातीर्थ होगी।**

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—किस तरह का तीर्थ ? क्या पानिहाटी की तरह का ?

पानिहाटी मे बडे समारोह के साथ राघव पण्डित का महोत्सव होता है। श्रीरामकृष्ण प्राय हर साल यह महोत्सव देखने जाया करते हैं और सकीर्तन के बीच में प्रेम और आनन्द से नृत्य किया करते हैं, मानो भक्तो की पुकार सुनकर श्रीगौराग स्थिर नही रह सकते--सकीर्तन मे स्वय आकर अपनी प्रेम-मूर्ति के दर्शन कराते हैं।

(३)

हरिकथा प्रसग

सन्ध्या हो गयी। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में छोटे तख्त पर बैठे हुए जगन्माता का चिन्तन कर रहे है। क्रमश मन्दिर में देवताओ की आरती होने लगी। शख और घण्टे बजने लगे। मास्टर आज रात को यही रहेगे।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से भक्तमाल पढकर सुनाने के लिए कहा। मास्टर पढ रहे हैं।

(यह बगला का भक्तमाल है। छन्दोबद्ध है। इसका हिन्दी अनुवाद नीचे दिया जाता है—)

"जयमल नाम के एक शुद्धचित्त राजा थे। भगवान् श्रीकृष्ण

पर उनकी अचल प्रीति थी। नवधा भक्ति के यजन में वे इतने दृढनिष्ठ थे कि पत्थर पर खिंची हुई रेखा की तरह उनका ह्रास न हो पाता था। वे जिस विग्रह का पूजन करते थे उनका नाम श्यामल-सुन्दर था। श्यामल-सुन्दर को छोड वे और अन्य किसी देवी-देवता को मानो जानते ही न थे। उन्हीं पर उनका चित्त लगा रहता था। सदा दृढ नियमों से वे दस दण्ड दिन चढते तक उस मूर्ति की पूजा किया करते थे। अपने पूजन में वे इतने दृढ-निश्चय थे कि चाहे राज्य और धन का नाश हो जाय—चाहे वज्रपात हो, तथापि पूजा के समय किसी दूसरी ओर ध्यान न देते थे।

"इस बात की खबर उनके एक दूसरे प्रतिस्पर्धी राजा के पास पहुँची। उसने सोचा, यह तो शत्रु के पराजित करने का एक उत्तम उपाय हाथ आया। जिस समय ये पूजन के लिए बैठें, उसी समय इनका दुर्ग घेर लिया जाय और युद्ध की घोषणा कर दी जाय। राजा की आज्ञा बिना सेना युद्ध नहीं कर सकती। जब मैं युद्ध घोषणा करूँगा तब इनकी सेना इनकी आज्ञा की राह देखती रहेगी, ये पूजन में पडे रहेंगे, तब तक मैं मैदान मार लूँगा। यह सोचकर उसने यथा-समय अपनी सेना बढाकर इनका किला घेर लिया। इन्होंने उस समय युद्ध की ओर ध्यान ही नहीं दिया, निरुद्वेग होकर पूजन करने लगे। इनकी माता सिर पटकती हुई पास आकर उच्च स्वर से रोदन करने लगी। विलाप करते हुए उसने कहा कि अब जल्दी उठो, नहीं तो सब कुछ चला जायगा; तुम तो ऐसे हो कि तुम्हारा इधर ध्यान ही नहीं है—शत्रु चढ आया—अब किला तोडना ही चाहता है। महाराज जयमल ने कहा—'माता! तुम क्यों दुःख कर रही

हो ? जिसने यह राज-पाट दिया है, वह अगर छीन ले तो हमारा इसमें क्या ! और अगर वह हमारी रक्षा करे, तो वह शक्ति किसमे है जो हमसे ले सके ? अतएव हम लोगो का उद्यम तो व्यर्थ ही है ।"

इधर श्यामल-सुन्दर ने घोडे पर सवार हो अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध की तैयारी कर दी । अकेले ही भक्त के शत्रुओ का सहार करके घोडे को अपने मन्दिर के पास बाँधकर श्यामल-सुन्दर जहाँ-के-तहाँ हो रहे । "

पाठ समाप्त होने के बाद श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ बात कर रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण—इन बातो पर तुम्हारा विश्वास होता है ? —घोडे पर सवार होकर उन्होने सेना-नाश किया था, इन सब बातो पर ?

मास्टर—भक्त ने व्याकुल होकर उन्हे पुकारा था । श्रीभगवान् को उसने ठीक-ठीक सवारी करते देखा था या नही, यह सब समझ में नही आता । वे सवार होकर आ सकते हैं, परन्तु उन लोगो ने उन्हे ठीक-ठीक देखा था या नही, इस पर विश्वास नहीं जमता ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—पुस्तक में भक्तो की अच्छी कथाएँ लिखी हैं, परन्तु हैं सब एक ही ढर्रे की । जिनका दूसरा मत है, उनकी निन्दा लिखी है ।

दूसरे दिन सुबह को बगीचे में खडे हुए श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं । मणि कहते हैं, तो मैं यहाँ आकर रहूँगा ।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम लोग जो इतना आया करते हो, इसके क्या मानी हैं ? साधु को ज्यादा लोग एक बार आकर

देख जाते हैं। तुम इतना आते हो—इसके क्या मानी है ?

मणि तो चकित हो गये। श्रीरामकृष्ण स्वय ही इस प्रश्न का उत्तर देने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—अन्तरग न होते तो क्या आते ? अन्तरग अर्थात् आत्मीय, अपना आदमी—जैसे, पिता पुत्र, भाई-बहिन। सब बात मैं नही कहता। नही तो फिर कैसे आओगे ?

"शुकदेव ब्रह्मज्ञान पाने के लिए जनक के पास गये थे। जनक ने कहा, पहले दक्षिणा दो। शुकदेव ने कहा, जब तक उपदेश नही मिल जाता, तब तक कैसे दक्षिणा दूं ? जनक ने हँसते हुए कहा, तुम्हे ब्रह्मज्ञान हो जाने पर फिर गुरु और शिष्य का भेद थोडे ही रह जायगा ? इसीलिए हमने दक्षिणा की बात कही।"

परिच्छेद ३८

त्याग तथा प्रारब्ध

(१)

अध्यात्मरामायण

आज अगहन की पूर्णिमा और सक्रान्ति है। दिन शुक्रवार, १४ दिसम्बर १८८३। दिन के नौ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण अपने घर के दरवाजे के पासवाले दक्षिण-पूर्व के बरामदे में खड़े हैं। पास ही रामलाल खड़े हैं। राखाल और लाटू भी कहीं इधर-उधर पास ही थे। मणि ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, "आ गये, अच्छा हुआ। आज दिन भी अच्छा है।" मणि कुछ दिन श्रीरामकृष्ण के पास रहेंगे। साधना करेंगे। श्रीरामकृष्ण ने कहा है, "यदि एक साधक थोड़ी भी साधना शुरू कर देता है तो उसे कोई न कोई सहायक मिल जाता है।"

श्रीरामकृष्ण ने इनसे कहा था, यहाँ अतिथि-शाला का अन्न तुम्हारे लिए रोज खाना उचित नहीं। यह साधुओं और कंगालों के लिए है। तुम अपना भोजन पकाने के लिए एक आदमी ले आना। इसीलिए उनके साथ एक आदमी भी आया है।

उनका भोजन कहाँ पकाया जायगा, इसकी व्यवस्था कर देने के लिए श्रीरामकृष्ण ने रामलाल से कह दिया। वे दूध पीयेंगे, इसके लिए भी अहीर से कह देने को कहा।

श्रीयुत रामलाल अध्यात्म-रामायण पढ़ रहे हैं और श्रीरामकृष्ण सुन रहे हैं। मणि भी बैठे हुए सुन रहे हैं—

"श्रीरामचन्द्रजी सीताजी से विवाह करके अयोध्या लौट रहे हैं। रास्ते में परशुराम से भेंट हुई। श्रीरामचन्द्र ने धनुष तोड़ डाला है, यह सुनकर परशुराम रास्ते में बड़ा गुलगपाड़ा मचाने लगे। मारे भय के दशरथ के होश ही उड़ गये। परशुराम ने एक दूसरा धनुष राम को देकर उस पर उन्हें गुण चढ़ा देने के लिए कहा। राम ने कुछ मुसकराकर बायें हाथ से धनुष लेकर गुण चढ़ाकर उसमें टंकार किया। शरासन में शर-योजना करके परशुराम से उन्होंने कहा, अब यह बाण कहाँ छोड़ूँ—कहो। परशुराम का दर्प चूर्ण हो गया। वे श्रीरामचन्द्र को परब्रह्म कहकर उनकी स्तुति करने लगे।"

परशुराम की स्तुति सुनते ही श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। रह-रहकर, 'राम-राम' मधुर नाम का उच्चारण कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (रामलाल से)—जरा गुह-निषाद की कथा तो सुनाओ। रामलाल भक्तमाल से सुनाते रहे—

"श्रीरामचन्द्र जब पिता की सत्यरक्षा के लिए वन गये थे, तब उन्हें देखकर निषाद-राज को बड़ा आश्चर्य हुआ। धीरे धीरे उन्होंने श्रीरामचन्द्र के पास जाकर कहा, आप हमारे घर चलें। श्रीरामचन्द्र उन्हें मित्र कहकर भर बाँह भेंटे। निषाद ने कहा, आप मेरे मित्र हुए तो मैं भी आपको अपने प्राणों के साथ अपनी देह समर्पित करता हूँ। श्रीरामचन्द्र चौदह साल वन में रहेंगे और जटा-वल्कल धारण करेंगे। यह सुनकर निषाद-राज ने भी जटा-वल्कल धारण कर लिया। फल-मूल छोड़कर अन्य कोई भोजन उन्होंने नहीं किया। चौदह साल के बाद भी श्रीरामचन्द्र नहीं आ रहे हैं यह देखकर गुह अग्नि-प्रवेश करने

जा रहे थे। इसी समय हनुमानजी ने आकर सवाद दिया। सवाद पाकर गुह आनन्द-सागर मे मग्न हो गये। श्रीरामचन्द्र और सीतामाई पुष्पक विमान पर आकर उपस्थित हो गये।"

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण थोडा आराम कर रहे है। मास्टर पास बैठे हुए है। इसी समय श्याम डाक्टर तथा और भी कई आदमी आये। श्रीरामकृष्ण उठकर बैठ गये और बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण--बात यह नही कि कर्म बराबर करते ही जाना पडे। ईश्वर-लाभ हो जाने पर कर्म फिर नही रह जाते। फल होने पर फूल आप ही झड जाते है।

"जिसे ईश्वर-प्राप्ति हो जाती है उसके लिए सन्ध्यादि कर्म नही रह जाते। सन्ध्या गायत्री मे लीन हो जाती है, तब गायत्री जपने से ही काम हो जाता है। और गायत्री का लय ओंकार में हो जाता है; तब गायत्री जपने की भी आवश्यकता नही रह जाती। तब केवल 'ॐ' कहने से ही हो जाता है। सन्ध्यादि कर्म कब तक हैं ?--जब तक हरिनाम या रामनाम में पुलक न हो, अश्रुधारा न बहे। धन के लिए या मुकदमा जीतने के लिए पूजा आदि कर्म करना अच्छा नही।"

एक भक्त--धन की चेष्टा तो, मैं देखता हूँ, सभी करते हैं। केशव सेन को ही देखिये, किस तरह महाराजा के साथ उन्होने अपनी लडकी का विवाह किया।

श्रीरामकृष्ण--केशव की बात दूसरी है। जो यथार्थ भक्त है वह अगर चेष्टा न भी करे तो भी ईश्वर उसके लिए सब कुछ जुटा देते हैं। जो ठीक-ठीक राजा का लडका है वह मुजरा पाता है। वकील एव उन्ही के समान लोगो की बात मैं नहीं

कहता—जो मेहनत करके, दूसरो की दासता करके रुपया कमाते हैं। मैं कहता हूँ, वह ठीक राजा का लडका है। जिसे कोई कामना नहीं है वह रुपया-पैसा नही चाहता। रुपया उसके पास आप ही आता है। गीता में है—यदृच्छालाभ।

"जो सद्ब्राह्मण है, जिसे कोई कामना नहीं है, वह चमार के यहाँ का भी सीधा ले सकता है। 'यदृच्छालाभ'। वह कामना नही करता, उसके पास प्राप्ति आप ही आती है।"

एक भक्त—अच्छा महाराज, ससार में किस तरह रहना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण—पाँकाल मछली की तरह रहना चाहिए। ससार से दूर निर्जन में जाकर कभी-कभी ईश्वर-चिन्तन करने पर उनमें भक्ति होती है। तब निर्लिप्त होकर ससार में रह सकोगे। पाँकाल मछली कीच के भीतर रहती है, फिर भी कीच उसकी देह में नही लगता। इस तरह का आदमी अनासक्त होकर ससार में रहता है।

श्रीरामकृष्ण देख रहे हैं, मणि एकाग्र चित्त से उनकी सब बाते सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि को देखकर)—तीव्र वैराग्य होने से लोग ईश्वर को पाते हैं। जिसे तीव्र वैराग्य होता है, उसे जान पडता है, ससार दावाग्नि की तरह है—जल रहा है! वह स्त्री और पुत्र को कुएँ के सदृश देखता है। इस तरह का वैराग्य जब होता है, तब घर-द्वार आप ही छूट जाता है। अनासक्त होकर ससार में रहना उसके लिए पर्याप्त नहीं है। कामिनी-काचन, यही माया है। माया को अगर पहचान सको तो वह आप लज्जा से भाग खडी होगी। एक आदमी बाघ की खाल ओढकर भय दिखा

रहा है। जिसे भय दिखा रहा है उसने कहा, मैं तुझे पहचानता हूँ, तू तो 'हिरुआ' है। तब वह हँसकर चला गया—और किसी दूसरे को भय दिखाने लगा। जितनी स्त्रियाँ है सब शक्तिरूपिणी हैं। वही आदिशक्ति स्त्री का रूप धारण किये हुए है। अध्यात्म-रामायण मे है—नारदादि राम का स्तव करते है, 'हे राम, जितने पुरुष है सब आप हैं और प्रकृति के जितने रूप हैं सब सीता हैं। तुम इन्द्र हो, सीता इन्द्राणी, तुम शिव हो, सीता शिवानी, तुम नर हो, सीता नारी, अधिक और क्या कहूँ—जहाँ पुरुष है वहाँ तुम हो, जहाँ स्त्रियाँ हैं, वहाँ सीता।'

त्याग और प्रारब्ध। श्रीरामकृष्ण द्वारा वामाचार-साधन का निषेध

(भक्तो से)—"मन में लाने से ही त्याग नही किया जा सकता। प्रारब्ध, संस्कार, ये सभी हैं। एक राजा से किसी योगी ने कहा, तुम मेरे पास बैठकर परमात्मा का चिन्तन करो। राजा ने उत्तर दिया, 'यह मुझसे न होगा। मैं यहाँ रह सकता हूँ; परन्तु मुझे अब भी भोग करना है। इस वन में अगर रहूँगा तो आश्चर्य नही कि इस वन में भी एक राज्य हो जाय! मेरा भोग अभी बाकी है।'

"नटवर पाँजा जब बच्चा था, इस बगीचे में जानवर चराता था। परन्तु उसके भाग्य में बहुत बडा भोग था, इसीलिए तो इस समय अण्डी का कारखाना खोलकर इतना रुपया इकट्ठा किया है। आलमबाजार में अण्डी का रोजगार खूब चला रहा है।

"एक मत में है, स्त्री लेकर साधना करना। 'कर्ताभजा' सम्प्रदाय की स्त्रियों के बीच में एक बार एक आदमी मुझे ले गया था। वे सब मेरे पास आकर बैठ गयी। मैं जब उन्हे 'माँ-माँ'

कहने लगा तब वे आपस में कहने लगी, ये प्रवर्तक हैं, अभी 'घाट' की पहचान इनको नही हुई ! उन लोगो के मत में कच्ची अवस्था को प्रवर्तक कहते हैं, उसके बाद साधक, उसके बाद सिद्ध, और फिर सिद्ध का सिद्ध ।

"एक स्त्री वैष्णवचरण के पास जाकर बैठी । वैष्णवचरण से पूछने पर उन्होने कहा, इसका बालिका-भाव है ।

"स्त्री-भाव से पतन होता है । मातृभाव शुद्ध भाव है ।"

कांसारीपाडा के भक्तगण उठ पड़े । कहा, तो अब हम लोग चले, काली माई तथा और देवों के दर्शन करेंगे ।

(२)

श्रीरामकृष्ण और प्रतिमापूजा । व्याकुलता और ईश्वरलाभ

पिछला पहर है, साढे तीन बजे का समय होगा । श्रीरामकृष्ण के कमरे में मणि फिर आकर बैठे हैं । एक शिक्षक कई छात्रों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आये हुए हैं । श्रीरामकृष्ण उनसे वार्तालाप कर रहे हैं । शिक्षक महाशय बीच-बीच में एक एक प्रश्न कर रहे हैं । बातचीत मूर्तिपूजन के सम्बन्ध में हो रही है ।

श्रीरामकृष्ण (शिक्षक से)—मूर्ति-पूजन में दोष क्या है ? वेदान्त में है, जहाँ 'अस्ति, भाति और प्रिय' है, वही उनका प्रकाश है, इसलिए उनके सिवाय और किसी वस्तु का अस्तित्व नही है ।

"और देखो, छोटी-छोटी लड़कियाँ कितने दिन खेलती हैं ?—जब तक विवाह नही होता और जितने दिन तक वे पति सहवास नही करतीं । विवाह हो जाने पर गुड़ियाँ-गुड्डों को उठाकर सन्दूक में रख देती हैं । ईश्वर-लाभ हो जाने पर फिर मूर्ति-

पूजन की क्या आवश्यकता है ?"

मणि की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कहते हैं—"अनुराग होने पर ईश्वर मिलते है। खूब व्याकुलता होनी चाहिए। खूब व्याकुलता होने पर सम्पूर्ण मन उन्हें अर्पित हो जाता है।

"एक आदमी के एक लडकी थी। बहुत कम आयु में लडकी विधवा हो गयी थी। पति का मुख उसने कभी न देखा था। दूसरी स्त्रियो के पतियो को आते-जाते वह देखती थी। उसने एक दिन कहा, पिताजी, मेरा पति कहाँ है ? उसके पिता ने कहा, गोविन्दजी तेरे पति है। उन्हे पुकारने पर वे तुझे दर्शन देंगे। यह सुनकर वह लडकी द्वार बन्द करके गोविन्द को पुकारती और रोती थी। वह कहती थी—'गोविन्द ! तुम आओ, मुझे दर्शन दो, तुम क्यो नही आते ?' छोटी लडकी का यह रोना सुनकर गोविन्दजी स्थिर न रह सके। उसे उन्होंने दर्शन दिये।

"बालक जैसा विश्वास। बालक माँ को देखने के लिए जिस तरह व्याकुल होता है, वैसी व्याकुलता चाहिए। इस व्याकुलता के होने पर समझना चाहिए कि अरुणोदय हुआ। इसके बाद सूर्योदय होगा ही। इस व्याकुलता के बाद ही ईश्वर-दर्शन होते हैं।

"जटिल बालक की बात लिखी है। वह पाठशाला जाता था। कुछ जगल की राह से पाठशाला जाना पडता था, इसलिए वह डरता था। उसने अपनी माँ से कहा। माता ने कहा, डर क्या है ? तू मधुसूदन को पुकारना। बच्चे ने पूछा, मधुसूदन कौन है ? माता ने कहा, मधुसूदन तेरे दादा होते हैं। जब अकेले में जाते समय वह डरा, तब एक आवाज लगायी—मधुसूदन दादा! कही कोई न आया। तब वह, 'कहाँ हो मधुसूदन दादा ! जल्दी

आओ, मुझे बड़ा डर लग रहा है' कहकर जोर-जोर से पुकारने लगा। मधुसूदन न रह सके। आकर कहा, यह हैं हम, तुझे भय क्या है? यह कहकर उसे साथ लेकर वे पाठशाला के रास्ते तक छोड़ आये, और कहा तू जब बुलायेगा तभी मैं दौड़ा आऊँगा, भय क्या है? यह बालक का विश्वास है—यह व्याकुलता है।

"एक ब्राह्मण के यहाँ भगवान् की सेवा होती थी। एक दिन किसी काम से उसे किसी दूसरी जगह जाना पड़ा। वह अपने छोटे बच्चे से कह गया, आज श्रीठाकुरजी का भोग लगाना उन्हें खिलाना। बच्चे ने ठाकुरजी का भोग लगाया, परन्तु ठाकुरजी चुपचाप बैठे ही रहे। न बोले और न कुछ खाया ही। बच्चे ने बड़ी देर तक बैठे-बैठे देखा कि ठाकुरजी नहीं उठते। उसे दृढ़ विश्वास था कि ठाकुरजी आकर आसन पर बैठकर भोजन करेंगे। वह बार-बार कहने लगा, 'ठाकुरजी, आओ, भोग पा लो, बड़ी देर हो गयी, अब और मुझसे बैठा नहीं जाता।' ठाकुरजी क्यों उत्तर देने लगे? तब बच्चे ने रोना शुरू कर दिया, कहने लगा, 'ठाकुरजी, पिताजी तुम्हें खिलाने के लिए कह गये हैं, तुम क्यों नहीं आओगे? क्यों मेरे पास नहीं आओगे?' व्याकुल होकर ज्यों ही कुछ देर तक वह रोया कि ठाकुरजी हँसते-हँसते आकर हाजिर हो गये और आसन पर बैठकर भोग पाने लगे। ठाकुरजी को खिलाकर जब वह ठाकुरघर से गया, तब घरवालों ने कहा, भोग हो गया हो तो वह सब उतार ले आ। बच्चे ने कहा, हाँ, हो गया, ठाकुरजी ने सब भोग खा लिया। उन लोगों ने कहा, अरे यह तू क्या कहता है! बच्चे ने सरलतापूर्वक कहा, क्यों, खा तो गये हैं ठाकुरजी सब। घरवालों ने ठाकुर-घर में जाकर देखा तो छक्के छूट गये।"

सन्ध्या होने को अभी देर है। श्रीरामकृष्ण नहबतखाने के दक्षिण ओर खडे हुए मणि के साथ बातचीत कर रहे हैं। सामने गगा है। जाडे का समय है। श्रीरामकृष्ण ऊनी कपडा पहने हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण—पचवटी वाले घर मे सोओगे ?

मणि—क्या ये लोग नहबतखाने के ऊपर का कमरा न देगे ?

श्रीरामकृष्ण खजाची से मणि की बात कहेगे। रहने के लिए एक कमरा ठीक कर देगे। मणि को नहबतखाने के ऊपर का कमरा पसन्द आया है। वे हैं भी कविताप्रिय मनुष्य। नहबतखाने से आकाश, गगा, चाँदनी, फूलो के पेड, ये सब दीख पडते है।

श्रीरामकृष्ण—देगे क्यो नही ? मै पचवटी-वाला घर इसलिए कह रहा हूँ कि वहाँ बहुत राम-नाम और ईश्वर-चिन्तन किया गया है।

(३)

ईश्वर से प्रेम करो

श्रीरामकृष्ण के कमरे मे धूप दिया गया है। उसी छोटे तख्त पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन कर रहे है। मणि जमीन पर बैठे हुए हैं। राखाल, लाटू, रामलाल ये भी कमरे के अन्दर हैं।

श्रीरामकृष्ण मणि से कह रहे हैं, बात है उन पर भक्ति करना—उन्हे प्यार करना। फिर उन्होने रामलाल से गाने के लिए कहा। रामलाल मधुर कण्ठ से गाने लगे। श्रीरामकृष्ण हर गाने का पहला चरण कह दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण के कहने पर रामलाल पहले श्रीगौराग का सन्यास गा रहे हैं। गीत का आशय नीचे दिया जाता है—

"केशव भारती के कुटीर में मैंने कैसी अपूर्वज्योति गौराग

मूर्ति देखी ! उनके दोनो नेत्रो में शत धाराओ से होकर प्रेम वह रहा है । मत्त मातग के सदृश श्रीगौराग कभी तो प्रेमावेश में नाचते हुए गाते हैं, कभी धूल में लोटते हैं, कभी आँसुओ में वहते है । वे रोते हुए हरिनाम-कीर्तन कर रहे हैं । उनके कीर्तन का उच्च स्वर स्वर्ग और मर्त्य-लोक को भी हिला रहा है । कभी वे दाँतो मे तृण दवाकर, हाथ जोड, वार-वार दासता से मुक्त कर देने के लिए परमात्मा से प्रार्थना कर रहे हैं । अपने घूँघरवाले वालो को मुडाकर उन्होने योगी का वेश धारण किया है । उनकी भक्ति और प्रेमावेश को देखकर जी रो उठता है । जीवों के दु ख से दु खी होकर, सर्वस्व तक त्याग करके वे प्रेम प्रदान करने के लिए आये हैं ।"

रामलाल ने एक गाना फिर गाया । इसमें श्रीगौरागदेव की माता का विलाप है । इसके वाद एक गाना और हुआ । श्रीरामकृष्ण रामलाल से फिर गाने के लिए कह रहे हैं । इस वार रामलाल के साथ श्रीरामकृष्ण भी गा रहे हैं । गीत का भावार्थ—

"हे प्रभु श्रीगौराग और नित्यानन्द, तुम दोनो भाई वडे ही दयालु हो ! यही सुनकर मैं यहाँ आया हूँ । मै वाराणसी गया था । वहाँ विश्वेश्वरजी ने मुझसे कहा है, वे परव्रह्म इस समय शची देवी के घर में हैं । हे परव्रह्म ! मैंने तुम्हे पहचान लिया है । मैं कितनी ही जगह गया, परन्तु इस तरह के दयासागर और कहीं मेरी दृष्टि में नहीं पडे । तुम दोनो व्रज-मण्डल में कृष्ण-वलराम थे । अव नदिया में आकर श्रीगौराग और नित्यानन्द हुए हो । तुम्हारी व्रज की क्रीडा थी दौड-धूप और अव यहाँ नदिया में तुम्हारी क्रीड़ा है धूल में लोटपोट हो जाना । व्रज में तुम्हारी क्रीड़ा जोर-जोरकी किलकारियाँ थी और आज नदिया में

तुम्हारी क्रीडा है नाम-कीर्तन। तुम्हारे सब और अग तो छिप गये हैं, परन्तु दोनो वकिम नेत्र अब भी हैं। तुम्हारा पतित-पावन नाम सुनकर मेरे हृदय में बहुत बडा भरोसा हो गया है। मैं बडी आशा से यहाँ दौडा हुआ आया हूँ। तुम अपने चरणो की शीतल छाया में मुझे स्थान दो। जगाई और मधाई जैसे पाखडी भी तर गये हैं, प्रभो, यही भरोसा मुझे भी है। मैंने सुना है, तुम दोनो चाण्डालो को भी हृदय से लगा लेते हो, हृदय से लगाकर नाम-कीर्तन करते हो।"

परिच्छेद ३९

जीवनोद्देश्य—ईश्वरदर्शन

(१)

प्रह्लाद-चरित्र श्रवण तथा भावावेश। स्त्रीसंग-निन्दा। निष्काम कर्म

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में उसी पूर्व-परिचित कमरे में जमीन पर बैठे हुए प्रह्लाद चरित्र सुन रहे हैं। दिन के आठ बजे होंगे। श्रीयुत रामलाल भक्तमाल-ग्रन्थ से प्रह्लाद-चरित्र पढ़ रहे हैं।

आज शनिवार, अगहन की कृष्णा प्रतिपदा है, १५ दिसम्बर, १८८३। मणि दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण की पदच्छाया में ही रहते हैं। वे भी श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए प्रह्लाद-चरित्र सुन रहे हैं। कमरे में श्रीयुत राखाल, लाटू, हरीश भी हैं,—कोई बैठे हुए सुन रहे हैं, कोई आना-जाना कर रहे हैं। हाजरा बरामदे में हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रह्लाद-चरित्र की कथा सुनते-सुनते भावावेश में आ रहे हैं। जब हिरण्यकशिपु का वध हो गया, तब नृसिंह की रुद्र मूर्ति देख और उनका सिंहनाद सुनकर ब्रह्मादि देवताओं ने प्रलय की आशंका से प्रह्लाद को ही उनके पास भेजा। प्रह्लाद बालक की तरह स्तव कर रहे हैं। 'अहा! भक्त का कैसा प्यार है' कहकर श्रीरामकृष्ण भावसमाधि में लीन हो गये। देह निःस्पन्द हो गयी है, आँखों की कोरों में प्रेमाश्रु दिखायी पड़ रहे हैं। भाव का उपशम हो जाने पर श्रीरामकृष्ण उसी छोटे तख्त पर जा बैठे। मणि जमीन पर बैठे। श्रीरामकृष्ण उनसे

बातचीत कर रहे है। ईश्वर के मार्ग पर रहकर जो लोग स्त्री-सग करते हैं, उनके प्रति श्रीरामकृष्ण घृणा और क्रोध प्रकट कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—लाज भी नही आती,—लडके हो गये और स्त्री-सग ! घृणा भी नही होती,—पशुओ का-सा व्यवहार ! थूक, खून, मल, मूत्र—इन पर घृणा भी नही होती ! जो ईश्वर के पादपद्मो की चिन्ता करता है, उसके निकट परम सुन्दरी स्त्री भी चिता-भस्म के समान जान पडती है। जो शरीर नही रहेगा —जिसके भीतर कृमि, क्लेश, श्लेष्मा—सब तरह की नापाक चीजे भरी हुई हैं, उसी को लेकर आनन्द ! लज्जा भी नहीं आती !

मणि चुपचाप सिर झुकाये हुए हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे—

"उनके प्रेम का एक बिन्दु भी यदि किसी को मिल गया तो कामिनी-काचन अत्यन्त तुच्छ जान पडते है। जब मिश्री का शरबत मिल जाता है, तब गुड का शरबत नही सुहाता। व्याकुल होकर उनसे प्रार्थना करने पर, उनके नामगुण का सदा कीर्तन करने पर, क्रमश उन पर वैसा ही प्यार हो जाता है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त हो कमरे के भीतर नाचते हुए टहलने और गाने लगे।

करीब दस बजे होगे। श्रीयुत रामलाल ने काली-मन्दिर की नित्य पूजा समाप्त कर दी है। श्रीरामकृष्ण माता के दर्शन करने के लिए काली-मन्दिर जा रहे हैं। साथ मणि भी हैं। मन्दिर मे प्रवेश कर श्रीरामकृष्ण आसन पर बैठ गये। माता के चरणो पर दो-एक फूल उन्होंने अर्पित किये। अपने मस्तक पर फूल रखकर ध्यान कर रहे हैं। अब गीत गाकर माता की स्तुति

करने लगे।

"हे शंकरि, मैंने सुना है तुम्हारा नाम भवहरा भी है। इसीलिए, माँ, मैंने तुम्हे अपना भार दे दिया है,—तुम तारो चाहे न तारो।"

श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर से लौटकर अपने कमरे के दक्षिण-पूर्व वाले बरामदे में बैठे। दिन के दस बजे का समय होगा। अब भी देवताओं का भोग या भोग-आरती नहीं हुई। माता काली और श्रीराधाकान्त के प्रसादी फल-मूल आदि से कुछ लेकर श्रीरामकृष्ण ने थोडा जलपान किया। राखाल आदि भक्तों को भी थोडा-थोडा प्रसाद मिल चुका है।

श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए राखाल Smile's Self-Help पढ रहे हैं—Lord Erskine के सम्बन्ध में।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से)--इसमें क्या लिखा है ?

मास्टर---साहब फल की आकांक्षा न करके कर्तव्य-कर्म करते थे--यही लिखा है। निष्काम कर्म।

श्रीरामकृष्ण—तब तो अच्छा है। परन्तु पूर्ण ज्ञान का लक्षण है कि एक भी पुस्तक साथ न रहेगी। जैसे शुकदेव—उनका सब कुछ जिह्वा पर।

"पुस्तकों और शास्त्रों में शक्कर के साथ बालू भी मिली हुई है। साधु शक्कर भर का हिस्सा ले लेता है, बालू छोड़ देता है। साधु सार पदार्थ लेता है।"

वैष्णवचरण कीर्तनिया (कीर्तन गाने वाले) आये हुए हैं; उन्होंने 'सुबोल-मिलन' नाम का कीर्तन गाकर सुनाया।

कुछ देर बाद श्रीयुत रामलाल ने थाली में श्रीरामकृष्ण के लिए प्रसाद ला दिया। प्रसाद पाकर श्रीरामकृष्ण थोड़ा विश्राम

करने लगे।

रात में मणि नहबतखाने में सोयेंगे। श्री माताजी जब श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए आती थी तब इसी नहबतखाने में रहती थीं। कई मास हुए वे कामारपुकुर गयी हैं।

(२)

ब्रह्मज्ञान का एकमात्र मार्ग। योगभ्रष्ट

श्रीरामकृष्ण मणि के साथ पश्चिमवाले गोल बरामदे में आये हैं। सामने दक्षिण-वाहिनी भागीरथी है। पास ही कनेर, बेला, जूही, गुलाब, कृष्णचूडा आदि अनेक प्रकार के फूले हुए पेड हैं। दिन के दस बजे होंगे।

आज रविवार, अगहन की कृष्णा द्वितीया है—१६ दिसम्बर, १८८३।

श्रीरामकृष्ण मणि को देख रहे हैं और गा रहे हैं—(भाव)

"माँ तारा, मुझे तारना होगा, मैं शरणागत हूँ। पिंजडे के पक्षी जैसी मेरी दशा हो रही है। "

"क्यों?—पिंजडे की चिडिया की तरह क्यों होगे? छि!"

कहते ही कहते भावावेश में आ गये। शरीर, मन, सब स्थिर है; आँखों से धारा बह चली है।

कुछ देर बाद कह रहे हैं, माँ, सीता की तरह कर दो। बिलकुल सब भूल जाऊँ—देह, स्त्री-पुरुष-भेद—हाथ—पैर—स्तन—किसी तरह का होश नहीं! एकमात्र चिन्ता—'राम कहाँ!'

किस तरह व्याकुल होने पर ईश्वर-लाभ होता है, मणि को इसकी शिक्षा देने के लिए ही मानो श्रीरामकृष्ण के मन में सीता का उद्दीपन हुआ था। सीता राममय-जीविता थीं,—श्रीरामचन्द्र की चिन्ता में ही वे पागल हो रही थीं,—इतनी प्रिय वस्तु जो

देह है उसे भी वे भूल गयी थी ।

दिन के तीसरे प्रहर के चार बजे का समय है । श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ उसी कमरे में बैठे हुए हैं । जनाई के मुखर्जी बाबू आये हुए है,—ये श्रीयुत प्राणकृष्ण के आत्मीय हैं । उनके साथ एक शास्त्रज्ञ ब्राह्मण मित्र हैं । मणि, राखाल, लाटू, हरीश, योगीन्द्र आदि भक्त भी हैं ।

योगीन्द्र दक्षिणेश्वर के सावर्ण चौधरियो के यहाँ के हैं । ये आजकल प्राय रोज दिन ढलने पर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आते है और रात को चले जाते हैं । योगीन्द्र ने अभी विवाह नही किया ।

मुखर्जी (प्रणाम करके)—आपके दर्शन से बडा आनन्द हुआ ।

श्रीरामकृष्ण—वे सभी के भीतर हैं, वही सोना सबके भीतर है, कहीं प्रकाश अधिक है । ससार में उस पर बहुत मिट्टी पडी रहती है ।

मुखर्जी (सहास्य)—महाराज, ऐहिक और पारमार्थिक में अन्तर क्या है ?

श्रीरामकृष्ण—साधना के समय 'नेति'-'नेति' करके त्याग करना पडता है । उन्हे पा लेने पर समझ में आता है, सब कुछ वही हुए हैं ।

"जब श्रीरामचन्द्र को वैराग्य हुआ, तब दशरथ को बडी चिन्ता हुई, वे वशिष्ठजी की शरण में गये, जिससे राम ससार का त्याग न करें । वशिष्ठजी ने श्रीरामचन्द्र के पास जाकर देखा, वे वीतराग हुए बैठे थे—अन्तर तीव्र वैराग्य से भरा हुआ था । वशिष्ठजी ने कहा, राम, तुम ससार का त्याग क्यो करोगे ? ससार क्या कोई उनसे अलग वस्तु है ? मेरे साथ विचार करो ।

राम ने देखा, ससार भी उसी परब्रह्म से हुआ है, इसलिए चुपचाप बैठे रहे ।

"जैसे जिस चीज से मट्ठा होता है, उसी से मक्खन भी होता है । अतएव मट्ठे का ही मक्खन और मक्खन का ही मट्ठा कहना चाहिए । बडी कठिनाइयो से मक्खन उठा लेने पर (अर्थात् ब्रह्मज्ञान होने पर) देखोगे, मक्खन रहने से मट्ठा भी है । जहाँ मक्खन है वही मट्ठा है । ब्रह्म है, इस ज्ञान के रहने से जीव, जगत्, चतुर्विंशति तत्त्व भी है ।

"ब्रह्म क्या वस्तु है, यह कोई मुँह से नही कह सकता । सब वस्तुएँ जूठी हो गयी हैं, परन्तु ब्रह्म क्या है, यह कोई मुँह से नही कह सका, इसीलिए वह जूठा नही हुआ । यह बात मैंने विद्यासागर से कही थी । विद्यासागर सुनकर बडे प्रसन्न हुए ।

"विषयबुद्धि का लेशमात्र रहते भी यह ब्रह्मज्ञान नहीं होता । कामिनी-काचन का भाव जब मन में बिलकुल न रहेगा, तब होगा । पार्वतीजी ने पर्वत-राज से कहा, 'पिताजी, अगर आप ब्रह्मज्ञान चाहते हैं तो साधुओ का सग कीजिये ।"

श्रीरामकृष्ण फिर मुखर्जी से कह रहे हैं—

"तुम्हारे धन-सम्पत्ति भी है और ईश्वर को भी पुकारते जाते हो, यह बहुत अच्छा है । गीता मे है—जो लोग योगभ्रष्ट हो जाते हैं वही भक्त होकर धनी के घर जन्म लेते हैं ।"

मुखर्जी (अपने मित्र से सहास्य)—"शुचीना श्रीमता गेहे *योगभ्रष्टोभिजायते* ।"

श्रीरामकृष्ण—वे चाहे तो ज्ञानी को ससार में भी रख सकते है। उन्ही की इच्छा से यह जीव-प्रपच हुआ है । वे इच्छामय है ।

मुखर्जी (सहास्य)—उनकी फिर कैसी इच्छा ? क्या उन्हे भी

कोई अभाव है ?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—इसमें दोष ही क्या है ? पानी स्थिर रहे तो भी वह पानी है और तरंगें उठने पर भी वह पानी ही है।

"साँप चुपचाप कुण्डली बाँधकर बैठा रहे, तो भी वह साँप है और तिर्यग्-गति हो टेढ़ा मेढ़ा रगने से भी वह साँप ही है।

"बाबू जब चुपचाप बैठे रहते हैं, तब वे जो मनुष्य हैं, वही मनुष्य वे उस समय भी हैं जब वे काम करते हैं।

"जीव-प्रपंच को अलग कैसे कर सकते हो ? इस तरह वजन तो घट जायगा ! बेल के बीज और खोपड़ा निकाल देने से पूरे बेल का वजन ठीक नहीं उतरता।

"ब्रह्म निर्लिप्त है। सुगन्ध और दुर्गन्ध वायु से मिलती है, परन्तु वायु निर्लिप्त है। ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। उसी आद्याशक्ति से जीव-प्रपंच बना है।"

मुखर्जी—योगभ्रष्ट क्यों होते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—'जब मैं गर्भ में था तब योग में था, पृथ्वी पर गिरते ही मिट्टी खायी। धाई ने तो मेरा नार काटा, पर यह माया की बेड़ी कैसे काटूं ?'

"कामिनी-कांचन ही माया है। मन से इन दोनों के जाते ही योग होता है। आत्मा—परमात्मा चुम्बक पत्थर है, जीवात्मा एक सुई है—उनके खींच लेने ही से हो गया, परन्तु सुई में अगर मिट्टी लगी हुई हो, तो चुम्बक नहीं खींचता—मिट्टी साफ कर देने से फिर खींचता है।

"कामिनी-कांचन मिट्टी है, इसे साफ करना चाहिए।"

मुखर्जी—यह किस तरह साफ हो ?

श्रीरामकृष्ण—उनके लिए व्याकुल होकर रोओ। वही जल

मिट्टी पर गिरने से मिट्टी धुल जायगी। जब खूब साफ हो जायगी तब चुम्बक खींच लेगा। योग तभी होगा।

मुखर्जी—अहा! कैसी बात है।

श्रीरामकृष्ण—उनके लिए रो सकने पर उनके दर्शन भी होगे और समाधि भी होगी। योग में सिद्ध होने से ही समाधि होती है। रोने से कुम्भक आप ही आप होता है।—उसके बाद समाधि।

"एक उपाय और है—ध्यान। सहस्रार (मस्तक) मे विशेष रूप से शिव का अधिष्ठान है—उसका ध्यान। शरीर आधार है और मन-बुद्धि जल। इस पानी पर उस सच्चिदानन्द सूर्य का बिम्ब गिरता है। उसी बिम्ब-सूर्य का ध्यान करते-करते उनकी कृपा से यथार्थ सूर्य के भी दर्शन होते हैं।

साधुसग करो और आम-मुखत्यारी दे दो

"परन्तु ससारी मनुष्यो के लिए तो सदा ही साधुसग की आवश्यकता है। यह सबके लिए है, सन्यासियो के लिए भी, परन्तु ससारियो के लिए तो विशेषकर यह आवश्यक है। रोग लगा ही हुआ है—कामिनी-काचन में सदा ही रहना पडता है।

मुखर्जी—जी हाँ, रोग लगा ही हुआ है।

श्रीरामकृष्ण—उन्हे आम-मुखत्यारी दे दो—वे जो चाहे सो करे। तुम बिल्ली के बच्चे की तरह उन्हे पुकारते भर रहो व्याकुल होकर। उसकी माँ उसे चाहे जहाँ रखे—वह कुछ भी नही जानता,—कभी बिस्तर पर रखती—कभी भूसे के गोदाम में!

मुखर्जी—गीता आदि शास्त्र पढना अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण—केवल पढने-सुनने से क्या होगा? किसी ने दूध का नाम मात्र सुना है, किसी ने दूध देखा है और किसी ने

दूध पीया है। लोग ईश्वर के दर्शन करते हैं और उनसे वार्तालाप भी करते हैं।

"पहले प्रवर्तक है। वह पढ़ता-सुनता है। उसके बाद साधक है, उन्हें पुकारता है, ध्यान-चिन्तन और नाम-गुण-कीर्तन करता है, इसके बाद सिद्ध—उसे उनका आभास मिला है, उनके दर्शन हुए हैं। इसके बाद है सिद्ध का सिद्ध, जैसे चैतन्यदेव की अवस्था—कभी वात्सल्य और कभी मधुर भाव।"

मणि, राखाल, योगीन्द्र, लाटू आदि भक्तगण—ये सब देव-दुर्लभ तत्त्व कथाएँ आश्चर्यचकित होकर सुन रहे हैं।

अब मुखर्जी और उनके साथवाले विदा होंगे। वे सब प्रणाम करके खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण भी, शायद उन्हें सम्मान दिखाने के उद्देश्य से खड़े हो गये।

मुखर्जी (सहास्य)—आपके लिए उठना और बैठना!

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—उठने और बैठने में हानि क्या है? पानी स्थिर होने पर भी पानी है और हिलने-डुलने पर भी पानी ही है। आँधी में जूठा पत्ता, हवा चाहे जिस ओर उड़ा ले जाय। मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं।

(३)

श्रीरामकृष्ण का दर्शन और वेदान्त तत्त्वों की गूढ़ व्याख्या। अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद। क्या जगत् मिथ्या है?

जनाई के मुखर्जी चले गये। मणि सोच रहे हैं, वेदान्तदर्शन के मत से सब स्वप्नवत् है। तो क्या जीव, जगत्, मैं, यह मिथ्या है?

कुछ देर बाद ही श्रीरामकृष्ण मणि के साथ अकेले पश्चिम-वाले गोल बरामदे में बातचीत कर रहे हैं।

मणि—क्या संसार मिथ्या है?

श्रीरामकृष्ण—मिथ्या क्यो है? यह सब विचार की बात है।

"पहले पहल 'नेति' 'नेति' विचार करते समय, वे न जीव है, न जगत् है, न चौवीसो तत्त्व है, ऐसा हो जाता है,—यह सब स्वप्नवत् हो जाता है। इसके बाद अनुलोम विलोम होता है, तब वही जीव-जगत् हुए है, यह ज्ञान हो जाता है।

"तुम एक-एक करके सीढियो से छत पर गये। परन्तु जब तक तुम्हे छत का ज्ञान है, तब तक सीढियो का ज्ञान भी है। जिसे ऊँचे का ज्ञान है उसे नीचे का भी ज्ञान है।

"फिर छत पर चढकर तुमने देखा, जिस चीज से छत बनी हुई है—ईट, चूना, मसाला—उसी चीज से सीढियाँ भी बनी है।

"और जैसे बेल की बात कही थी।

"जिसका 'अटल' है, उसका 'टल' भी है।

"'मैं' नही जाने का। 'मैं-घट' जब तक है, तब तक जीव-प्रपच भी है। उन्हे प्राप्त कर लेने पर देखा जाता है, जीव-प्रपच वही हुए है।—केवल विचार से ही नही होता।

"शिव की दो अवस्थाएँ है। जब वे समाधिस्थ हैं—महायोग मे बैठे हुए है—तब आत्माराम है। फिर जब उस अवस्था से उतर आते है—थोडा-सा मैं' रहता है, तब 'राम-राम' कहकर नृत्य करते हैं।"

शाम हो गयी है। श्रीरामकृष्ण जगन्माता का नाम और उनका चिन्तन कर रहे हैं। भक्तगण भी निर्जन मे जाकर अपना-अपना ध्यानजप करने लगे। इधर कालीमाई के मन्दिर मे, श्रीराधा-कान्तजी के मन्दिर मे और बारहो शिवालयो में आरती होने लगी।

आज कृष्णपक्ष की द्वितीया है। सन्ध्या के कुछ समय बाद

चन्द्रोदय हुआ। वह चाँदनी, मन्दिर-शीर्ष, चारों ओर के पेड़-पौधे और मन्दिर के पश्चिम ओर भागीरथी के वक्ष-स्थल पर पड़कर अपूर्व शोभा धारण कर रही है। इस समय उसी पूर्वपरिचित कमरे में श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। जमीन पर मणि बैठे हुए हैं। शाम होते-होते वेदान्त के सम्बन्ध की जो बात मणि ने उठायी थी उसी के बारे में श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—संसार मिथ्या क्यों होने लगा? यह सब विचार की बात है। उनके दर्शन हो जाने पर ही समझ में आता है कि जीव-प्रपच सब वही हुए हैं।

"मुझे माँ ने काली-मन्दिर में दिखलाया कि माँ ही सब कुछ हुई हैं। दिखाया, सब चिन्मय है। प्रतिमा चिन्मय है! सगमर्मर पत्थर—सब कुछ चिन्मय है!

"मन्दिर के भीतर मैंने देखा, सब मानो रस से भरपूर है—सच्चिदानन्द-रस से। भीतर उनकी शक्ति जाज्वल्यमान देखी!

"इसलिए तो मैंने बिल्ली को उनके भोग की पूड़ियाँ खिलायी थी। देखा, माँ ही सब कुछ हुई है—बिल्ली भी। तब खजाची ने मथुरबाबू को लिखा कि भट्टाचार्य महाशय भोग की पूड़ियाँ बिल्लियों को खिलाते हैं। मथुरबाबू मेरी अवस्था समझते थे। चिट्ठी के उत्तर में उन्होंने लिखा, वे जो कुछ करें, उसमें कुछ बाधा न देना।

"उन्हें पा जाने पर यह सब ठीक-ठीक दीख पड़ता है; वही जीव, जगत्, चौबीसों तत्त्व—यह सब हुए हैं।

"परन्तु, यदि वे 'मैं' को बिलकुल मिटा दें, तब क्या होता है, यह मुँह से नहीं कहा जा सकता। जैसा रामप्रसाद ने कहा है—'तब तुम अच्छी हो या मैं अच्छा हूँ यह तुम्हीं समझना।'

"वह अवस्था भी मुझे कभी-कभी होती है।

"विचार करने से एक तरह का दर्शन होता है और जब वे दिखा देते हैं तब एक दूसरे तरह का।"

(४)

जीवनोद्देश्य—ईश्वरदर्शन। उपाय—प्रेम

दूसरे दिन सोमवार, १७ दिसम्बर, १८८३। सवेरे आठ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण उसी कमरे में बैठे हुए हैं। राखाल, लाटू आदि भक्त भी है। मणि जमीन पर बैठे हैं। श्रीयुत मधु डाक्टर भी आये हुए हैं। वे श्रीरामकृष्ण के पास उसी छोटी खाट पर बैठे हैं। मधु डाक्टर वयोवृद्ध हैं—श्रीरामकृष्ण को कोई बीमारी होने पर प्राय ये आकर देख जाया करते हैं। स्वभाव के बडे रसिक हैं।

श्रीरामकृष्ण—बात है सच्चिदानन्द पर प्रेम। कैसा प्रेम? —ईश्वर को किस तरह प्यार करना चाहिए? गौरी पण्डित कहता था, राम को जानना हो तो सीता की तरह होना चाहिए, भगवान् को जानने के लिए भगवती की तरह होना चाहिए। भगवती ने शिव के लिए जैसी कठोर तपस्या की थी, वैसी ही तपस्या करनी चाहिए। पुरुष को जानने का अभिप्राय हो तो प्रकृति-भाव का आश्रय लेना पडता है—सखीभाव, दासीभाव, मातृभाव।

"मैंने सीतामूर्ति के दर्शन किये थे। देखा, सब मन राम में ही लगा हुआ है। योनि, हाथ, पैर, कपडे-लत्ते, किसी पर दृष्टि नही है। मानो जीवन ही राममय है—राम के बिना रहे, राम को बिना पाये, जी नही सकती।"

मणि—जी हाँ, जैसे पगली!

श्रीरामकृष्ण—उन्मादिनी ! —अहा ! ईश्वर को प्राप्त करना हो तो पागल होना पडता है ।

"कामिनी-काचन पर मन के रहने से नही होता । कामिनी के साथ रमण—इसम क्या सुख है ? ईश्वर-दर्शन होने पर रमण-सुख से करोड गुना आनन्द होता है । गौरी कहता था, महाभाव होने पर शरीर के सब छिद्र—रोमकूप भी—महायोनि हो जाते हैं । एक-एक छिद्र में आत्मा के साथ आत्मा का रमण-सुख होता है !

"व्याकुल होकर उन्हे पुकारना चाहिए । गुरु के श्रीमुख से सुन लेना चाहिए कि वे क्या करने से मिलेंगे ।

"गुरु तभी मार्ग बतला सकेंगे जब वे स्वय पूर्णज्ञानी होगे ।

"पूर्णज्ञान होने पर वासना चली जाती है । पाँच वर्ष के बालक का-सा स्वभाव हो जाता है । दत्तात्रेय और जड-भरत, ये बाल-स्वभाव के थे ।"

मणि—जी हाँ, और भी कितने ही ज्ञानी इनकी तरह के हो गये हैं ।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ज्ञानी की सब वासना चली जाती है । —जो कुछ रह जाती है, उसमें कोई हानि नही होती । पारस पत्थर के छू जाने पर तलवार सोने की हो जाती है, फिर उस तलवार से हिंसा का काम नही होता । इसी तरह ज्ञानी में काम-क्रोध की छाया मात्र रहती है, नाम मात्र—उसमें कोई अनर्थ नही होता ।

श्रीरामकृष्ण—इस बात की धारणा करनी चाहिए ।

मणि—पूर्णज्ञानी संसार में शायद तीन-चार मनुष्यों से अधिक न होंगे ।

श्रीरामकृष्ण—क्यों ? पश्चिम के मठों में तो बहुत से साधु-संन्यासी दीख पड़ते हैं ।

मणि—जी, इस तरह का संन्यासी तो मैं भी हो जाऊँ !

इस बात से श्रीरामकृष्ण कुछ देर तक मणि की ओर देखते रहे ।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—क्या, क्या सब त्याग कर ?

मणि—माया के बिना गये क्या होगा ? माया को जीत न पाया तो केवल संन्यासी होकर क्या होगा ?

सब लोग कुछ समय तक चुप रहे ।

त्रिगुणातीत भक्त बालक के समान

मणि—अच्छा, त्रिगुणातीत भक्ति किसे कहते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—उस भक्ति के होने पर भक्त सब चिन्मय देखता है । चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम—भक्त भी चिन्मय—सब चिन्मय ! ऐसी भक्ति कम लोगों की होती है ।

डाक्टर मधु (सहास्य)—त्रिगुणातीत भक्ति, अर्थात् भक्त किसी गुण के वश नहीं ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—यह जैसे पाँच साल का लड़का—किसी गुण के वश नहीं ।

दोपहर को, भोजन के बाद, श्रीरामकृष्ण विश्राम कर रहे हैं । श्रीयुत मणिलाल मल्लिक ने आकर प्रणाम किया, फिर जमीन पर बैठ गये । मणि भी जमीन पर बैठे हुए हैं । श्रीरामकृष्ण लेटे-लेटे ही मणि मल्लिक के साथ बीच-बीच में एक एक बात कह रहे हैं ।

मणि मल्लिक—आप केशव सेन को देखने गये थे ?

श्रीरामकृष्ण—हाँ । अब वे कैसे हैं ?

मणि मल्लिक—रोग कुछ घटता हुआ नहीं दीख पड़ता ।

श्रीरामकृष्ण—मैंने देखा, बड़ा राजसिक है,—मुझे बड़ी देर तक बैठा रखा, तब भेंट हुई ।

श्रीरामकृष्ण उठकर बैठ गये । भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं ।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—मैं 'राम-राम' कहकर पागल हो गया था । सन्यासी के देवता रामलाला को लेकर घूमता फिरता था—उसे नहलाता था, खिलता था, सुलाता था । जहाँ कहीं जाता, साथ ले जाता था । 'रामलाला' 'रामलाला' कहकर पागल हो गया था ।

परिच्छेद ४०

समाधि-तत्त्व

(१)

श्रीकृष्ण-भक्ति

श्रीरामकृष्ण सदा ही समाधिमग्न रहते हैं, केवल राखाल आदि भक्तों की शिक्षा के लिए उन्हें लेकर व्यस्त रहते हैं— जिससे उन्हें चैतन्य प्राप्त हो।

वे अपने कमरे के पश्चिम वाले बरामदे में बैठे हैं। प्रातःकाल का समय, मंगलवार, १८ दिसम्बर १८८३ ई०। स्वर्गीय देवेन्द्र-नाथ ठाकुर की भक्ति और वैराग्य की बात पर वे उनकी प्रशंसा कर रहे हैं। राखाल आदि बालक भक्तों से वे कह रहे हैं, "वे सज्जन व्यक्ति हैं। परन्तु जो गृहस्थाश्रम में प्रवेश न कर बचपन से ही शुकदेव आदि की तरह दिनरात ईश्वर का चिन्तन करते हैं, कौमार अवस्था में वैराग्यवान् हैं, वे धन्य हैं।

"गृहस्थ की कोई न कोई कामना-वासना रहती ही है, यद्यपि उसमें कभी-कभी भक्ति—अच्छी भक्ति—दिखायी देती है। मथुर बाबू न जाने किस एक मुकदमे में फँस गये थे—मन्दिर में माँ काली के पास आकर मुझसे कहते हैं, 'बाबा, माँ को यह अर्घ्य दीजिये न!'—मैंने उदार मन से दिया। परन्तु कैसा विश्वास है कि मेरे देने से ही ठीक होगा।

"रति की माँ की इधर कितनी भक्ति है! अक्सर आकर कितनी सेवा-टहल करती है! रति की माँ वैष्णव है। कुछ दिनों के बाद ज्योंही देखा कि मैं माँ काली का प्रसाद खाता हूँ—त्योंही

उन्होने आना बन्द कर दिया। कैसा एकागी दृष्टिकोण है! लोगो को पहले-पहल देखने से पहचाना नही जाता।"

श्रीरामकृष्ण कमरे के भीतर पूर्व की ओर के दरवाजे के पास बैठे हैं। जाडे का समय। बदन पर एक ऊनी चद्दर है। एकाएक सूर्य देखते ही समाधिमग्न हो गये। आँखें स्थिर! बाहर का कुछ भी ज्ञान नही।

क्या यही गायत्री मन्त्र की सार्थकता है—'तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।'

बहुत देर बाद समाधि भग हुई। राखाल, हाजरा, मास्टर आदि पास बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (हाजरा के प्रति)—समाधि-अवस्था की प्रेरणा भाव से ही होती है। श्याम बाजार में नटवर गोस्वामी के मकान पर कीर्तन हो रहा था—श्रीकृष्ण और गोपियो का दर्शन कर मै समाधिमग्न हो गया! ऐसा लगा कि मेरा लिंगशरीर (सूक्ष्मशरीर) श्रीकृष्ण के पैरो के पीछे-पीछे जा रहा है।

"जोडासाँक् हरिसभा में उसी प्रकार कीर्तन के समय समाधिस्थ होकर बाह्यशून्य हो गया था। उस दिन देहत्याग की सम्भावना थी!"

श्रीरामकृष्ण स्नान करने गये। स्नान के बाद उसी गोपी प्रेम की ही बात कर रहे हैं। (मणि आदि के प्रति) गोपियो के केवल उस आकर्षण को लेना चाहिए। इस प्रकार के गाने गाओ।

(सगीत—भावार्थ)

"सखि, वह वन कितनी दूर है, जहाँ मेरे श्यामसुन्दर हैं। (मै तो और चल नहीं सकती।) जिस घर में कृष्ण नाम लेना कठिन है उस घर में तो मै किसी भी तरह नही जाऊँगी।"

(२)
यदु मल्लिक के प्रति उपदेश

श्रीरामकृष्ण ने राखाल के लिए सिद्धेश्वरी के नाम पर कच्चे नारियल और चीनी की मन्नत की है। मणि से कह रहे है, 'तुम नारियल और चीनी का दाम दोगे।'

दोपहर के बाद श्रीरामकृष्ण राखाल, मणि आदि के साथ कलकत्ते के श्रीसिद्धेश्वरी-मन्दिर की ओर गाड़ी पर सवार होकर आ रहे हैं। रास्ते मे सिमुलिया बाजार से कच्चा नारियल और चीनी खरीदी गयी।

मन्दिर मे आकर भक्तो से कह रहे है, 'एक नारियल फोडकर चीनी मिलाकर माँ को अर्पण करो।'

जिस समय मन्दिर में आ पहुँचे, उस समय पुजारी लोग मित्रों के साथ माँ काली के सामने ताश खेल रहे थे। यह देखकर श्रीरामकृष्ण भक्तो से कह रहे है, 'देखा, ऐसे स्थानो में भी ताश! यहाँ पर तो ईश्वर का चिन्तन करना चाहिए।'

अब श्रीरामकृष्ण यदु मल्लिक के घर पर पधारे हैं। उनके पास अनेक बाबू लोग आये हैं।

यदु बाबू कह रहे हैं, "पधारिये, पधारिये।" आपस में कुशल प्रश्न के बाद श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर)—तुम इतने चापलूसो को क्यों रखते हो?

यदु (हँसते हुए)—इसलिए कि आप उनका उद्धार करें। (सभी हँसने लगे)

श्रीरामकृष्ण—चापलूस लोग समझते हैं कि बाबू उन्हे खुले हाथ धन दे देंगे; परन्तु बाबू से धन निकालना बड़ा कठिन काम

है। एक सियार एक बैल को देख उसका फिर साथ न छोड़े। बैल घूमता फिरता है, सियार भी साथ-साथ है। सियार ने समझा कि बैल का जो अण्डकोष लटक रहा है, वह कभी न कभी गिरेगा और उसे वह खायेगा! बैल कभी सोता है तो वह भी उसके पास ही लेटकर सो जाता है और जब बैल उठकर घूम-फिर कर चरता है तो वह भी साथ-साथ रहता है। कितने ही दिन इसी प्रकार बीते, परन्तु वह कोष न गिरा, तब सियार निराश होकर चला गया! (सभी हँसने लगे) इन चापलूसों की ऐसी ही दशा है!

यदु बाबू और उनकी माँ ने श्रीरामकृष्ण तथा भक्तों को जलपान कराया।

(३)

निराकार साधना

श्रीरामकृष्ण बेल के पेड के पास खड़े हुए मणि से बातचीत कर रहे हैं। दिन के नौ बजे होंगे।

आज बुधवार है, १९ दिसम्बर, अगहन की कृष्ण पंचमी।

इस बेल के पेड के नीचे श्रीरामकृष्ण ने तपस्या की थी। यह स्थान अत्यन्त निर्जन है। इसके उत्तर तरफ बारूदखाना और चारदीवार है, पश्चिम तरफ झाऊ के पेड़, जो हवा के झोकों से हृदय में उदासीनता भर देनेवाली सनसनाहट पैदा करते हैं। आगे हैं भागीरथी। दक्षिण की ओर पंचवटी दिखायी पड़ रही है। चारों ओर इतने पेड़-पत्ते हैं कि देवालय पूर्ण तरह से दिखायी नही आते।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—कामिनी-कांचन का त्याग किये बिना कुछ होने का नहीं।

मणि—क्यो ? वशिष्ठदेव ने तो श्रीरामचन्द्र से कहा था—राम, ससार अगर ईश्वर से अलग हो तो ससार का त्याग कर सकते हो ।

श्रीरामकृष्ण (जरा हँसकर)—वह रावण-वध के लिए कहा था; इसीलिए राम को ससार में रहना पडा और विवाह भी करना पड़ा ।

मणि काठ की मूर्ति की तरह चुपचाप खडे रहे ।

श्रीरामकृष्ण यह कहकर अपने कमरे में लौट जाने के लिए पचवटी की ओर जाने लगे । पचवटी के नीचे आप मणि से फिर वार्तालाप करने लगे । दस बजे का समय होगा ।

मणि—अच्छा, क्या निराकार की साधना नही होती ?

श्रीरामकृष्ण—होती क्यो नही ? वह रास्ता बडा कठिन है । पहले के ऋषि कठिन तपस्या करके तब कही उसका अनुभव मात्र कर पाते थे । ऋषियो को कितनी मेहनत करनी पड़ती थी !—अपनी कुटिया से सुबह को निकल जाते थे । दिन भर तपस्या करके सन्ध्या के बाद लौटते थे । तब आकर कुछ फल-मूल खाते थे ।

"इस साधना में विषय-बुद्धि का लेशमात्र रहते सफलता न होगी । रूप, रस, गन्ध, स्पर्श—ये सब विषय मन में जब बिलकुल न रह जायँ, तब मन शुद्ध होता है । वह शुद्ध मन जो कुछ है, शुद्ध आत्मा भी वही चीज है,—मन में कामिनी-काचन जब बिलकुल न रह जायँ ।

"तब एक और अवस्था होती है—'ईश्वर ही कर्ता है, मैं अकर्ता हूँ ।' मेरे बिना काम नही चल सकता, ऐसे भाव जब बिलकुल नष्ट हो जायँ—सुख में भी और दु ख में भी ।

"किसी मठ के साधु को दुष्टों ने मारा था। मार खाने से बेहोश हो गया। चेतना आने पर जब उससे पूछा गया—तुम्हें कौन दूध पिला रहा है ? तब उसने कहा था, जिन्होंने मुझे मारा था वे ही मुझे अब दूध पिला रहे हैं।"

मणि—जी हाँ, यह जानता हूँ।

स्थित-समाधि और उन्मना-समाधि

श्रीरामकृष्ण—नहीं, सिर्फ जानने से ही न होगा,—धारणा भी होनी चाहिए।

"एक बार विषय-बुद्धि का त्याग होने पर स्थित-समाधि हो जाती है। मेरी देह स्थित-समाधि में छूट सकती है, परन्तु मुझमें भक्ति और भक्तों के साथ कुछ रहने की वासना है, इसीलिए देह पर भी कुछ दृष्टि है।

"एक और है—उन्मना-समाधि। फैले हुए मन को एकाएक समेट लेना। यह तुम समझे ?"

मणि—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—फैले हुए मन को एकाएक समेट लेना, यह समाधि देर तक नहीं रहती। विषय-वासनाएँ आकर समाधि-भग कर देती हैं—योगी योगभ्रष्ट हो जाता है।

"उस देश में दीवार के भीतर एक बिल में न्योला रहता है। बिल में जब रहता है, खूब आराम से रहता है। कोई-कोई उसकी पूंछ में कंकड बांध देते हैं, तब कंकड के कारण बिल से निकल पडता है। जब-जब वह बिल के भीतर आकर आराम से बैठने की चेष्टा करता है, तब-तब कंकड के प्रभाव से बिल से निकल आना पडता है। विषयवासना भी ऐसी ही है, योगी को योगभ्रष्ट कर देती है।

"विषयी मनुष्यों को कभी-कभी समाधि की अवस्था हो सकती है। सूर्योदय होने पर कमल खिल जाता है, परन्तु सूर्य मेघों से ढक जाने पर फिर वह मुँद जाता है। विषय मेघ है।"

मणि——साधना करने पर क्या ज्ञान और भक्ति दोनों ही नहीं हो सकते ?

श्रीरामकृष्ण——भक्ति लेकर रहने पर दोनों ही होते हैं। जरूरत होने पर वही ब्रह्मज्ञान देते हैं। खूब ऊँचा आधार हुआ तो एक साथ दोनों हो सकते हैं। हाँ, ईश्वर-कोटियों का होता है, जैसे चैतन्यदेव का। जीव-कोटियों की अलग बात है।

"आलोक (ज्योति) पाँच प्रकार के हैं। दीपक का प्रकाश, भिन्न भिन्न प्रकार की अग्नि का प्रकाश, चन्द्रमा का प्रकाश, सूर्य का प्रकाश तथा चन्द्र और सूर्य का सम्मिलित प्रकाश। भक्ति है चन्द्रमा और ज्ञान है सूर्य।

"कभी-कभी आकाश में सूर्यास्त होने से पहले ही चन्द्र का उदय हो जाता है, अवतार आदि में भक्तिरूपी चन्द्रमा तथा ज्ञानरूपी सूर्य एकाधार में देखे जाते हैं।

"क्या इच्छा करने से ही सभी को एक ही समय ज्ञान और भक्ति दोनों प्राप्त होते हैं ? और आधारों की भी विशेषता है। कोई बाँस अधिक पोला रहता है और कोई कम पोला। और फिर सभी में ईश्वर की धारणा थोड़े ही होती है। सेर भर के लोटे में क्या दो सेर दूध आ सकता है ?

मणि——क्यों, उनकी कृपा से। यदि वे कृपा करें तब तो सूई के छेद से ऊँट भी पार हो सकता है !

श्रीरामकृष्ण——परन्तु कृपा क्या यों ही होती है ? भिखारी यदि एक पैसा माँगे तो दिया जा सकता है। परन्तु एकदम यदि

रेल का सारा भाडा माँग बैठे तो ?

मणि चुपचाप खडे हैं, श्रीरामकृष्ण भी चुप हैं। एकाएक बोल उठे, 'हाँ, अवश्य, किसी-किसी पर उनकी कृपा होने से हो सकता है दोनो बातें हो सकती हैं। सब कुछ हो सकता है।'

प्रणाम करके मणि बेलतला की ओर जा रहे हैं।

बेलतला से लौटने में दोपहर हो गया। विलम्ब देखकर श्रीरामकृष्ण बेलतला की ओर आ रहे हैं। मणि दरी, आसन, जल का लोटा लेकर लौट रहे हैं, पचवटी के पास श्रीरामकृष्ण के साथ साक्षात्कार हुआ। उन्होंने उसी समय भूमि पर लोटकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (मणि के प्रति)—मैं जा रहा था, तुम्हें खोजने के लिए। सोचा इतना दिन चढ आया, कहीं दीवार फाँदकर भाग तो नही गया, तुम्हारी आँखें उस समय जिस प्रकार थीं—उनसे सोचा, कहीं नारायण शास्त्री की तरह भाग तो नही गया। उसके बाद फिर सोचा, नहीं वह भागेगा नहीं। वह काफी सोच-समझकर काम करता है।

(४)

भीष्मदेव की कथा। योग कब सिद्ध होता है

फिर रात को श्रीरामकृष्ण मणि के साथ बातें कर रहे हैं। राखाल, लाटू, हरीश आदि हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि के प्रति)—अच्छा कोई कोई कृष्णलीला की आध्यात्मिक व्याख्या करते हैं। तुम्हारी क्या राय है ?

मणि—विभिन्न मतों के रहने से भी क्या हानि है ? भीष्मदेव की कहानी आपने कही है—शरशय्या पर देह-त्याग के समय

उन्होंने कहा था, मैं रो क्यों रहा हूँ ? वेदना के लिए नहीं, जब सोचता हूँ कि साक्षात् नारायण अर्जुन के सारथी बने थे, परन्तु फिर भी पाण्डवों को इतनी विपत्तियाँ झेलनी पड़ी, तो उनकी लीला कुछ भी समझ नहीं सका, इसीलिए रो रहा हूँ।

"फिर हनुमान की कथा आपने सुनायी है। हनुमान कहा करते थे 'मैं वार, तिथि, नक्षत्र आदि कुछ भी नहीं जानता, मैं केवल एक राम का चिन्तन करता हूँ।'

"आपने तो कहा है, दो चीजों के सिवाय और कुछ भी नहीं है, ब्रह्म और शक्ति। और आपने यह भी कहा है, ज्ञान (ब्रह्मज्ञान) होने पर वे दोनों एक ही जान पड़ते हैं। 'एकमेवाद्वितीयम्।'

श्रीरामकृष्ण—हाँ, ठीक! वस्तु प्राप्त करना है सो काँटेदार जंगल में से जाकर लो या अच्छे रास्ते से जाकर लो।

"अनेकानेक मत अवश्य हैं। नागा (तोतापुरी) कहा करता था, मत-मतान्तर के कारण साधु-सेवा न हुई। एक स्थान पर भण्डारा हो रहा था। अनेक साधु-सम्प्रदाय थे! सभी कहते हैं मेरी सेवा पहले हो, उसके बाद दूसरे सम्प्रदायों की। कुछ भी निश्चय न हो सका। अन्त में सभी चले गये और वेश्याओं को खिलाया गया।"

मणि—तोतापुरी महान् व्यक्ति थे।

श्रीरामकृष्ण—हाजरा कहते हैं मामूली। नहीं भाई, वाद-विवाद से कोई काम नहीं, सभी कहते हैं, 'मेरी घड़ी ठीक चल रही है।'

"देखो, नारायण शास्त्री को तो प्रबल वैराग्य हुआ था। उतने

बड़े विद्वान्—स्त्री को छोड़कर लापता हो गये। मन से कामिनी-काचन का सम्पूर्ण त्याग करने से तब योग सिद्ध होता है। किसी-किसी में योगी के लक्षण दिखते हैं।

"तुम्हें षट्चक्र के बारे में कुछ बता दूं। योगी षट्चक्र को भेद कर उनकी कृपा से उनका दर्शन करते हैं। षट्चक्र सुना है न?"

मणि—वेदान्त मत में सप्तभूमि।

श्रीरामकृष्ण—वेदान्त मत नहीं, वेद-मत! षट्चक्र क्या है जानते हो। सूक्ष्म देह के भीतर सब पद्म हैं—योगीगण उन्हें देख सकते हैं। मोम के बने वृक्ष के फल, पत्ते।

मणि—जी हाँ, योगीगण देख सकते हैं। एक पुस्तक में लिखा है—एक प्रकार की काच होती है, जिसके भीतर से देखने पर बहुत छोटी चीजें भी बड़ी दिखती हैं। इसी प्रकार योग-द्वारा वे सब सूक्ष्म पद्म देखे जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण ने पचवटी के कमरे में रहने के लिए कहा है। मणि उसी कमरे में रात बिताते हैं। प्रातःकाल उस कमरे में अकेले गा रहे हैं—

(संगीत—भावार्थ)

"हे गौर, मैं साधन-भजन से हीन हूँ। मैं हीन-दीन हूँ, मुझे छूकर पवित्र कर दो! हे गौर, तुम्हारे श्रीचरणों का लाभ होगा, इसी आशा में मेरे दिन बीत गये। (हे गौर, तुम्हारे श्रीचरण तो अभी तक नहीं पा सका!)"

एकाएक खिड़की की ओर ताककर देखते हैं, श्रीरामकृष्ण खड़े हैं। "मुझे छूकर पवित्र करो, मैं दीन-हीन हूँ," यह वाक्य सुनकर श्रीरामकृष्ण की आँखों में आँसू आ गये।

फिर दूसरा गाना हो रहा है।

(संगीत—भावार्थ)

"मैं शख का कुण्डल पहनकर गेरुआ वस्त्र पहनूंगी। मैं योगिनी के वेष में उसी देश में जाऊँगी जहाँ मेरे निर्दय हरि है।"

श्रीरामकृष्ण राखाल के साथ घूम रहे है।

परिच्छेद ४१

अवतार-तत्त्व

(१)

'डुबकी लगाओ'

दूसरे दिन गुरुवार २१ दिसम्बर को प्रातःकाल श्रीरामकृष्ण अकेले बेल के पेड़ के नीचे मणि के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। साधना के सम्बन्ध में अनेक गुप्त बातें तथा कामिनी-कांचन के त्याग की बातें हो रही हैं। फिर कभी-कभी मन ही गुरु बन जाता है—ये सब बातें बता रहे हैं।

भोजन के बाद पंचवटी में आये हैं—वे सुन्दर पीताम्बर धारण किये हुए हैं। पंचवटी में दो-तीन वैष्णव बाबाजी आये हैं—उनमें एक बालक है।

तीसरे पहर एक नानकपन्थी साधु आये हैं। हरीश, राखाल भी हैं। साधु निराकारवादी। श्रीरामकृष्ण उन्हें साकार का भी चिन्तन करने के लिए कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण साधु से कह रहे हैं, "डुबकी लगाओ, ऊपर-ऊपर तैरने से रत्न नहीं मिलते। और ईश्वर निराकार हैं तथा साकार भी, साकार का चिन्तन करने से शीघ्र भक्ति प्राप्त होती है। फिर निराकार का चिन्तन—जिस प्रकार चिट्ठी को पढ़कर फेंक देते हैं, और उसके बाद उसमें लिखे अनुसार काम करते हैं।

(२)

'बढ़े जाओ ।' अवतार तत्त्व

शनिवार, २२ दिसम्बर १८८३ ई०, नौ बजे सवेरे का समय होगा । बलराम के पिता आये हैं । राखाल, हरीश, मास्टर, लाटू यहाँ पर निवास कर रहे हैं । श्यामपुकुर के देवेन्द्र घोष आये हैं । श्रीरामकृष्ण दक्षिणपूर्ववाले बरामदे में भक्तों के साथ बैठे हैं ।

एक भक्त पूछ रहे हैं—भक्ति कैसे हो ?

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता आदि भक्तों के प्रति)—बढ़े जाओ । सात फाटकों के बाद राजा विराजमान है । सब फाटक पार हो जाने पर ही तो राजा को देख सकोगे ।

मैंने अन्नपूर्णा की स्थापना के समय द्वारकाबाबू से कहा था, बड़े तालाब में बड़ी-बड़ी मछलियाँ हैं—गम्भीर जल में । बन्सी में लगाकर खुराक डालो, उसकी सुगन्ध से बड़ी-बड़ी मछलियाँ आ जायेंगी । कभी-कभी उछलकूद भी करेंगी । प्रेम-भक्तिरूपी खुराक !

"ईश्वर नर-लीला करते हैं । मनुष्यरूप में वे अवतीर्ण होते हैं, जिस प्रकार श्रीकृष्ण, श्रीरामचन्द्र, श्रीचैतन्यदेव । मैंने केशव सेन से कहा था कि मनुष्य में ईश्वर का अधिक प्रकाश है । मैदान में छोटे छोटे गड्ढे रहते हैं । उन्हें कहते हैं 'घूँटी', घूँटी के भीतर मछली, केकड़े रहते हैं । मछली, केकड़े खोजना हो तो उन घूँटियों के भीतर खोजना होता है । ईश्वर को खोजना हो तो अवतारों के भीतर खोजना चाहिए ।

"उस साढ़े तीन हाथ के मानव-देह में जगन्माता अवतीर्ण होती हैं । कहा है —

(संगीत—भावार्थ)

"श्यामा माँ ने कैसी कल बनायी है। साढे तीन हाथ के कल के भीतर कितने ही तमाशे दिखा रही है। स्वय कल के भीतर रहकर रस्सी पकडकर उसे घुमाती है। कल कहती है कि 'मैं अपने आप ही घूम रही हूँ।' यह नही जानती कि उसे कौन घुमा रहा है।"

"परन्तु ईश्वर को जानना हो, अवतार को पहचानना हो तो साधना की आवश्यकता है। तालाव में वडी-वड़ी मछलियाँ हैं, उनके लिए खुराक डालनी पड़ती है। दूध में मक्खन है, मन्थन करना पड़ता है। राई में तेल है, उसे पेरना पडता है। मेहदी से हाथ लाल होता है, उसे पीसना पडना है।"

भक्त (श्रीरामकृष्ण के प्रति)—अच्छा, वे साकार हैं या निराकार?

श्रीरामकृष्ण—ठहरो, पहले कलकत्ता तो जाओ, तभी तो जानोगे कि कहाँ है क़िले का मैदान, कहाँ एशियाटिक सोसायटी है और कहाँ वगाल वैंक है।

"खड़दा ब्राह्मण-मुहल्ले में जाने के लिए पहले तो खड़दा पहुँचना ही होगा!

"निराकार साधना होगी क्यो नही? परन्तु वड़ी कठिन है। कामिनी-काचन का त्याग हुए विना नही होता! वाहर त्याग, फिर भीतर त्याग! विषय-वुद्धि का लवलेश रहते काम नही वनेगा।

"साकार की साधना सरल है—परन्तु उतनी सरल भी नही है।

"निराकार साधना तथा ज्ञानयोग की साधना की चर्चा भक्तों

के पास नही करनी चाहिए। बडी कठिनाई से उसे थोडी सी भक्ति प्राप्त हो रही हैं; उसके पास यह कहने से कि सब कुछ स्वप्न-तुल्य है, उसकी भक्ति की हानि होती है।

"कबीरदास निराकारवादी थे। 'शिव, काली, कृष्ण को नही मानते थे। वे कहते थे, काली चाँवल-केला खाती है, कृष्ण गोपियो के हथेली बजाने पर बन्दर की तरह नाचते थे। (सभी हंस पडे)

"निराकार साधक मानो पहले दशभुजा का, उसके बाद चतुर्भुज का, उसके बाद द्विभुज गोपाल का और अन्त में अखण्ड ज्योति का दर्शन कर उसी में लीन होते हैं।

"कहा जाता है, दत्तात्रेय, जडभरत ब्रह्मदर्शन के बाद नही लौटे।

"कहते हैं कि शुकदेव ने उस ब्रह्मसमुद्र के एक बूंद मात्र का आस्वादन किया था। समुद्र की उछल-कूद का दर्शन किया था, परन्तु समुद्र में डूबे न थे।

"एक ब्रह्मचारी ने कहा था, बद्रीकेदार के उस पार जाने से शरीर नही रहता। उसी प्रकार ब्रह्मज्ञान के बाद फिर शरीर नही रहता। इक्कीस दिनो में मृत्यु।

"दीवाल के उस पार अनन्त मैदान है। चार मित्रो ने दीवाल के उस पार क्या है, यह देखने की चेष्टा की। एक-एक व्यक्ति दीवाल पर चढता है, उस मैदान को देखकर 'हो हो' करके हँसता हुआ दूसरी ओर कूद जाता है। तीन व्यक्तियो ने कोई खबर न दी। सिर्फ एक ने खबर दी। ब्रह्मज्ञान के बाद भी उसका शरीर रहा, लोकशिक्षा के लिए—जैसे अवतार आदि का।

हिमालय के घर में पार्वती ने जन्म ग्रहण किया, और अपने

अनेक रूप पिता को दिखाने लगी। हिमालय ने कहा, 'ये सब रूप तो देखे! परन्तु तुम्हारा एक ब्रह्म-स्वरूप है—उसे एक बार दिखा दो।' पार्वती ने कहा, 'पिताजी, यदि तुम ब्रह्मज्ञान चाहते हो तो ससार छोडकर सत्सग करना पडेगा।'

"पर हिमालय किसी भी तरह ससार नहीं छोडते थे। तब पार्वतीजी ने एक बार दिखाया। देखते ही गिरिराज एकदम मूर्च्छित हो गये।"

भक्तियोग

श्रीरामकृष्ण—यह जो कुछ कहा, सब तर्क-विचार की बाते हैं। 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' यही विचार है। सब स्वप्न की तरह है! बडा कठिन मार्ग है। इस पथ में उनकी लीला स्वप्न-जैसी मिथ्या बन जाती है। फिर 'मैं' भी उड जाता है। इस पथ में साधक अवतार भी नही मानते, बडा कठिन है। येसब विचार की बाते भक्तो को अधिक सुनना नही चाहिए।

"इसीलिए ईश्वर अवतीर्ण होकर भक्ति का उपदेश देते हैं—शरणागत होने के लिए कहते हैं। भक्ति से, उनकी कृपा से सभी कुछ हो जाता है—ज्ञान, विज्ञान सब कुछ होता है।

"वे लीला कर रहे हैं—वे भक्त के आधीन हैं। माँ भक्त की भक्तिरूपी रस्सी से स्वय बँधी हुई हैं।

"ईश्वर कभी चुम्बक बनते हैं, भक्त सुई होता है। फिर कभी भक्त चुम्बक और वे सुई होते हैं। भक्त उन्हें खींच लेते हैं—वे भक्तवत्सल, भक्ताधीन हैं।

"एक मत यह है कि यशोदा तथा अन्य गोपीगण पूर्व-जन्म में निराकारवादी थी। उससे उनकी तृप्ति न हुई, इसीलिए वृन्दावन-लीला में श्रीकृष्ण को लेकर आनन्द किया। श्रीकृष्ण ने

एक दिन कहा, 'तुम्हें नित्यधाम का दर्शन कराऊँगा, चलो, यमुना में स्नान करने चलें !' ज्योंही उन्होंने डुबकी लगायी—एकदम गो-लोक का दर्शन ! फिर उसके बाद अखण्ड ज्योति का दर्शन ! तब यशोदा बोलीं, 'कृष्ण, ये सब और अधिक देखना नहीं चाहती, अब तेरे उसी मानव रूप का दर्शन करूँगी, तुझे गोदी में लूँगी, खिलाऊँगी !!'

"इसीलिए अवतार में उनका अधिक प्रकाश है। अवतार का शरीर रहते उनकी पूजा-सेवा करनी चाहिए।'

(संगीत—भावार्थ)

"वह जो कोठरी के भीतर चोर-कोठरी है, भोर होते ही वह उसमें छिप जायगा रे।"

"अवतार को सभी लोग नहीं पहचान सकते। देह धारण करने पर रोग, शोक, क्षुधा, तृष्णा, सभी कुछ होता है, ऐसा लगता है मानो वे हमारी ही तरह हैं ! राम सीता के शोक में रोते थे—'पंच भूत के फन्दे में पड़कर ब्रह्म रोते हैं।'

"पुराण में कहा है, हिरण्याक्ष-वध के बाद, कहते हैं, वराह-अवतार बच्चों को लेकर रहने लगे—उन्हें स्तनपान करा रहे थे। (सभी हँसे) स्वधाम में जाने का नाम तक नहीं। अन्त में शिव ने आकर त्रिशूल द्वारा उनके शरीर का विनाश किया, फिर वे दोनों हँसते हुए स्वधाम में पधारे।'

(३)

गोपियों का प्रेम

तीसरा प्रहर है। भवनाथ आये हैं। कमरे में राखाल, मास्टर, हरीश आदि हैं। शनिवार, २२ दिसम्बर १८८३ ई०।

श्रीरामकृष्ण (भवनाथ के प्रति)—अवतार पर प्रेम होने से ही हो गया। अहा, गोपियो का कैसा प्रेम था! यह कहकर गाना गा रहे हैं—गोपियो के भाव में—

(सगीत—भावार्थ)

(१) 'श्याम तुम प्राणो के प्राण हो।' इत्यादि

(२) 'सखि, मैं घर बिल्कुल नही जाऊँगी।' इत्यादि

(३) 'उस दिन, जिस समय तुम वन जा रहे थे, मैं द्वार पर खडी थी। (प्रिय, इच्छा होती है, गोपाल बनकर तुम्हारा भार अपने सिर पर उठा लूँ।')

"रास के बीच में जिस समय श्रीकृष्ण छिप गये, गोपिकाएँ एकदम पागल बन गयी। एक वृक्ष को देखकर कहती हैं, 'तुम कोई तपस्वी होगे! श्रीकृष्ण को तुमने अवश्य ही देखा होगा। नहीं तो समाधिमग्न होकर क्या खडे हो?' तृणो से ढकी हुई पृथ्वी को देखकर कहती हैं, हे पृथ्वी, तुमने अवश्य ही उनका दर्शन किया है, नही तो तुम्हारे रोगटे क्या खडे हुए हैं? अवश्य ही तुमने उनके स्पर्श-सुख का भोग किया होगा।' फिर माधवी लता को देखकर कहती हैं, 'हे माधवी, मुझे माधव ला दे!' गोपियो का कैसा प्रेमोन्माद है!

"जब अक्रूर आये और श्रीकृष्ण तथा बलराम मथुरा जाने के लिए रथ पर बैठे, तो गोपीगण रथ के पहिये पकडकर कहने लगी, जाने नही देंगे।"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं—

(सगीत—भावार्थ)

"रथचक्र को न पकडो, न पकडो, क्या रथ चक्र से चलता है? इस

चक्र के चक्री हरि हैं, जिनके चक्र से जगत् चलता है।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—'क्या रथ चक्र से चलता है'—ये बातें मुझे बहुत ही अच्छी लगती हैं। 'जिस चक्र से ब्रह्माण्ड घूमता है!' 'रथी की आज्ञा से सारथी चलता है!'

परिच्छेद ४२

श्रीरामकृष्ण की परमहस अवस्था

(१)

समाधि में । परमहस अवस्था कब होती है

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे में राखाल, लाटू, मणि, हरीश आदि भक्तो के साथ बैठे हुए हैं। दिन के नौ बजे का समय होगा। रविवार, अगहन की कृष्णा नवमी है। २३ दिसम्बर, १८८३।

मणि को गुरुदेव के यहाँ रहते आज दस दिन पूरे हो जायँगे।

श्रीयुत मनमोहन कोनगर से आज सुबह आये हैं। श्रीरामकृष्ण के दर्शन और कुछ विश्राम करके आप कलकत्ता जायँगे। हाजरा भी श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हैं। नीलकण्ठ के देश के एक वैष्णव आज श्रीरामकृष्ण को गाना सुना रहे हैं। वैष्णव ने पहले नीलकण्ठ का गाना गाया। (भाव)—

"श्रीगौराग की देह तप्त-काचन के समान है। वे नव-नटवर ही हो रहे हैं। परन्तु वे इस बार दूसरे ही स्वरूप से, अपने पहले के चिह्नो को छिपाकर नदिया में अवतीर्ण हुए हैं। कलिकाल का घोर अन्धकार दूर करने के लिए तथा उन्नत और उज्ज्वल प्रेमरस के लिए तुम इस बार श्रीकृष्णावतार की नीली देह को महाभाव-स्वरूपिणी श्रीराधा की तप्त-काचन जैसी उज्ज्वल देह से ढककर आये हो। तुम महाभाव में समाप्ट हो, सात्त्विकादि तुममें लीन हो जाते हैं। उस भावास्वाद के लिए तुम जगलो में रोते फिरते हो। इससे प्रेम की बाढ हो आती है। तुम नवीन

संन्यासी हो, अच्छे-अच्छे तीर्थों की खोज में रहते हो, कभी तुम नीलाचल और कभी वाराणसी जाते हो, अयाचकों को भी तुम प्रेम का दान करते हो, तुम्हारे इस कार्य मे जातिभेद नही है।"

एक दूसरा गाना उन्होने मानस-पूजा के सम्बन्ध मे गाया।

श्रीरामकृष्ण (हाजरा के प्रति)—यह गाना कैसा लगा ?

हाजरा—यह साधक का नही है,—ज्ञान-दीपक, ज्ञानप्रतिमा !

श्रीरामकृष्ण—मुझे तो कैसा कैसा लगा !

"पहले का गाना बहुत ठीक है। पचवटी मे नागा (तोतापुरी) के पास मैंने एक गाना गाया था—'जीवन-सग्राम के लिए तू तैयार हो जा, लडाई का सामान लेकर काल तेरे घर मे प्रवेश कर रहा है।' एक और गाना—'ऐ श्यामा, दोष किसी का नही है, मैं अपने ही हाथो द्वारा खोदे हुए गड्ढे के पानी मे डूबता हूँ।'

"नागा इतना ज्ञानी है, परन्तु इनका अर्थ बिना समझे ही रोने लगा था।

"इन सब गानों में कैसी यथार्थ बात है—

"नरकान्तकारी श्रीकान्त की चिन्ता करो, फिर तुम्हे भयंकर काल का भी भय न रह जायगा।"

"पद्मलोचन मेरे मुँह से रामप्रसाद का गाना सुनकर रोने लगा। पर था वह कितना विद्वान् !"

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण कुछ विश्राम कर रहे हैं। जमीन पर मणि बैठे हुए हैं। नहबतखाने मे शहनाई का वाद्य सुनते हुए श्रीरामकृष्ण आनन्द कर रहे हैं।

फिर मणि को समझाने लगे, ब्रह्म ही जीव-जगत् हुए है।

श्रीरामकृष्ण—किसी ने कहा, अमुक स्थान पर हरिनाम नही है। उसके कहते ही मैंने देखा, वही सब जीव हुए हैं। मानो

पानी के असंख्य बुलबुले—असंख्य जलविम्ब !

"कामारपुकुर से वर्दवान आते-आते दौड़कर एक बार मैदान की ओर चला गया,—यह देखने के लिए कि यहाँ के जीव किस तरह खाते हैं और रहते हैं !—जाकर देखा, मैदान में चीटियाँ रेंग रही थी ! सभी जगह चैतन्यमय है !"

हाजरा कमरे में आकर जमीन पर बैठ गये ।

श्रीरामकृष्ण—अनेक प्रकार के फूल—तह के तह पंखुड़ियाँ—यह भी देखा !—छोटा बिम्ब और बड़ा बिम्ब ।

ईश्वरीय रूप-दर्शन की ये सब बातें कहते-कहते श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो रहे हैं । कह रहे हैं, 'मैं हुआ हूँ !' 'मैं आया हूँ !'

यह बात कहकर ही एकदम समाधिस्थ हो गये । सब कुछ स्थिर हो गया ।

बड़ी देर तक समाधि-भोग कर लेने पर कुछ होश आ रहा है ।

अब बालक की तरह हँस रहे हैं, हँस-हँस कर कमरे में टहल रहे हैं ।

अद्भुत दर्शन के बाद आँखों से जैसे आनन्द-ज्योति निकलती है, श्रीरामकृष्ण की आँखों का भाव वैसा ही हो गया । सहास्य मुख, शून्य दृष्टि ।

श्रीरामकृष्ण टहलते हुए कह रहे हैं—

"वटतल्ले के परमहंस को देखा था, इस तरह हँसकर चल रहा था !—वही स्वरूप मेरा भी हो गया क्या !"

इस तरह टहलकर श्रीरामकृष्ण अपनी छोटे तख्त पर जा बैठे और जगन्माता से बातचीत करने लगे ।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—"खैर मैं जानना भी नहीं चाहता । माँ, तुम्हारे पादपद्मों में मेरी शुद्धा भक्ति बनी रहे ।

(मणि से)––"क्षोभ और वासना के जाने से ही यह अवस्था होती है।"

फिर माँ से कहने लगे––"माँ, पूजा तो तुमने उठा दी, परन्तु देखो, मेरी सब वासनाएँ जैसे चली न जायें!––माँ! परमहंस तो बालक है––बालक को माँ चाहिए या नहीं? इसलिए तुम मेरी माँ हो, मैं तुम्हारा बच्चा। माँ का बच्चा माँ को छोड़कर कैसे रहे?"

श्रीरामकृष्ण इस स्वर से बातचीत कर रहे हैं कि पत्थर भी पिघल जाय। फिर माँ से कह रहे हैं––"केवल अद्वैत-ज्ञान! थू थू! जब तक 'मैं' रखा है, तब तक 'तुम' हो। परमहंस तो बालक है, बालक को माँ चाहिए या नहीं?"

हाजरा श्रीरामकृष्ण की यह अवस्था देख हाथ जोड़कर कहने लगे––"धन्य है––धन्य है।"

श्रीरामकृष्ण हाजरा से कह रहे हैं––"तुम्हें विश्वास कहाँ है? तुम तो यहाँ उसी तरह हो जैसे जटिला और कुटिला व्रज में थीं,––लीला की पुष्टि के लिए।"

तोतापुरी का श्रीरामकृष्ण को ब्रह्मज्ञान के सम्बन्ध में उपदेश

दूसरे दिन झाऊतल्ले में श्रीरामकृष्ण मणि के साथ अकेले में बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण––निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है।

"नागा उपदेश देता था, सच्चिदानन्द ब्रह्म कैसे हैं––जैसे अनन्त सागर है, ऊपर नीचे, दाहिने-बायें पानी-ही-पानी है। वह कारण है––स्थिर पानी है। कार्य के होने पर उसमें तरंग उठने लगीं। सृष्टि, स्थिति और प्रलय, यही कार्य है।

"फिर कहता था, विचार जहाँ पहुँचकर रुक जाय, वही ब्रह्म है। जैसे कपूर जलाने पर उसका सर्वांश जल जाता है, जरा भी राख नहीं रह जाती।

"ब्रह्म मन और वचन के परे है। नमक का पुतला समुद्र की थाह लेने गया था। लौटकर उसने खबर नहीं दी। समुद्र में गल गया।

"ऋषियों ने राम से कहा था,—'राम, भरद्वाजादि तुम्हें अवतार कह सकते हैं, परन्तु हम लोग नहीं कहते। हम लोग शब्द-ब्रह्म की उपासना करते हैं। हम मनुष्य-स्वरूप को नहीं चाहते। राम कुछ हँसकर प्रसन्न हो उनकी पूजा लेकर चले गये।

"परन्तु नित्यता जिनकी है, लीला भी उन्हीं की है। जैसे छत और सीढ़ियाँ।

"ईश्वर-लीला, देव-लीला, नर-लीला, जगत्-लीला। नर-लीला में ही अवतार होता है। नर-लीला कैसी है, जानते हो? जैसे बड़ी छत का पानी नल से जोर-शोर से गिर रहा हो। वही सच्चिदानन्द है—उन्हीं की शक्ति एक रास्ते से—नल के भीतर से आ रही है। केवल भरद्वाजादि बारह ऋषियों ने ही राम को पहचाना था कि ये अवतारी पुरुष हैं। अवतारी पुरुषों को सभी पहचान नहीं सकते।"

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—वे अवतीर्ण होकर भक्ति की शिक्षा देते हैं। अच्छा, मुझे तुम क्या समझते हो?

"मेरे पिता गया गये थे। वहाँ रघुवीर ने स्वप्न दिखलाया, मैं तेरा पुत्र बनकर जन्म लूँगा। पिता ने स्वप्न देखकर कहा, देव, मैं दरिद्र ब्राह्मण हूँ, मैं तुम्हारी सेवा कैसे करूँगा? रघुवीर ने कहा, सेवा हो जायगी।

"दीदी—हृदय की माँ—पुष्प चन्दन लेकर मेरे पैर पूजती थी। एक दिन उसके सिर पर पैर रखकर (माता ने) कहा, तेरी वाराणसी में मृत्यु होगी।

"मथुरबाबू ने कहा, 'बाबा, तुम्हारे भीतर और कुछ नही है, वही ईश्वर हैं। देह तो आवरण मात्र है, जैसे बाहर कद्दू का आकार है, परन्तु भीतर गूदा, बीज, कुछ भी नही है। तुम्हें देखा, मानो घूँघट डालकर कोई चला जा रहा है।'

"पहले ही से मुझे सब दिखा दिया जाता है। वटतल्ले में मैंने गौराग के सकीर्तन का दल देखा था। (यह दर्शन श्रीरामकृष्ण ने भावराज्य मे किया था।) उसमे शायद बलराम को देखा था और तुम्हें भी शायद देखा है।

"मैंने गौराग का भाव जानना चाहा था। उसने दिखाया उस देश में—श्यामबाजार मे, पेड पर और चारदीवार पर आदमी-ही-आदमी— दिन-रात साथ-साथ आदमी। सात दिन शौच के लिए जाना भी मुश्किल हो गया? तब मैंने कहा, माँ? बस, अब रहने दो।

"इसीलिए अब भाव शान्त है। एक बार और आना होगा। इसीलिए पार्षदो को सब ज्ञान मैं नही देता। (हँसते हुए) तुम्हे अगर सब ज्ञान दे दें, तो फिर तुम लोग सहज ही मेरे पास क्यो आओगे?

"तुम्हें मैं पहचान गया, तुम्हारा चैतन्य-भागवत पढना सुनकर। तुम अपने आदमी हो। एक ही सत्ता है, जैसे पिता और पुत्र। यहाँ सब आ रहे है, जैसे कल्मी की बेल,—एक जगह पकडकर खीचने से सब आ जाता है। परस्पर सब आत्मीय हैं, जैमे भाई-भाई। राखाल, हरीश आदि जगन्नाथ-दर्शन के लिए पुरी

गये हैं, और तुम भी गये हो, तो क्या कभी ठहराव अलग-अलग हो सकता है ?

"जब तक यहाँ तुम नहीं आये तब तक तुम भूले हुए थे, अब अपने को पहचान सकोगे। वे गुरु के रूप में आकर जना देते हैं।

"नागे ने बाघ और बकरी की कहानी कही थी। एक बाघिन बकरियों के झुण्ड पर टूट पड़ी। किसी बहेलिये ने दूर से उसे देखकर मार डाला। उसके पेट में बच्चा था, वह पैदा हो गया। वह बच्चा बकरियों के बीच में बढ़ने लगा। पहले बच्चा बकरियों का दूध पीता था। इसके बाद जब कुछ बड़ा हुआ तब घास चरने लगा। कोई जानवर जब उन पर आक्रमण करता, तब बकरों की तरह डरकर भागता! एक दिन एक भयंकर बाघ बकरों पर टूट पड़ा। उसने आश्चर्य में आकर देखा, उनमें एक बाघ भी घास चर रहा है और उसे देखकर बकरियों के साथ-साथ वह भी दौड़कर भागा। तब बकरियों से कुछ छेड़-छाड़ न करके घास चरनेवाले उस बाघ के बच्चे को ही उसने पकड़ा। वह 'में-में' करने लगा और भागने की कोशिश करता गया। तब बाघ उसे पानी के किनारे खींचकर ले गया और उससे कहा, 'इस पानी में अपना मुँह देख। हण्डी की तरह मेरा मुँह जितना बड़ा है, उतना ही बड़ा तेरा भी है।' फिर उसके मुँह में थोड़ा सा माँस खोंस दिया। पहले वह किसी तरह खाता ही न था, फिर कुछ स्वाद पाकर खाने लगा। तब बाघ ने कहा, तू बकरियों के बीच में था और उन्हीं की तरह घास खाता था! धिक्कार है तुझे! तब उसे बड़ी लज्जा हुई।

"घास खाना है कामिनी-कांचन लेकर रहना, बकरियों की तरह 'में-में' करके बोलना और भागना,—सामान्य जीवों की

तरह आचरण करना। बाघ के साथ जाना—गुरु, जिन्होंने ज्ञान की आँखें खोल दीं, उनकी शरणागत होना है—उन्हें ही आत्मीय समझना है। अपना सच्चा मुँह देखना है—अपने स्वरूप को पहचानना।"

श्रीरामकृष्ण खड़े हो गये। चारों ओर सन्नाटा है। सिर्फ झाऊ के पेड़ों की सनसनाहट और गंगाजी की कल-कल-ध्वनि सुन पड़ रही है। वे रेलिंग पार करके पंचवटी के भीतर से अपने कमरे की ओर मणि से बातचीत करते हुए जा रहे हैं। मणि मन्त्रमुग्ध की तरह पीछे-पीछे जा रहे हैं।

पंचवटी में आकर, जहाँ, उसकी एक डाल टूटी पड़ी है, वहीं खड़े होकर, पूर्वास्य हो, बरगद के मूल पर बँधे हुए चबूतरे पर सिर टेककर प्रणाम किया।

नहबतखाने के पास आकर हाजरा को देखा। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं—"अधिक न खाते जाना और बाह्य शुद्धि की ओर इतना ध्यान देना छोड़ दो। जिन्हें बेकार यह धुन सवार रहती है उन्हें ज्ञान नहीं होता। आचार उतना ही चाहिए जितने की जरूरत है। बहुत ज्यादा अच्छा नहीं।" श्रीरामकृष्ण ने अपने कमरे में पहुँचकर आसन ग्रहण किया।

(३)

प्रेमाभक्ति और श्रीवृन्दावन-लीला। अवतार तथा नरलीला

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे हैं। आज २४ दिसम्बर है। बड़े दिन की छुट्टी हो गयी है। कलकत्ते से सुरेन्द्र, राम आदि भक्तगण धीरे-धीरे आ रहे हैं।

दिन के एक बजे का समय होगा। मणि अकेले झाऊतल्ले में टहल रहे हैं। इसी समय रेलिंग के पास खड़े होकर हरीश उच्च

स्वर से मणि को पुकारकर कह रहे हैं--आपको बुलाते हैं, शिवसंहिता आकर पढ़िये।

शिवसंहिता में योग की बातें हैं—षट्चक्रों की बात है। मणि श्रीरामकृष्ण के कमरे में आकर प्रणाम करके बैठे। श्रीरामकृष्ण छोटे तख्त पर तथा भक्तगण जमीन पर बैठे हुए हैं। इस समय शिवसंहिता का पाठ नहीं हुआ। श्रीरामकृष्ण स्वयं ही बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—गोपियों की प्रेमाभक्ति थी। प्रेमाभक्ति में दो बातें रहती हैं।—'अहंता' और 'ममता'। यदि मैं श्रीकृष्ण की सेवा न करूँ तो उनकी तबियत बिगड़ जायगी—यह अहंता है, इसमें ईश्वरबोध नहीं रहता।

"ममता है 'मेरा मेरा' करना। गोपियों की ममता इतनी बढ़ी हुई थी कि कहीं पैरों में जरा सी चोट न लग जाय, इसलिए उनका सूक्ष्मशरीर श्रीकृष्ण के श्रीचरणों के नीचे रहता था।

"यशोदा ने कहा, तुम्हारे चिन्तामणि श्रीकृष्ण को मैं नहीं जानती।—मेरा तो वह गोपाल ही है। उधर गोपियाँ भी कहती हैं—'कहाँ हैं मेरे प्राणवल्लभ—हृदयवल्लभ!'—ईश्वरबोध उनमें था ही नहीं।

"जैसे छोटे-छोटे लड़के, मैंने देखा है, कहते हैं, 'मेरे बाबा' यदि कोई कहता है, नहीं तेरे बाबा नहीं हैं, तो वे कहते हैं—क्यों नहीं—मेरे बाबा तो हैं।

"नरलीला करते समय अवतारी पुरुषों को ठीक आदमी की तरह आचरण करना पड़ता है,—इसीलिए उन्हें पहचानना मुश्किल हो जाता है। नर रूप धारण किया है तो प्राकृत नरों की तरह ही आचरण करेंगे, वही भूख-प्यास, रोग शोक, वही

भय—सब प्राकृत मनुष्यों की तरह । श्रीरामचन्द्र सीताजी के वियोग में रोये थे । गोपाल ने नन्द की जूतियां सिर पर ढोयी थीं—पीढ़ा ढोया था ।'

"नाटक में साधु बनते हैं तो साधुओं का-सा ही व्यवहार करते हैं । जो राजा बनता है, उसकी तरह व्यवहार नहीं करते । जो कुछ बनते हैं वैसा ही अभिनय भी करते हैं ।

"कोई बहुरूपिया साधु बना था—त्यागी साधु । स्वांग उसने ठीक बनाकर दिखलाया था, इसलिए बाबुओं ने उसे एक रुपया देना चाहा । उसने न लिया, ऊँहुँ कहकर चला गया । देह और हाथ-पैर धोकर अपने सहज स्वरूप में जब आया तब उसने रुपया माँगा । बाबुओं ने कहा, अभी तो तुमने कहा, रुपया न लेंगे और चले गये, अब रुपया लेने कैसे आये ? उसने कहा, तब मैं साधु बना हुआ था, उस समय रुपया कैसे ले सकता था !

"इसी तरह ईश्वर जब मनुष्य बनते हैं, तब ठीक मनुष्य की तरह व्यवहार करते हैं ।

"वृन्दावन जाने पर कितने ही लीला के स्थान दीख पड़ते हैं ।"

सुरेन्द्र—हम लोग छुट्टी में गये थे । वहाँ मँगते इतने हैं कि 'पैसा दीजिये', 'पैसा दीजिये' की रट लगा देते हैं । दीजिए-दीजिये करने लगे—पण्डे भी और दूसरे भी । उनसे मैंने कहा, हम कल कलकत्ता जायेंगे,—यह कहकर उसी दिन वहाँ से नौ-दो-ग्यारह !

श्रीरामकृष्ण—यह क्या है ? कल जायेंगे कहकर आज ही भागना ! छि !

सुरेन्द्र (लज्जित होकर)—उन लोगों में भी कहीं-कहीं साधुओं को देखा था । निर्जन में बैठे हुए साधन-भजन कर रहे थे ।

श्रीरामकृष्ण—साधुओं को कुछ दिया ?

सुरेन्द्र—जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण—यह अच्छा काम नहीं किया। साधु-भक्तों को कुछ दिया जाता है। जिनके पास धन है, उन्हें उस तरह के आदमी को सामने पड़ने पर कुछ देना चाहिए।

"मैं भी वृन्दावन गया था, मथुरबाबू के साथ। ज्यों ही मथुरा का ध्रुव घाट मैंने देखा कि उसी समय दर्शन हुआ, वसुदेव श्रीकृष्ण को गोद में लेकर यमुना पार कर रहे हैं।

"फिर शाम को यमुना के तट पर टहल रहा था। बालू पर छोटे-छोटे झोपड़े थे, बेर के पेड़ बहुत हैं। गोधूलि का समय था, गौयें चरागाह से लौट रही थीं। देखा, उतरकर यमुना पार कर रही हैं, इसके बाद कुछ चरवाहे गौओं को लेकर पार होने लगे। ज्योंही यह देखा कि, 'कृष्ण कहाँ है !' कहकर बेहोश हो गया।

"श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के दर्शन करने की इच्छा हुई थी। पालकी पर मुझे मथुरबाबू ने भेज दिया। रास्ता बहुत दूर है। पालकी के भीतर पूड़ियाँ और जलेबियाँ रख दी गयी थीं। मैदान पार करते समय यह सोचकर रोने लगा, 'वे सब स्थान तो हैं—कृष्ण, तू ही नहीं है !—यह वही भूमि है जहाँ तू गौयें चराता था।'

"हृदय रास्ते में साथ-साथ पीछे आ रहा था। मेरी आँखों में आँसुओं की धारा बह रही थी। कहारों को खड़े होने के लिए भी न कह सका।

"श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड में जाकर देखा, साधुओं ने एक-एक झोपड़ी-सी बना रखी है,—उसी के भीतर पीठ फेरकर

साधन-भजन कर रहे हैं। पीठ इसलिए फेरे बैठे हैं कि कहीं लोगों पर उनकी दृष्टि न जाय। द्वादश वन देखने लायक हैं।

"बाँकेविहारी को देखकर मुझे भाव हो गया था, मैं उन्हें पकड़ने चला था। गोविन्दजी को दुबारा देखने की इच्छा नहीं हुई। मथुरा में जाकर राखाल-कृष्ण का स्वप्न देखा था। हृदय और मथुरबाबू ने भी देखा था।"

श्रीरामकृष्ण (सुरेन्द्र से)—तुम्हारे योग भी है और भोग भी है।

"ब्रह्मर्षि, देवर्षि और राजर्षि। ब्रह्मर्षि जैसे शुकदेव—एक भी पुस्तक पास नहीं है। देवर्षि जैसे नारद। राजर्षि जैसे जनक—निष्काम कर्म करते हैं।

"देवीभक्त धर्म और मोक्ष दोनों पाता है तथा अर्थ और काम का भी भोग करता है।

"तुम्हें एक दिन मैंने देवी-पुत्र देखा था। तुम्हारे दोनों हैं, योग और भोग। नहीं तो तुम्हारा चेहरा सूखा हुआ होता।

"सर्वत्यागी का चेहरा सूखा हुआ होता है। एक देवीभक्त को घाट पर मैंने देखा था। भोजन करते हुए ही वह देवी-पूजा कर रहा था। उसका सन्तान-भाव था।

"परन्तु अधिक धन होना अच्छा नहीं। यदु मल्लिक को इस समय देखा, डूब गया है। अधिक धन हो गया है न!

"नवीन नियोगी के भी योग-भोग दोनों है। दुर्गापूजा के समय मैंने देखा, पिता-पुत्र दोनों चँवर डुला रहे थे।"

सुरेन्द्र—अच्छा महाराज, ध्यान क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण—स्मरण-मनन तो है न?

सुरेन्द्र—जी हाँ, माँ-माँ कहता हुआ सो जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—बहुत अच्छा है, स्मरण-मनन रहने से ही हुआ।

(४)

श्रीरामकृष्ण और योगशिक्षा। शिव-संहिता

सन्ध्या के बाद श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। मणि भी भक्तों के साथ जमीन पर बैठे हैं। योग के सम्बन्ध में, षट्चक्रों के सम्बन्ध में बातचीत हो रही है। ये सब बातें शिवसंहिता में हैं।

श्रीरामकृष्ण—इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना के भीतर सब पद्म हैं—सभी चिन्मय। जैसे मोम का पेड़,—डाल, पत्ते, फल,—सब मोम के। मूलाधार पद्म में कुण्डलिनी-शक्ति है। वह पद्म चतुर्दल है। जो आद्याशक्ति हैं, वही कुण्डलिनी के रूप में सब के देह में विराजमान हैं—जैसे सोता हुआ साँप कुण्डलाकार पड़ा रहता है। 'प्रसुप्त-भुजगाकारा आधारपद्मवासिनी।' (मणि से) भक्तियोग से कुल-कुण्डलिनी शीघ्र जागृत होती है। इसके बिना जागृत हुए ईश्वर के दर्शन नहीं होते। एकाग्रता के साथ निर्जन में गाना चाहिए—

'जागो माँ कुल-कुण्डलिनी !
तू नित्यानन्द-स्वरूपिणि !
प्रसुप्त-भुजगाकारा आधार-पद्मवासिनी !'

यह गाकर ही रामप्रसाद सिद्ध हुए थे। व्याकुल होकर गाने पर ईश्वर-दर्शन होते हैं।"

मणि—जी हाँ, यह सब एक बार करने से ही मन का खेद मिट जाता है।

श्रीरामकृष्ण—अहा! खेद मिट जाता है—सत्य है।

"योग के सम्बन्ध की दो-चार बाते तुम्हे बतला देना चाहिए।

"बात यह है कि अण्डे के भीतर बच्चा जब तक बडा नहीं हो जाता तब तक चिडिया उसे नहीं फोडती है।

"परन्तु कुछ साधना करनी चाहिए। गुरु ही सब कुछ करते हैं, परन्तु अन्त मे कुछ साधना भी करा लेते हैं। बडे पेड को काटते समय जब लगभग काटना समाप्त हो जाता है तो कुछ हटकर खडा हुआ जाता है। पेड फिर आप ही हरहराकर टूट जाता है।

"जब नाली काटकर पानी लाया जाता है, और जब वह समय आता है कि थोडा सा ही काटने से नहर के साथ नाली का योग हो जाय, तब नाली काटकर कुछ हटकर खडा हुआ जाता है। तब मिट्टी भीगकर धँस जाती है और नहर का पानी हरहराकर नाली मे घुस पडता है।

"अहकार, उपाधि, इन सबका त्याग होने के साथ ही ईश्वर के दर्शन होते हैं। मै पण्डित हूँ, मैं अमुक का पुत्र हूँ, मैं धनी हूँ, मैं मानी हूँ, इन सब उपाधियो को त्याग देने से ही ईश्वर के दर्शन होते हैं।

"ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य—ससार अनित्य है,—इसे विवेक कहते हैं। विवेक के हुए बिना उपदेशो का ग्रहण नहीं होता।

"साधना करते-करते ही उनकी कृपा से लोग सिद्ध होते हैं। कुछ परिश्रम भी करना चाहिए। इसके बाद दर्शन और आनन्द।

"अमुक स्थान पर सोने का घडा गडा हुआ है, यह सुनते ही मनुष्य दौड पडता है और खोदने लग जाता है। खोदते-खोदते सिर से पसीना निकल आता है। बहुत देर तक खोदने के बाद

कहीं कुदार में ठनकार आई। तब कुदार फेंककर वह देखने लगा कि घडा निकला या नहीं ? घडा अगर दीख पडा तब तो उसके आनन्द का पारावार नहीं रह जाता—वह नाचने लगता है।

"घडा बाहर लाकर उसमें से मोहरे निकालकर वह गिनता है। तब कितना आनन्द होता है ! दर्शन, स्पर्श और संभोग—क्यों ?"

मणि—जी हा।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप हो रहे। फिर कहने लगे—

"जो मेरे अपने आदमी हैं, उन्हें डाँटने पर भी वे आयेंगे।

"अहा ! नरेन्द्र का कैसा स्वभाव है। माँ-काली को पहले उसके जी में जो आता था वही कहता था। मैंने चिढ़कर एक दिन कहा था, 'अब यहाँ न आना।'

"जो अपना आदमी है, उसको तिरस्कार करने पर भी इसका दु:ख नहीं होता—क्यों ?"

मणि—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—नरेन्द्र स्वतःसिद्ध है। निराकार पर उसकी निष्ठा है।

मणि (सहास्य)—जब आता है तब एक महाभारत रच लाता है।

दूसरे दिन मंगलवार, २५ दिसम्बर, कृष्णपक्ष की एकादशी है। दिन के ग्यारह बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण ने अभी भोजन नहीं किया। मणि और राखाल आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के कमरे में बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—एकादशी करना अच्छा है। इसमें

मन बहुत पवित्र होता है और ईश्वर पर भक्ति होती है, क्यों ?

मणि--जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण--धान की लाही और दूध यहीं खाओगे, क्यों ?

परिच्छेद ४३

धर्मशिक्षा

(१)

साधु से वार्तालाप

आज बुधवार, २६ दिसम्बर, १८८३ ई०। श्रीरामकृष्ण रामचन्द्र बाबू का नया बगीचा देखने जा रहे हैं।

राम श्रीरामकृष्ण को साक्षात् अवतार जानकर उनकी पूजा करते हैं। वे प्राय दक्षिणेश्वर में आते हैं और श्रीरामकृष्ण का दर्शन तथा उनकी पूजा करते हैं। सुरेन्द्र के बगीचे के पास उन्होंने नया बगीचा तैयार किया है। इसी बगीचे को देखने के लिए श्रीरामकृष्ण जा रहे हैं।

गाडी में मणिलाल मल्लिक, मास्टर तथा अन्य दो-एक भक्त हैं। मणिलाल मल्लिक ब्राह्म समाज के हैं। ब्राह्म भक्तगण अवतार नहीं मानते हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणिलाल के प्रति)—उनका ध्यान करना हो तो पहले उनके उपाधिशून्य स्वरूप का ध्यान करने की चेष्टा करनी चाहिए। वे उपाधियों से शून्य, वाक्य और मन से परे हैं। परन्तु इस ध्यान द्वारा सिद्धि प्राप्त करना बहुत ही कठिन है।

"वे मनुष्य में अवतीर्ण होते हैं, उस समय ध्यान करने की विशेष सुविधा होती है। मनुष्य के बीच में नारायण हैं। देह आवरण है, मानो लालटेन के भीतर बत्ती जल रही है।"

गाडी से उतरकर श्रीरामकृष्ण बगीचे में पहुँचे। राम तथा अन्य भक्तों के साथ पहले तुलसी-कानन देखने के लिए जा रहे हैं।

तुलसी-कानन देखकर श्रीरामकृष्ण खडे होकर कह रहे हैं, 'वाह, सुन्दर स्थान है यह, यहाँ पर ईश्वर का चिन्तन अच्छा होता है।"

श्रीरामकृष्ण अब तालाब के दक्षिणवाले कमरे में आकर बैठे। रामबाबू ने थाली में अनार, सन्तरा तथा कुछ मिठाई लाकर उन्हें दी। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आनन्द करते हुए फल आदि ग्रहण कर रहे हैं।

कुछ देर बाद सारे बगीचे में घूम रहे हैं।

अब पास ही सुरेन्द्र के बगीचे में जा रहे हैं। थोड़ी देर पैदल जाकर गाडी में बैठेंगे। गाडी से सुरेन्द्र के बगीचे में जायेंगे।

भक्तों के साथ पैदल जाते हुए श्रीरामकृष्ण ने देखा कि पास वाले बगीचे में एक वृक्ष के नीचे एक साधु अकेले खटिया पर बैठे हैं। देखते ही वे साधु के पास पहुँचे और आनन्द के साथ उनसे हिन्दी में वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (साधु के प्रति) — आप किस सम्प्रदाय के हैं—गिरि या पुरी, कोई उपाधि है क्या ?

साधु—लोग मुझे परमहंस कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, अच्छा। शिवोऽहम्—यह अच्छा है। परन्तु एक बात है। यह सृष्टि, स्थिति और प्रलय सभी कुछ हो रहा है, उन्हीं की शक्ति से। यह आद्याशक्ति और ब्रह्म अभिन्न हैं। ब्रह्म को छोड़कर शक्ति नहीं होती। जिस प्रकार जल को छोडकर लहर नहीं होती, वाद्य को छोडकर वादन नहीं होता।

"जब तक उन्होंने इस लीला में रखा है, तब तक द्वैत ज्ञान होता है।

"शक्ति को मानने से ही ब्रह्म को मानना पडता है; जिस

प्रकार रात्रि का ज्ञान रहने से ही दिन का ज्ञान होता है! ज्ञान की समझ रहने से ही अज्ञान की समझ होती है।

"और एक स्थिति में वे दिखाते हैं कि ब्रह्म ज्ञान तथा अज्ञान से परे हैं, मुंह से कुछ कहा नही जाता। जो हैं सो हैं।"

इस प्रकार कुछ वार्तालाप होने के बाद श्रीरामकृष्ण गाडी की ओर जा रहे हैं। साधु भी उन्हे गाडी तक पहुँचा देने के लिए साथ-साथ आ रहे हैं। मानो श्रीरामकृष्ण उनके कितने दिनो के परिचित हैं, साधु के बाँह मे बाँह डालकर वे गाडी की ओर जा रहे हैं।

साधु उन्हे गाडी पर चढाकर अपने स्थान पर आ गये।

अब श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के बगीचे में आये हैं। भक्तो के साथ बैठकर साधु की ही बात शुरू की।

श्रीरामकृष्ण—ये साधु अच्छे हैं, (राम के प्रति) जब तुम आओगे तो इस साधु को दक्षिणेश्वर के बगीचे में ले आना।

"ये साधु बहुत अच्छे हैं। एक गाने में कहा है—सरल हुए बिना सरल को पहचाना नही जाता।"

"निराकारवादी—अच्छा ही है। वे निराकार साकार हो रहे है,—और भी कितने ही कुछ हैं, जिनका नित्य है, उन्ही की लीला है। वही जो वाणी व मन से परे हैं, नाना रूप धारण करके अवतीर्ण होकर काम कर रहे हैं। उसी 'ॐ' से 'ॐ शिव' 'ॐ काली' व 'ॐ कृष्ण' हुए हैं। निमन्त्रण करने के लिए मालकिन ने एक छोटे लडके को भेज दिया है--उसका कितना मान हैं, क्योकि वह अमुक का नाती या पोता है।"

सुरेन्द्र के बगीचे में भी कुछ जलपान करके श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर की ओर भक्तो के साथ जा रहे हैं।

(२)

कर्मयोग। क्या चिरकाल तक कर्म करना पड़ेगा ?

दक्षिणेश्वर-कालीमन्दिर में आरती का मधुर शब्द सुनायी दे रहा है। उसी के साथ प्रभाती-राग से मन्दिर के बाजे बज रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उठकर मधुर स्वर से नामोच्चारण कर रहे हैं। कमरे में जिन-जिन देवियो और देवताओ के चित्र टगे हुए थे, एक-एक करके उन्हे प्रणाम किया। भक्तो में भी कोई कोई वहाँ हैं। उन लोगो ने प्रात कृत्य समाप्त करके क्रमश श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया।

राखाल श्रीरामकृष्ण के साथ इस समय यही हैं। बाबूराम पिछली रात को आ गये हैं। मणि श्रीरामकृष्ण के पास आज चौदह दिन से हैं।

आज बृहस्पतिवार है, अगहन की कृष्ण त्रयोदशी, २७ दिसम्बर १८८३। आज सवेरे ही स्नानादि समाप्त करके श्रीरामकृष्ण कलकत्ता जाने की तैयारी कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने मणि को बुलाकर कहा, "आज ईशान के यहाँ जाने के लिए कह गये हैं। बाबूराम जायगा और तुम भी हमारे साथ चलना।" मणि जाने के लिए तैयार होने लगे।

जाडे का समय है। दिन के आठ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण को ले जाने के लिए नहबतखाने के पास गाडी आकर खडी हुई। चारो ओर फूल के पेड हैं, सामने भागीरथी। सब दिशाएँ प्रसन्न जान पडती हैं। श्रीरामकृष्ण ने देवताओ के चित्रो के पास खडे होकर प्रणाम किया। फिर माता का नाम लेते हुए यात्रा करने के लिए गाडी पर बैठ गये। साथ बाबूराम और मणि हैं। उन्होने श्रीरामकृष्ण की बनात, बनात की बनी हुई कान

ढकनेवाली टोपी और मसाले की थैली साथ ले ली है, क्योंकि जाड़े का समय है। सन्ध्या होने पर श्रीरामकृष्ण बनात ओढ़ेंगे।

श्रीरामकृष्ण का मुखमण्डल प्रसन्न है। सब रास्ता आनन्द से पार कर रहे हैं। दिन के नौ बजे होंगे। गाड़ी कलकत्ते में आकर श्यामबाजार से होकर मछुआ-बाजार में आकर खड़ी हुई। मणि ईशान का घर जानते थे। चौराहे पर गाड़ी फिराकर ईशान के घर के सामने खड़ी करने के लिए कहा।

ईशान आत्मीयों के साथ आदरपूर्वक सहास्यमुख श्रीरामकृष्ण की अभ्यर्थना कर उन्हें नीचेवाले बैठकखाने में ले गये। श्रीरामकृष्ण ने भक्तों के साथ आसन ग्रहण किया।

कुशल-प्रश्न हो जाने के बाद श्रीरामकृष्ण ईशान के पुत्र श्रीश के साथ बातचीत करने लगे। श्रीश एम ए, बी, एल पास करके अलीपुर में वकालत कर रहे हैं। एन्ट्रेंस और एफ ए की परीक्षाओं में विश्वविद्यालय में उनका प्रथम स्थान आया था। इस समय उनकी आयु तीस वर्ष की होगी। जैसा पाण्डित्य है, वैसा ही विनय भी है। लोग उन्हें देखकर यह समझ लेते हैं कि ये कुछ नहीं जानते। हाथ जोड़कर श्रीश ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। मणि ने श्रीरामकृष्ण को उनका परिचय दिया और कहा, ऐसी शान्त प्रकृति का मनुष्य दीख नहीं पड़ता।

श्रीरामकृष्ण (श्रीश के प्रति)—क्यों जी, तुम क्या करते हो?

श्रीश—मैं अलीपुर जा रहा हूँ, वकालत करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण (मणि से)—ऐसा आदमी और वकालत!

(श्रीश से)—"अच्छा, तुमसे कुछ पूछना है?—संसार में अनासक्त होकर रहना, क्यों?"

श्रीश—परन्तु कार्य के निर्वाह के लिए संसार में कितने ही

अन्याय किये जाते हैं। कोई पापकर्म कर रहा है, कोई पुण्य-कर्म। यह सब क्या पहले के कर्मों का फल है ? क्या यही करते रहना होगा ?

श्रीरामकृष्ण—कर्म कब तक है ?—जब तक उन्हे प्राप्त न कर सको। उन्हे प्राप्त कर लेने पर सब चले जाते है। तब पाप-पुण्य के पार जाया जाता है।

"फल आ जाने पर फूल चला जाता है। फूल दीख पडता है फल होने के लिए।

"सन्ध्यादि कर्म कितने दिन के लिए ?—जितने दिन तक ईश्वर का नाम स्मरण करते हुए रोमाञ्च न हो आये, आँखो में आँसू न आ जायँ। ये सब अवस्थाएँ ईश्वर-प्राप्ति के लक्षण हैं, ईश्वर पर शुद्धा-भक्ति प्राप्त करने के लक्षण हैं।

"उन्हे जान लेने पर मनुष्य पाप और पुण्य दोनो के परे चला जाता है। रामप्रसाद ने कहा है, भुक्ति और मुक्ति को मै मस्तक पर धारण करता हूँ, और काली ब्रह्म हैं, यह मर्म जानकर धर्माधर्म को मैने छोड ही दिया है।

"उनकी ओर जितना बढोगे, उतना ही वे कर्म घटा देगे। गृहस्थ की बहू गर्भवती होने पर उसकी सास उसका काम घटा देती है। जब दसवाँ महीना होता है, तब बिलकुल काम घटा दिया जाता है। बच्चा हो जाने पर वह उसी को लेकर रहती है, उसी को लेकर आनन्द करती है।"

श्रीश—ससार में रहते हुए उनकी ओर जाना बडा कठिन है।

अभ्यास योग, संसार और निर्जन में साधना

श्रीरामकृष्ण—क्यो ? अभ्यास-योग है। उस देश में (कामार-पुकुर में) बढ़ई की औरतें चिउडा बेचती हैं। वे कितनी ओर

ध्यान देकर कितने काम सम्हालती हैं, सुनो। एक तो ढेकी चल रही है, हाथ से वह धान सरका रही है, और एक हाथ से बच्चे को गोद में लेकर दूध पिला रही है। ऊपर के जो खरीददार आते है, उनसे मोल-तोल करती है, इधर ढेंकी का काम भी देख रही है। खरीददार से कहती है, 'तो तुम्हारे ऊपर जो बाकी पैसे हैं, वे सब दे जाना, तब और चीज ले जाना।' देखो, लडके को दूध पिलाना, ढेंकी चल रही है उसमें धान सरकाना और कूटे हुए धान निकालना, और इधर खरीददार के साथ बातचीत करना, ये सब एक साथ कर रही है। इसे ही अभ्यासयोग कहते हैं; परन्तु उसका पन्द्रह आना मन ढेंकी पर लगा हुआ है, क्योंकि कही ऐसा न हो कि ढेंकी हाथ पर गिर जाय, और एक आना मन लडके को दूध पिलाने और खरीददार से बातचीत करने में है। इसी तरह जो लोग ससार में हैं उन्हें पन्द्रह आना मन ईश्वर को देना चाहिए। न देने से सर्वनाश हो जायगा,—काल के हाथ पडना होगा। और एक आने से दूसरे काम करो।

"ज्ञान हो जाने पर ससार में रहा जा सकता है, परन्तु पहले तो ज्ञान लाभ करना चाहिए। ससार-रूपी जल में मन-रूपी दूध रखने पर दोनो मिल जायँगे। इसलिए मन-रूपी दूध का दही बनाकर निर्जन में उसे मथकर, उससे मक्खन निकालकर, तब उसे ससार-रूपी पानी में रखना चाहिए। ऐसा हुआ तो काम ठीक है, और इससे यह स्पष्ट है कि साधना चाहिए। पहली अवस्था में निर्जन में रहना जरूरी है। पीपल का पेड जब छोटा रहता है, तब उसके चारो ओर घेरा लगाना पडता है, नही तो बकरे और गौएँ उसे चर जाती हैं। परन्तु उसकी पेडी मोटी हो जाने पर घेरा खोल दिया जाता है। तब तो हाथी बाँध देने पर

भी वह उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

"इसीलिए प्रथम अवस्था में कभी-कभी निर्जन में जाना पड़ता है। भात खाओगे—बैठे-बैठे कहते रहो, काठ (लकड़ी) में आग है और उसी आग से चावल पकता है। इस तरह करने से ही क्या भात तैयार हो जायगा? एक और काठ ले आकर काठ रगड़ना चाहिए, आग तभी तैयार होगी।

"भंग खाने से नशा होता है, आनन्द होता है। न तुमने खाया, न कुछ किया,—बैठे-बैठे केवल 'भंग-भंग' कर रहे हो। क्या इससे कभी नशा या आनन्द होता है?

मनुष्यजीवन का उद्देश्य। 'दूध पीओ'

"पढ़ना-लिखना चाहे लाख सीखो, ईश्वर पर भक्ति हुए बिना—उन्हें प्राप्त करने की इच्छा हुए बिना—सब मिथ्या है। केवल पण्डित है, परन्तु यदि विवेक-वैराग्य नहीं है, तो उसकी दृष्टि कामिनी-कांचन पर अवश्य रहेगी। गीध ऊँचे उड़ते हैं, परन्तु उनकी दृष्टि मरघट पर ही रहती है।

"जिस विद्या के प्राप्त करने पर मनुष्य उन्हें पा सकता है, वही यथार्थ विद्या है, और सब मिथ्या है। अच्छा, ईश्वर के सम्बन्ध में तुम्हारी क्या धारणा है?"

श्रीम—जी, बोध यह हुआ है कि कोई एक ज्ञानमय पुरुष हैं। उनकी सृष्टि देखने पर उनके ज्ञान का परिचय मिलता है। एक बात कहता हूँ—जिन देशों में जाड़ा ज्यादा होता है, वहाँ मछलियों और दूसरे जल-जन्तुओं को बचा रखने के लिए ईश्वर ने यह कुशलता दिखायी है कि जितना ही अधिक जाड़ा पड़ता है उतना ही पानी सिमटता जाता है, परन्तु आश्चर्य यह है कि बर्फ बनने से पहले ही पानी कुछ हलका हो जाता है, और उस समय

पानी का फैलाव ज्यादा हो जाता है। तालाब के पानी में वहाँ जाड़े में मछलियाँ अनायास ही रह सकती हैं। पानी के ऊपरी हिस्से में बर्फ जम गयी है, परन्तु नीचे के हिस्से में ज्यों का त्यों पानी बना रहता है। अगर खूब ठण्डी हवा चलती है, तो वह हवा बर्फ पर ही लगती है, नीचे का पानी गरम रहता है।

श्रीरामकृष्ण—वे हैं यह बात संसार देखने से ही मालूम हो जाती है। परन्तु उनके सम्बन्ध में कुछ सुनना एक बात है, उन्हें देखना और बात, और उनसे वार्तालाप करना और बात है। किसी ने दूध की बात सुनी है, किसी ने दूध देखा है, और किसी ने दूध पीया है। आनन्द तो देखने से होगा, पर पीने से देह सबल होगी, तभी तो लोग हृष्टपुष्ट होंगे। ईश्वर के दर्शन जब होंगे, तभी तो शक्ति होगी। जब उनसे वार्तालाप होगा, तभी तो आनन्द होगा और शक्ति बढ़ेगी।

श्रीम—उन्हें पुकारने का अवसर मिलता ही नहीं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—यह ठीक है, समय हुए बिना कुछ नहीं होता। किसी लड़के ने सोने के पहिले अपनी माँ से कहा था, माँ, जब मुझे टट्टी की इच्छा हो, तब उठा देना। उसकी माँ ने कहा, बेटा, टट्टी की इच्छा तुम्हें स्वयं उठायेगी, मुझे उठाना न होगा।

"जिसे जो कुछ देना चाहिए, यह उनका पहले से ही ठीक किया हुआ है। घर की एक पुरखिन अपनी बहुओं को एक बर्तन से नापकर चावल बनाने के लिए देती थी, पर उतना चावल उन लोगों के लिए कम पड़ता था। एक दिन वह नापने वाला बर्तन फूट गया, इससे बहुएँ बहुत खुश हुईं। पर उस पुरखिन ने कहा, 'हुँ, तुम्हारे नाचने-कूदने या खुशी मनाने से

क्या हुआ, बर्तन टूट गया टूट जाने दो, मैं चावल अपनी मुट्ठी से नाप सकती हूँ, मुझे अन्दाज मालूम है।'

(श्रीश से)—"क्या करोगे, पूछते हो ? उनके श्रीचरणों में सब कुछ समर्पित कर दो, उन्हें आम मुखत्यारी दे दो। वे जो कुछ अच्छा समझे, करें। बड़े आदमी पर अगर भार दे दिया जाय, तो वह कभी बुराई नही कर सकता।

"साधना की भी आवश्यकता है। परन्तु साधक दो तरह के होते हैं। एक तरह के साधकों का स्वभाव बन्दर के बच्चे जैसा होता है, दूसरे तरह के साधक का बिल्ली के बच्चे जैसा। बन्दर का बच्चा किसी तरह खुद अपनी माँ को पकड़े रहता है। इसी तरह कोई साधक सोचते हैं, हमें इतना जप करना चाहिए, इतनी देर तक ध्यान करना चाहिए, इतनी तपस्या करनी होगी, तब कहीं ईश्वर मिलेंगे। इस तरह के साधक अपने प्रयत्न से ईश्वर-प्राप्ति की आशा रखते हैं।

"परन्तु बिल्ली का बच्चा खुद अपनी माँ को नही पकड़ कर रहता। वह पड़ा हुआ बस 'मीऊँ-मीऊँ' करके पुकारता है। उसकी माँ चाहे जो करे। उसकी माँ कभी उसे बिस्तर पर ले जाती है, कभी छत पर लकड़ी की आड़ में रख देती है, और कभी उसे मुँह में दबाकर यहाँ-वहाँ रखती फिरती है। वह स्वयं अपनी माँ को पकड़ना नही जानता। इसी तरह कोई-कोई साधक स्वयं हिसाब करके साधन-भजन नही कर सकते कि इतना जप करूँगा, इतना ध्यान करूँगा। वह केवल व्याकुल होकर रो-रोकर उन्हें पुकारता है। उसका रोना सुनकर वे फिर रह नही सकते। आकर दर्शन देते हैं।"

(३)

ईश्वर कर्ता तथापि जीवों का कर्मों के सम्बन्ध में उत्तरदायित्व। नाम माहात्म्य

दिन खूब चढ़ आया है। घर के मालिक ने भोजन के लिए घर में कच्ची रसोई का सामान तैयार कराया है। वे बड़ी उत्सुकता के साथ घर के भीतर गये। वहा जाकर भोजन का प्रबन्ध कराने लगे।

दिन बहुत हो गया है, इसीलिए श्रीरामकृष्ण भोजन के लिए जल्दी कर रहे हैं। वे उसी कमरे में टहल रहे हैं। मुख पर प्रसन्नता झलक रही है। कभी-कभी केशव कीर्तनिया से वार्तालाप कर रहे हैं।

केशव कीर्तनिया—वही करण और वही कारण हैं, दुर्योधन ने कहा था, 'त्वया हृषीकेश हृदिस्थितेन, यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।'

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—हा, वही सब कराते हैं, यह ठीक है। कर्ता वही हैं, मनुष्य तो यन्त्र-स्वरूप है।

"और यह भी ठीक है कि कर्मफल भी है। मिर्चा और मिर्च खाने पर पेट जलता रहेगा। पाप करने से उसका फल अवश्य भोगना होगा।

"जिसे सिद्धि हो गयी है, जिसने ईश्वर को पा लिया है, वह फिर पाप नहीं कर सकता। उसके पैर बेताल नहीं पड़ते। जिसका सधा हुआ गला है, उसके स्वर में सा रे ग म बिगड़ने नहीं पाता।"

भोजन तैयार है। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ मकान के भीतर गये और उन्होंने आसन ग्रहण किया। ब्राह्मण का मकान

है; व्यजन कई तरह के तैयार कराये गये है, ऊपर से अनेक प्रकार की मिठाइयाँ भी लायी गयी हैं।

दिन के तीन बजे का समय होगा। भोजन के बाद श्रीराम-कृष्ण ईशान के बैठकखाने मे आकर बैठे। पास मे श्रीश और मास्टर आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण श्रीश के साथ फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण—तुम्हारा क्या भाव है? सोऽह या सेव्य-सेवक?

"ससारियो के लिए सेव्य-सेवक का भाव बहुत अच्छा है। सब सासारिक काम तो कर रहे हैं, ऐसी अवस्था मे 'मैं वही हूँ' यह भाव कैसे आ सकता है? जो कहता है, 'मैं वही हूँ', उसके लिए तो ससार स्वप्नवत् है। उसका अपना शरीर और मन भी स्वप्नवत् है, उसका 'मैं' भी स्वप्नवत् है, अतएव ससार का काम वह नही कर सकता, इसीलिए सेव्य-सेवक भाव, दास-भाव बहुत अच्छा है।

"दास-भाव हनुमान का था। श्रीराम से हनुमान ने कहा था, 'राम, कभी तो मैं सोचता हूँ, तुम पूर्ण हो--मैं अश हूँ, तुम प्रभु हो—मैं दास हूँ और जब तत्त्व का ज्ञान हो जाता है, तब देखता हूँ, मैं ही तुम हूँ, और तुम्ही मैं हो।'

"तत्त्व-ज्ञान के समय सोऽहम् हो सकता है, परन्तु वह दूर की बात है।"

श्रीश—जी हाँ, दास-भाव से आदमी निश्चिन्त हो सकता है। प्रभु पर सब कुछ निर्भर है। कुत्ता बड़ा स्वामिभक्त है, इसीलिए स्वामी पर सब भार देकर वह निश्चिन्त रहता है।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम्हे साकार ज्यादा पसन्द है या निराकार? बात यह है कि जो निराकार है, वही साकार भी

है। भक्त की आँखों को वे साकार-रूप से दर्शन देते है। जैसे अनन्त जलराशि, महासमुद्र, जिसका न ओर है न छोर; उसी जल में कही-कही वर्फ जम गयी है, ज्यादा ठण्डक पहुँचने पर पानी जमकर वर्फ हो जाता है। उसी तरह भक्ति-हिम द्वारा साकार रूप के दर्शन होते हैं। फिर जिस तरह सूर्योदय होने पर वर्फ गल जाती है—ज्यों का त्यों पानी हो जाता है, उसी तरह ज्ञान-मार्ग या विचार-मार्ग से होकर जाने पर साकार रूप के दर्शन नही होते, फिर तो सब निराकार ही निराकार दीख पडता है। ज्ञान-सूर्योदय होने पर साकार वर्फ गल जाती है।

"परन्तु देखो, जिसकी निराकार सत्ता है, उसी की साकार भी है।"

शाम होने को है। श्रीरामकृष्ण उठे। दक्षिणेश्वर को लौटने वाले है। वैठकखाने के दक्षिण ओर जो वरामदा है, उसी पर खड़े होकर ईशान से वातचीत कर रहे है। वही कोई कह रहे है, 'यह तो मै नही देखता कि ईश्वर का नाम लेने से प्रत्येक समय फल होता है।'

ईशान ने कहा, 'यह क्या? वट के वीज कितने छोटे होते हैं, परन्तु उसके भीतर वड़े-वड़े पेड़ छिपे रहते हैं। वे देर से देखने में आते हैं।

श्रीरामकृष्ण—हाँ-हाँ, फल देर से होता है।

ईशान का मकान उनके ससुर स्वर्गीय श्रीयुत क्षेत्रनाथ चटर्जी के मकान के पूर्व ओर है। दोनों मकानो में आने-जाने का रास्ता है।

श्रीरामकृष्ण चटर्जी महाशय के मकान के फाटक के पास आकर खड़े हुए। ईशान अपने वन्धु-वान्धवों को साथ लेकर

श्रीरामकृष्ण को गाडी पर चढाने के लिए आये है।

श्रीरामकृष्ण ईशान से कह रहे हैं, "तुम ससार में ठीक पांकाल मछली की तरह हो। वह रहती तो है तालाब के बीच में, पर उसकी देह में कीच छू नहीं जाती।

"माया के इस ससार में विद्या और अविद्या दोनो ही हैं। परमहंस वह है, जो हंस की तरह दूध और पानी के एक साथ रहने पर भी पानी छोडकर दूध निकाल लेता है, चींटी की तरह बालू और चीनी के मिले रहने पर भी बालू में से चीनी निकाल ले सकता है।"

(४)

समन्वय और निष्ठा भक्ति। अपराध और ईश्वर कोटि

शाम हो गयी है। श्रीरामकृष्ण भक्त रामचन्द्र के घर आये हुए हैं। यहाँ से होकर दक्षिणेश्वर जायेंगे।

रामचन्द्र के बैठकखाने को आलोकित करते हुए भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। श्रीयुत महेन्द्र गोस्वामी से बातचीत कर रहे हैं। गोस्वामीजी उसी मोहल्ले में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण इन्हें प्यार करते हैं। जब श्रीरामकृष्ण रामचन्द्र के यहाँ आते हैं, तब गोस्वामीजी जाकर इनसे मिल जाया करते हैं।

श्रीरामकृष्ण—वैष्णव, शाक्त सबके पहुँचने की जगह एक है; परन्तु मार्ग और और हैं। जो सच्चे वैष्णव हैं, वे शक्ति की निन्दा नहीं करते।

गोस्वामी (सहास्य)—हर-पार्वती हमारे माँ बाप हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—Thank You—माँ बाप है।

गोस्वामी—इनके सिवाय किसी की निन्दा करने से, खास कर वैष्णवो की निन्दा से, अपराध होता है—वैष्णवापराध। सब

अपराधों की क्षमा है, परन्तु वैष्णवापराध की क्षमा नहीं है।

श्रीरामकृष्ण—अपराध सबको नहीं होता। जो ईश्वरकोटि हैं, उनको अपराध नहीं होता। जैसे श्रीचैतन्य सदृश अवतारी पुरुषों को।

"बच्चा अगर बाप का हाथ पकड़कर चलता हो, तो वह गड्ढे में गिर सकता है, परन्तु अगर बाप बच्चे का हाथ पकड़े हुए हो, तो बच्चा कभी नहीं गिर सकता।

"सुनो, मैंने माँ से शुद्धा-भक्ति की प्रार्थना की थी। माँ से कहा था, 'यह लो अपना धर्म, यह लो अपना अधर्म, मुझे शुद्धा-भक्ति दो। यह लो अपनी शुचि, यह लो अपनी अशुचि, मुझे शुद्धा-भक्ति दो। माँ, यह लो अपना पाप, यह लो अपना पुण्य, मुझे शुद्धा भक्ति दो।"

गोस्वामी—जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण—सब भक्तों को नमस्कार करना। परन्तु *'निष्ठा-भक्ति'* भी है। सबको प्रणाम तो करना, परन्तु हृदय का उमड़ता हुआ प्यार एक ही पर हो। इसी का नाम निष्ठा है।

"राम-रूप के सिवाय और कोई रूप हनुमान को न भाता था। गोपियों की इतनी निष्ठा थी कि उन्होंने द्वारका में पगड़ी-वाले श्रीकृष्ण को देखना ही न चाहा।

"पत्नी अपने देवर-जेठ आदि की सेवा, पैर धोने के लिए पानी और बैठने को आसन आदि भी देती है, परन्तु पति की जैसी सेवा करती है, वैसी वह किसी दूसरे की नहीं करती। पति के साथ उसका सम्बन्ध कुछ दूसरा है।"

रामचन्द्र ने कुछ मिठाइयाँ देकर श्रीरामकृष्ण की पूजा की। अब वे दक्षिणेश्वर जाने वाले हैं। मणि से उन्होंने बनात लेकर

शरीर ढक लिया और टोपी पहन ली। अब भक्तो के साथ वे गाडी पर चढने लगे। रामचन्द्र आदि भक्त उन्हे चढा रहे हैं। मणि भी गाडी पर बैठे, वे भी दक्षिणेश्वर जायँगे।

(५)

ब्रह्मज्ञान के सम्बन्ध में वार्तालाप

श्रीरामकृष्ण गाडी पर बैठ गये। कालीमाँ के दर्शन के लिए कालीघाट जायँगे। श्रीयुत अधर सेन के घर होकर जायँगे। वहाँ से अधर भी साथ जायँगे। आज शनिवार, अमावस्या, दिन के एक बजे का समय होगा।

गाडी उनके घर के उत्तर के तरफ के बरामदे के पास आकर खडी हुई। मणि गाडी के द्वार के पास आकर खडे हुए।

मणि (श्रीरामकृष्ण से)—क्या मैं भी चलूँ?

श्रीरामकृष्ण—क्यो?

मणि—एक बार कलकत्ते के मकान से होकर आता।

श्रीरामकृष्ण (चिन्ता करके)—जाओगे क्यो? यहाँ अच्छे तो हो।

मणि घर लौटेंगे, कुछ घण्टो के लिए, परन्तु श्रीरामकृष्ण की इसके लिए सम्मति नही है।

आज रविवार, ३० दिसम्बर, पूस की शुक्ल प्रतिपदा है। दिन के तीन बजे होगे। मणि पेड के नीचे अकेले टहल रहे है। एक भक्त ने आकर कहा, प्रभु बुलाते हैं। कमरे में श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठे हुए हैं। मणि ने जाकर प्रणाम किया और जमीन पर भक्तो के बीच बैठ गये।

कलकत्ते से राम, केदार आदि भक्त आये हुए हैं। उनके साथ एक वेदान्तवादी साधु भी आये हैं। श्रीरामकृष्ण जिस दिन

रामचन्द्र का बगीचा देखने गये थे, उसी दिन उस साधु से भेंट हुई थी। साधु पासवाले बगीचे में एक पेड के नीचे अकेले एक चारपाई पर बैठे हुए थे। राम आज श्रीरामकृष्ण की आज्ञा से उस साधु को अपने साथ लेते आये हैं। साधु ने भी श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की थी।

श्रीरामकृष्ण उस साधु के साथ आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं। उन्होने अपने पास छोटे तख्त पर साधु को बैठाया है। बातचीत हिन्दी में हो रही है।

श्रीरामकृष्ण--यह सब तुम्हे कैसा जान पडता है ?

साधु—यह सब स्वप्नवत् है।

श्रीरामकृष्ण—ब्रह्म सत्य और ससार मिथ्या, यही न ? अच्छा जी, ब्रह्म कैसा है ?

साधु--शब्द ही ब्रह्म है। अनाहत शब्द।

श्रीरामकृष्ण--परन्तु शब्द का प्रतिपाद्य भी तो एक है। क्यो ?

साधु--वही वाच्य है और वही वाचक भी है।

यह सब सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये। चित्रवत् स्थिर बैठे हुए हैं। साधु और भक्तगण आश्चर्यचकित होकर श्रीरामकृष्ण की यह समाधि-अवस्था देख रहे हैं। केदार साधु से कह रहे हैं, यह देखिये, इसे समाधि कहते हैं।

साधु ने ग्रन्थो में ही समाधि की बात पढी थी। समाधि कैसे होती है, यह उन्होने कभी नही देखा था।

श्रीरामकृष्ण धीरे-धीरे अपनी प्राकृत अवस्था में आ रहे हैं। अभी जगन्माता के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। कहते हैं—'माँ, अच्छा हो जाऊँ, बेहोश न कर देना, साधु के साथ सच्चिदानन्द

की बातें करूँगा।'

साधु आश्चर्यचकित होकर देख रहे हैं और ये सब बातें सुन रहे हैं। अब श्रीरामकृष्ण अपनी सहज अवस्था में आ गये, साधु से बातचीत करने लगे। कहते हैं—आप 'सोऽहम्' उड़ा दीजिये। अब 'हम' और 'तुम' विलास करें।

जब तक 'हम' और 'तुम' यह भाव है, तब तक माँ भी हैं। आओ उन्हें लेकर आनन्द किया जाय। श्रीरामकृष्ण के कथन का शायद यही मर्म है।

कुछ देर इस तरह बातचीत हो जाने के बाद श्रीरामकृष्ण पंचवटी में टहलने चले गये। राम, केदार, मास्टर आदि उनके साथ हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य)—साधु को तुमने कैसा देखा?

केदार—उसका शुष्क ज्ञान है। अभी उसने हँडी चढ़ायी भर है—अभी चाँवल नहीं चढ़ाये गये।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह ठीक है, परन्तु है त्यागी। जिसने संसार को त्याग दिया है, वह बहुत कुछ आगे बढ़ गया है।

"साधु अभी प्रवर्तक है। उन्हें अगर कोई प्राप्त न कर सका, तो उसका कुछ भी नहीं हुआ। जब उनके प्रेम में मस्त हुआ जाता है, तब और कुछ नहीं सुहाता। तब तो—"आदरणीय श्यामा माँ को बड़े यत्न से हृदय में धारण किये रहो। मन! तू देख और मैं देखूँ, और कोई जैसे न देखने पाये।"

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में लौट आये हैं। चार बजे का समय है—काली-मन्दिर खुल गया। श्रीरामकृष्ण साधु को लेकर काली-मन्दिर जा रहे हैं। मणि भी साथ हैं।

काली-मन्दिर में प्रवेश कर श्रीरामकृष्ण भक्तिपूर्वक माता को

प्रणाम कर रहे हैं। साधु भी हाथ जोडकर सिर झुका माता को बारम्वार प्रणाम कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—क्यो जी, दर्शन कैसे हुए ?

साधु (भक्तिभाव से)—काली प्रधाना है।

श्रीरामकृष्ण—काली और ब्रह्म, दोनो अभेद हैं। क्यो जी ?

साधु—जब तक बहिर्मुख है तब तक काली को मानना होगा। जब तक बहिर्मुख है तब तक भले बुरे दोनो भाव हैं—तब तक एक प्रिय और दूसरा त्याज्य, यह भाव है ही।

"देखिये न, नाम और रूप, ये सब तो मिथ्या ही हैं, परन्तु जब तक बहिर्मुख है तब तक स्त्रियो को उसे त्याज्य समझना चाहिए, नही तो भ्रष्टाचार फैलेगा।"

श्रीरामकृष्ण साधु के साथ बातचीत करते हुए कमरे में लौटे।

श्रीरामकृष्ण—देखा, साधु ने काली-मन्दिर में प्रणाम किया।

मणि—जी हाँ।

दूसरे दिन सोमवार, ३१ दिसम्बर है। दिन का तीसरा पहर, चार बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ कमरे में बैठे हुए हैं। बलराम, मणि, राखाल, लाटू, हरीश आदि भक्त भी हैं। श्रीरामकृष्ण मणि और बलराम से कह रहे हैं—

हलधारी का ज्ञानियो जैसा भाव था। वह अध्यात्म रामायण, उपनिषद् यही सब दिन-रात पढता था और इधर साकार की बातो से मुँह फेरता था। मैंने जब कगालो के भोजन कर जाने पर उनकी पत्तलों से थोडा थोडा अन्न लेकर खाया, तब उसने कहा, 'तेरे लडको का विवाह कैसे होगा ?' मैंने कहा, 'क्यो रे साला, मेरे लडके-बच्चे भी होंगे ? आग लगे तेरे गीता और वेदान्त पढने में।' देखो न, इधर तो कहता है—ससार मिथ्या

है; और फिर विष्णु-मन्दिर में नाक सिकोड़कर ध्यान !"

शाम हो गयी है। बलराम आदि भक्त कलकत्ते चले गये है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में बैठे हुए माता का चिन्तन कर रहे हैं। कुछ देर वाद मन्दिर में आरती का मधुर शब्द सुनायी पड़ने लगा।

रात के आठ बज चुके हैं। श्रीरामकृष्ण भाव में आकर मधुर स्वर से माता के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। मणि जमीन पर बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से नामोच्चारण कर रहे हैं—हरि ॐ! हरि ॐ! ॐ!

माँ से कह रहे हैं—माँ! ब्रह्मज्ञान देकर मुझे बेहोश न कर रखना। मै ब्रह्मज्ञान नही चाहता—माँ! मै आनन्द करूँगा, विलास करूँगा।

फिर कहते हैं—माँ! मै वेदान्त नही जानता,—जानना भी नही चाहता। माँ!—माँ, तुझे पाने पर वेद-वेदान्त कितने नीचे पड़े रहते हैं!

"अरे कृष्ण! मै तुझे कहूँगा, यह ले—खा ले—बच्चे! कृष्ण! कहूँगा, तू मेरे ही लिए देह धारण करके आया है।"